Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८.३
१५

Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८.३
२५

३८५३८

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ग

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पुस्तक-RA

आगत संख्या 30,534

Stock Verification-2024

सहित ३० वें दिन ... नीचे अंकित है । इस तिथि ... पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिएं । अन्यथा ५० ... के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा ।

Stock Verification-2024

Stock Verification

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति स्मृति संग्रह

, कैसे जौहर दिखाते हैं। हम ऐसे उस्तादों की आँख देखे
किसी से दबनेवाले नहीं।

याँ आज़ाद तो ऐसे आदमियों की टोह में रहते ही थे, बाँके
थ हो लिए, और दोनों शहर में चक्कर लगाने लगे। चौक में
तो जिस पर नज़र पड़ती है, बाँका-तिरछा, चुन्नटदार अँगरखे
नुक्केदार टोपियाँ सिर पर जमाए, चुस्त घुटन्ने डाटे, ढाटे बाँधे
ने चले जाते हैं। तमंचे की जोड़ी कमर से लगी हुई, दो-दो
तयाँ पड़ी हुई, बाढ़ें चढ़ी हुई, पेशक़ब्ज़, कटार, सिरोही,
चा, सबसे लैस। बाँके को देखकर एक दूकानदार को
त आई, हँस पड़ा। बाँके ने आव देखा न ताव, दन से तमंचा
दिया। संयोग था, ख़ाली गया; लोगों ने पूछा, क्यों भाई, क्यों
गए? तीखे होकर बोले—हमको देखकर बचाजी मुसकिराए
मने गोली लगाई कि दाँत पर पड़े, और इनके दाँत खट्टे
जायँ; मगर ज़िंदगी थी, बच निकले। मियाँ आज़ाद ने
दिल में सोचा, यह बाँके तो आफ़त के परकाले हैं;
नीचा न किया, तो कुछ बात नहीं; एक तंबोली से पूछा—
भाई, यहाँ बाँके बहुत हैं? उसने कहा—मियाँ, बाँका होना तो
ी नहीं, हाँ, बेफ़िक्रे बहुत हैं। और, इन सबके गुरु-घंटाल वह
त हैं, जिन्हें लोग एकरंग कहते हैं। वह संदली रँगा हुआ
पहनकर निकलते हैं; मगर मजाल क्या कि शहर-भर में
संदली जोड़ा पहन तो ले। एकरंग संदली जोड़ा कोई पहन
सकता; कोई पहने, तो गोली भी सर कर दें, इसके साथ यह
।

मियाँ आज़ाद सोचे कि इस एकरंग का टेटुआ न लिया, तो
हराम। दूसरे दिन आप भी संदली बूट, संदली घुटन्ना,
ी अँगरखा और संदली टोपी डाटकर निकले। अब जिस गली-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूचे से निकलते हैं, उँगलियाँ उठती हैं कि यह आज इस ढब से कौन निकले हैं भाई ! होते-होते एकरंग के चेले-चापड़ों ने उनके कान में भी भनक डाल दी । सुनते ही मुँह लाल चुक़ंदर हो गया । कपड़े पहन, हथियार लगा, चल खड़े हुए। आज़ाद तंबोली की दूकान पर टिक गए। उनका वेष देखते ही उसके होश उड़ गए; लगा हाथ जोड़ने कि भगवान् के लिये मेरी ही टोपी दे लीजिए, या जूता बदल डालिए; नहीं तो वह आता ही होगा, मुफ़्त की ठायँ-ठायँ से क्या वास्ता ? इनको तो कच्चे घड़े की चढ़ी थी, कब मानते थे, गिलौरी ली और अकड़कर खड़े हुए । शहर में धूम हो गई कि आज आज़ाद और एकरंग में तलवार चलेगी । तमाशा देखनेवाले जमा हो गए । इतने में मियाँ एकरंग भी दिखाई दिए। उनके आते ही भीड़ छट गई। कोई इधर कतरा गया, कोई गली में घुसा, कोई कोठे पर चढ़ गया। एक-रंग ने जो इनको देखा, तो जल मरा । बोला—अबे ओ ख़ब्ती, उतार टोपी, बदल जूता। हमारे होते तू संदली जोड़ा पहनकर निकले ! उतार, उतार, नहीं तो मैं बढ़कर काम तमाम कर दूँगा । मियाँ आज़ाद पैतरा बदलकर तीर की तरह झपट पड़े, और बड़ी फुर्ती से एकरंग की तोंद पर तमंचा रख दिया । बस हिले, और धुआँ उस पार ! बोले, और लाश फड़कने लगी ! बेईमान बड़ा बाँका बना है सैकड़ों भले आदमियों को बेइज़्ज़त किया । इतने चाबुक मारूँगा कि याद करेगा । अभी उतार टोपी, उतार, उतार, नहीं तो धुआँ उस पार ! संयोग से एक दर्ज़ी उधर से निकला; उसने एकरंग की टोपी उतार जेब में रक्खी । एकरंग की एक न चली । आज़ाद ने ललकारा—हौसला हो, तो आओ, दो-दो हाथ भी हो जायँ, ख़बरदार, जो आज से संदली जोड़ा पहना !

शहर-भर में धूम हो गई कि मियाँ आज़ाद ने एकरंग के छक्के छुड़ा दिए; चुपचाप दर्ज़ी से टोपी बदली । सच है, "दबे पर बिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चूहे से कान कटाती है।" मियाँ आज़ाद की धाक बँध गई। एक दिन उन्होंने मनादी कर दी कि आज मियाँ आज़ाद छः बजे से आठ बजे तक अपने करतब दिखावेंगे, जिन्हें शौक़ हो, आवें। एक बड़े लंबे-चौड़े मैदान में आज़ाद अपने जौहर दिखाने लगे। लाखों आदमी जमा थे। मियाँ आज़ाद ने नींबू पर निशान बनाया, और तलवार से उड़ाया, तो निशान के पास खट-से दो टुकड़े! कसेरू उछाला और पाँच-छः वार में छील डाला! तलवार की बाढ़ से दस-बारह की आँखों में सुरमा लगाया। चिराग़ जलाया, और खाँड़ा फेंकते-फेंकते गुल काट डाला, लौ अलग, बत्ती अलग। एक प्याले में दस कौड़ियाँ रक्खीं और दो पर निशान बना दिया। दोनों को तलवार से प्याले ही में काटा, और बाक़ी कौड़ियाँ निलोह बच निकलीं। लकड़ी टेकी और बीस हाथ छत पर हो रहे। गदके का ज़रा इशारा किया और बीस हाथ उड़ गए। चालीस-चालीस आदमियों ने घेरा और यह साफ़ निकल भागे। पलँग के नीचे एक जंगली कबूतर छोड़ दिया गया। उन्होंने उसको निकलने न दिया। एक फिकैत ने ये करतब देखे, तो बोला—अजी यह सब नट-विद्या है, मैदान-में आवें, तो मालूम हो।

आज़ाद—अच्छा! अब तुम्हें भी मैदान में आने का दावा हुआ! तुम्हारे एकरंग का तो रंग फीका हो गया, अब तुम मुँह चढ़ते हो, तुम्हें भी देखूँगा।

फिकैत—बोंच सँभालो।

आज़ाद—तुम्हारी शामत हो आ गई है, तो मैं क्या करूँ? आजकल में तुम्हारी भी क़लई खुली जाती है। तुम लोग बाँके नहीं, बदमाश हो; जिधर से निकल जाओ, उधर आदमी काँप उठे कि भेड़िया आया। कोई हँसा और तुमने बंदूक़ छतियाई; किसी ने बात की और तुमने चोट लगाई। भाई, वाह, अच्छा बाँकपन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ! तो बात क्या, जहाँ दस दिन डंड पेले और उबल पड़े; दो-चार दिन लकड़ी फेकी, और महल्लेवालों पर शेर हो गए। गुनी लोग सिर झुका ही के चलते हैं।

यही बातें हो रही थीं कि सामने से एक पहलवान ऐंडते हुए निकले, लँगोट बाँधे, मलमल की चादर ओढ़े; दो-तीन पट्ठे साथ। एक कसेरूवाले के पास खड़े हो गए, और उसके सिर पर एक धप लगा दी। वह पीछे फिरकर देखता है, तो एक देव खड़े हैं। बोले, तो पथा जाय; कान दबाकर, धप खाकर, दिल-ही-दिल में कोसता हुआ चला गया।

थोड़ी ही देर में मियाँ पहलवान ने एक ख़ोंचेवाले का ख़ोंचा उलट दिया; तीन-चार रुपए की मिठाई धूल में मिल गई। जब उसने गुल-ग़पाड़ा मचाया, तो पट्ठों ने दो-तीन गुद्दे, घूसे, मुक्के लगा दिए, दो-चार लप्पड़ जमा दिए; वह बेचारा रोता-चिल्लाता, दुहाई देता चला गया।

आज़ाद सोचने लगे, यह तो कोई बड़ा ही शैतान है, किसी के लप्पड़, किसी के थप्पड़, अच्छी पहलवानी है ! सारे शहर में तहलका मचा दिया। इसकी ख़बर न ली, तो कुछ न किया। यह सोचते ही मेरा शेर झपट पड़ा, और पहलवान के पास जाकर घुटने से ऐसा धक्का दिया कि मियाँ पहलवान ने इतना बड़ा डील-डौल रखने पर भी बीस लुढ़कनियाँ खाईं। मगर पहलवान सँभलते ही उनकी तरफ़ झपट पड़ा। तमाशाई तो समझे कि पहलवान आज़ाद को चुर्र-मुर्र कर डालेगा, लेकिन आज़ाद ने पहले ही से वह दाव-पेंच किए कि पहलवान के छक्के छूट गए; ऐसा दबाया कि छठी का दूध याद आ गया। उसने जैसे ही आज़ाद का बायाँ हाथ घसीटा, उन्होंने दाहने हाथ से उसका हाथ बाँधा और अपना छुड़ा, चुटकियों में कूले पर लाद, घुटना टेककर मारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारों शाने चित ! पहलवान अब तक कोरा था, किसी दंगल में आसमान देखने की नौबत न आई थी। आज़ाद ने जो इतने आदमियों के सामने पटकनी बताई, तो बड़ी किरकिरी हुई, और तमाम उम्र के लिये दाग़ लग गया।

अब तो मियाँ आज़ाद जगत्-गुरु हो गए; एकरंग का रंग फीका पड़ गया; पहलवान ने पटकनी खाई, शहर-भर में धूम हो गई; जिधर से निकल जाते, लोग अदब करते थे; जिससे चार आँखें हुई उसने ज़मीन चूमकर सलाम किया; अच्छे अच्छे बाँकों की कोर दबने लगी। जहाँ किसी शहज़ोर ने कमज़ोर को दबाया, और उसने गुल मचाया—दोहाई मियाँ आज़ाद की, और यह बाँड़ी लेकर आ पहुँचे। किसी बदमाश ने कमज़ोर को दबाया, और उसने डाँट बताई—नहीं मानते, बुलाऊँ मियाँ आज़ाद को ! शोहदे-लुच्चे उनसे ऐसे थर्राते थे, जैसे चूहे बिल्ली से, या मरीज़ तिल्ली से। नाम सुना और बग़लें झाँकने लगे; सूरत देखी और गली-कूचों में दबक रहे। शहर-भर में उनका डंका बज गया।

एक दिन आज़ाद सिरोही लिए ऐंडते जा रहे थे कि एक दर्ज़ी की दूकान के पास से निकले; देखते क्या हैं, एक रँगीले छैले, बाँके जवान छोटे पंजे का मख़मली जूता पहने, ज़ुल्फ़ें लटकाए, छुरी कमर से लगाए दर्ज़ी से तकरार कर रहे हैं। वाह मियाँ ख़लीफ़ा ! तुमने तो हमें उलटे छुरे से मूड़ा ! ख़ुदा जाने, किस कतर-ब्योंत में रहते हो। सीना-पिरोना तो नाम का है, हाँ, ज़बान अलबत्ता कतरनी की तरह चला करती है। तुमसे कपड़े सिलवाना अपनी मिट्टी ख़राब करना है। दम धागा देना ख़ूब जानते हो। टोपी ऐसी भोंडी बनाई कि फबतियाँ सुनते-सुनते नाकों दम आ गया।

दर्ज़ी—ऐ तो हुज़ूर, मैं इसको क्या करूँ ? मेरा भला इसमें क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुसूर है ? आपका सिर ही टेढ़ा है। मैं टोपी बनाता हूँ, सिर बनाना नहीं जानता।

बाँके—चोंच सँभाल, बहुत बढ़-बढ़कर बातें न बना। बाँकों के मुँह लगता है ? और सुनिए, हमारा सिर टेढ़ा है ! अबे, तेरा सिर साँचे का ढला है ? तेरे ऐसे-ऐसे दर्ज़ी मेरी जेब में पड़े रहते हैं, मुँह बंद कर, नहीं दूँगा उलटा हाथ, मुँह टेढ़ा हो जायगा। और तमाशा देखिए, हमारा सिर गोया कद्दू हो गया।

दर्ज़ी—आप मालिक हैं, मुल मेरी ख़ता नहीं। जैसा सिर वैसी टोपी। ऐसा सिर तो मैंने देखा ही नहीं; यह नई गढ़ंत का सिर है, आप फेरे लें, बस, मैं सी चुका। जब दाम देने का वक़्त आया, तो यह झमेला किया।

यह सुनते ही बाँके ने दर्ज़ी को इतना पीटा कि वह बेचारा बेदम हो गया। आख़िर कफ़न फाड़कर चीख़ा, दोहाई मियाँ आज़ाद की, दोहाई मेरे उस्ताद की। आज़ाद तो दूर से खड़े देख ही रहे थे, झट तलवार सैंत दूकान पर पहुँच गए। बाँके ने पीछे फिरकर देखा, तो मियाँ आज़ाद।

आज़ाद—वाह भाई बाँके, तुम सचमुच रुस्तम हो। बेचारे दर्ज़ी पर सारी चोटें साफ़ कर दीं। कभी किसी कड़ेख़ाँ से भी पाला पड़ा है ? कहीं गोहार भी लड़ा है ? या ग़रीबों ही पर शेर हो ? बड़े दिलेर हो, तो आओ, हमसे भी दो-दो हाथ हो जायँ। तुम ढेर हो जाओ, या हम चरका खायँ। आइए, फिर पैतरा बदलिए, लगा बढ़कर हाथ, इधर या उधर।

बाँके—हैं, हैं, उस्ताद, हमीं पर हाथ साफ़ करोगे, हम नौसिखिए तुम गुरू-घंटाल। मगर आप इस कमीने दर्ज़ी की तरफ़ से बोलते हैं, और शरीफ़ों पर तलवार तोलते हैं ! सुभान-अल्लाह ! आइए, आपसे कुछ कहना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—अच्छा, तोबा करो कि अब किसी ग़रीब को न धमकावेंगे।

बाँके—अजी हज़रत, धमकाना कैसा, हम तो खुद ही बला में फँसे हैं; खुदा ही बचावे तो बचें। यहाँ एक फ़िकैत है, उससे हमसे लाग-डाट हो गई है। कल नौचंदी के मेले में हमें घेरेगा, कोई दो सौ बाँकों के जथे से हम पर हरबा करना चाहता है। हम सोचते हैं कि दरगाह न जायँ, तो बाँकपन में बट्टा लगता है; और जायँ, तो किस बिरते पर ? यार, तुम साथ चलो, तो जान बचे; नहीं तो बेमौत मरें।

आज़ाद—अच्छा, तुम भी क्या कहोगे। लो, बीड़ा उठा लिया कि कल तुमको ले चलेंगे और सबसे भिड़ पड़ेंगे; दो सौ हों, चाहे हज़ार, हम हैं और हमारी कटार। इतनी कटारें भोकूँ कि दम बंद हो जाय, मगर यह बता दो कि क़ुसूर तुम्हारा तो नहीं है।

बाँके—नहीं उस्ताद, क़सम ले लो, जो मेरी तरफ़ से पहल हुई हो। मुझसे उन्होंने एक दिन अकड़कर कहा कि तू तलवार न बाँधा कर। मैं भी, आप जानिए, इंसान हूँ। पित्ता तो मछली के भी होता है। मुझे भी गुस्सा आ गया। मैंने कहा, धत्! तू और हमसे हथियार रखवा ले। बस, बिगड़ ही तो गया, और पंद्रह-बीस आदमी उसकी तरफ़ से बोलने लगे। मैंने भी जवाब दिया, दबा नहीं; मगर लड़ पड़ना मसलहत न थी। बाँका हूँ, तो क्या हुआ, बिना समझे-बूझे बात नहीं करता। ख़ैर, उसने ललकारकर कहा, अच्छा बचा, दरगाह में समझ लेंगे, अब की नौचंदी में हमीं न होंगे, या तुम्हीं न होगे।

आज़ाद—अच्छा, तुम लैस रहना, मैं दो घड़ी दिन रहे आऊँगा। घबराओ नहीं, तुम्हारा बाल-बाँका हो, तो मूँछ मुड़ा दूँ। ये दो सौ आदमी देखने ही-भर के होंगे। सच्चे दिलेर उनमें दो-ही-चार होंगे, जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद की तलवार का सामना करें। मौत से लड़ना दिल्लगी नहीं है; कलेजा चाहिए !

दूसरे दिन आज़ाद हथियार बाँधकर चले, तो रास्ते में बाँके मिल गए, और दोनों साथ-साथ टहलते हुए दरगाह पहुँचे।

नौचंदी जुमेरात, बनारस का बुढ़वामंगल मात; चारों तरफ़ चहल-पहल; कहीं 'तमाशाइयों' का हुजूम, हटो-बचो की धूम; आदमी-पर-आदमी टूटे पड़ते हैं, कोसों का ताँता लगा हुआ है, मेवेवाले आवाज़ लगा रहे हैं, तंबोली बीड़े बना रहे हैं, गँडेरियाँ हैं केवड़े की, रेवड़ियाँ हैं गुलाब की। आज़ाद घूरते-घारते फाटक पर दाख़िल हुए, तो देखा, सामने तीस-चालीस आदमियों का ग़ोल है। बाँके ने कान में कहा कि यही हज़रत हैं, देख लीजिए, दंगे पर आमादा हैं, या नहीं।

आज़ाद—भला यहाँ तुम्हारा भी कोई जान-पहचान है? हो, तो दस-पाँच को तुम भी बुला लो; भीड़-भड़क्का तो हो जाय। लड़नेवाले हम क्या कम हैं—मगर दो-चार जमाली ख़रबूज़े भी चाहिए, डाली की रौनक़ हो जाय।

बाँके—अभी लाया, आप ठहरें; मगर बाहर टहलिए, तो अच्छा है, यहाँ जोखिम है।

आज़ाद फाटक के बाहर टहलने लगे। फिकैत ने जो देखा कि दोनों खिसके, तो आपस में हाँडियाँ पकने लगीं—वह भगाया! वह हटाया! भागा है! उनके साथियों में से एक ने कहा—अजी वह भागा नहीं है, एक ही काइयाँ है, किसी टोह में गया है। एक बिगड़े-दिल बाहर गए, तो देखा, बाँके पच्छिम की तरफ़ गर्दन उठाए चले जाते हैं, और मियाँ आज़ाद फाटक से दस क़दम पर टहल रहे हैं। उलटे पाँव आकर ख़बर दी—उस्ताद, बस, यही मौक़ा है, चलिए, मार लिया है, बाएँ हाथ चला जाता है, और अकेला है। सब दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फाटक से चढ़ दौड़े। ठहर वे, ठहर! बस, रुक जा, आगे, के बंद खोले,
और ढेर हुए! हिले और दिया तुला हुआ हाथ! य तू आ, मैं आ।
आज नौचंदी है। लोगों ने चारों तरफ़ से घेर लियडे-तले के शोहदे,
फ़र्क़ कि ग़ज़ब ही हो गया। अब कुत्ते की मौत म घोल रहा है, कोई
लड़ूँगा? एक की दवा दो कि सौ। मियाँ छुरियाँ बनाईं, किसी ने
कर देता, तो वह झपट ही पड़ते; मगर अपने-अपने धंधे में लगे।
हमारा काम तमाम हो जायगा।—मीर साहब, आपने खुरके का
मुसीबत के मारे बाँके के एक लठ
टूट गई। गुल-ग़पाड़े की आवा है जनाब अमीर की, सत्तर और दो
कर पहुँचे, तो देखा, बाँके को आई, गुलाम ने आज तक आँखों से
उस पार हुए। ख़बरहोगा बड़ा दरख़्त। सारी दुनिया की उससे
लिया! बाँके के दि जिसे देखो, खुरके पर हत्थे लगाता है।
इतने में मियाँ आक़ुरबान जाऊँ, दरख़्त के बड़े होने में क्या शक
पड़े। तलवार का चर, कुरबान जाऊँ, बड़े गाँव तक, और लंदन से
गए; मैदान ख़ाली, अबका इसी पर दार-मदार है।
और दो साथी दूसरी ख़याल यही है कि दरख़्त होगा बहुत बड़ा;
तमंचा चलाया, मर बात यह है कि आख़िर किस दरख़्त से ज़्यादा
चरका दिया कि गर यह बात मालूम हो जाय, तो फिर जानिए कि
पीछे हट गए मालूम हुई। और भाई, सच पूछो, तो छान-बीन करने
आमने-साम्नी का मज़ा है।
सिर पर इ मिर्ज़ा—सुना, बरगद का दरख़्त बहुत बड़ा होता है।
आध चैव का हाल खुदा जाने, नीम का पेड़ तो हमने भी देखा है,
कर 'जं किसी शायर ने नीम के दरख़्त की बड़ाई की तारीफ़
फ़िकैत की।
धम-सेट्टन—हमने केले का पेड़, अमरूद का पेड़, ख़रबूज़े का पेड़,
इन्हीं आँखों देख डाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद की तल
है; कलेजा चाहि
दूसरे दिन आज़ा

दूसरा परिच्छेद

मिल गए, और दोनों
नौचंदी जुमेरात, बंधी बँधी कि नवाबों और रईसों में भी उनका
चहल-पहल; कहीं 'तमाशाई मरज़ होता है कि पहलवान, फिकैत,
आदमी-पर-आदमी टूटे पड़ते हैं, पर लेकर हवा खाने निकलें। एक
मेवेवाले आवाज़ लगा रहे हैं, तंबाखू। यह छैला बने हुए, दोहरी
हैं केवड़े की, रेवड़ियाँ हैं गुलाब की लिखा, नवाब साहब, अपनी मा
पर दाख़िल हुए, तो देखा, सामने तीसरे मसनद पर बैठे पेचवान
गोल है। बाँके ने कान में कहा कि यही हज़रत की गुज़री थी, कभी
दंगे पर आमादा हैं, या नहीं। ई थी, गोया बाहर
आज़ाद—भला यहाँ तुम्हारा भी कोई जान-पार में बैठना, यारों-
दस-पाँच को तुम भी बुला लो; भीड़-भड़क्का तो जमाया, कभी बाज़ी
वाले हम क्या कम हैं—मगर दो-चार जमाली, बिल्ली, मुहरे खट-खट
डाली की रौनक़ हो जाय। प्यादा मार लिया।
बाँके—अभी लाया, आप ठहरें; मगर बाहर टहरा, चंडू के छींटे
है, यहाँ जोखिम है। झुककर सलाम
आज़ाद फाटक के बाहर टहलने लगे। फिकैत ने क़रीब बिठाया,
दोनों खिसके, तो आपस में हाँडियाँ पकने लगीं—वह भगेलों के छक्के
हटाया! भागा है! उनके साथियों में से एक ने कहा—अजी
भागा नहीं है, एक ही काइयाँ है, किसी टोह में गया है। एक
दिल बाहर गए, तो देखा, बाँके पच्छिम की तरफ़ गर्दन उठाए थी, वह
जाते हैं, और मियाँ आज़ाद फाटक से दस क़दम पर टहल रहे
उलटे पाँव आकर ख़बर दी—उस्ताद, बस, यही मौक़ा है, चलिलाम
मार लिया है, बाएँ हाथ चला जाता है, और अकेला है। सब दूसे हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आए और एक कोने में जा डटे। मियाँ झम्मन अँगरखे के बंद खोले, गुद्दी पर टोपी रक्खे खट-से मौजूद। फिर क्या था, तू आ, मैं आ। दस-पंद्रह आदमी जमा हो गए; मगर सब झंडे-तले के शोहदे, छटे हुए गुरगे थे, कोई चीनी के प्याले में अफ़ीम घोल रहा है, कोई चंडू का क़वाम बना रहा है, किसी ने गँडेरियाँ बनाईं, किसी ने अमीर-हमज़ा का क़िस्सा छेड़ा; सब अपने-अपने धंधे में लगे। नवाब साहब ने मीर आग़ा से पूछा—मीर साहब, आपने खुश्के का दरख़्त भी देखा है?

मीर आग़ा—हुज़ूर, क़सम है जनाब अमीर की, सत्तर और दो बहत्तर बरस की उम्र होने को आई, गुलाम ने आज तक आँखों से नहीं देखा, लेकिन होगा बड़ा दरख़्त। सारी दुनिया की उससे परवरिश होती है, जिसे देखो, खुश्के पर हत्थे लगाता है।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊँ, दरख़्त के बड़े होने में क्या शक़ है। कश्मीर से लेकर, कुरबान जाऊँ, बड़े गाँव तक, और लंदन से लेकर विलायत तक, सबका इसी पर दार-मदार है।

नवाब—मेरा भी ख़याल यही है कि दरख़्त होगा बहुत बड़ा; लेकिन देखने की बात यह है कि आख़िर किस दरख़्त से ज़्यादा मिलता है। अगर यह बात मालूम हो जाय, तो फिर जानिए कि एक नई बात मालूम हुई। और भाई, सच पूछो, तो छान-बीन करने ही में ज़िंदगी का मज़ा है।

अच्छे मिर्ज़ा—सुना, बरगद का दरख़्त बहुत बड़ा होता है। झूठ-सच का हाल खुदा जाने, नीम का पेड़ तो हमने भी देखा है, लेकिन किसी शायर ने नीम के दरख़्त की बड़ाई की तारीफ़ नहीं की।

छुट्टन—हमने केले का पेड़, अमरूद का पेड़, ख़रबूज़े का पेड़, सब इन्हीं आँखों देख डाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—भला यहाँ किसी ने वाहवाह की फलियों का पेड़ भी देखा है ?

छुट्टन—जी हाँ, एक दफ़े नेपाल की तराई में देखा था; मगर शेर जो डकारा, तो मैं झप-से गेंदे के दरख़्त पर चढ़ गया। कुछ याद नहीं कि पत्ती कैसी होती है।

नवाब—खुरके के दरख़्त का कुछ हाल दरियाफ़्त करना चाहिए।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊँ, इन लोगों का एतबार क्या? सब सुनी-सुनाई कहते हैं। कुरबान जाऊँ, गुलाम ने वह बात सोची है कि सुनते ही फड़क जाइए।

नवाब—कहिए, कहिए! ज़रूर कहिए! आपको क़सम है। मुझे यक़ीन हो गया कि आप दूर की कौड़ी लाए होंगे।

अच्छे मिर्ज़ा—(कतारे को खड़ा करके) कुरबान जाऊँ, अगर खुरके का दरख़्त होगा, तो इस कतारे के बराबर ही होगा, न जौ-भर बड़ा, न तिल-भर छोटा।

नवाब—वाह मीर साहब, वाह, क्या बात निकाली है!

मुसाहब—सुभान-अल्लाह मीर साहब, क्या सूझ-बूझ है।

आज़ाद—आप तो अपने वक़्त के लालबुझक्कड़ निकले! मालूम होता है, सफ़र बहुत किया है।

अच्छे मिर्ज़ा—कौन, मैंने सफ़र! क़सम लो, जो नख़ास से बाहर गया हूँ। मगर कुरबान जाऊँ, लड़कपन ही से ज़हीन था। अब्बाजान तो बिलकुल बेवकूफ़ थे, मगर अम्माजान तो बला की औरत थीं, बात में बात पैदा करती थीं।

इतने में गुल-गपाड़े की आवाज़ आई। अंदर से मुबारकक़दम लौंडी सिर पीटती हुई आई—हुजूर, मैं सदक़े, जल्दी चलिए, यह हंगामा कहाँ हो रहा है? बड़ी बेगम साहबा खड़ी रो रही हैं कि मेरे बच्चे पर आँच न आ जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब साहब जूतियाँ छोड़कर अंदर भागे। दरवाज़े सब बंद! अब किसी को हुक्म नहीं कि ज़ोर से बोले। इतने में एक मुसाहब ने ड्योढ़ी पर से पुकारा—हुज़ूर, फिर आख़िर मियाँ आज़ाद किस मरज़ की दवा हैं? गँडेरी छीलने के काम के नहीं, क़वाम बनाना नहीं जानते, बटेर मुठियाना नहीं आता, इनको भेजकर दरियाफ़्त न कराइए कि दंगा कहाँ हो रहा है।

मुबारकक़दम—हाँ, हाँ, भेज दीजिए; कहिए, कुत्ते की चाल जायँ और बिल्ली की चाल आवें।

मियाँ आज़ाद ने कटार सँभाली, और बाहर निकले। राह में लोगों से पूछते जाते हैं कि भाई यह फ़िसाद क्या है? एक ने कहा, अजी चिकमंडी में छुरी चली। पाँच-चार क़दम आगे बढ़े, तो दो आदमी बातें करते जाते थे कि पंसारी ने पुड़िया में कद्दू के बीजों की जगह जमालगोटा बाँध दिया। गाँहक ने बिगड़कर पंसारी की गर्दन नापी। और दस क़दम चले, तो एक आदमी ने कहा, वह तो कहिए ख़ैरियत गुज़री कि जाग हो गई, नहीं तो भेड़िया घर-भर को उठा ले जाता। यह भेड़िया कैसा जी? हुज़ूर, एक मनिहार के घर से भेड़िया तीन बकरियाँ, दो मेंढे, एक खरहा और एक ख़ाली पिंजड़ा उड़ा ले गया। उसकी औरत को भी पीठ पर लाद चुका था कि मनिहार जाग उठा। अब आज़ाद चकराए कि भाई अजब बात है, जो है, नई सुनाता है। क़रीब पहुँचे, तो देखा, पंद्रह-बीस आदमी मिलकर छप्पर उठाते हैं, और गुल मचा रहे हैं। जितने मुँह, उतनी बातें। और हँसी तो यह आती है कि नवाब साहब बदहवास होकर घर के अंदर हो रहे। वहाँ से लौट-कर यह क़िस्सा बयान किया, तो लोगों की जान में जान आई; दरवाज़े खुले, फिर नवाब साहब बाहर आए।

नवाब—मियाँ आज़ाद, तुम्हारी दिलेरी से आज जी ख़ुश

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गया। आज मेरे यहाँ खाना खाना। आप ढाल नहीं बाँधते ?

आज़ाद—हुज़ूर, ढाल तो ज़नानों के लिये है, हम उम्र-भर एक-अंग लड़ा किए, तलवार ही से चोट लगाई, और उसी पर रोकी, या खाली दी, या काट गए। एक दिन आपको तलवार का कुछ हुनर दिखाऊँगा—आपकी आँखों में तलवार की बाढ़ से सुरमा लगाऊँगा।

नवाब—ना साहब, यह खेल उजड्डपन के हैं; मेरी रूह काँपती है, तलवार की सूरत देखते ही जूड़ी चढ़ आती है। हाँ, मिर्ज़ा साहब जीवट के आदमी हैं। इनकी आँखों में सुरमा लगाइए, यह उफ़ करने-वाले नहीं।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊँ हुज़ूर, अब तो बाल पक गए, दाँत चूहों की नज़र हुए, कमर टेढ़ी हुई, आँखों ने टका-सा जवाब दिया, होश-हवास चंपत हुए। क्या कहूँ हुज़ूर, जब लोगों को गँडेरियाँ चूसते देखता हूँ, तो मुँह देखकर रह जाता हूँ।

इतने में मियाँ कमाली, मियाँ झम्मन और मियाँ दुन्नी भी आ पहुँचे।

कमाली—खुदावंद, आज तो अजीब ख़बर सुनी, हवास जाते रहे। शहर-भर में खलबली मची है, अल्लाह बचावे, अब की गरमी की फ़सल ख़ैरियत से गुज़रती नहीं नज़र आती, आसार बुरे हैं।

नवाब—क्यों ? क्यों ? ख़ैर तो है ? क्या क़यामत आनेवाली है, या आफ़ताब सवा नेज़े पर हो रहा ? आख़िर माजरा क्या है, कुछ बताओ तो सही ?

अच्छे मिर्ज़ा—ऐ हुज़ूर, यह जब आते हैं, एक नया शिगोफ़ा छोड़ते हैं। खुदा जाने, कौन इनके कान में फूँक जाता है। ऐसी सुनाई कि नशा हिरन हो गया, जम्हाइयाँ आने लगीं।

कमाली—अजी, आप किस खेत की मूली हैं, हमसे तो बड़े-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ों के नशे हिरन हुए हैं। जब पहली तारीख़ आवेगी, तो आँखें खुल जायँगी, आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा। और दो-चार दिन मीठे टुकड़े उड़ा लो। वाह साहब, हम तो ढूँढ़-ढाँढ़कर ख़बरें लावें, आप दिन-भर पीनक में ऊँघा करें, और हमीं को उल्लू बनावें! पहली को क़लई खुल जायगी, बचा, सूरत बिगड़ जाय, तो सही।

नवाब—क्या! क्या! पहली तारीख़ कैसी? अरे मियाँ, तुम तो पहेलियाँ बुझवाते हो, आख़िर पहली को क्या होनेवाला है?

कमाली—ऐ हुज़ूर, यह न पूछिए, बस, कुछ कहा नहीं जाता। एक हलवाइन अभी जवान-जहान है। मारे हौके के औटा हुआ दूध जो पी गई, तो पेट फूलकर कुप्पा हो गया। किसी ने कुछ बताया, किसी ने कुछ नुसख़ा पिलाया; मगर वह अंटा-ग़फ़ील हो गई। अब सुनिए कि जब चिता पर जाने लगी, तो कुलबुलाकर उठ बैठी। अरे राम! अरे बाप-रे-बाप! यू का भवा? हलवाइयों ने वह बम-चख़ मचाई कि कुछ न पूछिए। "यू देखो लहास हिलत है! अरे यू का अंधेर भवा?" आख़िरकार दो-चार हलवाइयों ने जी कड़ा करके लाश को घसीट लिया और झटपट कफ़न फाड़कर उसे निकाला, तो टैयाँ-सी उठ बैठी। हुज़ूर, क़सम है ख़ुदा की, उसने वह-वह बातें बयान कीं कि कही नहीं जातीं। जब मरी, तो जमराज के दूतों ने मुझे उठाकर भगवान के पास पहुँचाया, सीताजी बैठी पूरी बेलत रहैं, हमका देख के भगवान बोले कि इसको ले जाओ। मुझे उसकी बोली तो याद नहीं, मगर मतलब यह था कि पहली को बड़ा अँधेरा-घुप छा जायगा और तूफ़ान आवेगा, जितने गुनहगार बंदे हैं, सब जलाए जायँगे, और अफ़ीमची जिस घर में होंगे, उसको फ़रिश्ते जलाकर ख़ाक-सियाह कर देंगे।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब—मिर्ज़ा साहब, ले बोरिया-बँधना उठाइए, आपका यहाँ ठिकाना नहीं। नाहक़ कहीं फ़रिश्ते मेरी कोठी फूँक दें, तो कहीं का न रहूँ। बस, बक़चा सँभालिए, कहीं और बिस्तर जमाइए।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊँ हुजूर, यह बड़ा बेईमान आदमी है। हुजूर तो भोले-भाले रईस हैं, जिसने जो कहा, मान लिया। भला कहीं फ़रिश्ते घर फूँका करते हैं? मुझ बुड्ढे को न निकालिए, कई पुश्तें इसी दरबार में गुज़र गईं, अब किसका दामन पकड़ूँ। अरे वाह रे झूठे, अच्छी बेपर की उड़ाई; हलवाइन मरी भी और जी भी उठी, बेसिर-पैर की बात।

नवाब—ख़ैर, कुछ भी हो, आप अपना सुबीता करें। मेरे बाप-दादा की मिलकियत कहीं फ़रिश्ते फूँक दें, तो बस! आप हैं किस मरज़ की दवा, चारपाइयाँ तोड़ा करते हैं।

अच्छे मिर्ज़ा—वाह री क़िस्मत, यहाँ जान लड़ा दी, बकरे की जान गई, खानेवाले को मज़ा न आया। इस शैतान से ख़ुदा समझे, जिसने मेरे हक़ में काँटे बोए। ख़ुदा करे, इसका आज के सातवें ही दिन जनाज़ा निकले। जैसे ही आकर बैठा, मेरी बाईं आँख फड़कने लगी, सो यह गुल खिला।

नवाब साहब मुसाहबों को यह नादिरी हुक्म देकर ज़नानख़ाने में चले गए कि मिर्ज़ा को निकलवा दो। उनके जाते ही मिर्ज़ा की ले-दे शुरू हो गई।

कमाली—मिर्ज़ा साहब, अफ़ीम का डब्बा बग़ल में दबाइए, और चलते फिरते नज़र आइए। सरकार का नादिरी हुक्म है, और छोटी बेगम साहबा महनामथ मचा रही हैं कि इस बुड्ढे को खड़े-खड़े निकाल दो। सो अब खिसकिए, नहीं बुरी होगी।

झम्मन—वाजिबी बात है, सरकार चलते-चलते हुक्म दे गए थे। हम लोग मजबूर हैं, अब आप अपना सुबीता कीजिए, अभी सबेरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, नहीं हम पर पिट्टस पड़ेगी। और, भाई जब फ़रिश्तों के आने का डर है, तो कोई तुमको क्योंकर अपने घर में रहने दे? कहीं एक ज़रा-सी चिनगारी रख दें, तो कहिए मकान जलकर ख़ाक-सियाह हो गया कि नहीं, फिर कैसी होगी?

अच्छे मिर्ज़ा—अबे, तो फ़रिश्ते कहीं गाँव जलाया करते हैं? वही ऊटपटाँग बात बकता है। लो साहब, हमारे रहने में जोखिम है, जो आठों पहर ड्योढ़ी पर बने रहते हैं। अच्छा अड़ंगा दिया।

कम्मन—अड़ंगा-वड़ंगा मैं नहीं जानता, अब आप खसकंत की ठहराइए, बहुत दिन मीठे टुकड़े उड़ाए, चुग़लियाँ खा-खाकर रईस का मिज़ाज बिगाड़ दिया, किसी से ज़रा-सी ख़ता हुई, और आपने जड़ दी। "भुस में चिनगी डाल जमालो अलग खड़ी।" पचासों भलेमानसों की रोटी ली। इंसान से ग़लती हो ही जाती है, यह चुग़ली खाना क्या माने। ओ ग़फ़ूर, मिर्ज़ा ने तुम्हें भी तो उखाड़ना चाहा था?

ग़फ़ूर—अरे, यह तो अपने बाप की जड़ खोदनेवाले आदमी हैं, भीतर से बाहर तक कोई तो इनसे खुश नहीं।

दुन्नी—मिर्ज़ा, अगर कुछ हया है, तो इस मुसाहबी पर लात मारो; जिस अल्लाह ने मुँह चीरा है, वह रोज़ी भी देगा।

मुबारकक़दम—ग़फ़ूर, ग़फ़ूर, छोटी बेगम साहबा का हुक्म है कि इस मुए अफ़ीमची को शहर से निकाल दो, कहती हैं, जब तक यह न टलेगा, दाहने हाथ का खाना हराम है।

अच्छे मिर्ज़ा—शहर से निकाल दो, तमाम शहर पर बेगम साहबा का क्या इज़ारा है? वह अभी कल आई, यहाँ इस घर में उम्र बीत गई।

कमाली—अबे ओ नमकहराम, छोटा मुँह बड़ी बात! बेगम साहबा के कहने को टुलखता है! इतनी पड़ेंगी बेभाव की कि याद करोगे, चाँद गंजी कर दी जायगी।

अच्छे मिर्ज़ा—अब जो यहाँ पानी पिए, उस पर लानत!

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कहकर मिर्ज़ा ने अफ़ीम की डिबिया उठाई, और चले। मुसाहबों ने उनके जलाने के लिये कहना शुरू किया—मिर्ज़ाजी, कभी-कभी आ जाया कीजिएगा। एक बोला—लाइए डिबिया, मैं पहुँचा दूँ। दूसरा बोला—कहिए तो घोड़ा कसवा दूँ। मिर्ज़ा ने किसी को कुछ जवाब न दिया, चुपके-से चले ही गए।

इधर पहली तारीख़ आई, तो मियाँ कमाली चकराए कि अब मैं झूठा बना और साख गई। लोगों ने नवाब को चंग पर चढ़ाया कि हुज़ूर, जो हम कहें, वह कीजिए, तो आज की बला टल जाय। नवाब ने मुसाहबों को सारा अख़्तियार दे दिया। फिर क्या था, एक तरफ़ ब्राह्मण देवता बैठे मंत्रों का जप कर रहे हैं, हवन हो रहा है, और स्वाहा-स्वाहा की आवाज़ आ रही है, दूसरी तरफ़ हाफ़िज़जी कुरान पढ़ रहे हैं, और दीवानख़ाने में महफ़िल जमी हुई है कि फ़रिश्तों को झंझोटी की धुन सुनाकर ख़ुश कर लिया जाय।

झम्मन—मिर्ज़ाजी न सिधारते तो ख़ुदा जाने, इस वक़्त क्या कुछ हो गया होता।

नवाब—होता क्या, कोठी-की-कोठी भक-से उड़ जाती। अब किसी अफ़ीमची को आने तक न दूँगा।

तीसरा परिच्छेद

नवाब साहब के दरबार में दिनोदिन आज़ाद का सम्मान बढ़ने लगा। यहाँ तक कि वह अक्सर खाना भी नवाब के साथ ही खाते। नौकरों को ताकीद कर दी गई कि आज़ाद का जो हुक्म हो, फ़ौरन बजा लाएँ, ज़रा भी मीन-मेख न करें। ज्यों-ज्यों आज़ाद के गुण नवाब पर खुलते जाते थे, और मुसाहबों की किरकिरी होती जाती थी। अभी लोगों ने अच्छे मिर्ज़ा को दरबार से निकलवाया था, अब आज़ाद के पीछे पड़े। यह सिर्फ़ पहलवानी ही जानते हैं, गदके और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिनवट के दो-चार हाथ कुछ सीख लिए हैं, बस, उसी पर अकड़ते फिरते हैं कि जो कुछ हूँ, बस, मैं ही हूँ। पढ़े-लिखे वाजिबी-ही-वाजिबी हैं, शायरी इन्हें नहीं आती, मज़हबी मुआमिलों में बिलकुल कोरे हैं।

एक दिन नवाब साहब के सामने एक साहब बोल उठे हुज़ूर, इस शहर में एक आलिम आया है, जो मंतिक़ (न्याय) के ज़ोर से झूठ को सच कर दिखाता है। मगर ख़ुदा को नहीं मानता; पक्का मुनकिर (नास्तिक) है। मियाँ आज़ाद को तो मंतक़ी बनने का दावा है। कहिए, उस आलिम को नीचा दिखाएँ।

आज़ाद—हाँ ! हाँ ! जब कहिए, तब; मुझे तो ऐसे मुनकिरों की तलाश रहती है। लाइए मंतक़ी साहब को, ख़ुदा का वह पक्का सबूत दूँ कि वह ख़ुद फड़क जायँ, ज़रा यहाँ तक लाइए तो सही, भागे राह न मिले। जो फिर इस शहर में मुँह दिखावें, तो आदमी न कहना।

नवाब—हाँ ! हाँ ! मीर साहब, ज़रा उनको फाँस-फूँसकर लाइए, तो मियाँ आज़ाद के जौहर तो खुलें।

मीर साहब ने ज़ोर से हुक़्क़े के दो-चार दम लगाए और झप-से उस आलिम को बुला लाए। हज़ारों आदमी बहस सुनने के लिये जमा हो गए, गोया बटेरों की पाली है। इतनी भीड़ थी कि थाली उछालिए तो सिर-ही-सिर जाय। आलिम ने आते ही पूछा कि कौन साहब बहस करेंगे? मियाँ आज़ाद बोले—हम हैं। अब सब लोग बेक़रार हो रहे हैं कि देखें क्या सवाल-जवाब होते हैं; चारों तरफ़ खिचड़ी पक रही है।

आलिम—जनाब, आप तो किसी अखाड़े के पट्ठे मालूम होते हैं; सूरत से तो ऐसा मालूम होता है कि आपको मंतिक़ छू भी नहीं गई।

आज़ाद—जी, सूरत पर न जाइएगा, कोई सवाल कीजिए, तो हम जवाब दें।

आलिम—अच्छा, पहले इन तीन सवालों का जवाब दीजिए—

पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति स्मृति संग्रह

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) ख़ुदा है, तो हमें नज़र क्यों नहीं आता?

(२) शैतान दोज़ख़ में जलाया जायगा। भला नारी (आग से बना हुआ) को आग का क्या डर? आग आग में नहीं जल सकती।

(३) जो करता है, ख़ुदा करता है, फिर इंसान का क़सूर क्या?

चारों तरफ़ सन्नाटा पड़ गया कि वाह क्या आलिम है, कैसे कड़े सवाल किए हैं कि कुछ जवाब ही नहीं सूझता। बिगड़े-दिल लोग दाँत पीस रहे हैं कि बाहर निकले, तो गरदन ही नापें। मियाँ आज़ाद कुछ देर तक तो चुपचाप खड़े रहे, फिर एक ढेला उठाकर उस आलिम की खोपड़ी पर मारा, बेचारा हाय करके बैठ गया। अच्छे जंगली से पाला पड़ा, मैं बहस करने आया था, या लप्पा-डुग्गी। जब कुछ जवाब न सूझा, तो पत्थर मारने लगे। जो मैं भी एक पत्थर खींच मारूँ, तो कैसी हो? नवाब साहब, आप ही इंसाफ़ कीजिए।

नवाब—भाई आज़ाद, हमें यह तुम्हारी हरकत पसंद नहीं आई। यह ढेलेबाज़ी के क्या माने? माना कि मुनकिर गर्दन मारने लायक़ होता है, मगर बहस करके क़ायल कीजिए, यह नहीं कि जूता खींच मारा या ढेला तानकर मारा।

कमाली—हुज़ूर, आलिम का जवाब देना कारेदारद है! ढेलेबाज़ी करना दूसरी बात है।

झम्मन—अजी, इसने बड़े-बड़े आलिमों को सर कर दिया, भला आज़ाद क्या इसके मुँह आवेंगे।

नवाब—यह पत्थर क्यों फेंका जी, बोलते क्यों नहीं?

आज़ाद—हुज़ूर, मैंने तो इनके तीनों सवालों का वह जवाब दिया कि अगर कोई क़दरदाँ होता, तो गले से लगा लेता, और करोड़ों रुपए इनाम भी देता, सुनिए—

(१) ख़ुदा है, तो हमें नज़र क्यों नहीं आता?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जवाब—अगर उस ढेले से इनके चोट लगी, तो चोट नज़र क्यों नहीं आती ?

सुभान-अल्लाह का दौंगड़ा बरस गया। वाह उस्ताद ! क्या जवाब दिया है कि दाँत खट्टे कर दिए !

(२) शैतान को जहन्नुम में जलाना बेकार है, वह तो खुद नारी (अग्निमय) है।

जवाब—इनसे पूछिए कि यह मिट्टी के ही पुतले हैं या नहीं ? इनकी खोपड़ी मिट्टी की बनी है या रबड़ की ? फिर मिट्टी का ढेला लगा, तो सिर क्यों भन्ना गया !

तमाशाइयों ने गुल मचाया—सुभान-अल्लाह ! वाह मियाँ आज़ाद ! क्या मुँहतोड़ जवाब दिया है !

(३) जो करता है खुदा करता है।

जवाब—फिर ढेले मारने का इलज़ाम हम पर क्यों है ?

चारों तरफ़ टोपियाँ उछलने लगीं—वाह मेरे शेर ! क्या कहना है ! कहिए, अब तो आप खुदा के क़ायल हुए, या अब भी कुछ मीन-मेख है ? लाख बातों की एक बात यह है कि जब आपका सिर मिट्टी का है, और मिट्टी ही का ढेला मारा, तब आपकी खोपड़ी क्यों भन्नाई। मियाँ मुनकिर बहुत झेंपे, समझ गए कि यहाँ शोहदों का जमघट है, चुपके-से अपने घर की राह ली। आज़ाद की और भी धाक बँधी। अब तक तो पहलवान और फिकैत ही मशहूर थे, अब आलिम भी मशहूर हुए। नवाब ने पीठ ठोंकी, वाह क्यों न हो ! पहले तो मैं झल्लाया कि ढेलेबाज़ी कैसी, मगर फिर तो फड़क गया।

मुसाहबों का यह वार भी ख़ाली गया, तो फिर हँडिया पकने लगी कि आज़ाद को उखाड़ने की कोई दूसरी तदबीर करनी चाहिए। अगर यह यहाँ जम गया, तो हम सभों को निकलवाकर छोड़ेगा। यह राय हुई कि नवाब साहब से कहा जाय, हुजूर आज़ाद को हुक्म दें

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वह बटेरों को मुठियावें, बटेरों को लड़ावें। फिर देखें, बच्चा क्या करते हैं। बग़लें न झाँकने लगें, तो सही। यह हुनर ही दूसरा है।

आपस में यह सलाह कर एक दिन मियाँ कमाली बोले—हुज़ूर, अगर मियाँ आज़ाद बटेर लड़ावें, तो सारे शहर में हुज़ूर की धूम हो जाय।

नवाब—क्यों मियाँ आज़ाद, कभी बटेर भी लड़ाए हैं?

झम्मन—आज हमारी सरकार में जितने बटेर हैं, उतने तो मटिया-बुर्ज के चिड़िया-ख़ाने में भी न होंगे। एक-एक बटेर हज़ार-हज़ार की ख़रीद का, मोकदम के बनाने में तोड़े-के-तोड़े उड़ गए, सेरों मोती तो पीसकर मैंने अपने हाथों खिला दिए हैं; कुछ दिनों रोज़ ख़रल चलता था, मगर आप भी कहेंगे कि हम आदमी हैं! इस ड्योढ़ी पर इतने दिनों से हो, अब तक बटेर-ख़ाना भी न देखा? ले आओ, चलो, तुमको सैर करावें।

यह कहकर आज़ाद को बटेर-ख़ाने ले गए। मियाँ आज़ाद क्या देखते हैं कि चारों तरफ़ काबुकें-ही-काबुकें नज़र आती हैं, और काबुकें भी कैसी, हाथीदाँत की तीलियाँ, उन पर गंगा-जमुनी कलस, कार-चोबी छतें, कामदार मख़मली ग़िलाफ़ें, रंग-बिरंग सोने-चाँदी की नन्हीं-नन्ही कटोरियाँ, जिनमें बटेर अपनी प्यारी-प्यारी चोंचों से पानी पिएँ, पाँच-पाँच छः-छः सौ लागत की काबुकें थीं, खूँटियाँ भी रंग-बिरंगी। दुन्नी मियाँ एक-एक काबुक उतारकर बटेर की तारीफ़ करने लगे, तो पुल बाँध दिए। एक बटेर को दिखाकर कहा—अल्लाह रक्खें, क्या मझोला जानवर है! सफ़शिकन (दलसंहार) जो आपने सुना हो, तो यही है। लंदन तक ख़बर के काग़ज़ में इनका नाम छप गया। मेरी जान की क़सम, ज़रा इसकी आनबान तो देखिएगा। हाय, क्या बाँका बटेर है। यह नवाब साहब के दादा जान के वक़्त का है। ऐसे रईस पैदा कहाँ होते हैं! दम-के-दम में लाखों फूँक दिए, रुपए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को ठीकरा समझ लिया । पतंगबाज़ी का शौक़ हुआ, तो शहर-भर के पतंगबाज़ों को निहाल कर दिया, कनकौवेवाले बन गए । अजी, और तो और, लौंडे, जो गली-कूचों में लंगर और लग्गे ले-लेकर डोर लूटा करते हैं, रोज़ डोर बेच-बेचकर चखौतियाँ करते थे । अफ़ीम का शौक़ हुआ, तो इतनी ख़रीदी कि टके सेर से सोलह रुपए सेर बिकने लगी । मालवा ख़ाली, चीन खुक्खल ! बंबई तक के गन्ने आते थे ।

आज़ाद—ऐसे ही कितने रईस बिगड़ गए !

कमाली—रईसों के बनने-बिगड़ने की क्या फ़िक्र ! यहाँ तो जो शौक़ किया, ऐसा ही किया; फिर, भला बटेरबाज़ी में उनके सामने कौन ठहरता । उनके वक़्त का अब यह एक सफ़शिकन बाक़ी रह गया है । बुज़ुर्गों की निशानी है । बस, यह समझिए कि मुहम्मदअली शाह के वक़्त में ख़रीदा गया था । अब कोई सौ बरस का होगा दो कम या दो ऊपर ; मगर बुढ़ापे में भी वह दमख़म है कि मुर्ग़ को लपककर लात दे, तो वह भी चें बोल जाय । पारसाल की दिल्लगी सुनिए, नवाब साहब के मामूँ तशरीफ़ लाए । उनमें भी रियासत की बू है ; कनकौवा तो ऐसा लड़ाते हैं कि मियाँ विलायती उनके आगे पानी भरें । दो-दो तोले अफ़ीम पी जायँ, और वही ख़मदम ! बटेरबाज़ी का भी परले सिरे का शौक़ है । उनका ज़फ़रपैकर तो बला का बटेर है, बटेर क्या है, शेर है । मेरे मुँह से निकल गया कि हुज़ूर को तो बटेरों का बहुत शौक़ है, करोड़ों ही बटेर देख डाले होंगे, मगर सफ़शिकन-सा बटेर तो हुज़ूर ने भी न देखा होगा । बोले, इसकी हक़ीक़त क्या है, ज़फ़रपैकर को देखो तो आँखें खुल जायँ, बढ़कर एक लात दे, तो सफ़शिकन क्या, आपको नोऽदम पाली बाहर कर दे । हौसला हो, तो मँगवाऊँ ।

दूसरे दिन पाली हुई । हज़ारों आदमी आ पहुँचे । शहर-भर

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में धूम थी कि आज बड़े मार्के का जोड़ है। ज़फ़रपैकर इस ठाट से आया कि ज़मीन हिल गई; और मेरा तो कलेजा दहलने लगा। मगर सफ़शिकन ने उस दिन आबरू रख ली; जभी तो नवाब साहब इसको बच्चों से भी ज़्यादा प्यार करते हैं! पहले इसको दाना खिलवा लेते हैं, फिर कहीं आप खाते हैं। एक दिन ख़ुदा जाने, बिल्ली देखी, या क्या हुआ कि अपने-आप फड़कने लगा। नवाब समझे कि बूँदा हो गया, फिर तो ऐसे धारोधार रोए कि घर भर में कुहराम मच गया। मैंने नवाब साहब को कभी रोते नहीं देखा। मुहर्रम की मजलिसों में एक आँसू नहीं निकलता। जब बड़े नवाब साहब सिधारे, तो आँसू की एक बूँद न गिरी। यह बटेर ही ऐसा अनमोल है! सच तो यह है कि उसने उस दिन नवाब की सात पीढ़ियों पर एहसान किया। वल्लाह, जो कहीं घट जाता, तो मैं तो जंगल की राह लेता। मियाँ, जग में आबरू ही आबरू तो है और क्या; ख़ैर साहब, जैसे ही दोनों चक्खी खा चुके, ज़फ़रपैकर बिजली की तरह सफ़शिकन की तरफ़ चला। आते ही दबोच बैठा, चोटी को चोंच से पकड़कर ऐसा झपेटा कि दूसरा होता तो एक रगड़े में फुर्र-से भाग निकलता। नवाब का चेहरा फ़क़ हो गया, मुँह पर हवाइयाँ छूटने लगीं, कि इतने में सफ़शिकन लौट ही तो पड़ा। वाह मेरे शेर! ख़ूब फिरा!! पाली-भर में आवाज़ गूँजने लगी कि वह मारा है! एक लात ऐसी जमाई कि ज़फ़रपैकर ने मुँह फेर दिया। मुँह का फेरना था कि सफ़शिकन ने उचककर एक झँझौटी बताई। वाह पट्ठे और लगा! आख़िर, ज़फ़रपैकर नौकदम पाली बाहर भागा। चारों तरफ़ टोपियाँ उछल गईं! आज यह बटेर अपना सानी नहीं रखता! मियाँ आज़ाद, अब आप बटेर-ख़ाना अपने हाथ में लीजिए।

नवाब—वल्लाह, यही मैं भी कहनेवाला था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्द्र विद्यावाचस्पति
चन्द्रलोक, जवाहर २७.
दिल्ली द्वारा
गुरुकुल कांगड़ी ... को भेंट

झम्मन—काम ज़रा मुशकिल है।

दुन्नी—बटेरों का लड़ाना दिल्लगी नहीं, बड़े तजरबे की ज़रूरत है।

आज़ाद—हुज़ूर फ़रमाते हैं, तो बटेर-ख़ाने की निगरानी मैं ही करूँगा।

कहने को तो आज़ाद ने यह कह दिया, मगर न कभी बटेर लड़ाए थे, न जानते थे कि इनको कैसे लड़ाया जाता है। घबराए, अगर कहीं नवाब के बटेर हारे, तो सारी बला मेरे सिर पड़ेगी। कुछ ऐसी तदबीर करनी चाहिए कि यह बला टल जाय। जब शाम हुई तो वह सबकी नज़रें बचाकर बटेर-ख़ाने में गए और काबुकों की खिड़कियाँ खोल दीं। बटेर सब फुर्र-से भाग गए। पिंजरे ख़ाली हो गए। कई पुश्तों की बसाई हुई बस्ती उजड़ गई। बटेरों को उड़ाकर आज़ाद ने घर की राह ली।

दूसरे दिन मियाँ आज़ाद सवेरे मुँह-अँधेरे बाज़ार में गश्त करते हुए नवाब साहब की तरफ़ चले। बाज़ार-भर में सन्नाटा! हलवाई भट्ठी में सो रहा है, नानबाई बरतन धो रहा है, बज़ाज़ा बंद, कुजड़ों की दूकान पर अरुई, न शकरकंद, जौहरियों की दूकान में ताला पड़ा हुआ है, मगर तंबाकूवाला जगा हुआ है। मेहतर सड़क पर झाड़ू दे रहा है। मैदेवाला पिसनहारियों से आटा ले रहा है। इतने में देखते क्या हैं कि एक आदमी लुंगी बाँधे, हाथ में चिलम लिए, बौखलाया हुआ घूम रहा है कि कहीं से एक चिनगारी मिल जाय तो दम लगे। धुआँधार हुक़्क़ा उड़े। जहाँ जाते हैं, 'फिर', 'भाग' की आवाज़ आती है। भाई, ऐसा शहर नहीं देखा जहाँ आग माँगे न मिले, जानो इसमें भी कोई छप्पन टके ख़र्च होते हैं। मुहल्लेवालों को गालियाँ देते हुए नानबाई की दूकान पर पहुँचे और बोले—बड़े भाई, एक ज़री आग तो झप-से दे देना, मेरा यार, ला तो झटपट।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नानबाई—अच्छा, अच्छा तो दूकान से अलग रहो, छाती पर क्यों चढ़े बैठते हो। यहाँ सौ धंधे करने हैं, आपकी तरह कोई बेफ़िकर तो हूँ नहीं कि तड़का हुआ, चिलम ली, और लगे कौड़ी-दूकान माँगने! मिल गई तो ख़ैर, नहीं तो गालियाँ देनी शुरू कीं। सबेरे-सबेरे अल्लाह का नाम, न राम-राम! चिलम लिए दूकान पर डट गए। वाह, अच्छी दिल्लगी है! ऐसी ही तलब है तो एक कंडी क्यों नहीं गाड़ रखते कि रात-भर आग-ही-आग रहे। ऐसे ही उचक्के तो चोरी करते हैं। आँख चूकी, और माल ग़ायब! क्या सहल लटका है कि चिलम लेकर आग माँगने आए हैं। किसी दिन मैं चिलम-विलम न तोड़-ताड़कर फेंक दूँ! तुम तड़के-तड़के दूकान पर न आया करो जी, नहीं तो किसी दिन ठायँ-ठायँ हो जावेगी।

हज़रत की आँखों से ख़ून टपकने लगा, दाँत पीसकर रह गए। वहाँ से चले, तो हलवाई की दूकान पर पहुँचे और बोले—मियाँ एक ज़री-सी आग देना, भाई हो न! हलवाई का दूध बिल्ली पी गई थी, झल्लाया बैठा था, समझा कि कोई फ़क़ीर भीख माँगने आया है। झिड़ककर बोला कि और दूकान देखो। सबेरे-सबेरे कौड़ी की पड़ गई। जाता है कि दूँ धक्का! रहें कहीं, मरें कहीं, कौड़ी माँगने यहाँ मौजूद। 'दुनिया-भर के मुर्दे नानामऊ घाट!' अब खड़ा घूरता क्या है?

चिलमबाज़—कुछ वाही हुआ है बे। अबे, हम कोई फ़क़ीर हैं, कहीं मैं आकर एक घस्सा दूँ न! लो साहब! हम तो आग माँगने आए हैं, और यह हमको भिखमंगा बनाता है। अंधा है क्या!

हलवाई—भिखमंगा नहीं, तू है कौन, लँगोटी बाँध ली, और चले आग माँगने! तुम्हारे बाबा का क़र्ज़ खाया है क्या?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेचारे यहाँ से भी निराश हुए, चुपके-से कान दबाए चल खड़े हुए। आज तड़के-तड़के किसका मुँह देखा था कि जहाँ जाते हैं झौड़ हो जाती है। इतने में देखा कि एक सुनार की दूकान पर आग दहक रही है। उधर लपके। सुनार दूकान पर न था। यह तो हुक़्क़े की फ़िक्र में चौंधियाए हुए थे ही, झप-से दूकान पर चढ़ गए। सुनार भी उसी वक़्त आ गया और इनको देखकर आग-भभूका हो गया। तू कौन है बे? वाह, ख़ासी दूकान पर क्या मज़े से चढ़ आए। (एक धप जमाकर) और जो कोई अदद जाता रहता? इतने में दस-पाँच आदमी जमा हो गए। क्या है मियाँ, क्या है? क्यों भले आदमी की आबरू बिगाड़े देते हो?

सुनार—है क्या! यह हमारे दूकान पर चोरी करने आए थे?

चिलमबाज़—मैं चोर हूँ, चोर की ऐसी ही सूरत होती है?

एक आदमी—कौन! तुम! तुम तो हमें पक्के चोर मालूम होते हो। अच्छा, तुम फिर उनकी दूकान पर गए क्यों? दूकानदार नहीं था, तो वहाँ तुम्हारा क्या काम? जो कोई गहना ले भागते, तो यह तुम्हें कहाँ ढूँढ़ते-फिरते?

सुनार—साहब, इनका फिर पता कहाँ मिलता। जाते जमुना उस पार। चलो थाने पर।

लोगों ने सुनार को समझाया, भाई, अब जाने दो। देखोजी ख़बरदार, अब किसी की दूकान पर न चढ़ना, नहीं पथे जाओगे। सुनार ने छोड़ दिया। जब आप चलने लगे, तो उसे इन पर तरस आ गया। बोला, अच्छा आग लेते जाओ। हज़रत ने आग पाई और घर की राह ली। तड़के-तड़के अच्छी बोहनी हुई, चोर बने, मार खाई, झिड़के गए, थाने जाते-जाते बचे, तब कहीं आग मिली।

मियाँ आज़ाद यह दिल्लगी देखकर आगे बढ़े और नवाब की ड्योढ़ी पर आए।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब—आज इतना दिन चढ़ गया, कहाँ थे ?

आज़ाद—हुज़ूर, आज बड़ी दिल्लगी देखने में आई, हँसते-हँसते लोट जाइएगा। तलब भी क्या बुरी चीज़ है।

यह कहकर आज़ाद ने सारी दास्तान सुनाई।

नवाब—खूब दिल्लगी हुई। आग के बदले चपतें पड़ीं। अरे मियाँ, ज़रा ख़ोजी को बुलाना। हाँ, ज़रा ख़ोजी के सामने सुनाना। किसी दिन यह भी न पिटें।

ख़ोजी नवाब के दरबार के मसख़रे थे। ठेगना क़द, काले कौए का-सा रंग, बदन पर मांस नहीं; पर आँखों में सुरमा लगाए हुए। लुढ़कते हुए आए और बोले—गुलाम को हुजूर ने याद किया है ?

नवाब—हाँ, इस वक़्त किस फ़िक्र में थे ?

ख़ोजी—ख़ुदावंद, अफ़ीम घोल रहा था; और कोई फ़िक्र तो हुज़ूर की बदौलत क़रीब नहीं फटकने पाती। मैं फ़िक्र क्या जानूँ, "जोरू न जाँता, अल्लाह मियाँ से नाता।"

नवाब—अच्छा ख़ोजी, इस हौज़ में नहाओ तो एक अशर्फ़ी देता हूँ।

ख़ोजी—हुज़ूर, अशर्फ़ियाँ तो आपकी जूतियों के सदक़े से बहुत-सी मिल जायँगी, मगर फिर जीना कठिन हो जायगा। न मरे सही, लेकिन, "नकटा जिया बुरे हवाल !" न साहब, मुझे तो कोई एक ग़ोते पर एक अशर्फ़ी दे, तो भी पानी में न पैठूँ, पानी की सूरत देखे बदन काँप उठता है।

दुन्नी—कैसे मर्द हो कि नहाने से डरते हो !

ख़ोजी—हम नहीं नहाते तो आप कोई क़ाज़ी हैं ?

आज़ाद—अजी, सरकार का हुक्म है।

ख़ोजी—चलिए, आपकी बला से। कहने लगे सरकार का हुक्म है। फिर कोई अपनी जान दे ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—हुज़ूर, जो इस वक़्त यह हौज़ में धम-से न कूद पड़ें, तो अफ़ीम इन्हें न मिले।

ख़ोजी—आप कौन बीच में बोलनेवाले होते हैं? अरसठ बरस से तो मैं अफ़ीम खाता आया हूँ, अब आपके कहने से छोड़ दूँ, तो कहिए, मरा या जिया।

नवाब—अच्छा भाई जाने दो; दूध खाओगे?

ख़ोजी—वाह ख़ुदावंद, नेकी और पूछ-पूछ। लेकिन ज़री मिठास ख़ूब हो। शाहजहाँपुर की सफ़ेद शक्कर या कालपी की मिश्री घोलिएगा। अगर थोड़ा-सा केवड़ा भी गबड़ दीजिए तो पीते ही आँखें खुल जायँ।

इतने में एक चोबदार घबराया हुआ आया और बोला—ख़ुदावंद, ग़ज़ब हो गया। जाँबख़्शी हो तो अर्ज़ करूँ। सब बटेर उड़ गए।

नवाब—अरे! सब उड़ गए!

चोबदार—क्या कहूँ हुज़ूर, एक का भी पता नहीं।

मुसाहबों ने हाय-हाय करनी शुरु की, कोई सिर पीटने लगा, कोई छाती कूटने लगा। नवाब ने रोते हुए कहा, भाई, और जो गए सो गए, मेरे सफ़शिकन को जो कोई ढूँढ लाए, हज़ार रूपए नक़्द दूँ। इस वक़्त मैं जीते-जी मर मिटा। अभी साँड़नी-सवारों को हुक्म दो कि पचकोसी दौरा करें। जहाँ सफ़शिकन मिलें, समझा-बुझाकर ले ही आवें।

झम्मन—उनको समझाना हुज़ूर मुशकिल है। वह तो अरबी में बातें करते हैं। सारा क़ुरान उन्हें याद है। उनसे कौन बहस करेगा!

नवाब—मुझे तो उससे इश्क़ हो गया था जी, वह नोकीली चोंच, वह अकड़-अकड़कर काकुन चुनना! सैकड़ों पालियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़ीं, मगर कोरा आया। किस बाँकपन से झपटकर लात देता था कि पाली-भर थर्रा उठती थी। उसकी बिसात ही क्या थी, मझोला जानवर, लेकिन मैदान का शेर। यह तो मैं पहले ही से जानता था कि यह बटेर की सूरत में किसी फ़क़ीर की रूह है। अब सुना कि नमाज़ भी पढ़ता था।

झम्मन—हुज़ूर को याद होगा कि रमज़ान के महीने में उसने दिन के वक़्त दाना तक न छुआ; हुज़ूर समझे थे कि बूँदा हो गया, मगर मैं ताड़ गया कि रोज़े से है।

ख़ोजी—ख़ुदावंद, अब मैं हुज़ूर से कहता हूँ कि दस-पाँच दफ़ा मैंने अफ़ीम भी पिला दी, मगर वल्लाह, जो ज़रा भी नशा हुआ हो!

कमाली—हुज़ूर, यक़ीन जानिए, पिछले पहर से सुबह तक काबुक से हक़-हक़ की आवाज़ आया करती थी। ग़फ़ूर, तुमको भी तो हमने कई बार जगाकर सुनाया था कि सफ़ाशिकन ख़ुदा को याद कर रहे हैं।

नवाब—अफ़सोस, हमने उसे पहचाना ही नहीं। दिल डूबा जाता है, कोई पंखा झलना।

मुसाहब—जल्दी पंखा लाओ।

नवाब—

पीतम जो मैं जानती कि प्रीति किए दुख होय;
नगर ढिंढोरा पीटती कि प्रीति करै जनि कोय।

खोजी—(पीनक से चौंककर) हाँ उस्ताद, छेड़े जा। इस वक़्त तो मियाँ शोरी की रूह फड़क गई होगी।

नवाब—चुप, नामाकूल। कोई है? इनको यहाँ से टहलाओ। यह रईसों की सोहबत के क़ाबिल नहीं। मुझको भी कोई गवैया समझा है। यहाँ तो जी जलता है, इनके नज़दीक क़ौवाली हो रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—ख़ुदावंद, गुलाम तो इस दम अपने आपे में नहीं। हाय, सफ़शिकन की काबुक ख़ाली हो और मैं अपने आपे में रहूँ! हुज़ूर ने इस वक़्त मुझ पर बड़ा ज़ुल्म किया।

नवाब—शाबाश ख़ोजी, शाबाश! मुआफ़ करना, मैं कुछ और ही समझा था। क्यों जी, साँड़नी-सवार दौड़ाया गया कि नहीं?

सवार—हुज़ूर, जाता तो हूँ; मगर वह मेरी क्या सुनेंगे; कोई मौलवी भी तो साथ भेजिए, मैं तो कुछ ऊँट ही चढ़ना जानता हूँ। उनसे दलील कौन करेगा भला!

आज़ाद—किसी अच्छे मौलवी को बुलवाना चाहिए।

मुसाहबों ने एक मौलाना साहब को तजवीज़ा; मगर यारों ने उनसे कुछ दास्तान नहीं बयान की। चोबदार ने मकान पर जाकर सिर्फ़ इतना कहा कि नवाब साहब ने आपको याद किया है। मौलवी साहब उसके साथ हो लिए, और दरबार में आकर नवाब साहब को सलाम किया।

नवाब—आपको इसलिये तकलीफ़ दी कि मेरे आँखों का नूर, मेरे कलेजे का टुकड़ा, नाराज़ होकर चला गया है। बड़ा आलिम और दीनदार है, बहस करने में कोई उससे पेश नहीं पाता, आप जाइए और उसको माक़ूल करके ले आइए।

मौलाना—माँ-बाप का बड़ा हक़ होता है। वह कैसे नादान आदमी हैं?

ख़ोजी—मौलाना साहब, वह आदमी नहीं हैं, बटेर हैं। मगर इल्म में, और अक़्ल में आदमियों के भी कान काटते हैं।

कमाली—सफ़शिकन का नाम तो मौलाना साहब, आपने सुना होगा। वह तो दूर-दूर तक मशहूर थे। जनाब, बात यह है कि सरकार का बटेर सफ़शिकन कल काबुक से उड़ गया। अब यह तजवीज़ हुई है कि एक साँड़नी-सवार जाय और उसे समझा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुझाकर ले आए। मगर ऊँटवान तो फिर ऊँटवान, वह दलील करना क्या जाने, इसलिये आप बुलाए गए हैं कि साँड़नी पर सवार हों, और उनको किसी तदबीर से ले आएँ।

मौलाना—ठीक, आप सब-के-सब नशे में तो नहीं हैं। होश की बातें करो। खुद मसख़रे बनते हो, या मुझे मसख़रा बनाते हो। बटेर भी आलिम होता है, वह भी कोई मौलवी है, ला हौल! अच्छे-अच्छे गाउदी जमा हैं, बंदा जाता है।

नवाब—यह किस कोड़मग़ज़ को लाए थे जी? ख़ासा जाँगलू है।

आज़ाद—अच्छा, हुज़ूर भी क्या याद करेंगे कि इतने बड़े दरबार में एक भी मंतक़ी न निकला। अब गुलाम ने बीड़ा उठा लिया कि जाऊँगा और सफ़शिकन को लाऊँगा। मुझे एक साँड़नी दीजिए, मैं उसे खुद ही चला लूँगा। ख़र्च के लिये कुछ रुपए भी दिलवाइए, न-जाने कितने दिन लग जायँ।

नवाब—अच्छा, आप घर जाइए और लैस होकर आइए।

मियाँ आज़ाद घर गए तो और मुसाहबों में खिचड़ी पकने लगी—यार, यह तो बाज़ी जीत ले गया। कहीं से एकआध बटेर पकड़कर लाएगा और कहेगा, यही सफ़शिकन है। फिर तो हम सब पर शेर हो जायगा। हमको-आपको कोई न पूछेगा। ख़ोजी जाकर नवाब साहब से बोले—हुज़ूर, अभी मियाँ आज़ाद दो दिन से इस दरबार में आए हैं, उनका एतबार क्या। जो साँड़नी ही लेकर रफ़ू-चक्कर हों, तो फिर कोई कहाँ उनका पता लगाता फिरेगा।

कमाली—हाँ खुदावंद, कहते तो सच हैं।

झम्मन—ख़ोजी, सूरत ही से अहमक़ मालूम होते हैं, मगर बात ठिकाने की कहते हैं। ऐसे आदमी का ठिकाना क्या।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुज्जी—हम तो हुज़ूर को सलाह न देंगे कि मियाँ आज़ाद को साँड़नी और सफ़र-ख़र्च दीजिए। जोखिम की बात है।

नवाब—चलो, बस, बहुत न बको। तुम ख़ुद जैसे हो, वैसा ही दूसरों को समझते हो। आज़ाद की सूरत कहे देती है कि कोई शरीफ़ आदमी है और मान लिया कि साँड़नी जाती ही रहे तो मेरा क्या बिगड़ जायगा। सफ़शिकन पर से लाखों सदक़े हैं। साँड़नी की हक़ीक़त ही क्या।

इतने में मियाँ आज़ाद घर से तैयार होकर आ गए। अशर्फ़ियों की एक थैली ख़र्च के लिये मिली। नवाब ने गले लगाकर रुख़सत किया। मुसाहब भी सलाम बजा लाए। आज़ाद साँड़नी पर बैठे और साँड़नी हवा हो गई।

चौथा परिच्छेद

आज़ाद यह तो जानते ही थे कि नवाब के मुसाहबों में से कोई चौक के बाहर जानेवाला नहीं, इसलिये उन्होंने साँड़नी तो एक सराय में बाँध दी और आप अपने घर आए। रुपए हाथ में थे ही, सवेरे घर से उठ खड़े होते, कभी साँड़नी पर, कभी पैदल, शहर और शहर के आस-पास के हिस्सों में चक्कर लगाते, शाम को फिर साँड़नी सराय में बाँध देते, और घर चले आते। एक रोज़ सुबह के वक़्त घर से निकले, तो क्या देखते हैं कि एक साहब केचुललेट का धानी रँगा हुआ कुरता, उस पर रुपए गज़वाली महीन शरबती का तीन कमरतोई का चुस्त अँगरखा, गुल-बदन का चूड़ीदार घुटन्ना पहने, माँग निकाले, इत्र लगाए, माशे-भर की नन्ही-सी टोपी आलपीन से अटकाए, हाथों में मेंहदी, पोर-पोर छल्ले, आँखों में सुर्मा, छोटे पंजे का मख़मली जूता पहने, एक अजब लोच से कमर लचकाते, फूँक-फूँककर क़दम रखते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चले आते थे। दोनों ने एक दूसरे को खूब ज़ोर से घूरा। छैले मियाँ ने मुसकिराते हुए आवाज़ दी—ऐ, ज़री इधर तो देखो, हवा के घोड़े पर सवार हो! मेरा कलेजा बाल्लियों उछलता है। भरी बरसात के दिन, कहीं फिसल न पड़ो, तो क़हक़हा उड़े।

आज़ाद—आप अपना मतलब कहिए, मेरे फिसलने की फ़िक्र न कीजिए।

छैला—गिरिएगा, तो मुझसे ज़रूर पूछ लीजिएगा।

आज़ाद—बहुत खूब, ज़रूर पूछूँगा, बल्कि आपको साथ लेकर गिरूँ तो सही।

छैला—खुदा की क़सम, आपके काले कपड़ों से मैं समझा कि बनैला कुसुम के खेत से निकल पड़ा।

आज़ाद—और मैं आपको देखकर यह समझा कि कोई ज़नाना मटकता जाता है।

छैला—वल्लाह, आपकी धज ही निराली है। यह डबल कोट और लक्कड़-तोड़ बूट! जाँगलू मालूम होते हो। इस वक़्त ऐसे बद-हवास कहाँ बगटुट भागे जाते हो? सच कहिएगा, आपको हमारी जान की क़सम।

आज़ाद—आज प्रोफ़ेसर लॉक संस्कृत पर एक लेक्चर देने-वाले हैं, बड़े मशहूर आलिम हैं। योरप में इनकी बड़ी शोहरत है।

छैला—भाई, क़सम खुदा की, कितने भोंडे हो। प्रोफ़ेसर के मशहूर होने की एक ही कही। हम इतने बड़े हुए, क़सम ले लो, जो आज तक नाम भी सुना हो। क्या दुन्नीख़ाँ से ज़्यादा मशहूर हैं? भाई, जो कहीं "तुम्हारे घूँघरवाले-बाल" एक दफ़ा भी उसकी ज़बान से सुन लो, तो उम्र-भर न भूलो। वल्लाह, क्या टीपदार आवाज़ है; मगर तुम ऐसे कोढ़मग़ज़ों को गलेबाज़ी से क्या वास्ता, तुम तो प्रोफ़ेसर साहब के फेर में हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—तुम्हारी ज़िंदगी राग और लै ही में गुज़रेगी। इस नाच और रंग ने आपकी यह गति बनाई कि मूँछ और दाढ़ी कतरवाई, मेंहदी लगवाई और मर्द से औरत बन गए। अरे अब तो मर्द बनो, इन बातों से बाज़ आओ।

छैला—जी, तो आपके प्रोफ़ेसर लॉक के पास चला जाऊँ? अपने को आपकी तरह गड्डामी बनाऊँ! किसी गली-कूचे में निकल जाऊँ तो तालियाँ पड़ने लगें।

आज़ाद—अब यह फ़रमाइए कि इस वक़्त आप कहाँ के इरादे से निकले हैं?

छैला—कल रात को तीन बजे तक एक रँगीले दोस्त के यहाँ नाच देखता रहा। वह प्यारी-प्यारी सूरतें देखने में आईं कि वाह-जी-वाह! किस काफ़िर का उठने को जी चाहता हो। जलसा बरख़ास्त हुआ तो बस, कलेजे को दोनों हाथों से थामकर निकले, लेकिन रात-भर कानों में छमाछम की आवाज़ आया की, परियों की प्यारी-प्यारी सूरत आँखों में फिरा कीं। अब इस वक़्त फिर जाते हैं, ज़रा आँखें सेक आएँ, भैरवी उड़ रही होगी—

'रसीले नैनों ने फंदा मारा'

आज़ाद—कल फ़ुरसत हो तो हमसे मिलिएगा।

छैला—कल तक तो मेरी नींद का ख़ुमार ही रहेगा।

आज़ाद—अच्छा, परसों सही।

छैला—परसों, परसों तो ख़ुदा भी बुलाए तो बंदा न जाने का। परसों नवाब साहब के यहाँ बटेरों की पाली है, महीनों से बटेर तैयार हो रहे हैं।

आज़ाद—अच्छा साहब, परसों न सही, मंगल को सही।

छैला—मंगल को तड़के से बाने की कनकइयाँ लड़ेंगी, अभी बनारस से बाना मँगाया है। माही जाल की कनकइयाँ ऐसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सखी हैं कि हरदम क़ाबू में, मोड़ो, ग़ोता दो, खींचो, जो चाहे सो करो; जैसे खेत का घोड़ा।

आज़ाद—अच्छा, बुद्ध को तो फ़ुरसत है?

छैला—वाह-वाह, बुद्ध को तो बड़े ठाट से भठियारियों की लड़ाई होगी। देखिए तो, कैसी-कैसी भठियारियाँ किस बाँकी अदा से हाथ चमकाकर, उँगलियाँ मटकाकर लड़ती हैं, और कैसी-कैसी गालियाँ सुनाती हैं कि कान के कीड़े मर जायँ।

आज़ाद—बिरस्पत को तो ज़रूर मिलिएगा?

छैला—जनाब, आप तो पीछे पड़ गए, मिलूँ तो सब कुछ, जब फ़ुरसत भी हो। यहाँ मरने तक की तो फ़ुरसत नहीं, अब की नौचंदी जुमेरात है, बरसों से मन्नतें मानी हैं, आपको दीन-दुनिया की ख़बर तो है नहीं।

आज़ाद—तो मालूम हुआ, आपसे मुलाक़ात नहीं होगी। आज मुर्ग़ लड़ाइएगा, कल पतंग लड़ाइएगा, कहीं गाना होगा, कहीं नाच होगा, आप न हों तो रंग क्योंकर जमे। मेला-ठेला तो आपसे कोई काहे को छूटता होगा, फिर भला मिलने की कहाँ फ़ुरसत? रुख़सत।

छैला—ऐं तो अब रूठे क्यों जाते हैं?

आज़ाद—अब मुझे जाने दीजिए, आपका और हमारा मेल जैसे गंगा और मदार का साथ। जाइए, देखिए भैरवी का लुत्फ़ जाता है।

छैला—जनाब, अब नाच-गाने का लुत्फ़ कहाँ, वह चमक-दमक अब कहाँ, दिल ही बुझ गया। जो लुत्फ़ हमने देखे हैं, वह बादशाहों को ख़्वाब में नसीब न हुए होंगे। यह क़ैसरबाग़ अदन को मात करता था। परियों के झुंड, हसीनों के जमघट, रात को दिन का समा रहता था। अब यहाँ क्या रह गया! गली-कूचों में कुत्ते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोटते हैं। एक वह ज़माना था कि साक़िनों के मिज़ाज न मिलते थे। बाँके-तिरछे रईसज़ादे एक-एक दम की दो-दो अशर्फ़ियाँ फेंक देते थे। अब तो शहर-भर में इस सिरे से उस सिरे तक चिराग़ लेकर ढूँढ़िए तो मैदान ख़ाली है। कल नई सड़क की तरफ़ जो निकला, तो नुक्कड़ पर एक हाथी बँधा देखा। पूछा, तो मालूम हुआ कि बी हैदरजान का हाथी है। क़सम ख़ुदा की, ऐसा ख़ुश हुआ कि आँखों में आँसू आ गया।

ख़ुदा आबाद रक्खे लखनऊ को, फिर ग़नीमत है;
नज़र कोई-न-कोई अच्छी सूरत आ ही जाती है।

आज़ाद—अच्छा, यह सब जलसे आपने देखे और अब भी आँखें सेका ही करते हैं; मगर सच कहिएगा, बने या बिगड़े, बसे या उजड़े, नेकनाम हुए या बदनाम? यहाँ तो नतीजा देखते हैं।

छैला—जनाब, यह तो बड़ा कड़ा सवाल है। सच तो यों है कि उम्र-भर इस नाच-रंग ही के फंदे में फँसे रहे, दिन-रात तबला, सारंगी, बायाँ, ढोल, सितार की धुन में मस्त रहे। ख़ुदा की याद ताक़ पर, इल्म छप्पर पर, छटे हुए शोहदे बन बैठे, लेकिन अब तो पानी में डूब गए, ऊपर एक अंगुल हो तो, और एक हाथ हो तो, बराबर है। आप लोग इस भरोसे में हों कि हमें आदमी बनाएँ तो यह ख़ैर-सल्लाह है। बूढ़े तोते भी कहीं राम-राम पढ़ते हैं?

आज़ाद—ख़ैर, शुक्र है कि आप अपने को बिगड़ा हुआ समझते तो हैं। कड़ुए न हूजिए तो कहूँ कि आप इस ज़नाने भेस पर लानत भेजिए, यह लोच, यह लचक, यह मेंहदी, यह मिस्सी, कुछ औरतों ही को अच्छी मालूम होती है। ज़रा तो इस दाढ़ी-मूँछ का ख़याल करो।

छैला—यह भरें किसी ऐसे-वैसे को दीजिए, यहाँ बड़े-बड़ों की आँखें देखी हैं। आपके झाँसे में कोई अनारी आए तो आए, हम पर चकमा न चलने का।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—आपको डोम-ढारियों ही की सोहबत पसंद आई या किसी और की भी? लखनऊ में तो हर फ़न के आदमी मौजूद हैं।

छैला—हम तो हमेशा ऐसी ही टुकड़ी में रहे। घर फूँक तमाशा देखा। लँगोटी में फाग खेला। मियाँ शोरी के टप्पे, कदर पिया की ठुमरियाँ, घसीटख़ाँ की टीपदार आवाज़, प्यारख़ाँ का ख़याल छोड़कर जायँ कहाँ, सारंगी-मंजीरे की आवाज़ सुनी तो रूप-से घुस पड़े, मस्जिद में अज़ान हुआ करे, सुनता कौन है। बहुत गुज़र गई, थोड़ी बाक़ी है।

आज़ाद—लखनऊ में ऐसे-ऐसे आलिम पड़े हैं कि जिनका नाम आफ़ताब की तरह सारी ख़ुदाई में रोशन है। कर्बला और मदीने तक के समझदार लोग इन बुज़ुर्गों का कलाम शौक़ से पढ़ते हैं। मुफ़्ती सादुल्लाह साहब, सैयद मुहम्मद साहब, वग़ैरह उल्मा का नाम बच्चे-बच्चे की ज़बान पर है। अब शायरों को देखिए, ख़्वाजा हैदरअली आतश, शेख़ नासिख़ अपने फ़न के ख़ुदा थे। मरसिया कहना तो लखनऊवालों का हिस्सा है। मीर अनीस साहब को ख़ुदा बख़्शे, ज़बान की सफ़ाई तो यहाँ ख़त्म हो गई। मिर्ज़ा दबीर तो गोया अपने फ़न के मवाजिद थे। नसीम और सबा ने आतश को भड़का दिया। गोया तो गोया शायरी के चमन का बुलबुल था। मिर्ज़ा रजबअली बेग सरूर ने वह नस्र लिखी कि क़लम तोड़ दिए। यहाँ के कारीगरों के भी झंडे गड़े हैं। कुम्हार तो ऐसे दुनिया के पर्दे पर न होंगे। मिट्टी की मूरतें ऐसी बनाईं कि मुख़्बिरों की किरकिरी हो गई। बस, यही मालूम होता है कि सूरत बोला ही चाहती है। जिस अजायब-घर में जाइएगा, लखनऊ के कुम्हारों की कारीगरी ज़रूर पाइएगा। खुशनवीसों ने वह कमाल पैदा किया कि एक-एक हर्फ़ की पाँच-पाँच अशर्फ़ियाँ लीं। बाँके ऐसे कि शेर का पंजा तोड़ डालें, हाथी को डपटें तो चिग्घाड़कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंज़िलों भागे। रुस्तम और इस्फ़ंदियार को चुटकियों में लड़ा दें। उस्ताद मुहम्मदअलीख़ाँ फिकैत, छरहरा बदन, लेकिन गदका हाथ में आने की देर थी। परे-के-परे दम में साफ़ कर दिए। कड़क-कर तमाचे का तुला हुआ हाथ लगाया, तो दुश्मन का मुँह फिर गया। अखाड़े में गदका लेकर खड़े हुए, तो मालूम हुआ बिजली चमक गई। एक दफ़ा ललकार दिया कि रोक, बैठ गई! देख सँभल। ख़बरदार, यह आई, वह आई, वह पड़ गई! वाह-वाह! की आवाज़ सातवें आसमान पर जा पहुँची। बला की सफ़ाई, ग़ज़ब की सफ़ाई थी। जो मुँह चढ़ा, उसने मुँह की खाई। सामने गया, और शामत आई। कामदानी वह ईजाद की कि उड़ीसा और कोचीन तक धूम हो गई। लेकिन आपको तो न इल्म से सरोकार, न फ़न से मतलब; आप तो ताल-सुर के फेर में पड़े हैं।

छैला—हज़रत, इस वक़्त भैरवी सुनने जाता था और "जागे भाग प्यारा नज़र आया" सुनने का शौक़ चर्राया था, लेकिन आपने पादरियों की तरह बकवास करके काया पलट दी। आप जो हमें राह पर लाते हो, तो इतना मान जाओ कि ज़रा क़दम बढ़ाए हुए, हमारे साथ हाथ-से-हाथ दिए हुए, पाटेनाले तक चले चलो; देखूँ तो परिस्तान से क्योंकर भाग आते हो? उन्हीं हसीनों का सिजदा न करो, तो कुछ जुर्माना दूँ। उस इंद्र के अखाड़े से कोरे निकल आओ, तो टाँग की राह निकल जाऊँ।

आज़ाद—(घड़ी जेब से निकालकर) एँ! आठ पर इक्कीस मिनट! इस खुश-गप्पी ने आज बड़ा सितम ढाया, लेक्चर सुनने में न आया। मुफ़्त की बकबक-झकझक! लेक्चर सुनने क़ाबिल था।

छैला—अल्लाह जानता है, इस वक़्त कलेजे पर साँप लोट रहे हैं! न-जाने तड़के-तड़के किस मनहूस का मुँह देखा है कि भैरवी के मज़े हाथ से गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—आप भी निरे चोंच ही रहे। इतनी देर तक समझाया, सिरमग़ज़न की; मगर वाहरे कुत्ते की दुम, बारह बरस बाद भी टेढ़ी ही निकली।

छैला—तो मेरे साथ आइए न, बग़लें क्यों झाँकते हो? जब जानें कि निलोह निकल आओ।

आज़ाद—अच्छा, चलिए। देखें, कौन सा हसीन अपनी निगाहों के तीर से हमें घायल करता है! बरसों के ख़यालों को कोई क्या मिटा देगा? हम, और किसी के थिरकने पर फ़िदा हो जायँ! तोबा! कोई ऐसा माशूक़ तो दिखाइए, जिसे हम प्यार करें। हमारा माशूक़ वह है जिसमें कमाल हो। ज़ुल्फ़ और चोटी पर कोई और सिर धुनते हैं।

खुलासा यह कि आज़ाद छैले मियाँ के साथ हाफ़िज़जी के मकान में जा पहुँचे। महफ़िल सजी हुई थी। तीन-चार हसीनें मिलकर मुबारकबाद गाती थीं। यही मालूम होता था कि राग और रागिनी हाथ-बाँधे खड़ी हैं। जिसे देखो, गर्दन हिलाता है। पाज़ेब की छमाछम दिल को रौंदती है, कोई इधर-से-उधर चमक जाती है, कोई ऊँचे सुरों में तान लगाती है, कोई सीने पर हाथ रखकर 'गहरी नदिया' बताती है, कोई नशीली आँखों के इशारे से 'नैना रसीले' की छवि दिखाती है, धमा-चौकड़ी मची हुई है। छैले मियाँ ने एक हसीन से फ़रमाइश की कि हज़रत मीर की यह ग़ज़ल गाओ—

> ग़ैर के कहने से मारा उसने हमको बे-गुनाह;
> यह न समझा वह कि वाक़या में भी कुछ था या न था।
> याद ऐयामे कि अपनी रोज़ोशब की जायबाश;
> था दरे बाज़े बयाबाँ, या दरे मयख़ाना था।

इस ग़ज़ल ने वह लुत्फ़ दिखाया और ऐसा रंग जमाया कि मियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद तक 'ओ हो !' कह उठते थे। इसके बाद एक परी ने यह ग़ज़ल गाई।

हाल खुले तो किस तरह यार की बज़्मे-नाज़ का ;
जो है यहाँ वह मस्त है अपनी ही सोज़ोसाज़ में।

इस ग़ज़ल पर जलसे में कुहराम मच गया। एक तो ग़ज़ल हक़्क़ानी, दूसरे हसीना की उठती जवानी, तीसरे उसकी नाज़ुक-बयानी। लोग इतने मस्त हुए कि झूम-झूमकर यही शेर पढ़ते थे—

हाल खुले तो किस तरह यार की बज़्मे-नाज़ का ;
जो है यहाँ वह मस्त है अपनी ही सोज़ोसाज़ में।

अब सबको शक की जगह यक़ीन हो गया कि अब किसी का रंग न जमेगा। हर तरफ़ से हक़्क़ानी ग़ज़लों की फ़रमाइश है। न धुर्पद का ख़याल, न टप्पे की फ़िक्र; भैरवी की धुन, न पक्के गाने का ज़िक्र; बस, हक़्क़ानी ग़ज़लों की धूम है।

अब दिल्लगी देखिए कि बुड्ढे और जवान सब-के-सब बेधड़क उस मोहिनी को घूर रहे हैं। कोई उससे आँखें लड़ाता है, कोई सिर धुनता है, कोई ठंडी आहें खींचता है। दो-चार मनचले रईसों ने हसीनों को बुलाकर बड़े शौक़ से पास बैठाया। नोक-झोंक, हँसी-मज़ाक़, चुहल-दिल्लगी, धौल-धप्पा, होने लगा। हाफ़िज़जी भी बेसींग के बछड़े बने हुए मज़े से चौमुखी लड़ रहे हैं।

बूढ़े मियाँ—आज-कल के लड़कों को भी हवा लगी है।

एक जवान—जनाब, अब तो हवा ही ऐसी चली है कि जवान तो जवान, बुड्ढों तक को बुढ़भस लगा है। सौ बरस का सिन, चार के कंधों पर लदने के दिन; मगर जवानी ही के दम भरते हैं।

बूढ़े मियाँ—अजी, हम तो ज़माने-भर के न्यारिए हैं, हमें कोई क्या चंग पर चढ़ाएगी ; मगर तुम अभी ज़ुमा-ज़ुमा आठ दिन की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैदायश, ऐसा न हो, उनके फेर में आ जाओ ; फिर, दीन-दुनिया दोनों को रो बैठो।

जवान—वाह जनाव, आपकी सोहबत में हम भी पक्के हो गए हैं ; ऐसे कच्चे नहीं कि हम पर किसी के दाँव-पेंच चलें।

बूढ़े मियाँ—कच्चे-पक्के के भरोसे न रहिएगा, इन हसीनों का बड़े-बड़े ज़ाहिदों ने सिजदा किया है; तुम किस खेत की मूली हो !

जवान—इन बुतों को हम फ़क़ीरों से भला क्या काम है, यह तो तालिब ज़र के हैं और याँ खुदा का नाम है।

हसीना—इन बड़े मियाँ से कोई इतना तो पूछो कि बाल-बाल गलकर बर्फ़-सा सफ़ेद हो गया और अब तक सियाहकारी न छोड़ी, यह समझाते किस मुँह से हैं ? इनकी सुनता कौन है ! ज़रा शेख़जी, बहुत बढ़-बढ़कर बातें न बनाया कीजिए ; शाहछड़ेवाली गली में रोज़ बीस-बीस चक्कर होते हैं ; ऐं, तुम थकते भी नहीं ?

हाफ़िज़जी—शेख़जी जहाँ बैठते हैं, झगड़ा ज़रूर ख़रीदते हैं। आप हैं कौन ? आए वहाँ से नासेह बनके ! अच्छा, बी साहब, अपना कलाम सुनाइए; मगर शर्त यह है कि जब हम तारीफ़ करें तो झुकके सलाम कीजिए।

हसीना—आप हैं तो इसी लायक़ कि दूर ही से झुककर सलाम कर ले।

इधर तो यह बातें हो रही थीं, उधर दूसरी टुकरी में गाली और फक्कड़ का छर्रा चलता था। तीसरे में धौल-धप्पा होता था। लड़के, जवान, बूढ़े बेधड़क एक दूसरे पर फबतियाँ कहते थे। इतने में दोपहर की तोप दगी, जलसा बरख़ास्त, तबलियों ने बोरिया-बँधना उठाया, चलिए, सन्नाटा हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाँचवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद की साँड़नी तो सराय में बँधी ही थी, दूसरे दिन आप उस पर सवार होकर घर से निकल पड़े। दोपहर-ढले एक क़स्बे में पहुँचे। पीपल के पेड़ के साए में बिस्तर जमाया। ठंड-ठंडे हवा के झोंकों से ज़रा दिल को ढारस हुई, पाँव फैलाकर लंबी तानी, तो दीन-दुनिया की ख़बर नहीं। जब ख़ूब नींद भरकर सो चुके, तो एक आदमी ने जगा दिया। उठे मगर प्यास के मारे हलक़ में काँटे पड़ गए थे। सामने इँदारे पर एक हसीन औरत पानी भर रही थी। हज़रत भी पहुँचे।

आज़ाद—क्यों नेकबख़्त, हमें एक ज़रा-सा पानी नहीं पिलातीं। भरते न बनता हो, तो लाओ हम भरें। तुम भी पियो, हम भी पिएँ; एहसान होगा।

औरत ने कोई जवाब न दिया, तीखी चितवन से देखकर पानी भरती रही।

आज़ाद—"सख़ी से सूम भला, जो देवै तुरत जवाब।" पानी न पिलाओ, जवाब तो दे दो। यह क़स्बा तो अपने हक़ में कर्बला का मैदान हो गया। एक बूँद पानी को तरस गए।

औरत ने फिर भी जवाब न दिया। पानी भरकर चली।

आज़ाद—भई, अच्छा गाँव है! जो बात है निराली! एक लुटिया पानी न मिला, वाहरी क़िस्मत। लोग तो इस भादों की जलती-बलती धूप में पौसरे बैठाते हैं, केवड़ा पड़ा हुआ ठंडा पानी पिलाते हैं, यहाँ कोई बात तक नहीं सुनता।

मियाँ आज़ाद को हैरत थी कि इस कमसिन नाज़नीन का यहाँ इस वीराने में क्या काम। साए की तरह साथ हो लिए। वह कनखियों से देखती जाती थी, मगर मुँह नहीं लगाती थी। बारे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सड़क से दाएँ हाथ पर एक फाटक के सामने वह बैठ गई और पेड़ के साए में सुसताने लगी। आज़ाद ने कहा, अगर यह बर्तन भारी हो, तो लाओ मैं ले चलूँ, इशारे की देर है। क़सम लो, जो एक बूँद भी पीऊँ, गो प्यास के मारे कलेजा मुँह को आता है और दम निकला जाता है, लेकिन तुम्हारा दिल दुखाना मंज़ूर नहीं।

हसीना ने इसका भी कुछ जवाब न दिया। फिर हिम्मत करके उस बर्तन को उठाया और फाटक के अंदर हो रही। मियाँ आज़ाद भी चुपके-चुपके दबे-पाँव उसके पीछे-पीछे गए। हसीना एक खुले हुए छोटे-से बँगले में जा बैठी और आज़ाद दरख़्तों की आड़ में दबक रहे कि देखें, यहाँ क्या गुल खिलता है। उस बँगले के चारों तरफ़ खाई खुदी हुई थी, इर्द-गिर्द सरपत बोई हुई थी, ऐसी घनी कि चिड़िया तक का गुज़र न हो; और वह तेज़, कि तलवार मात। बड़ा ऊँचा मेहराबदार फाटक लगा हुआ था। वह जौहरदार शीशम की लकड़ी थी कि बायद व शायद। क्यारियाँ रोज़ सींची जाती थीं, रविशों पर सुर्ख़ी कटी थी, हरे-भरे दरख़्त आसमान से बातें कर रहे थे। कहीं अनार की क़तार, कहीं लखवट की बहार; इधर आम के बाग़, अमरूद और चकोतरों से टहनियाँ फटी पड़ती थीं, नारंगियाँ शाख़ों पर लदी हुई थीं, फूलों की बू-बास, कहीं गुल-मेंहदी, कहीं गुल-अब्बास, नेवाड़ी फूली हुई, ठंडी-ठंडी हवा, ऊदी-ऊदी घटा, कलियों की चिटक, जूही की भीनी महक, कनैल की दमक। बाग़ के बीचोबीच में एक ३ फ़ीट का ऊँचा पक्का चबूतरा बना था। यह तो सब कुछ था, मगर रहनेवाले का पता नहीं। उस हसीना की चाल-ढाल से भी बेगानापन बरसता था। एकाएक उसने बर्तन ज़मीन पर रख दिया और एक नेवाड़ की पलँगड़ी पर सो रही। इनको दाँव मिला, तो ख़ूब छककर मेवे खाए और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बर्तन को मुँह से लगाया, तो एक बूँद भी न छोड़ा। इतने में पाँव की आहट सुनाई दी। आज़ाद झट अंगूर की टट्टी में छिप रहे; मगर ताक लगाए बैठे थे कि देखें, है कौन! देखा कि फाटक की तरफ़ से कोई आहिस्ता-आहिस्ता आ रहा था। बड़ा लंबा-तड़ंगा, मोटा-ताज़ा आदमी था। लँगोट बाँधे, अकड़ता उस बँगले की तरफ़ जा रहा था। समझे कि कोई पहलवान अपने अखाड़े से आया है। नज़दीक आया, तो यह गुमान दूर हो गया। मालूम हुआ कि कोई शाहजी हैं। वह लँगोट, जिससे पहलवान का धोखा हुआ था, तहमद निकला। शाह साहब सीधे बँगले में दाख़िल हुए। औरत को पलँग पर सोता पाया, तो पलँग पर हाथ मारकर चिल्ला उठे—उठ! हसीना घबराकर उठ बैठी और शाहजी के क़दम चूमे। शाहजी एक तिरपाई पर बैठ गए और उससे यों बातें करने लगे—बेटी, आज तुमको हमारे सबब से बहुत राह देखनी पड़ी। यहाँ से दस कोस पर एक गाँव में एक राजा रहता है। अस्सी बरस का हो गया, मगर अल्लाह ने न लड़का दिया, न लड़की। एक दिन मुझे बुलवाया। मैं कहीं आता-जाता तो हूँ नहीं, साफ़ कहला भेजा कि तुम्हें ग़रज़ हो, तो आओ। ख़ुदा के बंदे, ख़ुदा के सिवा और किसी के द्वार पर नहीं जाते। आख़िर रानी को लेकर वह आप आया और मेरे क़दमों पर गिर पड़ा। मैंने रानी के सिर पर एक बिना सूँघा गुलाब का फूल दे मारा। पाँचवें महीने अल्लाह ने लड़का दिया और राजा मेरे पास दौड़ा आता था कि मैं राह में मिला। देखते ही मुझे रथ पर बिठा लिया। अब कहता है, रुपया लो, जागीर लो, गाँव लो, हाथी-घोड़े लो; मगर मैं कब माँगता हूँ। फ़क़ीरों को दुनिया से क्या काम! इस वक़्त जाकर पीछा छूटा। तुम पानी तो लाई होगी?

हसीना—मैं आपकी लौंडी हूँ, यह क्या कम है कि आप मेरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतना ख़याल रखते हैं। वह पानी रक्खा हुआ है। आप फूँक डाल दें, तो मैं चली जाऊँ।

यह कहकर वह उठी; मगर बर्तन देखा, तो पानी नदारद। ऐं! यह पानी क्या हुआ! ज़मीन पी गई, या आसमान! अभी पानी भरकर रक्खा था, देखते-देखते उड़ गया। ग़ज़ब ख़ुदा का, एक बूँद तक नहीं! लबालब भरा हुआ था!

शाहजी—अच्छा, तो बता ही दूँ; मुझे जोग-बल से मालूम हो गया कि तुम आती हो। जब तुम सो रहीं, तो मैंने आँख बंद की, और यहाँ पहुँच गया। पानी पिया, तो फिर आँख बंद की और फिर राजा साहब के पास हो रहा। फूँक डालने की साइत उसी वक़्त थी। टल जाती, तो फिर एक महीने पर बात जाती। अब तुम यह इलायची लो और कल आधी रात को किसी मरघट में गाड़ दो। तुम्हारी मुराद पूरी हो जायगी।

युवती ने इलायची ले ली। मियाँ आज़ाद चुपके-चुपके सब सुन रहे थे। अब उन्हें ख़ूब ही मालूम हो गया कि शाहजी रँगे सियार हैं। लोटे का पानी तो मैंने पिया और आपने यह गढ़ा कि आँख बंद करते ही यहाँ आए और पानी पीकर फिर किसी तरकीब से चल दिए। ख़ूब खिलखिलाकर हँस पड़े। वाहरे मक्कार! जालिए! इतना बड़ा झूठा न देखा, न सुना। ऐसे बड़े वली हो गए कि इनकी दुआ से एक रानी पाँचवें ही महीने बच्चा जन पड़ी। झूठ भी तो कितना! हक़ तो यों है कि झूठों के सरदार हैं। पट्टे बढ़ा लिए, तहमद बाँधकर शाहजी बन गए। लगे पुजने। कोई बेटा माँगता है, कोई तावीज़ माँगता है, कोई कहता है, मेरा मुक़दमा जितवा दो तो नयाज़ चढ़ाऊँ, कोई कहता है, नौकरी दिलवा दीजिए, तो मिठाई खिलाऊँ। संयोग से कहीं उसकी मुराद पूरी हो गई, तो शाह साहब की चाँदी है, वरना किसकी मजाल कि शिकायत का एक हर्फ़ मुँह से निकाले। डर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि कहीं ज़बान न सड़ जाय। अल्लाह री धाक! बहुत-से अक़्ल के दुश्मन इन बने हुए फ़क़ीरों के जाल में फँस जाते हैं। आज़ाद ऐसे बने हुए सिद्ध और रँगेसियार फ़क़ीरों की क़ब्र तक से वाक़िफ़ थे। सोचे, इनकी मरम्मत कर देनी चाहिए।

शाह साहब ने चबूतरे पर लुंगी बिछाई और उस पर लेटकर दुआ पढ़ने लगे, मगर पढ़े-लिखे तो थे नहीं, शीन, क़ाफ़ तक दुरुस्त नहीं, अनाप-शनाप बकने लगे। अब मियाँ आज़ाद से न रहा गया, बोल उठे—क्या कहना है शाहजी, वल्लाह आपने तो कमाल कर दिया। अब तो शाहजी चकराए कि यह आवाज़ा किसने कसा, यह दुश्मन कौन पैदा हुआ! इधर-उधर आँखें फाड़-फाड़कर देखा, मगर न आदमी, न आदमज़ाद, न इंसान, न इंसान का साया। या ख़ुदा, यह कौन बोला? यह किसने टोका? समझे कि यह आसमानी ढेला है। किसी जिन्न की आवाज़ है। डरपोक तो थे ही, बदन थरथराने लगा, हाथ-पाँव फूल गए, करामातें सब भूल गए, हवास ग़ायब, होश कलाबाज़ी खाने लगे। कुरान की आयतें ग़लत-सलत पढ़ने लगे। आख़िर, चिल्ला उठे—मज़हरुल अजायब। तो इधर यह बोल उठे—लुंगी मय शाहजी ग़ायब। अब शाहजी की घबराहट का हाल न पूछिए, चेहरा फ़क़, काटो तो लहू नहीं बदन में। मियाँ आज़ाद ने भाँप लिया कि शाह साहब पर रोब छा गया, झट निकलकर पत्तों को ख़ूब पाँव से खड़खड़ाया। शाहजी काँप उठे कि प्रेतों का लश्कर-का-लश्कर आ खड़ा हुआ। अब जान से गए। तब आज़ाद ने एक फ़ारसी ग़ज़ल ख़ूब लै के साथ पढ़ी, जैसे कोई ईरानी पढ़ रहा हो। शाहजी मस्त हो गए, समझे कि यह तो कोई फ़क़ीर हैं। अब तो जान-में-जान आई। मियाँ आज़ाद के क़दम लिए। उन्होंने पीठ ठोंकी। शाहजी उस वक़्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नशे की तरंग में थे, ख़याल बँध गया कि कोई आसमान से उतरा है।

आज़ाद—कीस्ती वो अज़ कुजाई व वामनत चे कार अस्त।

(कौन है, कहाँ से आता है और मुझसे क्या काम है ?)

शाहजी के रहे-सहे हवास और ग़ायब हो गए। ज़बान समझ में न आई। समझे कि ज़रूर आसमान का फ़रिश्ता है। हमारी जान लेने को आया है। दबे दाँतों बोले—समझता नहीं हूँगा कि आप क्या हुक्म देंगे। हमने बहुत गुनाह किए, अब माफ़ फ़रमाओ। कुछ दिन और जीने दो, तो यह ठग-विद्या छोड़ दूँ। मैं समझ गया कि आप मेरी जान लेने आए हैं।

आज़ाद—यह बुढ़ापा और इतनी बदकारी, यह सिन और साल और यह चाल-ढाल। याद रख कि जहन्नुम के गड्ढे में गिरेगा और दोज़ख़ की आग में जलाया जायगा। सुन, मैं न आसमान का फ़रिश्ता हूँ, न कोई जिन्न हूँ। मैं हकीम बलीनास की पाक रूह हूँ, हकीम हूँ, ख़ुदा से डरता हूँ, मेरे क़ब्ज़े में बहुत-से तिलस्म हैं, मेरा मज़ार इसी जगह पर था, जहाँ तेरा चबूतरा है और जहाँ तू नापाक रहता है और शोरबे लुढ़काता है। ख़ैर, तेरी जिहालत के सबब से मैंने तुझे छोड़ दिया; लेकिन अब तूने यह नया फरफंद सीखा कि हसीनों को फाँसता है और उनसे कुछ ऐंठता है। उस ज़माने में यह औरत मेरी बीबी थी। ले, अब यह हथकंडे छोड़, मक्र और दग़ा से मुँह मोड़, नहीं तो तू है और हम। अभी ठीक बनाऊँगा और नाच नचाऊँगा। तेरी भलाई इसी में है कि अपना कुल हाल कह चल, नहीं तू जानेगा। मेरा कुछ न जायगा।

शाहजी ने शराब की तरंग में मारे डर के अपनी बीती कहानी शुरू की—चौदह बरस के सिन से मुझे चोरी करने की लत पड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इतना पक्का हो गया कि आँख चूकी और गठरी उड़ाई, ग़ाफ़िल हुआ और टोपी खिसकाई। पहले कुछ दिन तो लुटिया-चोर रहे, मगर यह तो करती विद्या है, थोड़े ही दिनों में हम चोरों के गुरू-घंटाल हो गए। सेंद लगाना कोई हमसे सीखे, छत की कड़ियों में यों चिमट रहूँ; जैसे कोई छिपकली, उचक-फाँद में बंदर मेरे मुक़ाबले में मात है, दबे पाँव कोसों निकल जाऊँ; क्या मजाल किसी को आहट हो। शहर-भर के बदमाश, लुक्के, लुच्चे, शोहदे हमारी टुकड़ी में शामिल हुए। जिसने हेकड़ी की, ली; उसको नीचा दिखाया, जो टेढ़ा हुआ, उसको सीधा बनाया। ख़ूब चोरियाँ करने लगे। आज इसका माल मारा, कल उसकी छत काटी, परसों किसी नवाब के घर में सेंद दी। यहाँ तक कि डाके मारने लगे, सड़कों पर लूट-मार शुरू कर दी। ग़ोल में दुनिया-भर के बेफ़िक्रे जमा हैं, कोई चंडू उड़ाता है, कोई चरस के दम लगाता है। गाँजे, भाँग, ठर्रे सबका शौक़ है। तानें उड़ रही हैं, बोतलें चुनी हुई हैं, गँडेरियों के ढेर लगे हुए हैं, मक्खियाँ भिन्न-भिन्न करती हैं, सबको यही फ़िक्र है कि किसी का माल ताकें। एक दिन शामत आई, एक नवाब साहब के यहाँ चोरी करने का शौक़ चर्राया। उनके ख़िदमतगार को मिलाया, नौकरानियों को भी कुछ चटाया और एक बजे के वक़्त घर से निकले। उसी मुहल्ले में एक महीने पहले ही एक मकान किराए पर ले रक्खा था। पहले उसी मकान में पैठे। नवाब का मकान कोई पचास ही क़दम होगा। तीन आदमी दस क़दम पर, और पाँच बीस क़दम पर खड़े हुए। हम, ख़िदमतगार और एक चोर साथ चले, कि घर में धँस पड़ें। क़रीब गए तो ड्योढ़ी पर चौकीदार ने पुकारा, कौन? सन-से जान निकल गई! उम्र-भर में यही ख़ता हुई कि चौकीदार को पहले से न मिला लिया। अब क्या करें!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नशे की तरंग में थे, ख़याल बँध गया कि कोई आसमान से उतरा है।

आज़ाद—कीस्ती वो अज़ कुजाई व बामनत चे कार अस्त।

(कौन है, कहाँ से आता है और मुझसे क्या काम है ?)

शाहजी के रहे-सहे हवास और ग़ायब हो गए। ज़बान समझ में न आई। समझे कि ज़रूर आसमान का फ़रिश्ता है। हमारी जान लेने को आया है। दबे दाँतों बोले—समझता नहीं हूँगा कि आप क्या हुक्म देंगे। हमने बहुत गुनाह किए, अब माफ़ फ़रमाओ। कुछ दिन और जीने दो, तो यह ठग-विद्या छोड़ दूँ। मैं समझ गया कि आप मेरी जान लेने आए हैं।

आज़ाद—यह बुढ़ापा और इतनी बदकारी, यह सिन और साल और यह चाल-ढाल। याद रख कि जहन्नुम के गड्ढे में गिरेगा और दोज़ख़ की आग में जलाया जायगा। सुन, मैं न आसमान का फ़रिश्ता हूँ, न कोई जिन्न हूँ। मैं हकीम बलीनास की पाक रूह हूँ, हकीम हूँ, ख़ुदा से डरता हूँ, मेरे क़ब्ज़े में बहुत-से तिलस्म हैं, मेरा मज़ार इसी जगह पर था, जहाँ तेरा चबूतरा है और जहाँ तू नापाक रहता है और शोरबे लुढ़काता है। ख़ैर, तेरी जिहालत के सबब से मैंने तुझे छोड़ दिया; लेकिन अब तूने यह नया फरफंद सीखा कि हसीनों को फाँसता है और उनसे कुछ ऐंठता है। उस ज़माने में यह औरत मेरी बीबी थी। ले, अब यह हथकंडे छोड़, मक्र और दग़ा से मुँह मोड़, नहीं तो तू है और हम। अभी ठीक बनाऊँगा और नाच नचाऊँगा। तेरी भलाई इसी में है कि अपना कुल हाल कह चल, नहीं तू जानेगा। मेरा कुछ न जायगा।

शाहजी ने शराब की तरंग में मारे डर के अपनी बीती कहानी शुरू की—चौदह बरस के सिन से मुझे चोरी करने की लत पड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इतना पक्का हो गया कि आँख चूकी और गठरी उड़ाई, ग़ाफ़िल हुआ और टोपी खिसकाई। पहले कुछ दिन तो लुटिया-चोर रहे, मगर यह तो करती विद्या है, थोड़े ही दिनों में हम चोरों के गुरू-घंटाल हो गए। सेंद लगाना कोई हमसे सीखे, छत की कड़ियों में यों चिमट रहूँ; जैसे कोई छिपकली, उचक-फाँद में बंदर मेरे मुक़ाबले में मात है, दबे पाँव कोसों निकल जाऊँ; क्या मजाल किसी को आहट हो। शहर-भर के बदमाश, लुक्के, लुच्चे, शोहदे हमारी टुकड़ी में शामिल हुए। जिसने हेकड़ी की, ली; उसको नीचा दिखाया, जो टेढ़ा हुआ, उसको सीधा बनाया। खूब चोरियाँ करने लगे। आज इसका माल मारा, कल उसकी छत काटी, परसों किसी नवाब के घर में सेंद दी। यहाँ तक कि डाके मारने लगे, सड़कों पर लूट-मार शुरू कर दी। ग़ोल में दुनिया-भर के बेफ़िक्रे जमा हैं, कोई चंडू उड़ाता है, कोई चरस के दम लगाता है। गाँजे, भाँग, ठर्रे सबका शौक़ है। तानें उड़ रही हैं, बोतलें चुनी हुई हैं, गँडेरियों के ढेर लगे हुए हैं, मक्खियाँ भिन्न-भिन्न करती हैं, सबको यही फ़िक्र है कि किसी का माल तार्कें। एक दिन शामत आई, एक नवाब साहब के यहाँ चोरी करने का शौक़ चर्राया। उनके ख़िदमतगार को मिलाया, नौकरानियों को भी कुछ चटाया और एक बजे के वक़्त घर से निकले। उसी मुहल्ले में एक महीने पहले ही एक मकान किराए पर ले रक्खा था। पहले उसी मकान में पैठे। नवाब का मकान कोई पचास ही क़दम होगा। तीन आदमी दस क़दम पर, और पाँच बीस क़दम पर खड़े हुए। हम, ख़िदमतगार और एक चोर साथ चले, कि घर में धँस पड़ें। क़रीब गए तो ड्योढ़ी पर चौकीदार ने पुकारा, कौन? सन-से जान निकल गई! उम्र-भर में यही ख़ता हुई कि चौकीदार को पहले से न मिला लिया। अब क्या करें!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पिछली बुद्धि गँवार की !" फिर चौकीदार ने ललकारा, कौन आता है ? हमने कहा—हम हैं भाई। चौकीदार बोला—हम की एक ही कही, हम का कुछ नाम भी है ? आख़िर, हमने चौकीदार को उसी दम कुछ चटाकर सेंद दी। घर में घुसे, तो क्या देखते हैं कि एक पलँग पर नवाब साहब सोते हैं और दूसरे पलँग पर उनकी बेगम साहबा मीठी नींद में मस्त हैं ; मगर शमा रोशन है। अपने साथी से इशारा किया कि शमा को गुल कर दे। वह ऐसा घबराया कि बड़े ज़ोर से फूँक मारी। मैंने कहा, ख़ुदा ही ख़ैर करे, ऐसा न हो कि नवाब जाग उठें, तो लेने के देने पड़ें। आगे बढ़कर मैंने बत्ती को तेल में खिसका दिया, चलिए, चिराग़ गुल, पगड़ी ग़ायब। बेगम साहबा के सिरहाने ज़ेवर का संदूक़ रक्खा था, मगर आड़ में। हम तो महरी की ज़बानी कच्चा चिट्ठा सुन चुके थे, "घर का भेदी लंका ढाय;" फ़ौरन् संदूक़ उठाया और दूसरे साथी को दिया कि बाहर पहुँचाए ! वह कुछ ऐसा घबराया कि मारे बौखलाहट के काँपने लगा और धम-से गिर पड़ा। धमाके की आवाज़ सुनते ही नवाब चौंक पड़े, शेर-बच्चा सिरहाने से उठा, पैतरे बदल-बदलकर फिकैती के हाथ दिखाने लगे। मैंने एक चाकी का हाथ दिया और झट कमरे से निकल, दीवार पर चढ़, पिछवाड़े कूदा और 'चोर-चोर' चिल्लाता हुआ नाके-बाहर ! वे दोनों सिर-बोझिए नौसिखिए थे, पकड़ लिए गए। मगर वाह रे नवाब ! बड़ा ही दिलेर आदमी है। दोनों को घेर लिया। वे तो जेलख़ाने गए, मैं बेदाग़ बच गया। अब मैंने वह पेशा छोड़ा और ख़ून पर कमर बाँधी। एक महीने में कई ख़ून किए। पहले एक सौदागर के घर में घुसकर उसे चारपाई पर ढेर कर दिया ; जमा-जथा हमारे बाप की हो गई। फिर रेल पर एक मालदार जौहरी का गला घोट डाला और जवाहिरात साफ़ उड़ा लिए। तीसरी दफ़ा, दो बनजारे सराय में उतरे थे। हमें ख़बर मिली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि उनके पास सोने की ईंटें हैं। उनको सराय ही में अंटा-ग़फ़ील करना चाहा। भठियारे ने देख लिया, पकड़े गए और क़ैदख़ाने गए। वहाँ आठ दिन रहे थे, नवें दिन रात को मौक़ा पाकर काल-कोठरी का दरवाज़ा तोड़ा, एक बरकंदाज़ का सिर ईंट से फोड़ा, पहरे के चौकीदार को उसी बंदूक़ से शहीद किया और साफ़ निकल भागे। अब सोचे, कोई नया पेशा अख़्तियार करें; सोचते-सोचते सूझी कि शाहजी बन जाओ। चट फ़क़ीरों का भेस बदलकर एक पेड़ के नीचे बिस्तर जमा दिया। पुजने लगे। एक दिन इस गाँव के ठाकुर का लड़का बीमार हुआ। यहाँ हकीम न डॉक्टर! किसी ने कह दिया कि एक फ़क़ीर पकरिया के नीचे बैठे ख़ुदा को याद किया करते हैं, चेहरे से नूर बरसता है, किसी से लेते हैं, न देते हैं। ठाकुर ने सुनते ही अपने भाई को भेजा। हम साथ गए। ख़ुशी से फूले न समाते थे कि आज पाला हमारे हाथ रहा, तो उम्र-भर चैन से गुज़रेगी। हमारा पहुँचना था कि सब उठ खड़े हुए। हम किसी से बोले न चाले, जाकर लड़के के पास बैठ गए और कुछ बुदबुदाकर उठ खड़े हुए। देखा, लड़के का बुरा हाल है, बचना मुहाल है। ठाकुर क़दमों पर गिर पड़ा। हमने पीठ ठोंकी और लंबे-लंबे डग बढ़ाते चल दिए। संयोग से एक योरपियन डॉक्टर दौरा करता हुआ उस गाँव में आया और उसकी दवा से मरीज़ चंगा हो गया। अब मज़ा देखिए, डॉक्टर का कोई नाम भी नहीं लेता, सब हमारी तारीफ़ करते हैं। ठाकुर ने हमें एक हाथी और हज़ार रुपए दिए। यह हमने क़बूल न किया। सुभान-अल्लाह! फिर तो हवा बँध गई। अब चारों तरफ़ हम-ही-हम हैं, कोई बीमार हो, तो हम पूछे जायँ, कोई मरे, तो हम बुलाए जायँ। मियाँ-बीबी के झगड़ों में हम क़ाज़ी बनते हैं, बाप-बेटे का झगड़ा हम फ़ैसल करते हैं। सुबह से शाम तक डालियों-पर-डालियाँ आती रहती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद ने यह क़िस्सा सुनकर शाहजी को खूब डाँटा—तू काफ़िर है, मलऊन है, तू अपनी मक्कारी से ख़ुदा के बंदों को ठगता है, अब हमारी बात सुन, हमारा चेला बन जा, तो तुझे छोड़ दें। कल तड़के गजरदम गाँव-भर में कह दे कि हमारे पीर आए हुए हैं। दो सौ ग्यारह बरस की उम्र बताना। जिसे ज़ियारत करनी हो, आवे। शाहजी की बाछें खिल गईं कि चलो किसी तरह जान तो बची। नूर के तड़के गाँव-भर में पुकार आए कि हमारे पीर आए हैं, जिसे देखना हो, देख ले। शाहजी की तो वहाँ धाक बँधी ही थी, जब लोगों ने सुना कि इनके भी वली-खंगड़ आए हैं, तो शौक़ चर्राया कि ज़ियारत को चलें। दो दिन और दो रात मियाँ आज़ाद अपने घर पर आराम करते रहे। तीसरे दिन फ़क़ीराना वेष बदले हुए हरे-हरे पेड़ों के साए में आ बैठे। देखते क्या हैं, पौ फटते ही औरत-मर्द, ठट-के-ठट जमा हो गए। हिंदू और मुसलमान, जवान औरतें, गहनों से लदी हुईं, आकर बैठी हुई हैं। तब आज़ाद ने खड़े होकर क़ुरान की आयतें पढ़नी शुरू कीं, और बोले—ऐ ख़ुदा के बंदो, मैं कोई वली नहीं हूँ, तुम्हारी ही तरह ख़ुदा का एक नाचीज़ बंदा हूँ। अगर तुम समझते हो कि कोई इंसान चाहे कितना ही बड़ा फ़क़ीर क्यों न हो, ख़ुदा की मरज़ी में दख़ल दे सकता है, तो तुम्हारी ग़लती है। होता वही है, जो ख़ुदा को मंजूर होता है। हमारा फ़र्ज़ यही है कि तुम्हे ख़ुदा की याद दिलावें। अगर कोई फ़क़ीर, कोई करामात दिखाकर, अपना सिक्का जमाना चाहता हो, तो समझ लो कि वह मक्कार है। जाओ, अपना-अपना धंधा देखो।

छठा परिच्छेद

मियाँ आज़ाद मुँह-अँधेरे तारों की छाँह में बिस्तर से उठे, तो सोचे, साँड़नी के घास-चारे की फ़िक्र करके ज़रा अदालत और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कचहरी की भी दो घड़ी सैर कर आवें। पहुँचे, तो क्या देखते हैं, एक घना बाग़ है और पेड़ों की छाँह में मेला-सा लगा है। कोई हलवाई से मीठी-मीठी बातें करता है। कोई मदारिए को ताज़ा कर रहा है। कुँजड़े फलों की डालियाँ लगाए बैठे हैं। पानवाले की दूकान पर वह भीड़ है कि खड़े होने की जगह नहीं मिलती। चूरनवाला चूरन बेच रहा है। एक तरफ़ एक हकीम साहब दवाओं की पुड़िया फैलाए जिरियान की दवा बेच रहे हैं। बीसों मुंशी-मुतसद्दी चटाइयों पर बैठे अर्ज़ियाँ लिख रहे हैं। मुस्तग़ीस हैं कि एक-एक के पास दस-दस बैठे क़ानून छाँट रहे हैं—अरे मुंसीजी, यो का अंट-संट चिंघटियाँ-सी खँचाय दिहो ? हम तो आपन मजमून बतावत हैं, तुम अपनै अढ़ाई चाउर अलग चुरावत हौ। ले मोर मुंसीजी, तनिक अस सोच-बिचार के लिखो कि फरीक सानी क्यार मुकद्दमा ढिसमिसाय जाय। ले तोहार गोड़ धरित है, दुइ कच्चा अउर लै लेव। आज़ाद ने जो गवाह-घर की ओर रुख़ किया, तो सुभान-अल्लाह! काले-काले चोग़ों की बहार नज़र आई। कोई इधर-से-उधर भागा जाता है, कोई मसनद लगाए बैठा गँवारों से डींग मार रहा है। ज़रा और आगे बढ़े थे कि चपरासी ने कड़ककर आवाज़ लगाई—सत्तारख़ाँ हाज़िर है! एक अह्लमद के पाँव लड़खड़ाए, सीढ़ियों से लुढ़कते हुए धम-से नीचे! एक ठठोल ने कहा—वाह जनाब, गिरे तो मुझसे पूछ क्यों न लिया? आज़ाद ज़रा और आगे बढ़े, तो एक आदमी ने डाँट बताई—कौन हो? क्या काम है?

आज़ाद—इसी शहर में रहता हूँ। ज़रा सैर करने चला आया।

आदमी—कचहरी में खड़े रहने का हुक्म नहीं है। यहाँ से जाइए, वरना चपरासी को आवाज़ देता हूँ।

आज़ाद—बिगड़िए नहीं, बस, इतना बता दीजिए कि आपका ओहदा क्या है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी—हम उम्मेदवारी करते हैं। तीन महीने से रोज़ यहाँ काम सीखते हैं। अब फर्राटे उड़ाता हूँ। डाकेट तड़-से लिख लूँ, नक़्शा चुटकियों में बनाऊँ। किसी काम में बंद नहीं। पंद्रह रुपए की नौकरी हमें मिला ही चाहती है। मगर पहले तो घास छीलना मुशकिल मालूम होता था, अब लुक़मान बन गया।

आज़ाद—क्यों मियाँ, तुम्हारे वालिद कहाँ नौकर हैं?

उम्मेदवार—जनाब, वह नौकर नहीं हैं, दस गाँव के ज़मींदार हैं।

आज़ाद—क्या तुमको घर से निकाल दिया, या कुछ खटपट है?

उम्मेदवार—तो जनाब हम पढ़े-लिखे हैं कि नहीं।

आज़ाद—हज़रत, जिसे खाने को रोटियाँ न हों, वह सत्तू बाँधकर नौकरी के पीछे पड़े, तो मुज़ायक़ा नहीं। तुम ख़ुदा के करम से ज़मींदार हो, रुपएवाले हो, तुमको यह क्या सूझी कि दस-पाँच की नौकरी के लिये एड़ियाँ रगड़ते हो? इसी से तो हिंदोस्तान ख़राब है। जिसे देखो, नौकरी पर आशिक़। मियाँ, कहा मानो, अपने घर जाओ, घर का काम देखो, इस फेर में न पड़ो। यह नहीं कि अमामा बाँधा और कचहरी में जूतियाँ चटकाते फिरते हैं! मुहर्रिरी पर लोट, अमानत पर उधार खाए बैठे हैं।

दूसरे उम्मेदवार की निस्बत मालूम हुआ कि एक लखपती महाजन का लड़का है। बाप की कोठी चलती है। लाखों का वारान्यारा होता है। बेटा बारह रुपए की नौकरी के लिये सौ-सौ चक्कर लगाता है। चौथे दर्जे से मदर्सा छोड़ा और अपरेंटिस हुए। काम ख़ाक नहीं जानते। बाहर जाते हैं, तो मुंसरिम साहब से पूछकर। इस वक़्त जब सब दफ़्तरवाले अपने-अपने घर जाने लगे, तो हज़रत पूछते क्या हैं—क्यों जी, यह सब चले जाते हैं, और अभी छुट्टी की घंटी तो बजी ही नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्कूल की घंटी याद आ गई !

मियाँ आज़ाद दिल-ही-दिल में सोचने लगे कि ये कमसिन लड़के, पंद्रह-सोलह बरस का सिन, पढ़ने-लिखने के दिन, मदर्सा छोड़ा, कॉलेज से मुँह मोड़ा, और उम्मेदवारों के ग़ोल में शामिल हो गए। "अलिफ़-बे नगाड़ा, इल्म को चने के खेत में पछाड़ा।" मेहनत से जान निकलती है, किताब को देखकर बुख़ार चढ़ आता है। जिससे पूछो कि भाई मदर्सा क्यों छोड़ बैठे, तो यही जवाब पाया कि उक़्लैदिस की शक्ल से नफ़रत है, तारीख़ किसे याद रहे, यहाँ तो घर के बच्चों का नाम नहीं याद आता। हम भी सोचे, कहाँ का झंझट! अलग भी करो। चलता धंधा करो। जिसे देखिए, नौकरी के पीछे पड़ा हुआ है। ज़मींदार के लड़के की यह ख़्वाहिश होती है कि कचहरी में घुसूँ, सौदागर के लड़के को जी से लगी है कि कॉलेज से चंपत हूँ और कचहरी की कुर्सी पर जा डटूँ। और मुहर्रिर, मुंशी, अमले तो नौकरी के हाथों बिक ही गए हैं। उनकी तो घूँटी ही में नौकरी है। बाबू बनने का शौक़ ऐसा चर्राता है कि अक़्ल को ताक़ पर रखकर ग़ुलामी करने को तैयार हो जाते हैं।

यह सोचते हुए मियाँ आज़ाद और आगे चले, तो चौक में आ निकले। देखते क्या हैं, पंद्रह-बीस कमसिन लड़के बस्ते लटकाए, स्लेटें दबाए, परे जमाए, लपके चले आते हैं। पंद्रह-पंद्रह बरस का सिन, उठती जवानी के दिन, मगर कमर बहत्तर जगह से झुकी हुई, गालों पर झुर्रियाँ, आँखें गड्ढे में धँसी हुईं। यह झुका हुआ सीना, नई जवानी में यह हाल ! बुढ़ापे में तो शायद उठकर पानी भी न पिया जायगा। एक लड़के से पूछा, क्यों मियाँ, तुम सब-के-सब इतने कमज़ोर क्यों दिखलाई देते हो ? लड़के ने जवाब दिया, जनाब, ताक़त किसके घर से लाएँ ? दवा तो है नहीं कि अत्तार की दूकान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर जायँ, दुआ नहीं कि किसी शाहजी से सवाल करें, हम तो बिना मौत ही मरे। दस बरस के सिन में तो बीबी छम-छम करती हुई घर में आईं। चलिए, उसी दिन से पढ़ना-लिखना छप्पर पर रक्खा। नई धुन सवार हुई। तेरहवें बरस एक बच्चे के अब्बाजान हो गए। रोटियों की फ़िक्र ने सताया। हम दुबले-पतले न हों, तो कौन हो? फिर अच्छी ग़िज़ा भी मयस्सर नहीं; आज तक कभी दूध की सूरत न देखी, घी का सिर्फ़ नाम सुनते हैं।

मियाँ आज़ाद दिल में सोचने लगे, इन ग़रीबों की जवानी कैसी बर्बाद हो रही है। इसी धुन में टहलते हुए हज़रतगंज की तरफ़ निकल गए, तो देखा, एक मैदान में दस-दस, पंद्रह-पंद्रह बरस के अँगरेज़ों के लड़के और लड़कियाँ खेल रहे हैं। कोई पेड़ की टहनी पर झूलता है, कोई दीवार पर दौड़ता है। दो-चार गेंद खेलने पर लट्टू हैं। एक जगह देखा, दो लड़कों ने एक रस्सी पकड़कर तानी, और एक प्यारी लड़की बदन तौलकर ज़मीन से उस-पार उचक गई। सब-के-सब खुश और तंदुरुस्त हैं। आज़ाद ने उन होनहार लड़कों और लड़कियों को दिल से दुआ दी, और हिंदुस्थान की हालत पर अफ़सोस करते हुए घर आए।

सातवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद साँड़नी पर बैठे हुए एक दिन सैर करने निकले, तो एक सराय में जा पहुँचे। देखा, एक बरामदे में चार-पाँच आदमी फ़र्श पर बैठे धुआँधार हुक़्क़े उड़ा रहे हैं, गिलौरी चबा रहे हैं, और ग़ज़लें पढ़ रहे हैं। एक कवि ने कहा, हम तीनों के तख़ल्लुस का क़ाफ़िया एक है—अल्लामी, फ़हामी और हामी; मगर तुम दो ही हो—वक़ाद और जवाद। एक शायर और आ जायँ, तो दोनों तरफ़ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन-तीन हो जायँ। इतने में मियाँ आज़ाद तड़-से पहुँच गए।

एक ने पूछा—आप कौन?

आज़ाद—मैं शायर हूँ।

आप तख़ल्लुस क्या करते हैं?

आज़ाद ने कहा—आज़ाद। तब तो इन सबकी बाछें खिल गईं। जवाद, वक़ाद और आज़ाद का तुक मिल गया। अब लोग ग़ज़लें पढ़ने लगे। एक आदमी शेर पढ़ता है, बाक़ी तारीफ़ करते हैं—सुभान-अल्लाह क्या तबीयत पाई है, वाह-वाह! फिर फ़रमाइएगा, क़लम तोड़ दिए, कितनी साफ़ ज़बान है! इस बोल-चाल पर क़ुरबान! कोई झूमता है, कोई टोपियाँ उछालता है।

आज़ाद—मियाँ, सुनो, हम शायरी के क़ायल नहीं। आप लोग तो ज़बान पर मरते हैं, और हम ख़यालों पर जान देते हैं। हमें तो नेचर की शायरी पसंद है।

फ़हामी—अल्लाह, आप नेचरिए हैं! अनीसिए और दबीरिए तो सुनते थे, अब नेचरिए पैदा हुए। ग़ज़ब ख़ुदा का! आपको इन उस्तादों का कलाम पसंद नहीं आता, जो अपना सानी नहीं रखते थे?

आज़ाद—मैं तो साफ़ कहता हूँ, यह शायरी नहीं, ख़ब्त है, बेतुकापन है; इसका भी कुछ ठिकाना है, झूठ के छप्पर उड़ा दिए। अब कान खोलकर नेचरी शायरी सुनो।

यह कहकर आज़ाद ने अँगरेज़ी की एक कविता सुनाई, तो वह क़हक़हा पड़ा कि सराय-भर गूँज उठी।

फ़हामी—वाह जनाब, वाह, अच्छी गिट-पिट है! इसी को आप शायरी कहते हैं!

आज़ाद—"शेख़ क्या जाने साबुन का भाव!" "भैंस के आगे बीन बजावे, भैंस खड़ी पगुराय।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद तो नेचरल शायरी की तारीफ़ करने लगे, उधर वे पाँचों उर्दू की शायरी पर लोट-पोट थे। आतश और मीर की ज़बान, नासिख़, अनीस, ज़ौक़, ग़ालिब, मोमिन-जैसे उस्तादों के कलाम पढ़-पढ़कर सुनाते थे। अब बताइए, फ़ैसला कौन करे? भठियारिन झगड़ा चुकाने से रही, भठियारा घास ही छीलना जाने, आख़िर, यह राय तय पाई कि शहर चलिए। जो पढ़ा-लिखा आदमी पहले मिले, उसी का फ़ैसला सबको मंज़ूर। सबने हाथ-पर-हाथ मारा। चलने ही को थे कि भठियारिन ने इनको ललकारा और चमककर मियाँ जवाद का दामन पकड़ा— मियाँ, यह बुत्ते किसी और को बताना, हम भी इसी शहर में बढ़कर इतने बड़े हुए हैं। हूँ तो अभी आपकी लड़की के बराबर, मुल सैकड़ों ही कुओं का पानी पी डाला। पहले कौड़ी-कौड़ी बाएँ हाथ से रख जाइए, फिर असबाब उठाइए।

अल्लामी—नेकबख़्त, हम शरीफ़ भलेमानस हैं। शरीफ़ लोग कहीं दो पैसे के लिये ईमान बेचा करते हैं? चलो, दामन छोड़ दो, अभी दम-के-दम में आए।

भठियारिन—इस दाम में बंदी न आवेगी। ऐसे बड़े साहूकार खरे असामी हो, तो एक गंडा चुपके-से निकाल दो न?

वकाद—यह मुड़चिरी है या भठियारिन? साहब, इससे पीछा छुड़ाओ। ऐसी भठियारिन तो कहीं देखी, न सुनी।

भठियारिन—मियाँ, कुछ बेधे तो नहीं हुए हो, या बिल्ली नाँघकर घर से चले थे? चुपके-से पैसे रखकर तब क़दम उठाइए।

मियाँ जवाद सीधे-सादे आदमी थे। जब उन्होंने देखा कि मुफ़्त में घेरे गए, तो कहा—भाई, तुम पाँचों जाओ, हम यहाँ बी भठियारिन की ख़ातिर से बैठे हैं। तुम लोग निपट आओ। वे सब तो उधर चले और जवाद सराय ही में भठियारी की हिरासत में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठे, मगर एक आने पैसे न दे सके। दो-चार मिनट के बाद पुकारा—भठियारी-भठियारी, मैं लेटा हूँ। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे पेट में चूहे दौड़ें कि रफ़ू-चक्कर हुए। फिर तीन मिनट के बाद गला फाड़-फाड़ चिल्लाने लगे—भठियारिन, हम भागनेवाले असामी नहीं हैं, तुम मज़े-से अपनी दाल बघारो। जब इन्होंने बार-बार छेड़ना शुरू किया, तो वह आग-भभूका हो गई और बोली—मियाँ, ऐसे दो पैसे से दरगुज़री; तुमने तो गुल मचा-मचाकर मेरा कलेजा पका दिया। आप जायँ, बल्कि खटिया समेत दफ़न हों, तो मैं खुश, मेरा अल्लाह खुश। ऐ वाह, "देखी तेरी कालपी और बावन पुरे उजाड़।" मियाँ, हूँ तो अभी जुमा-जुमा आठ दिन की, मुल नाक पर तो मक्खी बैठने नहीं देती!

इधर मियाँ जवाद भठियारिन से चुहल कर रहे थे, उधर वे पाँचों आदमी सराय से चले, तो रास्ते में एक बुज़ुर्ग से मुलाक़ात हुई।

हामी ने कहा—या मौलाना, एक मसला हल कीजिए, तो एहसान होगा।

बुज़ुर्ग—मियाँ, मैं एक जाहिल, बेवक़ूफ़, बेसमझ, गुमराह आदमी हूँ, मौलाना नहीं; मौलाना होना दुशवार बात है। मुझे मौलाना कहना इस लफ़्ज़ को बदनाम करना है।

हामी—अच्छा साहब, आप मौलाना न सही, मुंशी सही, मियाँ सही, आप एक झगड़े का फ़ैसला कर दीजिए और घर का रास्ता लीजिए। आपका हमारे बुज़ुर्गों पर और बुज़ुर्गों के बुज़ुर्गों पर एहसान होगा। झगड़ा यह है कि यह साहब (आज़ाद की तरफ़ इशारा करके) नेचरी शायरी के तरफ़दार हैं, और हम चारों उर्दू-शायरी पर जान देते हैं। अब बतलाइए, हममें से कौन ठीक कहता है और कौन ग़लत?

बुज़ुर्ग—यह तो बहुत ग़ौर करने की बात नहीं। आप चारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुफ़्त में झगड़ा करते हैं। आप सीधे अस्पताल जाइए और फ़स्द खुलवाइए, शायरी पर जान देना समझदारों का काम नहीं। जान ख़ुदा की दी हुई है, उसी की याद में लगानी चाहिए। बाक़ी रही दूसरे क़िस्म की शायरी, मैंने उसका नाम भी नहीं सुना, उसके बारे में क्या अर्ज़ करूँ?

पाँचों आदमी यहाँ से निराश होकर आगे बढ़े, तो एक मकतब-ख़ाना नज़र से गुज़रा। टूटा-फूटा मकान, पुरानी-धुरानी दालान, दीवारें बाबा आदम के वक़्त की। एक मौलवी साहब लंबी दाढ़ी लटकाए, हाथ में छड़ी लिए, हिल-हिलकर पढ़ा रहे हैं और बीस-पचीस लड़के ज़टल-क़ाफ़िया उड़ा रहे हैं। एक लड़के ने दूसरे की चाँद पर तड़-से धप जमाई। मौलवी साहब पूछते हैं—अबे, यह क्या हुआ? लड़के कहते हैं—जी, कुछ नहीं, तख़्ती गिर पड़ी। अबे, यह तख़्ती की आवाज़ थी? जी हाँ, और नहीं तो क्या? इतने में दो-चार शरीर लड़कों ने मुँह चिढ़ाना शुरू किया। देखिए मौलवी साहब, यह मुँह चिढ़ाता है। नहीं मौलवी साहब यह झक मारता है, मैं तो बाहर गया था। गुल-गपाड़े की आवाज़ ऐसी बलंद है कि आसमान की ख़बर लाती है, कान पड़ी आवाज़ नहीं सुनाई देती। जिधर देखो, चिल्ल-पों, जूती-पैज़ार! मगर सब-के-सब हिल-हिलकर बड़बड़ाते जाते हैं। किताब तो दो-ही-चार पढ़ रहे हैं, मगर वाही-तबाही अनाप-शनाप बहुतों की ज़बान पर है।

एक—आज शाम को मैं बाने की कनकइया ज़रूर लड़ाऊँगा।

दूसरा—आग़ातक़ी के बाग़ में कौवा हलाल है।

तीसरा—अरे माली, तुझे गुलबूटे की पहचान रहे।

चौथा—मौलवी साहब, गो पीर हुए, नादान रहे।

पाँचवा—पढ़ोगे-लिखोगे, तो होगे ख़राब;
खेलोगे-कूदोगे, होगे नवाब।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मगर सबकी आवाज़ें ऐसी मिल-जुल गई हैं कि ख़ाक समझ में नहीं आता, क्या खुराफ़ात बकते हैं। लौंडे तो ज़टल-क़ाफ़िया उड़ा रहे हैं, उधर मौलवी साहब मज़े-से ऊँघते हैं। जब नींद खुली, तो एक लड़के को बुलाया—आओ, किताब लाओ, सबक़ पढ़ लो। वह सिर खुजलाता हुआ मौलवी साहब के क़रीब जा बैठा, और सबक़ शुरू हुआ; मगर न तो लड़के ने कुछ समझा कि मैंने क्या पढ़ा, और न मौलवी साहब को मालूम हुआ कि मैंने क्या पढ़ाया। दोपहर के वक़्त लड़के तख़्ती लेकर बैठे, कोई गेंदे की पत्ती तख़्ती पर मलता है, कोई कौड़ी से तख़्ती को चिकनाता है। आध घंटे तक यही हुआ किया। फिर लड़के लिखने बैठे, मौलवी साहब कोठरी से मक्खियों को निकाल और दरवाज़ा बंद करके सो रहे। यहाँ खूब लप्पा-डुग्गी हुई। दो घंटे के बाद मौलवी साहब चौंके। कोठरी खोलते हैं, तो यहाँ दो लड़कों में चट-पट हो रही है; दोनों गुँथे पड़े हैं। निकलते ही एक के तमाचे लगाने शुरू किए। जो अमीर का लड़का था और मौलवी साहब को व्यवहारी और जुमेराती खूब दिया करता था, उससे तो न बोले, बेचारे ग़रीब पर खूब हाथ साफ़ किया। आज़ाद ने दिल में कहा—

गर हमीं मकतब अस्त वईं मुल्ला ;
कारे तिफ़्लाँ तमाम ख्वाहद शुद।

(अगर यही मकतब है और यही मौलवी, तो लड़के पढ़ चुके।)

आठवाँ परिच्छेद

एक दिन मियाँ आज़ाद सराय में बैठे सोच रहे थे, किधर जाऊँ, कि एक बूढ़े मियाँ लठिया टेकते आ खड़े हुए और बोले—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मियाँ, ज़री यह ख़त तो पढ़ दीजिए, और इसका जवाब भी लिख दीजिए। आज़ाद ने ख़त लिया और पढ़कर सुनाने लगे—

मेरे खूसट शौहर, खुदा तुमसे समझे !

आज़ाद—वाह ! यह तो निराला ख़त है। न सलाम, न बंदगी। शुरू ही से कोसना शुरू किया।

बूढ़े—जनाब, आप ख़त पढ़ते हैं कि मेरे घर का क़ज़िया चुकाते हैं ? पराए झगड़े से आपका वास्ता ? जब मियाँ-बीबी राज़ी हैं, तब आप कोई क़ाज़ी हैं !

आज़ाद—अच्छा, तो यह कहिए कि आपकी बीबीजान का ख़त है। लीजिए, सुनाए देता हूँ—

"मेरे खूसट शौहर खुदा तुमसे समझे। सिकंदर पाताल से प्यासा आया ; मगर तुमने अमृत की दो-चार बूँदें ज़रूर पी ली हैं, जभी मरने का नाम नहीं लेते। कुछ ऊपर सौ बरस के तो हुए, अब आख़िर क्या आक़बत के बोरिए बटोरोगे ? ज़रा दिल में शरमाओ, हज़ारों नवजवान उठते जाते हैं, और तुम टैयाँ-से मौजूद हो। डंकू-फ़ीवर भी आया, मगर तुम मूँछों पर ताव ही देते रहे। हैज़े ने लाखों आदमी चट किए, मगर आप तो हैज़े को भी चट कर जायँ, और डकार तक न लें। बुख़ार में हज़ारों हयादार चल बसे, मगर तुम और भी मोटे हो गए। तुम्हें लक़वा भी नहीं मारता, लू के झोंके भी तुम्हें नहीं झुलसाते, दरिया में भी तुम नहीं फिसल जाते, और सौ बात की एक बात यह है कि अगर हयादार होते, तो एक चिल्लू काफ़ी था ; मगर तुम वह चिकने घड़े हो कि तुम पर चाहे हज़ारों ही घड़े पड़ें ; लेकिन एक बूँद न थम सके। वाह पट्ठे, क्यों न हो ! किस बुरी साइत में तुम्हारे पाले पड़ी। किस बुरी घड़ी में तुम्हारे साथ ब्याह हुआ ! माँ-बाप को क्या कहूँ, मगर मेरी गरदन तो कुंद छुरी से रेत डाली। इससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो किसी कुएँ ही में ढकेल देते, क़साई ही के हवाले कर देते, तो यह रोज़-रोज़ का कुढ़ना तो न होता। तुम खुद ही इंसाफ़ करो। तुम्हारे बुढ़भस से मुझ पर क्या गाज पड़ी। हाथ तो आपके काँपते हैं, पाँव में सकत नहीं, मुँह में दाँत, न पेट में आँत, कमर कमान की तरह झुकी हुई, आँखों की यह कैफ़ियत कि दिन को ऊँट नहीं सूझता। लाठी टेककर दस क़दम चले भी, तो साँस फूल गई, दम टूट गया। सुसताने बैठे, तो उठने का नाम नहीं लेते। सुबह को नन्ही-नन्ही दो चपातियाँ खा लीं, तो शाम तक खट्टी डकारें आ रही हैं, तोला-भर सिकंजबीन का सत्यानाश किया, मगर हाज़मा ठीक न हुआ। हाफ़िज़े का यह हाल कि अपने बाप का भी नाम याद नहीं। फिर सोचो तो कि ब्याह करने का शौक़ क्यों चर्राया। एक पाँव तो क़ब्र में लटकाया है और ख़याल यह गुदगुदाया है कि दूल्हा बनें, दुलहिन लाएँ। खुदा-क़सम, जिस वक़्त तुम्हारा पोपला मुँह, सफ़ेद भौंह, गालों की झुर्रियाँ, दोहरी कमर, गंजी चाँद और मनहूस सूरत याद आती है, तो खाना हराम हो जाता है। वाह बड़े मियाँ, वाह! खुदा झूठ न बुलावे, तो हमारे अब्बाजान से पचास-साठ बरस बड़े होगे, और अम्माँजान को तुमने गोद में खिलाया हो, तो ताज्जुब नहीं। खुदा गवाह है, तुम मेरे दादा के बाप से भी बड़े हो, मगर वाहरी क़िस्मत कि आप मेरे शौहर हुए! ज़मीन फट जाय, तो मैं धँस जाऊँ।

तुम्हारी जवान बीबी"

आज़ाद—जनाब, इसका जवाब किसी बड़े मुंशी से लिखवाइए।

बूढ़ा—बुढ़ापे में अब कभी शादी न करेंगे।

आज़ाद—वाह, क्या अभी शादी करने की हवस बाक़ी है? अभी पेट नहीं भरा!

बूढ़ा—अब इसका ऐसा जवाब लिखिए कि दाँत खट्टे हो जायँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—आप औरत के मुँह नाहक़ लगते हैं।

बूढ़ा—जनाब, उसने तो मेरी नाक में दम कर दिया और सच पूछो, तो जिस दिन उसको ब्याह लाए, नाक ही कट गई। ऐसी चंचल औरत देखी, न सुनी। मजाल क्या कि नाक पर मक्खी बैठ जाय।

आख़िर, आज़ाद ने पत्र का जवाब लिखा—

"मेरी अलबेली, छैल-छबीली, नादान बीबी को उसके बूढ़े शौहर की उठती जवानी देखनी नसीब हो। वह जुग-जुग जिए, और तुम पूतों फलो, दूधों नहाओ, अठारह लड़के हों और अठारह दूनी छत्तीस छोकरियाँ। जब मैं दालान में क़दम रक्खूँ, तो सब बच्चे 'अब्बा आए, अब्बा आए, खिलौने लाए, पटाख़ा लाए' कहकर दौड़ें। मगर डर यह है कि तुम भी अभी कमसिन हो, उनकी देखा-देखी कहीं मुझे अब्बा न कह उठना कि पास-पड़ोस की औरतें मुझे उँगलियों पर नचावें। मुझे तुमसे इतनी ही मुहब्बत है, जितनी किसी को अपनी बेटी से होती है। अपनी नानी को मैं ऐसा प्यारा न था, जितनी तुम मुझे प्यारी हो। और क्यों न हो, तुम्हारी परदादी को मैंने गोदियों में खिलाया है, और मेरी बहन ने उसे दूध पिलाया है। मुझे तुम्हारी दादी का गुड़िया खेलना इस तरह याद है, जैसे किसी को सुबह का खाना याद हो। तुम्हारे ख़त ने मेरे दिल के साथ वह किया, जो बिजली खलियान के साथ करती है; लेकिन मुझमें एक बड़ी सिफ़त यह है कि परले सिरे का बेहया हूँ। और क्यों न हो, शर्म औरतों को चाहिए, मैं तो चिकना घड़ा हूँ। माना कि आँखों में नूर नहीं, मगर निगाह बड़ी बारीक रखता हूँ; बहरा सही, लेकिन मतलब की बात खूब सुनता हूँ; बुड्ढा हूँ, कमज़ोर हूँ, मगर तुम्हारी मुहब्बत का दम भरता हूँ। तुम्हारा प्यारा-प्यारा मुखड़ा, रसीली अँखियाँ, गोरी-गोरी बहियाँ जिस वक़्त याद आती हैं, कलेजे पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँप लोटने लगता है। तुम्हारा चाँदनी रात में निखरकर निकलना, कभी मुसकिराना, कभी खिलखिलाना—किसका शरमाना? कैसा लजाना? और-तो-और, तुम्हारी फुर्ती से दिल लोट-पोट है, कलेजे पर चोट है। तुम्हारा फिरकी की तरह चारों ओर घूमना, मोरों की तरह झूमना; कभी खेलते-खेलते मेरी चपतगाह पर टीप जमाई, कभी शोख़ी से वह डाँट बताई कि कलेजा काँप उठा, कभी आप-ही-आप रोना, कभी दिन-दिन-भर सोना; अल्हड़पन के दिन, बारह बरस का सिन; बीबीजान, तुम पर कुरबान; लो कहा मानो, हमें ग़नीमत जानो। मैं सुबह का चिराग़ हूँ, हवा चले या न चले, अब गुल हुआ, अब गुल हुआ। डूबता हुआ आफ़ताब हूँ, अब डूबा, अब डूबा। मुझे सताना, मुए पर सौ दुर्रे! तुम खूब जानती हो कि मेरी बातें कितनी मीठी होती हैं। सत्तर बरस हो गए कि दाँत चूहे ले गए, तब से हलुए पर बसर है, फिर जो रोज़ हलुआ खायगा, उसकी बातें मीठी क्यों न होंगी। तुम लाख रूठो, फिर हमारी हो, बीबी हो, वह सुभ घड़ी याद करो, जब हम दूल्हा बने, पुराने सिर पर नई पगड़ी जमाए, सेहरा लटकाए, मेंहदी लगाए, मुर्ग़ी के बराबर घोड़िया पर सवार, 'मीठी पोई' जाते थे, और तुम दुलहिन बनी, सोलह सिंगार किए पालकी में से झाँक रही थीं। हमारे गालों की झुर्रियाँ, हमारा पोपला मुँह, हमारी टेढ़ी कमर देखकर खुश तो न हुई होगी! और क्या लिखूँ, एक नसीहत याद रक्खो, एक तो मेले-ठेले न जाना, दूसरे आस-पास की छोकरियों को गुइयाँ न बनाना। खुदा करे, जब तक ज़मीन और आसमान क़ायम है, तुम जवान रहो, और नादान रहो; हमारे सफ़ेद बाल तुम्हें भाएँ, हासिद ख़ार खाएँ।

तुम्हारा बूढ़ा शौहर"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूढ़ा—माशा-अल्लाह ! आपने खूब लिखा; मगर इस ख़त को ले कौन जाय ? अगर डाक से भेजता हूँ, तो गुम होने का डर, उस पर तीन दिन की देर। अगर आप इतना एहसान करें कि इसे वहाँ पहुँचा भी दें, तो क्या पूछना।

आज़ाद सैलानी तो थे ही, समझे, क्या हर्ज है, साँड़नी मौजूद है, चलूँ इसी बहाने ज़रा दिल्लगी देख आऊँ। कुछ बहुत दूर भी नहीं, साँड़नी पर मुशकिल से दो घंटे की राह है। बोले—आप बुज़ुर्ग आदमी हैं, आपका हुक्म बजा लाना मेरा फ़र्ज़ है, लीजिए, जाता हूँ।

यह कहकर साँड़नी पर बैठे और छुन-छुन करते जा पहुँचे। दरवाज़े पर आवाज़ दी, तो एक कहारिन ने बाहर निकलकर पूछा—मियाँ, कौन हो, कहाँ से आना हुआ, किसकी तलाश है ?

आज़ाद—बी महरी साहबा, सलाम। हम मुसाफ़िर परदेसी हैं।

कहारिन—वाह ! अच्छे आए मियाँ, यह क्या कुछ सराय है ?

आज़ाद—ख़ुदा के लिये बेगम साहबा से कह दो कि बड़े मियाँ ने एक ख़त भेजा है।

महरी ने एक चौकड़ी भरी, तो घर के अंदर थी। जाकर बोली—बीबी, मियाँ के पास से एक साहब आए हैं, ख़त लाए हैं।

वह चौंक उठी—चल झूठी, किसी और को जाकर उड़ाना, यहाँ कच्ची गोलियाँ नहीं खेली हैं। मियाँ किसी क़ब्रस्तान में मीठी नींद सो रहे होंगे कि ख़त भेजेंगे ?

महरी—ज़री, झरोखे से झाँकिए तो, वह क्या सामने खड़े हैं।

बेगम साहबा झरोखे की तरफ़ चलीं, तो अपनी बूढ़ी अम्माँ को आईना सामने रक्खे बाल सँवारते देखा। छेड़कर बोलीं—ऐ अम्माँ, आज तो बेतौर चोटी-कंघी की फ़िक्र है। कोई घूरे, तो इंसान निखार करे। कोई मरे, तो आदमी शिकार करे। तुम दो ऊपर अस्सी बरस की हुईं, मगर जवानी की हवस न गई। ख़ुदा ही ख़ैर करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्माँ—मुझ नसीबों-जली की क़िस्मत में यही बदा था कि बेटी की ज़बान से ऐसी-ऐसी बातें सुनूँ। कोई और कहती, तो उसकी ज़बान निकाल लेती; लेकिन तुम तो मेरी आँखों की पुतली हो। हाय! मामता बुरी चीज़ है! बेटा, तुम ये बातें क्या जानो, अभी जवान हो, नादान हो, बनावट-सजावट तो मेरी घूँटी में पड़ी थी, और मैं न बनती-ठनती, तो तुम्हारी आँखों को तिरछी चितवन कौन सिखाता? बाहर जाओ, तुम्हारे मियाँ का आदमी आया है।

बीबी ने झरोखे से जो देखा, एक आदमी सचमुच खड़ा है, और है भी अलबेला, छैला, जवान, तो तुरत महरी को भेजा कि जाकर इन्हें बैठने के लिये कुर्सी निकाल दे। आज़ाद तो कुर्सी पर बैठे और चिक के उधर आप जा बैठीं। आज़ाद की उन पर निगाह पड़ी, तो तीर-सा लग गया। कमर ऐसी पतली कि साए के बोझ से बल खाए, मुखड़ा बिन घने चाँद को लजाए, उस पर सियाह रेशमी लिबास और हिना की बू-बास। जोबन फटा पड़ता था, निगाह फिसली जाती थी।

महरी ने आज़ाद से पूछा—बड़े मियाँ तो आराम से हैं?

आज़ाद—हाँ, मैं उनका ख़त लाया हूँ। अपनी बेगम साहबा से मेरा सलाम कहो और यह ख़त उनको दो।

महरी—बेगम साहबा कहती हैं, आप ख़त लाए हैं, तो पढ़कर सुना भी दीजिए।

आज़ाद ने ख़त पढ़कर सुनाया, तो उस नाज़नीन का चेहरा मारे गुस्से के सुर्ख़ हो गया। विना कुछ कहे-सुने झमककर वहाँ से उठीं और अपनी माँ के पास आकर खड़ी हो गईं। अम्माँजान इस वक़्त चाँदनी की बहार देखने में मसरूफ़ थीं। बोलीं—बेटी, देख तो क्या नूर की चाँदनी छिटकी हुई है, चाँद इस वक़्त दुलहिन बना हुआ है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेटी—अम्मीजान, तुम्हारी भी अनोखी बातें हैं। सरदी की चाँदनी, जैसे बूढ़े की नसीबों-जली बीवी की जवानी। आज तो आसमान यों ही झक-झक कर रहा है, आज निकला तो क्या, जब जानें कि अँधेरे-घुप में शक्ल दिखावे। बुढ़िया ताड़ गई। बोली—बेटी, ज़री सब्र करो, अपनी जवानी की क़सम, बुड्ढा तो क़ब्र में पाँव लटकाए बैठा है, आज मुआ, कल दूसरा दिन, फिर हम तुमको किसी अच्छे घर ब्याहेंगे। अब की खुदाई-भर की ख़ाक छान-कर वह ढूँढ़ निकालूँ, जो लाखों में एक हो। सुबह-शाम ख़बर आया ही चाहती है कि बुड्ढा चल बसा।

यह सुनकर बेटी खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोली—अम्माँ, जब तुम अपनी जवानी की क़सम खाती हो, तो मुझे बेअख़्तियार हँसी आती है। तुम तो अपने को बिलकुल नन्ही ही समझती हो। करोड़ों तो आपके गालों पर झुर्रियाँ, बगले के पर का-सा सफ़ेद जूड़ा, सिर घड़ी का खटका बना हुआ, कमर टेढ़ी, मगर मेंहदी का लगाना न छूटा, न छूटा। रंगीन दुपट्टा ही उम्र-भर ओढ़ा, जब देखो, कंघी-चोटी से लैस। खुदा-क़सम, ऐसी अनगढ़ बूढ़ी देखी, न सुनी।

बुढ़िया ने टुइयाँ तोते की तरह पोपले मुँह से कहा—प्यारी, तुम्हारी बातों से मुझे हौल होता है, अल्लाह मेरी बच्ची पर रहम खाए, बूढ़े के मरने की ख़बर सुनाए।

महरी—बड़ी बेगम, आपके नमक की क़सम, साहबज़ादी को दिलोजान से आपका प्यार है; मगर भोली नादान हैं, जो अनाप-शनाप मुँह में आया, कह सुनाया। अल्हड़पने के तो इनके दिन ही हैं, जुमा-जुमा आठ दिन की पैदायश, नेक-बद, ऊँच-नीच क्या जानें। जब सयानी होंगी, तो शऊर आपी-आप सीख जायँगी। बुढ़िया ने एक ठंडी साँस भरके कहा—जो मुझे इनकी बातों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंज हुआ हो, तो ख़ुदा मुझे जन्नत न दे। मगर करूँ क्या, बुरा तो यह मालूम होता है कि मुझको यह आए दिन ताने देती हैं कि तुम बुढ़िया हो, बुढ़ापे में निखरती क्यों हो ? मैं किससे कहूँ कि इसके ग़म ने मेरी कमर तोड़ डाली, इसको कुढ़ते देखकर घुली जाती हूँ, नहीं, मेरा अभी सिन ही क्या है ! अच्छा तू ही ईमान से कह, कोई और भी मुझे बूढ़ी कहता है ?

महरी दिल में तो हँसती थी कि इन्हें जवान बनने का शौक़ चर्राया है, हौवा के साथ खेली होंगी, मगर अभी नन्ही ही बनी जाती हैं; लेकिन छटी हुई औरत थी, बात बनाकर बोली—ऐ तोबा, बुढ़ापे की आपमें तो छाँह भी नहीं। मेरा अल्लाह जानता है, जब आप और बिटिया को कोई साथ देख लेता है, तो पहले आप पर नज़र पड़ती है, पीछे इन पर। बल्कि, एक मुई दिलजली ने परसों चुटकी ली थी कि "छोटी बी तो छोटी बी; बड़ी बी सुभान-अल्लाह।" लड़की तो ख़ैर, इसकी माँ ने तो खूब काठी पाई है। आपका चेहरा कुंदन की तरह दमकता है, जो देखता है, तरसता है।

बुढ़िया तो खिल गई, लेकिन बेटी जल उठी। कड़ककर बोली—चल, चुप, खुशामदिन। अल्लाह करे तेरा मियाँ भी मेरे मियाँ का-सा बुड्ढा हो जाय। और तुम खुशामद न करो, तो खाओ क्या ? अम्माँ पर लोगों की नज़र पड़ती है ! झूठे पर शैतान की फटकार ! बूढ़ी औरत, कुछ ऊपर सौ बरस का सिन, लठिया टेककर दस क़दम चलती हैं, तो घंटों हाँफा करती हैं। दिन को ऊँट और सारस नहीं सूझता, इनके बूढ़े नख़रे देखकर हमको हँसी आती है। जी जलता है कि यह किस बिरते पर इतराती हैं, मुँह में दाँत न पेट में आँत, भला कमर तो मेरे सबब से झुक गई, और दाँत क्या हुए।

आख़िर, महरी ने उसे समझा-बुझाकर बात टाल दी, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोली—वह मियाँ बाहर बैठे हैं, उनके लिये आप क्या कहती हैं। उसने महरी की बात का कुछ जवाब न दिया। वहाँ से उठकर बाग़ीचे में आई और इठला-इठलाकर टहलने लगी। बाल बिखरे हुए, यही मालूम होता था कि साँप लहरा रहा है। कमर लाखों बल खा रही है। मियाँ आज़ाद ने चिक की दराज़ों से जो उसे बेनक़ाब देखा, तो सन-से जान निकल गई! कलेजे पर साँप लोटने लगा! संयोग से उस रमणी ने कहीं इनको देख लिया कि आँखें सेक रहे हैं और दूर ही से जोबन लूट रहे हैं, तो बदन को छिपाए, आँख चुराए, बिजली की तरह कौंककर नज़र से ग़ायब हो गई। आज़ाद हैरान कि अब क्या करूँ। आख़िरकार, दिल की बेक़रारी ने ऐसा मजबूर किया कि आठ-आठ आँसू रोकर यह ग़ज़ल गाने लगे—

क्या जानिए कि वस्ल में क्या बात हो गई;
आँखें नहीं मिलाते हैं शरमाए जाते हैं।
दिल मेरा ले के क्या कहीं भूल आए हैं हुज़ूर?
खोए हुए से आप जो कुछ पाए जाते हैं।
काले डसें जो ज़ुल्फ़ तुम्हारी कभी छुएँ!
लो, अब तुम्हारे सिर की क़सम खाए जाते हैं।
तमकनत को न काम फ़रमाओ;
एक नज़र मुड़के देखती जाओ।
आशिक़ों से न इस क़दर शरमा;
एक निगह के लिये न आँख चुरा!
जाने-जाँ, कुछ तरस न खाओगी?
यों तड़पता ही छोड़ जाओगी?

वह इन-ऐसों की कब सुननेवाली थी, मुड़कर देखना गाली थी। आज़ाद ने जब देखा कि यहाँ दाल गलने की नहीं। कोई यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टहलते हुए देख ले, तो लेने-के-देने पड़ें, तो बेचारे रोते हुए घर आए।

उधर उस नाज़नीं ने जवानी की उमंग में यह ठुमरी भैरवी की धुन में लहरा-लहराकर गाई—

पिया के आवन की भई बिरियाँ, दरवजवा ठाढ़ी रहूँ;
मोरे पिया को वेगी ले आओ री, निकसत जियरा जाय;
पिया दरवजवा ठाढ़ी रहूँ।

इसके जवाब में उनकी अम्माँजान टीपदार आवाज़ में क्या कहती हैं—

जोबनवाँ हो, चार दिना दीन्हों साथ।
जोबन रितु जात सभी मुख मोरत, 'कदर' न पूछे बात रे।
जोबनवा हो, चार दिना दीन्हों साथ।

मियाँ आज़ाद ने चलते-चलाते बाहर से यह तान लगाई—

तेरे नैनों ने मुझे मारा, रसीली मतवारियों ने जादू डारा।

महरी ने देखा कि सबने अपने-अपने हाल के मुताबिक़ हाँक लगाई, एक मैं ही फिसड्डी रह गई, तो वह भी कफ़न फाड़कर चीख़ उठी—

जाओ-जाओ काहे ठाढ़े डारे गल-बाहीं रे?
घेरे रहत नित नेरे जैसे छाईं रे।
जानत हूँ जो हमसे चहत हो,
नाहक़ इतनी बिनती करत हो,
'कदर' करत हो अरे नाहीं-नाहीं रे।
जाओ चलो, काहे ठाढ़े डारे गल-बाहीं रे।

नवाँ परिच्छेद

आज़ाद को नवाब साहब के दरबार से चले महीनों गुज़र गए, यहाँ तक कि मुहर्रम आ गया। घर से निकले, तो देखते क्या हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घर-घर कुहराम मचा हुआ है, सारा शहर हुसेन का मातम मना रहा है। जिधर देखिए, तमाशाइयों की भीड़, मजलिसों की धूम, ताज़िया-ख़ानों में चहल-पहल और इमामबाड़ों में भीड़-भाड़ है। लखनऊ की मजलिसों का क्या कहना। यहाँ के मर्सिए पढ़नेवाले रूम और शाम तक मशहूर हैं। हुसेनाबाद का इमामबाड़ा चौदहवीं रात का चाँद बना हुआ था। उनके साथ एक दोस्त भी हो लिए थे। उनकी बेक़रारी का हाल न पूछिए। वह लखनऊ से वाक़िफ़ न थे, लोटे जाते थे कि हमें लखनऊ का मुहर्रम दिखा दो; मगर कोई जगह छूटने न पावे। एक आदमी ने ठंडी साँस खींचकर कहा—मियाँ, अब वह लखनऊ कहाँ? वे लोग कहाँ? वे दिन कहाँ? लखनऊ का मुहर्रम रँगीले पिया जानआलम के वक़्त में अलबत्ता देखने क़ाबिल था। जब देखो, बाँकों की तलवार मियान से दो उंगल बाहर। किसी ने ज़रा तीखी चितवन की और उन्होंने खट-से सिरोही का तुला हुआ हाथ छोड़ा, भंडारा खुल गया। एक-एक घंटे में बीस-बीस वारदातों की ख़बर आती थी, दूकानदार जूतियाँ छोड़-छोड़कर सटक जाते थे। वह धक्कमधक्का, वह भीड़-भड़क्का होता था कि वाह-जी-वाह! इंतिज़ाम करना ख़ालाजी का घर न था। अब कोई चूँ भी नहीं करता, तब छोटे-छोटे आदमी हज़ारों लुटाते थे, अब कोई पैसा भी ख़र्च नहीं करता। अब न अनीस हैं न दबीर, न ज़मीर हैं न दिलगीर। *

अफ़सोस जहाँ से दोस्त क्या-क्या न गए;
इस बाग़ से क्या-क्या गुलेराना न गए।
था कौन-सा बाग़, जिसने देखी न ख़िज़ाँ,
वो कौन-से गुल खिले जो मुरझा न गए।

---

* लखनऊ के मशहूर मर्सिया कहनेवाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दबीर का क्या कहना था, एक बंद पढ़ा और सुननेवाले लोट गए। अनीस को खुदा बख़्शे, क्या कलाम था, गोया जवाहिरात के टुकड़े हैं। लेकिन हाथी लुटेगा भी, तो कहाँ तक। अब भी इस शहर की ऐसी ताज़ियादारी दुनिया-भर में कहीं नहीं होती।

आज़ाद और उनके दोस्त चले जाते थे। राह में वह भीड़ थी कि कंधे-से-कंधा छिलता था। हवा भी मुशकिल से जगह पाती थी। ग़रीब-अमीर, बूढ़े-जवान उमड़े चले आते हैं। जिधर देखो, निराली ही सज-धज। कोई हुसेन के मातम में नंगे ही सिर चला जाता है, कोई हरा-हरा जोड़ा फड़काता है। हसीनों की मातमी पोशाक, बिखरे हुए बाल, कभी लजाना, कभी मुसकिराना। शोहदों का सौ-सौ चक्कफेरियाँ लगाना, तमाशाइयों की घातें, दिहातिनें बेंदी लगाए, फ़रिया फड़काए, गोंद से पटिया जमाए बातें कर रही हैं। लीजिए, आग़ाबाक़र के इमामबाड़े में खट-से दाख़िल। वाह मियाँ बाक़र, क्यों न हो, नाम कर गए। चकाचौंध का आलम है। लेकिन गली तंग, तमाशाइयों की अक़्ल दंग। मगर लोग घुस-पैठकर देख ही आते हैं। नाक टूटे या सिर फूटे, आग़ाबाक़र का इमामबाड़ा ज़रूर देखेंगे।

दोनों आदमी वहाँ से आगे बढ़े, तो कच्चे पुल पहुँचे। देखते क्या हैं, एक बाबा आदम के ज़माने के बूढ़े अगले वक़्तों के लोगों को रो रहे हैं। वाह-वाह! लखनऊ के कुँभार, क्या कमाल है! बुड्ढा ऐसा बनाया कि मालूम होता है, पोपले मुँह से अब बोला, और अब बोला। वही सन के-से बाल, वही सफ़ेद भौंहें, वही चितवन, वही माथे की शिकन, वही हाथों की झुर्रियाँ, वही टेढ़ी कमर, वही झुका हुआ सीना। वाहरे कारीगर, तू भी अपने फ़न में यकता है। वहाँ से जो चले, तो दारोग़ा वाजिदअली के इमामबाड़े में आए। यहाँ सूरज-मुखी पर वह जोबन था कि आफ़ताब अगर एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नज़र छिपकर देख पाता, तो शर्म के मारे मुँह छिपा लेता। बेधड़क जाकर कुर्सियों पर बैठ गए। इलायची, चिकनी डली पेश की गई। वहाँ से हुसेनाबाद पहुँचे। सुभान-अल्लाह! यह इमामबाड़ा है या जन्नत का मकान! क्या सजावट थी, बुर्जों पर क़ंदीलें रोशन थीं, मीनारों पर शमा जलती हुई, चिराग़ों की क़तार हवा के झोंकों से लहरा-लहराकर अजब समाँ दिखाती थी। नहर जो देखी, तो आँखें ठंडी हो गईं।

अब इनके दोस्त को शौक़ चर्राया कि तवायफ़ों के इमामबाड़ों की ज़ियारत करें। पहले मियाँ आज़ाद झिझके, और बोले—बंदा ऐसी जगह नहीं जाने का, अपनी शान के ख़िलाफ़ है। दोस्त ने कहा—भाई, तुम बड़े रूखे-फीके आदमी हो। हैदर, मुश्तरी, गौहर और आबादी के मर्सिए न सुने, तो किसी से क्या कहेंगे कि लखनऊ का मुहर्रम देखा। आजकल वहाँ जाना हलाल है। इन दस दिनों में मज़े से जहाँ चाहे जाइए, रंगीन कमरों में दो गाल हँस-बोल आइए, कोई कुछ नहीं कह सकता।

आज़ाद—यह कहिए तो ख़ैर, बंदा भी लहू लगाकर शहीदों में दाख़िल हो जाय। पहले गौहर के यहाँ पहुँचे। अच्छे-अच्छे रईस-ज़ादे बैठे हुए हैं। एक बड़े शानदार जौहरी साहब मटकते हुए आए। दस रुपए की कारचोबी टोपी सिर पर, प्याज़ी अतलस की भड़कीली अचकन पहने हुए। ख़िदमतगार के कंधे पर क़ीमती दुशाला। यह ठाट-बाट, मगर बैठते ही टोके गए। बैठे, तो ज़रीह (ताज़िया) की तरफ़ पीठ करके! गौहर ने एक अजीब अदा से झिड़क दिया—ऐ वाह, बड़े तमीज़दार हो! ज़रीह की तरफ़ पीठ कर ली। सीधे बैठो, आदमियत के साथ!

मियाँ आज़ाद ने चुपके-से दोस्त के कान में कहा—मियाँ, इस टीम-टाम से तो आए, मगर घुड़की खाकर मिनके तक नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोस्त—भाईजान, गौहर लखनऊ की जान है, लखनऊ की शान है। ऐसा खुशनसीब कोई हो तो ले कि इसकी घुड़कियाँ सहे।

लोग अदब से गरदन झुकाए बैठे कनखियों से आँखों को सेक रहे थे, लेकिन किसी के मुँह से बात न निकलती थी। यहाँ से उठे, तो फ़िरंगी-महल में हैदरजान के यहाँ पहुँचे। वहाँ मर्सिया हो रहा था—

निकले खेमे से जो हथियार लगाए अब्बास ;
चढ़के रहवार पर मैदान में आए अब्बास।

इस शेर को ऐसी प्यारी आवाज़ से अदा किया कि सुननेवाले लोटन कबूतर हुए जाते थे। राग और रागिनी तो उसकी लौंडियाँ थीं। सब-के-सब सिर धुनते थे, क्या प्यारा गला पाया है। मियाँ आज़ाद की बाछें खिली जाती थीं और गरदन तो घड़ी का खटका हो गई थी।

यहाँ से उठे, तो मुश्तरी के कमरे में पहुँचे। देखनेवालों का वह हुजूम था कि तिल रखने की जगह नहीं।

"खंजर जो बोसा गाहे पयंबर प चल गया," इसको झँझौटी की धुन में इस लुत्फ़ से पढ़ा कि लोग फड़क उठे।

दोस्त—क्यों यार, क्या लखनऊ में ज़ेवर पहनने की क़सम है?

आज़ाद—भई, तुम बिलकुल ही गँवार हो! मातम में ज़ेवर का क्या ज़िक्र! गोरे-गोरे कानों में काले-काले करनफूल, हाथों में सियाह चुड़ियाँ, बस यही काफ़ी है। लेकिन यह सादगी भी अजीब लुत्फ़ दिखाती है।

यहाँ से उठकर दोनों आदमी मातम की मजलिसों में पहुँचे। जिधर जाते हैं, रोने-पीटने की आवाज़ आती है; जिसे देखिए, आँखों से आँसू बहा रहा है। सारी रात मजलिसों में घूमते रहे, सुबह अपने घर पहुँचे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दसवाँ परिच्छेद

वसंत के दिन आए। आज़ाद को कोई फ़िक्र तो थी ही नहीं, सोचे, आज वसंत की बहार देखनी चाहिए। घर से निकल खड़े हुए, तो देखा कि हर चीज़ ज़र्द है, पेड़-पत्ते ज़र्द, दरोदीवार ज़र्द, रंगीन कमरे ज़र्द, लिबास ज़र्द, कपड़े ज़र्द। शाहमीना की दरगाह में धूम है, तमाशाइयों का हुजूम है। हसीनों के झमकड़े, रँगीले जवानों की रेल-पेल, इंद्र के अखाड़े की परियों का दंगल है, जंगल में मंगल है। वसंत की बहार उमंग पर है, ज़ाफ़रानी दुपट्टों और केसरिए पाजामों पर अजब जोबन है। वहाँ से चौक पहुँचे। जौहरियों की दूकान पर ऐसे सुंदर पुखराज हैं कि पुखराज-परी देखती, तो मारे शर्म के हीरा खाती और इंद्र का अखाड़ा भूल जाती। मेवा बेचनेवाली ज़र्द-आलू, नारंगी, अमरूद, चकोतरा, महताबी की बहार दिखाती है, चंपई दुपट्टे पर इतराती है। मालिन गेंदा, हज़ारा, ज़र्द गुलाब की बू-बास से दिल खुश करती है, और पुकार-पुकारकर लुभाती है, गेंदे का हार है, गले की बहार है। हलवाई खोपड़े की ज़र्द बर्फ़ी, पिस्ते की ज़र्द बर्फ़ी, नानखताई, बेसन के लड्डू, चने के लड्डू दूकान पर सजाए बैठा है। खोंचेवाले पापड़, दालमोट, सेब वग़ैरह बेचते फिरते हैं। आज़ाद यही बहार देखते, दिल बहलाते चले जाते थे। देखते क्या हैं, लाला बसंत-राय के मकान में कई रँगीले जवान, बाँको टोपियाँ जमाए, बसंती पगिया बाँधे, केसरिए कपड़े पहने बैठे हैं। उनके सामने चंद्र-मुखी औरतें बैठी नौबहार की धुन में वसंत गा रही हैं। क़ालीन ज़र्द है, छत-पोश ज़र्द, कँवल ज़र्द; ज़र्द झालर से मकान सजाया है, वसंत-पंचमी ने दरोदीवार तक को बसंती लिबास पहनाया है। कोई यह गीत गाती है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋतु आई बसंत अजब बहार ;
खिले ज़र्द फूल बिरवों की डार।
चटक्यो कुसुम, फूलै लागी सरसों ;
झूमत चलत गेहूँ की बार।
हर के द्वारे माली का छोहरा ;
गरवा डारत गेंदों के हार।
टेसू फूले, अंबा बौरे;
चंपा के रूख कालियन की बहार।
गरवा डारे उस्ताद के द्वारे ;
चलो सब सखियाँ कर-कर सिंगार।

कोई मियाँ अमानत की यह ग़ज़ल गाती है—

है जलवए तन से दरोदीवार बसंती ;
पोशाक जो पहने है मेरा यार बसंती।
क्या फ़स्ले बहारी में शिगूफ़े हैं खिलाए ;
माशूक़ हैं फिरते सरे-बाज़ार बसंती।
गेंदा है खिला बाग़ में मैदान में सरसों ;
सहरा वह बसंती है, यह गुलज़ार बसंती।
मुँह ज़र्द दुपट्टे के न आँचल से छिपाओ ;
हो जाय न रंगे गुले-रुख़सार बसंती।

आज़ाद चले जाते थे कि एक नई सज-धज के बुज़ुर्ग से मुठ-भेड़ हुई। बड़े तजुर्बेकार, खुर्राट आदमी थे। आज़ाद को देखते ही बोले—आइए-आइए, ख़ूब मिले। वल्लाह, शरीफ़ की सूरत पर आशिक़ हूँ। चीन, माचीन, हिंद और सिंध, रूम और शाम, अल-ग़रज़, सारी खुदाई की बंदे ने ख़ाक छानी है, और तू यार जानी है। सफ़र का हाल सुन, घुँघरू बोले छुन-छुन, ऐसी बात सुनाऊँ। परी को लुभाऊँ, जिन को रिझाऊँ, मिसर की दास्तान सुनाऊँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह तक़रीर सुनकर आज़ाद के होश पैतरे हो गए। समझ न आया, कोई पागल है या पहुँचा हुआ फ़क़ीर। मगर आसार दीवानेपन के ही हैं।

खुर्राट ने फिर बड़-बड़ाना शुरू की—सुनो यार, कहता है ख़ाकसा हम सो रहें तुम जागो, फिर हम उठ बैठें, तुम सो रहो, सफ़र दूर है, सोते-जागते राह काटें, सफ़र का अंधा कुआँ उन्हीं ईंटों से पाटें

यह कहकर खुर्राट ने एक ख़ोंचेवाले को बुलाया, और पूछा—खुटियाँ कितने सेर? बर्फ़ी का क्या भाव? लड्डू पैसे के कै? बोल झटपट, नहीं हम जाते हैं। ख़ोंचेवाले ने समझा, कोई दीवान है। बोला—पैसे भी हैं या भाव ही से पेट भरोगे?

खुर्राट—पैसे नहीं हैं, तो क्या मुफ़्त माँगते हैं? तौल दे सेर-भ मिठाई।

मिठाई लेकर आज़ाद को ज़िद करके खिलाई, ठंडा पानी पिल वाया, और बोले—शाम हुई, अब सो रहो, हम असबाब ताक हैं। मियाँ आज़ाद एक दरख़्त के नीचे लेटे, तो खुर्राट ने ऐ मीठी-मीठी बातें कीं कि उन्हें उस पर यक़ीन आ गया। दिन-भर थके थे ही, लेटते ही नींद आ गई। सोए तो घोड़े बेचकर, सि पैर की ख़बर नहीं, गोया मुर्दों से शर्त लगाई है। वह एक काइयाँ दुनिया-भर का न्यारिया, उनको ग़ाफ़िल पाया, तो घड़ी, सोने चेन, चाँदी की मूठवाली छड़ी, चाँदी का गिलौरीदान लेकर चल हुआ। आध घंटे में आज़ाद की नींद खुली, तो देखा कि खुर्राट ग़ायब है, घड़ी और चेन, डब्बा और छड़ी भी ग़ायब। चिल्लाने लगे—लूट लिया, ज़ालिम ने लूट लिया! झाँसा दे गया! ऐसा चकमा कभी न खाया था। दौड़कर थाने में इत्तला की। मगर खुर्राट कहाँ, वह तो यहाँ से दस कोस पर था। बेचारे रो-पीटकर बैठ रहे। थोड़ी ही दूर गए होंगे कि एक चौराहे पर एक जवान को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुश्की घोड़े पर सवार आते देखा। घोड़ा ऐसा सरपट जा रहा था कि हवा उसकी गर्द तक को न पहुँचती थी। अँधेरा हो ही गया था, एक कोने में दबक रहे कि ऐसा न हो, कहीं झपेट में आ जायँ। इतने में सवार उनके सिर पर आ खड़ा हुआ। झट घोड़े की बाग रोकी और इनकी तरफ़ नज़र भरकर देखने लगा। यह चकराए, माजरा क्या है? यह तो बेतरह घूर रहा है, कहीं हंटर तो न देगा।

जवान—क्यों हज़रत, आप किसी को पहचानते भी हैं? खुदा की शान, आप और हमको भूल जायँ!

आज़ाद—मियाँ, तुमको धोखा हुआ होगा। मैंने तो कभी तुम्हारी सूरत भी नहीं देखी।

जवान—लेकिन मैंने तो आपकी सूरत देखी है, और आपको पहचानता हूँ। क्या इतनी जल्दी भूल गए? यह कहकर वह जवान घोड़े से उतर पड़ा, और आज़ाद से चिमट गया।

आज़ाद—आपको सचमुच धोखा हुआ।

जवान—भई, बड़े भुलक्कड़ हो! याद करो, कॉलेज में हम-तुम, दोनों एक ही दर्जे में पढ़ते थे। वह किश्ती पर हवा खाने जाना और दरिया के मज़े उड़ाना; वह मदारी खोंचेवाला, वह उक़लैदिस के वक़्त उड़ भागना; सब भूल गए? अब मियाँ आज़ाद को याद आई। दोस्त के गले से लिपट गए, और मारे खुशी के रो दिए।

जवान—तुम्हें याद होगा, जब मैं इंटरमीडिएट का इम्तिहान देने को था, तो मेरे पास फ़ीस का भी ठिकाना न था। रुपए की तलाश में इधर-उधर भटकता फिरता था कि राह में अस्पताल के पास तालाब पर तुमसे मुलाक़ात हुई, और तुमने मेरे हाल पर रहम करके मुझे रुपए दिए। तुम्हारी मदद से मैंने बी० ए० तक पढ़ा। लेकिन इस वक़्त तुम बड़े उदास नज़र आते हो, इसका क्या सबब है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—यार, कुछ न पूछो। एक ख़ुर्राट के चकमे में आ गया। यहीं घास पर लेट रहा, और वह मेरी घड़ी, चेन वग़ैरह लेकर चलता हुआ।

जवान—भई वाह! इतने चाघ बनते हो, और एक ख़ुर्राट के भेरे में आ गए! आपके बटन तक उतार ले गया, और आपको ख़बर नहीं! ले अब कान पकड़िए कि अब फिर किसी मुसाफ़िर की दोस्ती का एतबार न करेंगे। मिठाई तो आप खा ही चुके हैं, चलिए, कहीं बैठकर बसंती गाना सुनें।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

एक दिन आज़ाद शहर की सैर करते हुए एक मकतबख़ाने में जा पहुँचे। देखा, एक मौलवी साहब खटिया पर उकड़ूँ बैठे हुए लड़कों को पढ़ा रहे हैं। आपकी रँगी हुई दाढ़ी पेट पर लहरा रही है। गोल-गोल आँखें, खोपड़ी घुटी-घुटाई, उस पर चौगोशिया टोपी जमी-जमाई। हाथ में तसबीह लिए खटखटा रहे हैं। लौंडे इर्द-गिर्द ग़ुल मचा रहे हैं। हू-हक़ मची हुई है, गोया कोई मंडी लगी हुई है। तहज़ीब कोसों दूर, अदब काफ़ूर, मगर मौलवी साहब से इस तरह से डरते हैं, जैसे चूहा बिल्ली से, या अफ़ीमची नाव से। ज़री चितवन तीखी हुई, और खलबली मच गई। सब किताबें खोले झूम-झूमकर मौलवी साहब को फुसला रहे हैं। एक शेर जो रटना शुरू किया, तो बला की तरह उसको चिमट गए। मतलब तो यह कि मौलवी साहब मुँह का खुलना और ज़बान का हिलना और उनका झूमना देखें, कोई पढ़े या न पढ़े, इससे मतलब नहीं। मौलवी साहब भी वाजबी-ही-वाजबी पढ़े-लिखे थे, कुछ शुद-बुद जानते थे। पढ़ाने के फ़न से कोरे। एक शागिर्द से चिलम भरवाई, दूसरे से हुक़्क़ा ताज़ा कराया; दम झाँसे में काम लिया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुक़्क़ा गुड़गुड़ाया और धुआँ उड़ाया। ग़ामत यह थी कि आप अफ़ीम के भी आदी थे। चीनी की प्याली आई, अफ़ीम घोली और उड़ाई। एक महाजन के लड़के ने बर्फ़ी मँगवाई, आपने ख़ूब डटकर चखी, तो पीनक ने आ दबोचा। ऊँघे, हुक़्क़ा टेढ़ा हो गया, गरदन अब ज़मीन पर आई, और अब ज़मीन पर आई। हुक़्क़ा गिरा और चकनाचूर हो गया। दो-एक लड़कों की किताबों पर चिनगारियाँ गिरीं। अब पीनक से चौंके, तो ऐसे झल्लाए कि किसी लड़के के चपत लगाई, किसी की खोपड़ी पर धप जमाई, एक के कान गरमाए। पीनक में आकर ख़ुद तो हुक़्क़ा गिराया, और शागिर्दों को बेक़सूर पीटना शुरू किया। ख़ैर, इतने में एक लड़का किताब लेकर पढ़ने आया। उसने पढ़ा—

दिलम कुसूद कुशादम चु नामा अत गोई,
कलीदे बाबे गुलिस्तान दिल कुसाई बूद।

(जब मैंने तेरा ख़त खोला, तो मेरा दिल खुल गया ; गोया वह पत्र ख़ुशी के बाग़ के दरवाज़े की कुंजी था)

अब मौलवी साहब का तरजुमा सुनिए—

तरजुमा—दिल तेरा खुला, खोला मैंने जो ख़त तेरा, कहे तू कुंजी दरवाज़े बाग़-दिल खोलने की थी।

माशा-अल्लाह, क्या तरजुमा था! न मौलवी साहब ने ख़ुद समझा, न लड़के ने। और दिल्लगी सुनिए कि मौलवी साहब भी शागिर्द के साथ पढ़ते जाते हैं, और दोनों हिलते जाते हैं। जब यह पढ़ चुके, तो दूसरे साहब किताब बग़ल में दबाए आ बैठे।

मौलवी साहब—अरे गावदी, नई किताबें शुरू कीं, और चिराग़ी नदारद, शुकराना छप्पर पर! जा, दौड़कर दो आने घर से ले आ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़का—मौलवी साहब, कल लेता आऊँगा। आप तो हत्थे ही पर टोक देते हैं। आपको अपनी मिठाई ही से मतलब है कि मुफ़्त के झगड़े से ?

मौलवी—ये झाँसे किसी और को देना। अच्छा, अपने बाप की क़सम खा कि कल ज़रूर लाऊँगा।

लड़का—मौलवी साहब के बड़े सिर की क़सम, चढ़ते चाँद तक ज़रूर लाऊँगा।

इस पर सब लड़के हँस पड़े कि कितना ढीठ लड़का है ! क़सम भी खाई तो मौलवी साहब के सिर की, और सिर भी छोटा नहीं, बड़ा।

मौलवी—चुप गधे, मेरा सिर क्या कद्दू है ? अच्छा, पढ़।

लड़का तो ऊटपटाँग पढ़ने लगा, मगर मौलाना साहब चूँ भी नहीं करते। उन्हें मिठाई की फ़िक्र सवार है। सोच रहे हैं, जो कल दो आने न लाया, तो खूब कोड़े फटकारूँगा, तसमा तक तो बाक़ी रक्खूँगा नहीं।

दस-पाँच लड़के एक दूसरे को गुदगुदा रहे हैं, और मौलवी साहब को दिखाने के लिये ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर कोई शेर पढ़ रहे हैं।

आज़ाद को मकतब की यह हालत और लौंडों की यह चिल्ल-पौं देख-सुनकर ऐसा गुस्सा आया कि अगर पाते, तो मौलवी साहब को कच्चा ही खा जाते। दिल में सोचे, यह मकतबख़ाना है या पागलख़ाना ? जिधर देखिए, गुल-गपाड़ा, धौल-धप्पा हो रहा है। मालूम होता है, भरी बरसात में मेंढक गाँव-गाँव या पिछले पहर कौए काँव-काँव कर रहे हैं। घर पर आते ही मकतबों की हालत पर यह कैफ़ियत लिख डाली—

(१) नूर के तड़के से झुटपुटे तक लड़कों को मकतबख़ाने में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क़ैद रखना बेहूदगी है। लड़के दस बजे आवें, चार बजे छुट्टी पावें, यह नहीं, दिन-भर दाँता-किल-किल, पढ़ना भी अजीरन हो जाय, और यही जी चाहे कि पढ़ने-लिखने की दुम में मोटा-सा रस्सा बाँधें, मौलवी साहब को हवा बतावें, और दिल खोलकर गुलछर्रे उड़ावें।

(२) यह क्या हिमाक़त है कि जितने लड़के हैं, सबका सबक़ अलग। दो-दो, चार-चार, दस-दस का एक-एक दर्जा बना लीजिए; मेहनत की मेहनत बचेगी और काम ज़्यादा होगा।

(३) जिधर देखता हूँ, अदब (साहित्य) की तालीम हो रही है। तालीम में सिर्फ़ अदब ही शामिल नहीं, हिसाब है, तारीख़ है, जुग़राफ़िया है, उक़लैदिस है; मगर पढ़ावे कौन? मौलवी साहब को तो सौ तक गिनती भी नहीं आती।

(४) सब लड़कों का गुल मचा-मचाकर आवाज़ लगाना महज़ फ़जूल है। कोई ख़ोंचेवाला, गँडेरीवाला, चने-परमलवाला इस तरह चिल्लावे, तो मुज़ायक़ा नहीं; मटर-सटर, गोल-गप्पे, मसालेदार बैगन, मूली, तुरई, लो तरकारी—यह तो फेरी देनेवालों की सदा है, मकतब को मंडी बनाना हिमाक़त है।

(५) तरजुमे पर ख़ुदा की मार और शैतान की फटकार। 'जाता हूँ बीच एक बाग़ के, वास्ते लाने अच्छी चीज़ों के, मैंने देखा मैंने, तू जाता है तू।' वाह, क्या तू-तू, मैं-मैं है। तरजुमा सही होना चाहिए, यह तो न कोई आवाज़ा कसे कि लड़के बँगला बोल रहे हैं।

(६) पढ़ते वक़्त लड़कों का हिलना ऐब है। मगर कहें किससे? मौलवी साहब तो ख़ुद झूमते हैं।

(७) मतलब ज़रूर समझाना चाहिए; लड़का मतलब ही न समझेगा, तो उसको फ़ायदा क्या ख़ाक होगा?

(८) सबक़ को बरज़बान रटाना बुरी बात है। किताब बंद की और फ़र-फ़र दस सफ़े सुना दिए। हाफ़िज़ा कुछ मज़बूत हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सही, मगर सितम यह है कि फिर तोते की तरह बात के सिवा कुछ याद नहीं रहता।

(९) छोटे-छोटे लड़कों को बड़ी-बड़ी किताबें पढ़ाना उनकी ज़िंदगी ख़राब करना है। ज़रा-से टट्टू पर जब दो हाथियों का बोझ लादोगे, तो टट्टू बेचारा आँखें माँगने लगेगा, या नहीं ? ज़रा सा बच्चा और पढ़े 'मीना बाज़ार'।

(१०) लड़के को शुरू ही से फ़ारसी पढ़ाना उसका गला घोटना है। पहले उर्दू पढ़ाइए, इसके बाद फ़ारसी। शुरू ही से करीमा-मामक़ीमाँ पढ़ाना उसकी मिट्टी ख़राब करना है।

(११) मौलवी साहब लड़कों से चिलम भरवाना, हुक़्क़ा ताज़ा करवाना छोड़ दें। इसकी जगह उनको बातचीत करने और मिलने-जुलने के आदाब सिखावें।

(१२) अफ़ीमची मौलवी छप्पर पर रक्खे जायँ। मौलवी ने अफ़ीम खाई, और लड़कों की शामत आई। वह पीनक में झूमा करेंगे।

यह इश्तिहार मोटे क़लम से लिखकर मियाँ आज़ाद रातोरात मकतब के दरवाज़े पर चिपका आए। झट-से नक़ल करके शहर में भी दो-चार जगह चिपका दिया। दूसरे दिन इश्तिहार के पास लोग ठट-के-ठट जमा हुए। किसी ने कहा, सम्मन चिपकाया गया है ; कोई बोला, ठेठर का इश्तिहार है। बारे एक पढ़े-लिखे साहब ने कहा—यह कुछ नहीं है, मौलवी साहब के किसी दुश्मन का काम है। अब जिसे देखिए, क़हक़हा उड़ाता है। भई, वल्लाह, किसी बड़े ही फ़िक़रेबाज़ का काम है। मौलवी बेचारे को ले ही डाला, पटरा कर दिया। मकतबख़ाने में लड़कों के चेहरे गुलनार हो गए। धत् तेरे की ! बचा रोज़ क़मचियाँ जमाते थे, चपतें लगाते थे, अफ़ीम घोली, और सिर पर शेख़-सद्दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवार। अब आटे-दाल का भाव मालूम होगा। मौलवी साहब तशरीफ़ का बक़्चा लाए, तो लड़के उनका कहना ही नहीं मानते। मौलवी साहब कहते हैं, किताब खोलो। शागिर्द जवाब देते हैं, बस, मुँह बंद करो। फ़र्माया कि अब बोला, तो हम बिगड़ जायँगे। शागिर्दों ने कहा, हम खूब बनावेंगे। तब तो झल्लाए, और डपट-कर कहा, मैं बड़ा गर्म-मिज़ाज हूँ। एक गुस्ताख़ ने मुसकिराकर कहा, फिर हम ठंडा बनावेंगे। दूसरा बोला, किसी ठंडे मुल्क में जाइए। तीसरा बोला, दिमाग़ में गर्मी चढ़ गई है। मौलवी साहब घबराए कि माजरा क्या है। बाहर की तरफ़ नज़र डाली, तो देखा, ग़ोल-के-ग़ोल तमाशाई खड़े क़हक़हे लगा रहे हैं। बाहर गए, तो इश्तिहार नज़र आया। पढ़ा, तो कट गए। दिल-ही-दिल में लिखनेवाले को गालियाँ देने लगे। पाऊँ, तो कच्चा ही खा जाऊँ। इतने डंडे लगाऊँ कि छठी का दूध याद आ जाय। बदमाश ने कैसा ख़ाका उड़ाया है! जभी तो लड़के इतने ढीठ हो गए हैं। मैं कहता हूँ आम, वे कहते हैं इमली। अब इज़्ज़त डूबी। मकतबख़ाने में जाता हूँ, तो ख़ौफ़ है, कहीं लौंडे रोज़ की कसर न निकालें और अंजर-पंजर ढीले कर दें। भाग जाऊँ, तो रोटियों के लाले पड़ें। खाऊँ क्या, अंगारे! आख़िर ठान ली कि बोरिया-बँधना छोड़ो, मुल्लागीरी से मुँह मोड़ो। भागे, तो घर पर दम लिया। लड़कों ने जो देखा कि मौलवी साहब पत्ता तोड़ भागे जाते हैं, तो जूतियाँ बग़ल में दबा, तख़्तियाँ और बस्ते सँभाल, दुम के पीछे चले। तमाशाइयों में बातें होने लगीं—

(१) अरे मियाँ यह भागा कौन जाता है बगटुट?

(२) शैतान है, शैतान। आज लड़कों के दाँव पर चढ़ गया है, कैसा दुम दबाए भागा जाता है!

अब सुनिए कि महल्ले-भर में खलबली मच गई। अजी, ऐसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मकतब की ऐसी-तैसी। बरसों से लौंडे पिटते हैं, एक हरफ़ न आया। लड़कों की मिट्टी पलीद की। पढ़ाना-लिखाना ख़ैरसल्लाह, चिलमें भरवाया किए। सबने मिलकर कमेटी की कि मौलवी साहब का आम-जलसे में इम्तिहान लिया जाय, और मनादी हो कि जिन साहब ने यह इश्तिहार लिखा है, वह ज़रूर आवें। ढिंढोरिया महल्ले-भर में कहता फिरा कि ख़लक खुदा का, मुल्क सरकार का, हुक्म कमेटी का कि आज एक जलसा होगा, और मौलवी साहब का इम्तिहान लिया जायगा। जिसने इश्तिहार लिखा है, वह भी हाज़िर हो।

मियाँ आज़ाद बहुत खुश हुए, शाम को जलसे में जा पहुँचे। जब दो-तीन सौ आदमी, अहाली-मवाली, डोम-डफाली, ऐरे-ग़ैरे, नत्थू-ख़ैरे, सब जमा हुए, तो एक मेंबर ने कहा—हज़रत, यह तो सब कुछ है, मगर मौलवी साहब इस वक़्त नदारद हैं। एकतरफ़ा डिगरी न दीजिए, उन्हें बुलाइए, तब इम्तिहान लीजिए। यों तो वह आवेंगे नहीं। हम एक तदबीर बतावें, जो दौड़े न आवें, तो मूछ मुड़ा डालें, हाथ क़लम करा डालें। कहला भेजिए कि किसी के यहाँ शादी है, निकाह पढ़ने के लिये अभी बुलाते हैं। लोगों ने कहा, खूब सूझी, दूर की सूझी। आदमी मौलवी साहब के दरवाज़े पर गया, और आवाज़ दी—मौलवी साहब, अजी मौलवी साहब होत क्या मर गए? इस घर में कोई है, या सबको साँप सूँघ गया? दरवाज़ा धमधमाया, कुंडी खटखटाई, मगर जवाब नदारद। तब तो आदमी ने झल्लाकर पत्थर फेकने शुरू किए। दो-एक मौलवी साहब के घुटे हुए सिर पर भी पड़े। मौलवी साहब बोले, कौन है? आदमी ने कहा— बारे आप ज़िंदा तो हुए। मैं तो समझा था, कफ़न की ज़रूरत पड़ी। चलिए, इंदूख़ाँ के यहाँ शादी है, निकाह पढ़ दीजिए। निकाह का नाम सुनते ही मौलाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़मीरी रोटी की तरह फूल गए, अँगरखे का बंद तड़-से टूट गया। कफ़न फाड़कर चिल्ला उठे—आया, आया, ठहरे रहो, अभी आया। शिमला खोपड़ी पर जमा, अक़ीक़ का कंठा हाथ में ले, सुरमा लगा घर से चले। आदमी साथ है, दिल में कहते जाते हैं, आज पौ-बारह हैं, बढ़कर हाथ मारा है, दे छप्पन करोड़ की तिहाई, हाथी के हौदे में घुटे। लंबे-लंबे डग भरते आदमी से पूछते जाते हैं—क्यों मियाँ, अब कितनी दूर मकान है? पास ही है न? देखें निकाह-पढ़ाई क्या मिलती है? सवा रुपए तो मामूली है; मगर ख़ुदा ने चाहा, तो बहुत कुछ ले मरूँगा। आदमी पीछे-पीछे हँसता जाता है कि मियाँ हैं किस ख़याल में! बारे ख़ुदा-ख़ुदा करके वह मंज़िल तय हुई, मकान में आए, तो होश उड़ गए। यह कैसा ब्याह है भाई, न ढोल न शहनाई, हमारी शामत आई। कनखियों से इधर-उधर देख रहे हैं, अक़्ल दंग है कि ये सब-के-सब हमीं को क्यों घूर रहे हैं। इतने में मीर-मजलिस ने कहा—जिन साहब ने इश्तिहार लिखा था, वह अगर आए हों, तो कुछ फ़र्मावें।

आज़ाद ने खड़े होकर कहा—यह जो मौलवी साहब आप लोगों के सामने खड़े हैं, इनसे पूछिए कि मकतबख़ाने में अफ़ीम क्यों पीते हैं? जब देखिए, पीनक में ऊँघ रहे हैं, या मिठाई टूँग रहे हैं। लड़कों का पढ़ाना ख़ालाजी का घर नहीं कि सिर घुटाया और मुल्ला बन गए, चूड़ी निगली और पीरजी बन गए।

मौलवी साहब ताड़ गए कि यहाँ मेरी दुर्गति होनेवाली है। भागने ही को थे कि एक आदमी ने टाँग पकड़कर आँटी बताई, तो फट-से ज़मीन पर आ रहे। अच्छे फँसे। ख़ूब निकाह पढ़ाया। मुफ़्त में उल्लू बने। ख़ैर, मियाँ आज़ाद ने फिर कहा-

मौलवी साहब को किसी मज़ार का मुजाविर या कहीं का तकिएदार बना दीजिए, तो ख़ूब मीठे टुकड़े उड़ावें, और डंड पेलें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह मकतबख़ाने में लल्लू का दसहरा उनको क्यों बना दिया? लड़कों की कैफ़ियत सुनिए कि दिन-भर गुल्ली-डंडा खेला करते हैं, चीख़ते हैं, चिल्लाते हैं, और दिन-भर में अठारह मर्तबा पेशाब करने और पानी पीने जाते हैं। कोई कहता है, मौलवी साहब देखिए, यह हमारी नाक पकड़ता है; कोई कहता है, यह हमसे लड़ता है। मौलवी साहब को इससे कुछ मतलब नहीं कि लड़के पढ़ते हैं या नहीं। वहाँ तो हिलते जाओ, और ऐसा गुल मचाओ कि कान पड़े आवाज़ न सुनाई दे। उसमें चाहे जो कुछ ऊल-जलूल बको।

मौलवी साहब फिर रस्सी तुड़ाकर भागने लगे। लोग लेना-लेना करके दौड़े। गए थे रोज़े बख़्शाने, नमाज़ गले पड़ी। चिल्ला-कर बोले—तुम कौन होते हो जी हमारा ऐब निकालनेवाले, हम पढ़ावें या न पढ़ावें, तुमसे मतलब?

आज़ाद—हज़रत, आज ही तो पंजे में फँसे हो। रोज़ तोंद निकाले बैठे रहा करते थे। यह तोंद है या बेईमान की क़ब्र? या हवा का तकिया? अब पचक जाय, तो सही। खुदा जाने, कहाँ का गँवार बिठा दिया है। कल सुबह को इनका इम्तिहान लिया जाय।

मौलवी साहब—आप बड़े शैतान हैं!

आज़ाद—आप लंगूर हैं; मगर हैरत है कि यह ठुड्डी से दुम की कोंपल क्योंकर फूटी!

इस तरह जलसा ख़तम हुआ। लोगों ने दिल में ठान ली कि कल चाहे ओले पड़ें, कड़कड़ाती धूप हो, चाहे भूचाल आवे, मगर हम आवेंगे, और ज़रूर आवेंगे। मौलवी साहब से ताकीद की गई कि हज़रत, कल न आइएगा, तो यहाँ रहना मुश्किल हो जायगा। मौलवी साहब का चेहरा उतर गया था, मगर कड़ककर बोले—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम, और न आवें, आवें और बीच खेत आवें। हम क्या कोई चोर हैं, या किसी का माल मारा है ?

मौलवी साहब घर पहुँचे, तो आज़ाद को लगे पानी पी पीकर कोसने। इसकी ज़बान सड़े, मुँह फूल जाय; सारी चौकड़ी भूल जाय; आसमान से अंगारे बरसें; ऐसी जगह मरे, जहाँ पानी न मिले; डंकू फ़ीवर चट करे; एंजिन के नीचे दबकर मरे। मगर इन गालियों से क्या होता था? रात किसी तरह कटी, दूसरे रोज़ नूर के तड़के लोग फिर जलसे में आ पहुँचे। मगर मौलाना ऐसे ग़ायब हुए, जैसे गधे के सिर से सींग। बारे यारों ने तत्तो-थंभो करके सिर सुहलाते, सब्ज़ बाग़ दिखलाते घसीट ही लिया। मियाँ आज़ाद ने पूछा—क्यों मौलवी साहब, किस मंसूबे में हो ?

मौलवी साहब—सोचता हूँ कि अब कौन चाल चलूँ? सोच लिया है कि अब मुल्लागीरी छोड़ प्यादों में नौकरी करेंगे। बस, वतन से जायँगे, तो फिर लौटकर घर न आवेंगे। अमीर-ग़रीब सब पर मुसीबत पड़ती है। फिर हमारी बिसात क्या? चरख़ाने का अँगरखा न सही, गाढ़े की मिरज़ई सही। मगर आप एक ग़रीब के पीछे नाहक़ क्यों पड़े हुए हैं? "कहाँ राजा भोज, कहाँ गंगुआ तेली?"

आज़ाद—ये झाँसे रहने दीजिए, ये चकमे किसी और को दीजिए।

मौलवी साहब—ख़ुदा की पनाह! मैं आपका गुलाम और आपको चकमे दूँगा? आपसे क्या अर्ज़ करूँ कि कितना जी तोड़कर लड़कों को पढ़ाता हूँ। इधर सूरज निकला और मैंने मकतब का रास्ता लिया। दिन-भर लड़कों को पढ़ाया। क्या मजाल कि कोई लड़का गरदन तक उठा ले। कोई बोला, और मैंने टीप जमाई; खेला, और शामत आई। समझ-बूझकर चलता था; अगर कोई लड़का मकतब में खिलौना लाता, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे तुरत अँगीठी में डलवा देता। मगर आपने सारी मेहनत पर पानी फेर दिया। आपके सामने मेरी कौन सुनता है।

मीर-मजलिस ने कहा—मियाँ आज़ाद, इन्हें बकने दीजिए, आप इनका इम्तिहान लीजिए।

मियाँ आज़ाद तो सवाल पूछने के लिये खड़े हुए, उधर मौलवी साहब का बुरा हाल हुआ। रंग फ़क़, कलेजा शक़, आँखों में आँसू; मुँह पर हवाइयाँ छूट रही हैं; कलेजा धक-धक करता है; हाथ-पाँव काँपने लगे। किसी तरह खड़े तो हुए, मगर क़दम न जमा; पाँव डगमगाए, और लड़खड़ाकर गिरे। लोगों ने उन्हें उठाकर फिर खड़ा किया।

आज़ाद—यह शेर किस बहर में है—

मैंने कहा जो उससे ठुकरा के चल न ज़ालिम;
हैरत में आके बोला—क्या आप जी रहे हैं?

मौलवी साहब—बहर (दरिया) में आप ही ग़ोते लगाइए, और ख़ुदा करे डूब जाइए। जिसे देखो, हमीं पर शेर है। नाअाक़ूल इतना नहीं समझते कि हम मौलवी आदमी लौंडे पढ़ाना जानें या शायरी करना। हमें शेर से मतलब? आए वहाँ से बहर पूछने!

आज़ाद—बेशुनौ अज़ नै चूँ हिकायत मी कुनद;
बज़ जुदाईहा शिकायत मी कुनद।

इस शेर का मतलब बतलाइए।

मौलवी साहब—इसका बताना क्या मुश्किल है? नै कहते हैं चंडू की नै को। बस, उस ज़माने में लोग चंडू पीते थे, और शिकायत करते थे।

आज़ाद—बकरी की पिछली टाँगों को फ़ारसी में क्या कहते हैं?

मौलवी साहब—यह किसी अपने भाईबंद, बूचड़-क़स्साब से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछिए। बंदा न छीछड़े खाय, न जाने। वाह, अच्छा सवाल है। अब मुल्लाओं को बूचड़ों की शागिर्दी भी करनी चाहिए!

आज़ाद—हिंदोस्तान के उत्तर में कौन मुल्क है?

मौलवी—ख़ुदा जाने, मैं क्या देखने गया था कि आपकी तरह मैं भी सैलानी हूँ।

आज़ाद—सबसे बड़ा दरिया हिंदोस्तान में कौन है?

मौलवी—फ़िरात, नहीं, वह देखिए, भूला जाता हूँ, अजी वही, दजला, दजला, ख़ूब याद आया।

हाज़िरीन—वाह रे गावदी, अच्छी उलटी गंगा बहाई। फ़िरात और दजला हिंद में है? इतना भी नहीं जानता।

आज़ाद—चाँद के घटने-बढ़ने का सबब बताओ?

मौलवी—वाह, क्या ख़ूब, ख़ुदाई कारख़ानों में दख़ल दूँ। इतना तो किसी की समझ में आता नहीं कि फ़्रीमिशन क्या है, फिर भला यह कौन जाने कि चाँद कैसे घटता-बढ़ता है। ख़ुदा का हुक्म है, वह जो चाहता है, करता है।

आज़ाद—पानी क्योंकर बरसता है?

मौलवी—यह तो दादीजान तक को मालूम था। बादल तालाबों, नदियों, कुओं, गढ़ों और हौज़ों में घुस-पैठकर दो-तीन रोज़ ख़ूब पानी पीता है; जब पी चुका, तब आसमान पर उड़ गया, और मुँह खोला, तो पानी रिम-झिम बरसने लगा। सीधी-सी तो बात है।

हाज़िरीन—वल्लाह, क्या बेपर की उड़ाई है। आदमी हो या चोंच? कहने लगे, बादल पानी पीता है।

आज़ाद—गिनती आपको कहाँ तक याद है, और पहाड़े कहाँ तक?

मौलवी—जवानी में रुपए के टके गिन लेता था; अब भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आठ-आठ आने दो दफ़े में गिन सकता हूँ। मगर पहाड़े किसी हलवाई के लड़के से पूछिए।

आज़ाद—एक आदमी ने तीन सौ पछत्तर मन ग़ल्ला ख़रीदा, रात को चोरों ने मौक़ा ताककर एक सौ पचीस मन उड़ा लिया, तो बताओ उस आदमी को कितना घाटा हुआ?

मौलवी—यह झगड़ा जौनपुर के क़ाज़ी चुकावेंगे। मैं किसी के फटे में पाँव नहीं डालता। मुझे किसी के टोटे-घाटे से मतलब? चोरी-चकारी का हाल थानेदारों से पूछिए। बंदा मौलवी है। मुल्ला की दौड़ मसजिद तक।

आज़ाद—शाहजहाँ के वक़्त में हिंदोस्तान की क्या हालत थी, और अकबर के वक़्त में क्या?

मौलवी—अजी, आप तो गड़े मुर्दे उखाड़ते हैं! अकबर और शाहजहाँ, दोनों की हड्डियाँ गलकर ख़ाक हो गई होंगी। अब इस पचड़े से मतलब?

आज़ाद ने हाज़िरीन से कहा—आप लोगों ने मौलवी साहब के जवाब सुन लिए, अब चाहे जो फ़ैसला कीजिए।

हाज़िरीन—फ़ैसला यही है कि यह इसी दम अपना बोरिया-बँधना सँभाले। यह चरकटा है। इसे यही नहीं मालूम कि बहर किस चिड़िया का नाम है, बादल किसे कहते हैं, दो तक का पहाड़ा नहीं याद, गिनती जानता ही नहीं, दजला और फ़िरात हिंदोस्तान में बतलाता है। और चला है मौलवी बनने। लड़कों की मुफ़्त में मिट्टी ख़राब करता है।

बारहवाँ परिच्छेद

आज़ाद तो इधर साँड़नी को सराय में बाँधे हुए मज़े से सैर-सपाटे कर रहे थे, उधर नवाब साहब के यहाँ रोज़ उनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इंतिज़ार रहता था कि आज आज़ाद आते होंगे और सफ़शिकन को अपने साथ लाते होंगे। रोज़ फ़ाल देखी जाती थी, सगून पूछे जाते थे। मुसाहब लोग नवाब को भड़काते रहते थे कि अब आज़ाद नहीं लौटने के; लेकिन नवाब साहब को उनके लौटने का पूरा यक़ीन था।

एक दिन बेगम साहबा ने नवाब साहब से कहा—क्यों जी, तुम्हारा आज़ाद किस खोह में धँस गया? दो महीने से तो कम न हुए होंगे।

महरी—ऐ वह चंपत हुआ, मुआ चोर।

बेगम—ज़बान सँभाल, तेरी इन्हीं बातों पर तो मैं झल्ला उठती हूँ। फिर कहती है कि छोटी बेगम मुझसे तीखी रहती हैं।

नवाब—हाँ, आज़ाद का कुछ हाल तो नहीं मालूम हुआ; मगर आता ही होगा।

बेगम—आ चुका।

नवाब—चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, मेरा आज़ाद सफ़शिकन को ला ही छोड़ेगा। दोनों में इल्मी बहस हो रही होगी। फिर तुम जानो, इल्म तो वह समंदर है, जिसका ओर न छोर।

बेगम—(क़हक़हा लगाकर) इल्मी बहस हो रही होगी? क्यों साहब, मियाँ सफ़शिकन इल्म भी जानते हैं? मैं कहती हूँ, आख़िर अल्लाह ने तुमको कुछ रत्ती, तोला, माशा अक़्ल भी दी है? मुआ बटेर, ज़री-सा जनवर, काकुन के तीन दानों में पेट भर जाय, उसे आप आलिम कहते हैं। मेरे मैके के पड़ोस में एक सिड़ी-सौदाई दिन-रात वाही-तवाही बका करता है। उसकी और तुम्हारी बातें एक-सी हैं।

महरी—क्या कहती हो बीबी, उस सौदाई निगोड़े को इन पर से सदक़े कर दूँ!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब—तुम समझी नहीं महरी, अभी तो अलहड़पने ही के न दिन हैं इनके। खुदा की क़सम, मुझे इनकी ये ही बातें तो भाती हैं। यह कमसिनी का सुभाव है, और दो-तीन बरस, फिर यह शोख़ी और चुलबुलापन कहाँ? यह जब झिड़कती या घुड़कती हैं, तो जी खुश हो जाता है।

महरी—हाँ, हाँ, जवानी तो फिर बावली होती ही है।

बेगम—अच्छा, महरी, तुझे अपने बुढ़ापे की क़सम, जो झूठ बोले, भला बटेर भी पढ़े-लिखे हुआ करते हैं? मुँह-देखी न कहना, अल्लाह लगती कहना।

महरी—बुढ़ापा! बुढ़ापा कैसा? बीबी, बस, ये ही बातें तो हमें अच्छी नहीं लगतीं, जब देखो, तब आप बूढ़ी कह देती हैं। मैं बूढ़ी काहे से हो गई? बुरा न मानिए तो कहूँ, आपसे भी टाँठी हूँ।

इतने में ग़फ़ूर ख़िदमतगार ने पुकारा—हुज़ूर, पेचवान भरा रक्खा है, वहाँ भेज दूँ या बग़ीचे में रख दूँ?

नवाब—वह चाँदीवाली छोटी गुड़गुड़ी बेगम साहबा के वास्ते भर लाओ। कल बिसवाँ से तंबाकू आया है, वही भरना। और पेचवान बाहर लगा दो, हम अभी आए।

यह कहकर नवाब ने बेगम साहबा के हँसी-हँसी में एक चुटकी ली और बाहर आए। मुसाहबों ने खड़े हो-होकर सलाम किए। आदाब बजा लाता हूँ हुज़ूर, तसलीमात-अर्ज़ करता हूँ खुदावंद! नवाब साहब जाकर मसनद पर बैठे।

ख़ोजी—उफ़! मौत का सामना हुआ, ऐसा धचका लगा कि कलेजा बैठा जाता है, हात् तेरे गीदी चोर की।

नवाब—क्यों, क्यों, ख़ैर तो है?

ख़ोजी—हुज़ूर इस वक़्त बटेरख़ाने की ओर गया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब—उफ़, भई, दिल बेक़रार है। ख़ोजी मियाँ, तुमको तो हमारी तसल्ली करनी चाहिए थी, न कि उलटे ख़ुद ही रोते हो, जिसमें हमारे हाथ-पाँव और फूल जायँ। अब सफ़शिकन से हाथ धोना चाहिए। हम जानते हैं कि वह ख़ुदा के यहाँ पहुँच गए।

मुसाहब—ख़ुदा न करे, ख़ुदा न करे।

ख़ोजी—(पीनक से चौंककर) इसी बात पर फिर कुछ मिठाई नहीं खिलवाते।

नवाब—कोई है, इस मरदक की गरदन तो नापना। हम तो अपनी क़िस्मतों को रो रहे हैं, वह मिठाई माँगता है। बेतुका, नमकहराम!

ख़ोजी—देखिए, देखिए, फिर मेरी गरदन कुंद छुरी से रेती जाती है। मैं मिठाई कुछ खाने के वास्ते थोड़े ही मँगवाता हूँ। इसलिये मँगवाता हूँ कि सफ़शिकन का फ़ातिहा पढ़ूँ।

नवाब—शाबाश, जी ख़ुश हो गया। साफ़ करना, बेअख़्तियार नमकहराम का लफ़्ज़ मुँह से निकल गया, तुम बड़े ... ...

मुसाहब—तुम बड़े हलालख़ोर हो।

इस पर वह क़हक़हा पड़ा कि नवाब साहब भी लोटने लगे, और बेगम ने घर से लौंडी को भेजा कि देखना तो, यह क्या हँसी हो रही है।

नवाब—भई, क्या आदमी हो, वल्लाह, रोते को हँसाना इसी का नाम है। ख़ोजी बेचारे को हलालख़ोर बना दिया।

ख़ोजी—हुज़ूर, अब मैं यहाँ न रहूँगा। क्या बेवक़्त की शहनाई सब-के-सब बजाने लगे। अफ़सोस, सफ़शिकन का किसी को ख़याल तक नहीं।

नवाब साहब मारे रंज के मुँह ढाँपकर लेट रहे। मुसाहबों में से कोई चंडूख़ाने पहुँचा, कोई अफ़ीम घोलने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरहवाँ परिच्छेद

इधर शिवाले का घंटा बजा ठनाठन, उधर दो नाकों से सुबह की तोप दगी दनादन। मियाँ आज़ाद अपने एक दोस्त के साथ सैर करते हुए बस्ती के बाहर जा पहुँचे। क्या देखते हैं, एक बेल-बूटों से सजा हुआ बँगला है। अहाता साफ़, कहीं गंदगी का नाम नहीं। फूलों-फलों से लदे हुए दरख़्त खड़े झूम रहे हैं। दरवाज़ों पर चिकें पड़ी हुई हैं। बरामदे में एक साहब कुर्सी पर बैठे हुए हैं, और उनके क़रीब दूसरी कुर्सी पर उनकी मेम साहबा विराज रही हैं। चारों तरफ़ सन्नाटा छाया हुआ है। न कहीं शोर, न गुल। आज़ाद ने कहा—ज़िंदगी का मज़ा तो ये लोग उठाते हैं।

दोस्त—बेशक, देखकर रश्क आता है।

दोनों आदमी आगे बढ़े। कई छोटे-छोटे टट्टू तेज़ी से दौड़ते हुए नज़र आए। उन पर ख़ूबसूरत काठियाँ कसी हुई थीं, और कई लड़के बैठे हुए हँसते-बोलते चले जाते थे। कपड़े सफ़ेद, जैसे बगुले के पर; चेहरे सुर्ख़, जैसे गुलाब का फूल। मियाँ आज़ाद कई मिनट तक उन अँगरेज़-लड़कों का उछलना-कूदना देखते रहे। फिर अपने दोस्त से बोले—देखा आपने, इस तरह बच्चों की परवरिश होती है। कुछ और आगे बढ़े, तो सौदागरों की बड़ी-बड़ी कोठियाँ दिखाई दीं। इतनी ऊँची, गोया आसमान से बातें कर रही हैं। दोनों आदमी अंदर गए, तो चीज़ों की सफ़ाई और सजावट देख-कर दंग रह गए। सुभान-अल्लाह! यह कोठी है या शीश-महल। दुनिया-भर की चीज़ें मौजूद। आज़ाद ने कहा—यह तिजारत की बरकत है। वाह री तिजारत! तेरे क़दम धो-धोकर पिए। इतने में सामने से कई बग्घियाँ आईं। सब पर अँगरेज़ बैठे हुए थे। किसी हिंदुस्थानी का कोसों तक पता ही नहीं। गोया उनके लिये घर से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकलना ही मना है। और आगे बढ़े, तो एक कुतुबख़ाना नज़र आया। लाखों किताबें चुनी हुईं, साफ़ सुथरी, सुनहरी जिल्दें चढ़ी हुईं। आदमी अगर साल-भर जमकर बैठे, तो आलिम हो जाय। सुबह से आठ बजे तक लोग आते हैं, अख़बार और किताबें पढ़ते हैं, और दुनिया के हालात मालूम करते हैं। मगर हिंदुस्थानियों को इन बातों से क्या सरोकार ?

दस बजे का वक़्त आ गया। अब घर की सूझी। बस्ती में दाख़िल हुए। राह में एक अमीर आदमी के मकान के दरवाज़े पर दो लड़कों को देखा। नख-सिख से तो दुरुस्त हैं ; मगर कानों में बाले, भद्दे-भद्दे कड़े पड़े हैं, अँगरखा मैला-कुचैला, पाजामा गंदा, हाथों पर गर्द, मुँह पर ख़ाक, दरवाज़े पर नंगे पाँव खड़े हैं। मौलवी साहब ड्योढ़ी में बैठे दो और लड़कों को पढ़ा रहे हैं। मगर ड्योढ़ी और पाख़ाना मिला हुआ है।

मियाँ आज़ाद—कहिए जनाब, वे टट्टुओं पर दौड़नेवाले अँगरेज़ों के बच्चे भी याद हैं ? इनको देखिए, मैले-गंदे, दिन-भर पाख़ाने का परोस। भला ये कैसे मज़बूत और तंदुरुस्त हो सकते हैं ? हाँ, ज़ेवर से अलबत्ते लसे हुए हैं। सच तो यह है कि चाहे लड़का जितने ज़ेवर पहने हो, उसको वह सच्ची ख़ुशी नहीं हासिल हो सकती, जो उन प्यारे बच्चों को हवा के झोंकों और टापों की खटपट से मिलती थी। लड़का तड़के गजरदम उठा, हम्माम में गया, साफ़-सुथरे कपड़े पहने। यह अच्छा, या यह अच्छा कि लचके, पट्ठे और बिल्लट के कपड़ों में जकड़ दिया जाय, ज़ेवर सिर से पाँव तक लाद दिया जाय और गद्दैया पर बिठा दिया जाय कि कूड़े के टोकरे गिना करे।

ये बातें हो ही रही थीं कि सात-आठ जवान सामने से गुज़रे। अभी उन्नीस ही बरस का सिन है, मगर गालों पर झुर्रियाँ, किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कमर झुकी हुई, किसी का चेहरा ज़र्द। सुर्ख़ और सफ़ेद रंग धुआँ बनकर उड़ गया। और तुर्रा यह कि अलिफ़ के नाम बे नहीं जानते। एक नंबर अव्वल के चंडूबाज़ हैं, दूसरे बला के बातूनी। वह फ़र्राटे भरें कि भला-चंगा आदमी घनचक्कर हो जाय। एक साहब कॉलेज में तालीम पाते थे; मगर प्रोफ़ेसर से तकरार हो गई, मदरसा छोड़ा। दूसरे साहब अपने दाहने हाथ की दो उँगलियों से बाएँ हाथ पर ताल बजा रहे हैं—धिन ता धिन ता। दो साहब बहादुर नामी बटेर के घट जाने का अफ़सोस कर रहे हैं। किसी को नाज़ है कि मैं बाने की कनकइया ख़ूब लड़ाता हूँ, तुक्कल ख़ूब बढ़ाता हूँ।

मियाँ आज़ाद ने कहा—इन लोगों को देखिए, अपनी ज़िंदगी किस तरह ख़राब कर रहे हैं। शरीफ़ों के लड़के हैं, मगर बुरी सोहबत है। पढ़ना-लिखना छोड़ बैठे। अब मटर-गश्ती से काम है। किसी को क़लम पकड़ने का शऊर नहीं।

इतने में दो साहब और मिले। तोंद निकाले हुए, मोटे थल-थल। आज़ाद ने कहा—इन दोनों को पहचान रखिए। इन अक़्ल के दुश्मनों ने रुपए को दफ़न कर रक्खा है। एक के पास दो लाख से ज़्यादा हैं, और दूसरे के पास इससे भी ज़्यादा; मगर ज़मीन के नीचे। बीबी और लड़कों को कुछ ज़ेवर तो बनवा दिए हैं, बाक़ी अल्लाह-अल्लाह, ख़ैर-सल्लाह! अगर तिजारत करें, तो अपना भी फ़ायदा हो, और दूसरों का भी। मगर यह सीखा ही नहीं। बंगाल-बंक और दिल्ली-बंक तो पहले सुना करते थे, यह ज़मीन का बंक आज नया सुना।

दोनों आदमी घर पहुँचे। खाना खाकर लेटे। शाम को फिर सैर करने की सूझी। एक बाग़ में जा पहुँचे। कई आदमी बैठे हुक़्क़े उड़ाते थे, और किसी बात पर बहस करते थे। बहस से तकरार शुरू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई। मिर्ज़ा सईद ने कहा—भई, कलजुग है, कलजुग। इसमें जो न हो, वह थोड़ा। अब पुराने रस्मों को लोग दक़यानूसी बताते हैं, शादी-ब्याह के ख़र्च को फ़िज़ूल कहते हैं। बच्चों को ज़ेवर पहनाना गाली है। अब कोई इन लोगों से इतना तो पूछे कि जो रस्म बाप-दादों के वक़्त से चली आती है, उसको कोई क्योंकर मिटावे?

यकायक पूरब की तरफ़ से शोर-गुल की आवाज़ सुनाई दी। किसी ने कहा, चोर आया, लेना, जाने न पावे। कोई बोला, साँप है। कोई भेड़िया-भेड़िया चिल्ला उठा। किसी को शक हुआ कि आग लगी। सब-के-सब भड़भड़ाकर खड़े हुए, तो चोर न चकार, भेड़िया न सियार। एक मियाँ साहब लँगोट कसे लठ हाथ में लिए अकड़े खड़े हैं, और उनसे दस क़दम के फ़ासले पर कोई लालाजी बाँस की खपाच लिए डटे खड़े हैं। इर्द-गिर्द तमाशाइयों की भीड़ है। इधर मियाँ साहब पैतरे बदल रहे हैं, उधर लाला उँगलियाँ मटका-मटकाकर गुल मचा रहे हैं। मिर्ज़ा सईद ने पूछा—मियाँ साहब, ख़ैर तो है?

मियाँ—क्या अर्ज़ करूँ मिर्ज़ा साहब, आपको दिल्लगी सूझती है और यहाँ जान पर बन गई है। यह लाला मेरे पड़ोसी हैं। इनका क़ायदा है कि ठर्रा पीकर हज़ारों गालियाँ मुझे दिया करते हैं। आज कोठे पर चढ़कर ख़ुदा के वास्ते लाखों बातें सुनाईं। अब फ़रमाइए, आदमी कहाँ तक ज़ब्त करे? लाख समझाया कि भाई, आदमी से ऊँट और इंसान से बेदुम के गधे न बन जाओ, मगर यह बादशाह की नहीं सुनते, मैं किस गिनती में हूँ। ताल ठोककर लड़ने को तैयार हो गए। ख़ुदा न करे, किसी भलेमानस को अनपढ़ से साबिक़ा पड़े।

लाला—और सुनिएगा, हम चार-पाँच बरस लखनऊ में रहे, अनपढ़ ही रहे।

मियाँ—बारह बरस दिल्ली में रहकर तुमने क्या सीख लिया, जो अब चार बरस लखनऊ में रहने से फ़ाज़िल हो गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाला—यह साठ बरस से हमारे पड़ोसी हैं, ख़ूब जानते हैं कि बरस दिन का त्यौहार है, हम शराब ज़रूर पिएँगे, चुस्की ज़रूर लगावेंगे, नशे में गालियाँ ज़रूर सुनावेंगे। अब अगर कोई कहे, शराब-क़लिया छोड़ दो, तो हम अपने पुराने रस्म को क्योंकर छोड़ें ?

मिर्ज़ा सईद—अजी लाला साहब, बहुत बहकी-बहकी बातें न कीजिए। हमने माना कि पुरानी रस्म है, मगर ऐसी रस्म पर तीन हरफ़ ! आप देखें तो कि इस वक़्त आपकी क्या हालत है। कीचड़ में लतपत, सिर-पैर की ख़बर नहीं, भलेमानसों को गालियाँ देते हो और कहते हो कि यह तो हमारी रस्म है।

आज़ाद—मिर्ज़ा सईद, ज़रा मुझसे तो आँखें मिलाइए। शर्माए तो न होंगे ? अभी तो आप कहते थे कि पुरानी रस्म को कोई क्योंकर मिटावे। यह भी तो लालाजी की पुरानी रस्म है ; जिस तरह होती आई है, उसी तरह अब भी होगी। यह धूप-छाँह की रंगत आपने कहाँ पाई ? गिरगिट की तरह रंग क्यों बदलने लगे ! जनाब, बुरे रस्म का मानना हिमाक़त की निशानी है।

मिर्ज़ा सईद बग़लें झाँकने लगे। आज़ाद और उनके दोस्त और आगे बढ़े, तो देखते क्या हैं, कि एक गँवार औरत रोती चली जाती है, और एक मर्द चुपके-चुपके समझा रहा है—चुपाई मार, चुपाई मार। मियाँ आज़ाद समझे, कोई बदमाश है। ललकारा, कौन है बे तू, इस औरत को कहाँ भगाए लिए जाता है ? उस गँवार ने कहा—साहब, भगाए नहीं लिए जात हौं ; यो हमार मिहरिया आय, हमरे इहाँ रसम है कि जब मिहरिया मइका से ससुरार जात है, तो दुइ-तीन कोस लौं रोवत है।

सईद—वल्लाह, मैं कुछ और ही समझा था। ख़ुदा की पनाह, रस्म की मिट्टी ख़राब कर दी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—बजा है, अभी आप उस बाग़ में क्या कह रहे थे ? बात यह है कि पढ़े-लिखे आदमियों को बुरे रस्मों का मानना मुनासिब नहीं। यह क्या ज़रूरी है कि अक़्ल की आँखों को पाकेट में बंद करके पुरानी रस्मों के ढर्रे पर चलना शुरू करें; और इतनी ठोकरें खायँ कि क़दम-क़दम पर मुँह के बल गिरें। ख़ुदा ने अक़्ल इसलिये नहीं दी कि पुराने रस्मों में सुधार न करें, बल्कि इसलिये कि ज़माने के मुताबिक़ अदल-बदल करते रहें। अगर पुरानी बातों की पूरी-पूरी पैरवी की जाती, तो ये जामदानी के कुरते और शरबती के अँगरखे नज़र न आते। लोग नंगे फिरते होते। पुलाव और कबाब के बदले हम पाढ़े और हिरन का कच्चा गोश्त खाते होते। ख़ुदा ने आँखें दी हैं; मगर अफ़सोस कि हमने बंद कर लीं।

मिर्ज़ा सईद—तो आप नाच-रंग के जल्सों के भी दुश्मन होंगे ? आप कहेंगे कि यह भी बुरा रस्म है ?

आज़ाद—बेशक बुरा रस्म है। मैं उसका दुश्मन तो नहीं हूँ, मगर ख़ुदा ने चाहा, तो बहुत जल्द हो जाऊँगा। यह कितनी बेहूदा बात है कि हम लोग औरतों को रुपए का लालच देकर इस तरह ज़लील करते हैं।

मिर्ज़ा सईद—तो यह कहिए कि आप कोरे मुल्ला हैं। यह समझ लीजिए कि इन हसीनों का दम ग़नीमत है। दुनिया की चहल-पहल उनके दम से, महफ़िल की रौनक़ उनके क़दम से। यहाँ तो जब तक तबले की गमक न हो, चाँद-से मुखड़े की झलक न हो, कड़ों की झनकार न हो, छड़ों की छनकार न हो, छमाछम की आवाज़ न आवे, कमरा न सजे, ताल न बजे, धमा-चौकड़ी न मचे, मेंहदी न रचे, रँगरलियाँ न मनावें, शादियाने न बजावें, आवाज़े न कसें, इत्र में न बसें, तानें न सुनें, सिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न धुनें, गलेबाज़ी न हो, आँखों में लाल डोरे न हों, शराब कबाब न हों, परियाँ बुलबुल की तरह चहकती न हों, सेवती के फूल और हिना की टट्टियाँ महकती न हों, क़हक़हे न हों, चहचहे न हों, तो किस गौखे का दम-भर जीने को जी चाहे? वल्लाह, महफ़िल बावले कुत्ते की तरह काट खाय—

महफ़िल में गुदगुदाती हो, शोख़ी निगाह की;
शीशों से आ रही हो, सदा क़ाह-क़ाह की।

इधर जामे मुल (शराब) हो, उधर सुराही की कुल-कुल हो, इधर गुल हो, उधर बुलबुल हो, महफ़िल का रंग खूब जमा हो, समा बँधा हो, फिर जो आपकी गरदन भी न हिल जाय, तो झुककर सलाम कर लूँ। अब ग़ौर फ़रमाइए कि ऐसे तायफ़े को, जो डिबिया में बंद कर रखने क़ाबिल है, आप एक क़लम मिटा देना चाहते हैं।

आज़ाद—जनाब, आपको अपनी तवायफ़ें मुबारक हों। यहाँ इस फेर में नहीं पड़ते।

ये बातें करते हुए लोग और आगे बढ़े, तो क्या देखते हैं कि एक मस्त हाथी पर एक महंतजी सवार, गेरुए कपड़े पहने, भभूत रमाए, पालथी मारे बड़े ठाठ से बैठे हैं। चेले-चापड़ साथ हैं। कोई घोड़े की पीठ पर सवार, कोई पैदल। कोई पीछे बैठा मुरछल हिलाता है, कोई नरसिंघा बजाता है। आज़ाद बोले—कोई इन महंतजी से पूछे कि आप खुदा की इबादत करते हैं, या दुनिया के मज़े उड़ाते हैं? आपको इस टीम-टाम से क्या मतलब?

मिर्ज़ा सईद—कुछ बाप की कमाई तो है नहीं, अहमक़ों ने जागीरें दे दीं, महंत बना दिया। अब ये मौजें करते हैं।

आज़ाद—जागीर देनेवालों को क्या मालूम था कि उनके बाद महंत लोग यों गुलछर्रे उड़ावेंगे? यह तो हमारा काम है कि इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महंतों की गरदन पकड़ें, और कहें, उतर हाथी से, ले हाथ में कमंडल।

यकायक किसी ने छींक दिया। सईद बोले—हात्तेरे छींकने-वाले की नाक काटूँ। यार, ज़रा ठहर जाओ, छींकते चलना बदशगूनी है।

आज़ाद—तो जनाब, हमारा और आपका साथ हो चुका। यहाँ छींक की परवा नहीं करते। आप पर कोई आफ़त आवे, तो हमारा ज़िम्मा।

अभी दस क़दम भी न गए थे कि बिल्ली रास्ता काट गई। सईद ने आज़ाद का हाथ पकड़कर अपनी तरफ़ खींच लिया। भई, अजब बेतुके आदमी हो, बिल्ली राह काट गई, और तुम सीधे चले जाते हो? ज़रा ठहरो, पहले कोई और जाय, तब हम भी चलें।

अब सुनिए कि आध घंटे तक मुँह खोले खड़े हैं। या ख़ुदा, कोई इधर से आवे। आज़ाद ने झल्लाकर कहा—भई, हमको आपका साथ अजीरन हो गया। यहाँ इन बातों के क़ायल नहीं। ख़ैर, वहाँ से ख़ुदा-ख़ुदा करके चले, तो थोड़ी देर के बाद सईद ने फिर आज़ाद को रोका—हाँय-हाँय, ख़ुदा के वास्ते उधर से न जाना। मियाँ अंधे हो, देखते नहीं, गधे खड़े हैं। आज़ाद ने कहा—गधे तो आप ख़ुद हैं। डंडा उठाया, तो दोनों गधे भागे। फिर जो आगे बढ़े, तो सईद की बाईं आँख फड़की। ग़ज़ब ही हो गया। हाथ-पाँव फूल गए, सारी चौकड़ी भूल गए। बोले—यार, कोई तदबीर बताओ, बाईं आँख बेतरह फड़क रही है। मर्द की बाईं और औरत की दाहनी आँख का फड़कना बुरा शगून है। आज़ाद खिलखिलाकर हँस पड़े कि अजीब आदमी हैं आप! छींक हुई और हवास ग़ायब; बिल्ली ने रास्ता काटा, और होश पैतरे; गधे देखे, और औसान ख़ता; और जो बाईं आँख फड़की,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो सितम ही हुआ ! मियाँ, कहना मानो, इन खुराफ़ात बातों न जाओ। यह वहम है, जिसकी दवा लुक़मान के पास भी नहीं मेरा और आपका साथ हो चुका। आप अपना रास्ता लीजिए, मैं रुख़सत होता हूँ।

चौदहवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद ठोकरें खाते, डंडा हिलाते, मारे-मारे फिरते थे। यकायक सड़क पर एक ख़ूबसूरत जवान से मुलाक़ात हुई। उसने इन्हें नज़र भरकर देखा, पर यह पहचान न सके। आगे बढ़ने ही को थे कि जवान ने कहा—

हम भी तसलीम की ख़ू डालेंगे ;
बेनयाज़ी तेरी आदत ही सही।

आज़ाद ने पीछे फिरकर देखा, तो जवान ने फिर कहा—

गो नहीं पूछते हरगिज़ वो मिज़ाज ;
हम तो कहते हैं, दुआ करते हैं।

कहिए जनाब, पहचाना या नहीं ? यह उड़नघाइयाँ, गोया कभी की जान-पहचान ही नहीं। मियाँ आज़ाद चकराए कि यह कौन साहब हैं ! बोले—हज़रत, मैं भी इस उठती ही जवानी में आँखें खो बैठा। वल्लाह, किस मरदूद ने आपको पहचाना हो।

जवान—ऐं, कमाल किया ! वल्लाह, अब तक न पहचाना ! मियाँ, हम तुम्हारे लँगोटिए यार हैं अनवर।

आज़ाद—अल्लाह, अनवर ! अरे यार, तुम्हारी तो सूरत ही बदल गई।

यह कहकर दोनों गले मिले, और ऐसे खुश हुए कि दोनों की आँखों से आँसू निकल आए। आज़ाद ने कहा—एक वह ज़माना था कि हम-तुम बरसों एक जगह रहे, साथ-साथ मटर-गश्ती की;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी बाग़ में सैर कर रहे हैं, कभी चाँदनी रात में विहाग उड़ा रहे हैं, कभी जंगल में मंगल गा रहे हैं, कभी इल्मी बहस कर रहे हैं; कभी बाँक का शौक़, कभी लकड़ी की धुन। वे दिन अब कहाँ!

अनवर ने कहा—भई, चलो, अब साथ-साथ रहें, जिएँ या मरें, मगर चार दिन की ज़िंदगी में साथ न छोड़ें। चलो, ज़रा बाज़ार की सैर कर आवें। मुझे कुछ सौदा लेना है। यह कहकर दोनों चौक चले। पहले बज़ाज़े में धँसे। चारों तरफ़ से आवाज़ें आने लगीं—आइए, आइए, अजी मियाँ साहब, क्या ख़रीदारी मंज़ूर है? ख़ाँ साहब, कपड़ा ख़रीदिएगा? आइए, वह-वह कपड़े दिखाऊँ कि बाज़ार-भर में किसी के पास न निकलें। दोनों एक दूकान में जाकर बैठ गए। दूकान में टाट बिछा है, उस पर सफ़ेद चाँदनी, और लाला नैनसुख या डोरिए का अँगरखा डाटे बड़ी शान से बैठे हैं। तोंद वह फ़रसायशी, जैसे रुपए के दोवाले तरबूज़। एक तरफ़ तनज़ेब, शरबती, अद्धी के थानों की क़तार है, दूसरी तरफ़ मोमी छींट और फ़लालैन की बहार है। अलगनी पर रूमाल क़रीने से लटके हुए लाल-भभूका या सफ़ेद, जैसे बगले के पर, या हरे-हरे धानी, जैसे लहबर। दरवाज़ा लाल रँगा हुआ, पन्नी से मढ़ा हुआ। दीवार पर सैकड़ों चिड़ियाँ टँगी हुई।

अनवर—भई, स्याह मख़मल दिखाना।

बज़ाज़—बदलू, बदलू, ज़री ख़ाँ साहब को काली मख़मल का थान दिखाओ, बढ़िया।

लाला बदलू कई थान तड़-से उठा लाए—सूती, बूटेदार। अनवर ने कई थान देखे, और तब दाम पूछे।

लाला—गज़ों के हिसाब से बताऊँ, या थान के दाम।

अनवर—भई, गज़ों के हिसाब से बताओ। मगर लाला, झूठ कम बोलना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाला ने क़हक़हा उड़ाया—हुजूर, हमारी दूकान में एक बात के सिवा दूसरी नहीं कहते। कौन मेल पसंद है ? अनवर ने एक थान पसंद किया, उसकी क़ीमत पूछी।

लाला—सुनिए खुदावंद, जी चाहे लीजिए, जी चाहे न लीजिए, मुल दस रुपए गज़ से कम न होगी।

अनवर—एं, दस रुपए गज़ ! यार, खुदा से तो डरो। इतना झूठ !

लाला—अच्छा, तो आप भी कुछ फ़र्माओ।

अनवर—हम चार रुपए गज़ से टका ज़्यादा न देंगे।

आज़ाद ने अनवर से कहा—चार रुपए गज़ में न देगा।

अनवर—आप चुपके बैठे रहें, आपको इन बातों में ज़रा भी दख़ल नहीं है। "शेख़ क्या जाने साबुन का भाव ?"

लाला—चार रुपए गज़ तो बाज़ार-भर में न मिलेगी। अच्छा आप सात के दाम दे दीजिए। बोलिए, कितनी ख़रीदारी मंजूर है ? दस गज़ उतारूँ ?

अनवर—क्या खूब, दाम चुकाए ही नहीं और गज़ों की फ़िक्र पड़ गई। वाजबी बताओ, वाजबी। हमें चकमा न दो ; हम एक घाघ हैं।

लाला—अच्छा साहब, पाँच रुपए गज़ लीजिएगा ? या अब भी चकमा है ?

अनवर—अब भी महँगी है, तुम्हारी ख़ातिर से सवा चार सही। बस, पाँच गज़ उतार दो।

लाला ने नाक-भौं चढ़ाकर पाँच गज़ मख़मल उतार दी, और कहा—आप बड़े कड़े ख़रीदार हैं। हमें घाटा हुआ। इन दामों शहर-भर में न पाइएगा।

आज़ाद—भई, क़सम है खुदा की, मेरा-ऐसा अनाड़ी तो फँसी जाय, और वह गच्चा खाय कि उम्र-भर न भूले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनवर—जी हाँ, यहाँ का यही हाल है। एक के तीन माँगते हैं।

यहाँ से दोनों आदमी अनवर के घर चले। चलते-चलते अनवर ने कहा—लो खूब याद आया। इस फाटक में एक बाँके रहते हैं। ज़री मैं उनसे मिल लूँ। मियाँ आज़ाद और अनवर, दोनों फाटक में हो रहे, तो क्या देखते हैं, एक अधेड़ उम्र का कड़ियल आदमी कुर्सी पर बैठा हुआ है। घुटन्ना चूड़ीदार, चुस्त, ज़रा शिकन नहीं। चुन्नटदार अँगरखा एड़ी तक, छाता गोल कटा हुआ। चोली ऊँची। तुक्केदार माशे-भर की कटी हुई टोपी। सिरोही सामने रक्खी है, और जगह-जगह क़रौली, कटार, खाँड़ा, तलवारें चुनी हुई हैं। सलाम-कलाम के बाद अनवर ने कहा—जनाब, वह बंदूक़ आपने पचास रुपए को ख़रीदी थी; दो दिन का वादा था, जिसके छः महीने हो गए; मगर आप साँस-डकार तक नहीं लेते। बंदूक़ हज़म करने का इरादा हो, तो साफ़-साफ़ कह दीजिए, रोज़ की ठाँय-ठाँय से क्या फ़ायदा?

बाँके—कैसी बंदूक़, किसकी बंदूक़? अपना काम करो, मेरे मुँह न चढ़ो। मियाँ, हम बाँके लोग हैं, सैकड़ों को गचे, हज़ारों को झाँसे दिए, आप बेचारे किस खेत की मूली हैं? यहाँ सौ पुश्त से सिपहगरी होती आई है। हम, और दाम दें?

अनवर—वाह, अच्छा बाँकपन है कि आँख चूकी, और कपड़ा ग़ायब; कंबल डाला और लूट लिया। क्या बाँकपन इसी का नाम है? ऐसा तो लुच्चे लुच्चे किया करते हैं। आज के सातवें दिन बाएँ हाथ से रुपए गिन दीजिएगा, वरना अच्छा न होगा।

बाँके ने मूछों पर ताव देकर कहा—मालूम होता है, तुम्हारी मौत हमारे हाथ बदी है। बहुत बढ़-बढ़कर बातें न बनाओ। बाँकों से टर्राना अच्छा नहीं।

इस तकरार और तू-तू, मैं-मैं के बाद दोनों आदमी घर चले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इधर इन बाँके का भांजा, जो अखाड़े से आया और घर में गया, तो क्या देखता है कि सब औरतें नाक-भौं चढ़ाए, मुँह बनाए, गुस्से में भरी बैठी हैं। ऐ, ख़ैर तो है? यह आज सब चुपचाप क्यों बैठे हैं? कोई मिनकता ही नहीं। इतने में उसकी मुमानी कड़क कर बोली—अब चूड़ियाँ पहनो, चूड़ियाँ! और बहू-बेटियों में दबकर बैठ रहो। वह मुआ करोड़ों बातें सुना गया, पक्के पहरभर तक ऊल-जलूल बका किया, और तुम्हारे मामू बैठे सब सुना किए। "फेरी मुँह पर लोई, तो क्या करेगा कोई!" जब शर्म निगोड़ी भून खाई, तो फिर क्या। यह न हुआ कि मुए कलजिभ्भे की ज़बान तालू से खींच लें।

भांजे को जवानी का ज़ोम था; शेर की तरह बफ़रता हुआ बाहर आया, और बोला—मामूजान, यह आज आपसे किससे तकरार हो गई? औरतें तक झल्ला उठीं, और आप चुपके बैठे सुना किए! वल्लाह, इज़्ज़त डूब गई। ले अब जल्दी उसका नाम बताइए, अभी आँतों का ढेर किए देता हूँ।

मामू—अरे, वही अनवर तो हैं। उनका क़र्ज़दार हूँ। दो बातें सुनावें भी तो क्या? और वह है ही बेचारा क्या कि उससे भिड़ता! वह पिद्दी मैं बाज़, वह दुबला-पतला आदमी, मैं पुराना उस्ताद। बोलने का मौक़ा होता, तो इस वक़्त उसकी लाश न फड़कती होती। ले गुस्सा थूक दो; जाओ, खाना खाओ; आज मीठे टुकड़े पके हैं।

भांजा—क़सम ख़ुदा की, जब तक उस मरदूद का ख़ून न पी लूँ, तब तक खाना हराम है। मीठे टुकड़ों पर आप ही हत्थे लगाइए। यह कहकर घर से चल खड़े हुए। मामू ने लाख समझाया, मगर एक न मानी।

इधर अनवर जब घर पहुँचे, तो देखते क्या हैं, उनका लड़का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तड़प रहा है। घबराए, यह क्या, ख़ैरियत तो है ? लौंडी ने कहा—भैया यहाँ खेल रहे थे कि बिच्छू ने काट लिया। तभी से बच्चा तड़प-तड़पकर लोट रहा है। अनवर ने आज़ाद को वहीं छोड़ा, और खुद अस्पताल चले कि झटपट डॉक्टर को बुला लावें। मगर अभी पचास क़दम भी न गए होंगे कि सामने से उस बाँके का भांजा आ निकला। आँखें चार हुईं। देखते ही शेर की तरह गरजकर बोला—ले सँभल जा। अभी सिर खून में लोट रहा होगा। हिला और मैंने हाथ दिया। बाँकों के मुँह चढ़ना ख़ालाजी का घर नहीं। बेचारे अनवर बहुत परेशान हुए। उधर लड़के की वह हालत, इधर अपनी यह गत। जिस्म में ताक़त नहीं, दिल में हिम्मत नहीं। भागें, तो क़दम नहीं उठते; ठहरें, तो पाँव नहीं जमते। सैकड़ों आदमी इर्द-गिर्द जमा हो गए, और बाँके को समझाने लगे—जाने दीजिए, इनके मुक़ाबिले में खड़े होना आपके लिये शर्म की बात है। अनवर की आँखें डबडबा आईं। लोगों से बोले—भाई, इस वक़्त मेरा बच्चा घर पर तड़प रहा है, डॉक्टर को बुलाने जाता था कि राह में इन्होंने घेरा। अब किसी सूरत से मुझे बचाओ। मगर उस बाँके ने एक न मानी। पैतरा बदलकर सामने आ खड़ा हुआ। इतने में किसी ने अनवर के घर ख़बर पहुँचाई कि मियाँ से एक बाँके से तलवार चल गई। जितने मुँह उतनी बातें। किसी ने कह दिया कि चरका खाया, और गरदन खट-से अलग हो गई। यह सुनते ही अनवर की बीवी सिर पीट-पीटकर रोने लगी—लोगो, दौड़ो, हाय, मुझ पर बिजली गिरी। हाय, मैं जीते-जी मर मिटी। फिर बच्चे से चिमटकर विलाप करने लगी—मेरे बच्चे, अब तू अनाथ हो गया, तेरा बाप दाग़ दे गया। हाय, मेरा सोहाग लुट गया।

मियाँ आज़ाद यह ख़बर पाते ही तीर की तरह घर से निकल-

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर उस मुक़ाम पर जा पहुँचे। देखा, तो वह ज़ालिम तलवा हाथ में लिए मस्त हाथी की तरह चिंघाड़ रहा है। आज़ाद ने झ से झपटकर अनवर को हटाया, और पैतरा बदलकर बाँके के साम आ खड़े हुए। वह तो जवानी के नशे में मस्त था, पहले हथकटी हाथ लगाना चाहा, मगर आज़ाद ने ख़ाली दिया। वह फिर झपट और चाहा कि चाकी का हाथ जमावे, मगर यह आड़े हो गए

आज़ाद—बचा, यह उड़नघाइयाँ किसी गँवार को बताना मेरे सामने छक्के छूट जायँ, तो सही। आओ चोट पर। वह बाँ झल्लाकर झपटा, और घुटना टेककर पालट का हाथ लगाने ही था कि आज़ाद ने पैतरा बदला, और तोड़ किया—मोढ़ा। मो तो उसने बचाया, मगर आज़ाद ने साथ ही जनेवे का वह तुला हु हाथ जमाया कि उसका भंडारा तक खुल गया। धम-से ज़मीन प आ गिरा। मियाँ आज़ाद को सबने घेर लिया, कोई पीठ ठोक लगा, कोई डंड मलने लगा। अनवर लपके हुए घर गए। बाँ की बाछें खिल गईं, गोया मुर्दा जी उठा।

दूसरे दिन अनवर और आज़ाद कमरे में बैठे चाय पी रहे कि डाकिया हरी-हरी वरदी फड़काए, लाल-लाल पगिया जमाए ख़ासा टैयाँ बना हुआ आया, और एक अख़बार देकर लंबा हुआ अनवर ने झटपट अख़बार खोला, ऐनक लगाई, और अख़बा पढ़ने लगे। पढ़ते-पढ़ते आख़िरी सफ़े पर नज़र पड़ी, तो चेहर खिल गया।

आज़ाद—यह क्यों ख़ुश हो गए भई? क्या ख़बर है।

अनवर—देखता हूँ कि यह इश्तहार यहाँ कैसे आ पहुँचा! अख़बारों में इन बातों का क्या ज़िक्र? देखिए,

"ज़रूरत है एक अरबी प्रोफ़ेसर की नज़ीरपुर-कॉलेज के लिये। तनख़्वाह दो सौ रुपए महीना।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—अख़बारों में सभी बातें रहती हैं, यह तो कोई नई बात नहीं। अख़बार लड़कों का उस्ताद, जवानों को सीधी राह बतानेवाला, बुड्ढों के तजुर्बे की कसौटी, सौदागरों का दोस्त, कारीगरों का हमदर्द, रिआया का वकील, सब कुछ है। किसी कालम में मुल्की छेड़-छाड़, कहीं नोटिस और इश्तिहार, अँगरेज़ी अख़बारों में तरह-तरह की बातें दर्ज होती हैं, और देसी अख़बार भी इनकी नक़ल करते हैं। शतरंज के नक़्शे, क़ौमी तमस्सुकों का निर्ख़, घुड़दौड़ की चर्चा, सभी कुछ होता है। जब कभी कोई ओहदा ख़ाली हुआ, और अच्छा आदमी न मिला, तो हुक्काम इसका इश्तिहार देते हैं। लोगों ने पढ़ा, और दरख़्वास्त दाग़ दी; लगा तो तीर, नहीं तुक्का।

अनवर—तब तो नए-नए इश्तिहार छपने लगेंगे। कोई नया गंज आबाद करे, तो उसको छपवाना पड़ेगा—एक नौ जवान साक़िन की ज़रूरत है, नए गंज में दूकान जमाने के लिये; क्योंकि जब तक धुआँधार चिलमें न उड़ें, चरस की लौ आसमान की ख़बर न लावे, तब तक गंज की रौनक़ नहीं। अफ़ीमची इश्तिहार देंगे कि एक ऐसे आदमी की ज़रूरत है, जो अफ़ीम घोलने में ताक़ हो, दिन-रात पीनक में रहे; मगर अफ़ीम घोलने के वक़्त चौंक उठे। आराम-तलब लोग छपवावेंगे कि एक ऐसे क़िस्सा कहनेवाले की ज़रूरत है, जिसकी ज़बान कतरनी की तरह चली जाय, जिसके अमीर-हमज़ा की दास्तान ज़बान पर हो, ज़मीन और आसमान के कुलाबे मिलावे, झूठ के छप्पर उड़ावे, शाम से जो बकना शुरू करे, तो तड़का कर दे। खुशामद-पसंद लोग छपवावेंगे कि एक ऐसे मुसाहब की ज़रूरत है, जो आठोंगाँठ कुम्मैत हो, हाँ-में-हाँ मिलावे, हमको सख़ावत में हातिम, दिलेरी में रुस्तम, अक़्ल में अरस्तू बनावे—मुँह पर कहे कि हुज़ूर ऐसे, और हुज़ूर के बाप ऐसे, मगर पीठ-पीछे

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गालियाँ दे कि इस गधे को मैंने ख़ूब ही बनाया। बेफ़िक्रे छपवावेंगे कि एक बटेर की ज़रूरत है, जो बढ़-बढ़कर लात लगाता हो; एक मुर्ग़ की, जो सवाए-ड्योढ़े को मारे; एक मेढ़े की, जो पहाड़ से टक्कर लेने में बंद न हो।

इतने में मिर्ज़ा सईद भी आ बैठे। बोले—भई, हमारी भी एक ज़रूरत छपवा दो। एक ऐसी जोरू चाहिए, जो चालाक और चुस्त हो, नख-सिख से दुरुस्त हो, शोख़ और चंचल हो, कभी-कभी हँसी में टोपी छीनकर चपत भी जमावे, कभी रूठ जावे, कभी गुदगुदावे; ख़र्च करना न जानती हो, वरना हमसे मीज़ान न पटेगी; लाल मुँह हो, सफ़ेद हाथ-पाँव हों, लेकिन ऊँचे क़द की न हो; क्योंकि मैं नाटा आदमी हूँ; खाना पकाने में उस्ताद हो, लेकिन हाज़मा ख़राब हो, हल्की-फुल्की दो चपातियाँ खाय, तो तीन दिन में हज़्म हो; सादा-मिज़ाज ऐसी हो कि गहने-पाते से मतलब ही न रक्खे; हँसमुख हो, रोते को हँसावे, मगर यह नहीं कि फटी जूती की तरह बेमौक़ा दाँत निकाल दे, दरख़्वास्तें खटाखट आवें, हाँ, यह भी याद रहे कि बीबी साहबा के मुँह पर दाढ़ी न हो।

आज़ाद—और तो ख़ैर, मगर यह दाढ़ी की बड़ी कड़ी शर्त है। भला क्यों साहब, औरतें भी मुछक्कड़ हुआ करती हैं?

सईद—कौन जाने भई, दुनिया में सभी तरह के आदमी होते हैं। जब बेमूँछ के मर्द होते हैं, तो मूँछवाली औरतों का होना भी मुमकिन है। कहीं ऐसा न हो कि पीछे हमारी मूँछ उसके हाथ में और उसकी दाढ़ी हमारे हाथ में हो।

आज़ाद—अजी जाइए भी, औरत के भी कहीं दाढ़ी होती है?

सईद—हो या न हो, मगर यह पख़ हम ज़रूर लगावेंगे।

आपस में यही मज़ाक़ हो रहा था कि पड़ोस से रोने-पीटने की आवाज़ आई। मालूम हुआ, कोई बूढ़ा आदमी मर गया। आज़ाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी वहाँ जा पहुँचे। लोगों ने पूछा—इन्हें क्या बीमारी थी? एक बूढ़े ने कहा—यह न पूछिए, हुमुक़ की बीमारी थी।

आज़ाद—यह कौन बीमारी है? यह तो कोई नया मरज़ मालूम होता है। इसकी अलामतें तो बताइए।

बूढ़ा—क्या बताऊँ, अक़्ल की मार इसका ख़ास सबब है। अस्सी बरस के थे, मगर अक़्ल के पूरे, तमीज़ छू नहीं गई। ख़ुदा जाने, धूप में बाल सफ़ेद किए थे या नज़ला हो गया था। हज़रत की पीठ पर एक फोड़ा निकला। दस दिन तक इलाज नदारद। दसवें दिन किसी गँवार ने कह दिया कि गुलेअब्बास के पत्ते और सिरका बाँधो। झप-से राज़ी हो गए। सिरका बाज़ार से ख़रीदा, पत्ते बाग़ से तोड़ लाए, और सिरके में पत्तों को ख़ूब तर करके पीठ पर बाँधा। दूसरे रोज़ फोड़ा आध अंगुल बढ़ गया। किसी और गौखे ने कह दिया कि भटकटैया बाँधो, यह टोटका है। इसका नतीजा यह हुआ कि दर्द और बढ़ गया। किसी ने बताया कि इमली की पत्ती, धतूरा और गोबर बाँधो। वहाँ क्या था, फ़ौरन् मंज़ूर। अब तड़पने लगे। आग लग गई। महल्ले की एक औरत ने कहा—मैं बताऊँ, मुझसे क्यों न पूछा। सहल तरकीब है, मूली के अचार के तीन क़तले लेकर ज़मीन में गाड़ दो। तीन दिन के बाद निकालो, और कुएँ में डाल दो। फिर उसी कुएँ का पानी अपने हाथ से भरकर पी जाओ। उसी दम चंगे न हो जाओ, तो नाक कटा डालूँ। सोचे, भई, इसने शर्त बड़ी कड़ी की है। कुछ तो है कि नाक बद ली। झट मूली के क़तले गाड़े, और कुएँ में डाल पानी भरने लगे। डोल था भारी, उस पर तुर्रा यह कि मारे दर्द के तड़प रहे थे। रस्सी हाथ से छूट गई, धम-से गिरे, फोड़े में ठेस लगी, तिलमिलाने लगे, यहाँ तक कि जान निकल गई।

आज़ाद—अफ़सोस, बेचारे की जान मुफ़्त में गई। इन अक़्ल के

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुश्मनों से कोई इतना तो पूछे कि हर ऐरे-ग़ैरे की राय पर क्यों इलाज कर बैठते हो ? नतीजा यह होता है, या तो मरज़ बढ़ जाता है, या जान निकल जाती है।

पंद्रहवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद एक दिन चले जाते थे। क्या देखते हैं, एक पुरानी-धुरानी गड़हिया के किनारे एक दढ़ियल बैठे काई की कैफ़ियत देख रहे हैं। कभी ढेला उठाकर फेंका, छप। बुड्ढे आदमी और लौंडे बने जाते हैं। दाढ़ी का भी ख़याल नहीं। लुत्फ़ यह कि महल्ले-भर के लौंडे इर्द-गिर्द खड़े तालियाँ बजा रहे हैं, लेकिन आप गड़-हिया की लहरों ही पर लट्टू हैं। कमर झुकाए चारों तरफ़ ढेले और ठीकरे ढूँढ़ते फिरते हैं। एक दफ़ा कई ढेले उठाकर फेंके। आज़ाद ने सोचा, कोई पागल है क्या। साफ़-सुथरे कपड़े पहने, यह उम्र, यह वज़ा, और किस मज़े से गड़हिया पर बैठे रँगरलियाँ मना रहे हैं। यह ख़बर ही नहीं कि गाँव-भर के लौंडे पीछे तालियाँ बजा रहे हैं। एक लौंडे ने चपत जमाने के लिये हाथ उठाया, मगर हाथ खींच लिया। दूसरे ने पेड़ की आड़ से कंकड़ी लगाई। तीसरे ने दाढ़ी पर घास फेंकी। चौथे ने कहा—मियाँ, तुम्हारी दाढ़ी में तिनका; मगर मेरा शेर ज़रा न मिनका। गड़हिया से उठे, तो दूर की सूझी। झप-से एक पेड़ पर चढ़ गए, फुनगी पर जा बैठे, और बंदर की तरह लगे उचकने। उस टहनी पर से उचके, तो दूसरी डाल पर जा बैठे। उस पर लड़कों को भी बुलाते जाते हैं कि आओ, ऊपर आओ। इमली का दरख़्त था इतना ऊँचा कि आसमान से बातें कर रहा था। हज़रत मज़े से बैठे इमली खाते और चिएँ लड़कों पर फेंकते जाते हैं। लौंडे ग़ुल मचा रहे हैं कि मियाँ, मियाँ, एक चियाँ हमको इधर फेंको, इधर; हाथ ही टूटें, जो उधर फेंके। क्या मज़े से गपर-गपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करके खाते जाते हैं, इधर एक चियाँ भी नहीं फेंकते। ओ कंजूस, ओ मक्खीचूस, ओ बंदर, अरे छुछुंदर, एक इधर भी। थोड़ी देर में खटखट करते पेड़ से उतरे। इतने में कमसरियेट के तीन-चार हाथी चारे और गन्ने से लदे झूमते हुए निकले। आपने लड़कों को सिखाया कि गुल मचाकर कहो—हाथी, हाथी, गन्ना दे। लौंडों ने जो इतनी शह पाई, तो आसमान सिर पर उठा लिया। सब चीख़ने लगे—हाथी, हाथी, गन्ना दे। एकाएक एक रीछवाला आ निकला। आपने झट रीछ की गरदन पकड़ी और पीठ पर हो रहे। टिक-टिक-टिक, क्या टट्टू है। रीछवाला चिल्ल-पों मचाया ही किया, आपने दो-तीन लड़कों को आगे-पीछे अग़ल-बग़ल बिठा ही लिया। मज़े से तने बैठे हैं, गोया अपने वक़्त के बादशाह हैं। थोड़ी देर के बाद लड़कों को ज़मीन पर पटका, ख़ुद भी धम-से ज़मीन पर कूद पड़े, और झट लँगोट कस, ताल ठोंक, रीछ से कुश्ती लड़ने पर आमादा हो गए। तब तो रीछवाला चिल्लाया—मियाँ, क्यों जान के दुश्मन हुए हो! चबा ही डालेगा! यह तो हवा के घोड़े पर सवार थे, आव देखा न ताव, चिमट ही तो गए, और एक अंटी बताई, तो रीछ चारों शाने चित्त। लौंडों ने वह गुल मचाया कि रीछ पूरब भागा, और रीछवाला पच्छिम। मुहल्ले-भर में क़हक़हा उड़ने लगा। थोड़ी ही देर के बाद एक भड्डरी आ निकला। धोती बाँधे, पोथी बग़ल में दबाए, रुद्राक्ष की माला पहने, आवाज़ लगाता जाता है—साइत बिचारें, सगून बिचारें। दढ़ियल के क़रीब से गुज़रा, तो शिकार इनके हाथ आया। बोले—भई, इधर आना। उसकी बाछें खिल गईं कि पौ बारह हैं। अच्छी बोहनी हुई। दढ़ियल ने हाथ दिखाया और पूछा—हमारी कितनी शादियाँ होंगी? उसने कन्या, मकर, सिंह, वृश्चिक करके बहुत सोच के कहा—पाँच। आपने उसकी पगड़ी उछाल दी। लड़कों को दिल्लगी सूझी,

Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी ने सिर सुहलाया, किसी ने चपत लगाया। अच्छी तरह बोहनी हुई। दढ़ियल ने कहा—सच कहना, आज साइत देखकर चले थे या यों ही? अपनी साइत भी देख लेते हो या औरों ही को राह बताते हो? अच्छा, ख़ैर, बताओ, हमारे यहाँ लड़का कब तक होगा? भड्डुरी ने कहा—बस, बस, आप और किसी से पूछिएगा। भर पाया। यह कहकर चलने ही को था कि दढ़ियल ने लड़कों को इशारा किया। वे तो इनको अपना गुरू ही समझते थे। एक ने पोथी ली, दूसरे ने माला छिपाया, तीसरे ने पगिया टहला दी। दस-पाँच चिमट गए। बेचारा बड़ी मुशकिल से जान छुड़ाकर भागा, और क़सम खाई कि अब इस मुहल्ले में क़दम न रक्खूँगा। इतने में एक ख़ोंचेवाले ने आवाज़ दी—गुलाबी रेवड़ियाँ, करारी खुटियाँ, दालमोट-सलोने, मटर-तिकोने। लौंडे अपने-अपने दिल में खुश हो गए कि दढ़ियल के हुक्म से ख़ोंचा लूट लेंगे, और खूब मिठाइयाँ चक्खेंगे। मगर उन्होंने मना कर दिया—ख़बरदार, हाथ मत बढ़ाना। जब ख़ोंचेवाला पास आया, तब उन्होंने मोल-तोल करके दो रुपए में सारा ख़ोंचा मोल ले लिया, और लड़कों को खूब छकाकर खिलाया। एक दस मिनट के बाद आवाज़ आई—खीरे लो, खीरे। आपने उचककर टोकरा उलट दिया। खीरे ज़मीन पर गिर पड़े। जैसे ही लड़कों ने चाहा, खीरे बटोरें कि उन्होंने डाँट बताई। खीरेवाले के दोनों हाथ पकड़ लिए, और लड़कों से कहा—खीरे उठा-उठाकर इसी गड़हिया में फेंकते जाओ। पचास-साठ खीरे आनन-फ़ानन गड़हिया में पहुँच गए। अभी यह तमाशा हो ही रहा था कि एक चिड़ीमार कंपा-जाल लिए हुए आ निकला। हाथ में तीन-चार जानवर, कुछ झोले के अंदर। सब फड़फड़ा रहे हैं। कहता जाता है—काला भुजंगा मंगल के रोज़। दढ़ियल ने पुकारा—आओ मियाँ, इधर आओ। एक भुजंगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर अपने ऊपर से उतारकर छोड़ दिया। चिड़ीमार ने कहा—टका हुआ। दूसरा जानवर एक लड़के पर से उतारकर छोड़ा। इसी तरह दस-पंद्रह चिड़ियाँ छोड़कर चुपचाप खड़े हो गए। गोया कुछ मतलब ही नहीं। चिड़ीमार ने कहा—हुज़ूर, दाम। आपने फ़र्माया, तुम्हारा नाम? तब तो वह चकराया कि अच्छे मिले। बोला—हुज़ूर, धेली के जानवर थे। आप बोले—कैसी धेली और कैसा धेला! कुछ घास तो नहीं खा गया? भंग पी गया है या शराब का नशा है? इधर लड़कों ने जाल-कंपा सब टहला दिया। थोड़ी देर रो-पीटकर उसने भी अपनी राह ली।

दढ़ियल ने लड़कों को छोड़ा, और वहाँ से किसी तरफ़ जाना ही चाहते थे कि आज़ाद ने क़रीब आकर पूछा—हज़रत, मैं बड़ी देर से आपका तमाशा देख रहा हूँ, कभी खीरे गड़हिया में फेंके, कभी इमली पर उचक रहे, कभी चिड़ीमार की ख़बर ली, कभी भडुरी को आड़े हाथों लिया। मुझे ख़ौफ़ है कि आप कहीं पागल न हो जायँ, जल्दी फ़स्द खुलवाइए।

दढ़ियल—मुझे तो आप ही पागल मालूम होते हैं। इन बातों के समझने के लिये बड़ी अक़्ल चाहिए। सुनिए, आपको समझाऊँ। गड़हिया पर बिस्तर जमाकर ढेले फेंकने और पेड़ पर उचककर इमली खाने और हाथी से गन्ने माँगने का सबब यह है कि लौंडे भी हमारी देखा-देखी उचक-फाँद में बर्क़ हो जायँ, यह नहीं कि मरियल टट्टू की तरह जहाँ बैठे, वहीं जम गए। लड़कों को कम-से-कम दो घंटे रोज़ खेलना-कूदना चाहिए, वरना बीमारी सताएगी। रीछवाले के रीछ पर उचक बैठने, रीछ को भगा देने और चिड़ीमार के जानवरों को मुफ़्त बेकौड़ी-बेदाम छुड़ा देने का सबब यह है कि जब हम जानवरों को तकलीफ़ में देखते हैं, तो कलेजे पर साँप लोटने लगता है। और इन चिड़ीमारों का तो मैं जानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुश्मन हूँ। बस चले, तो कालेपानी भिजवा दूँ। जहाँ देखा, दो-चार भलेमानुस खड़े हैं, लगे जानवरों को ज़ोर से दबाने, जिसमें वे चीख़ें, और लोग उनकी हालत पर कुछ दे निकलें, इनकी हँडिया चढ़ जाय। खीरे इसलिये गड़हिया में फिकवा दिए कि आजकल हवा ख़राब है, खीरे खाने से भला-चंगा आदमी बीमार हो जाय। मगर इन कुँजड़ों-कबड़ियों को इन बातों से क्या वास्ता! उन्हें तो अपने टकों से मतलब। मैंने समझा, एक कबड़िए के नुक़सान से पचासों आदमियों की जान बच जाय, तो क्या बुरा! देख लो, खोंचेवाले को हमने अपने पास से दो रुपए खनाखन गिन दिए। अब समझे, इस तमाशे का हाल?

यह कहकर उन्होंने अपनी राह ली, और आज़ाद ने भी दिल में उनकी नेकनीयती की तारीफ़ करते हुए दूसरी तरफ़ का रास्ता लिया। अभी कुछ ही दूर गए थे कि सामने से एक साहब आते हुए दिखाई दिए। उन्होंने आज़ाद से पूछा—क्यों साहब, आप अफ़ीम तो नहीं खाते?

आज़ाद—अफ़ीम पर ख़ुदा की मार! क़सम ले लीजिए, जो आज तक हाथ से भी छुई हो। इसके नाम से नफ़रत है।

यह कहकर आज़ाद नदी के किनारे जा बैठे। वहाँ से पलटकर जो आए, तो क्या देखते हैं कि वही हज़रत ज़मीन पर पड़े आँखें माँग रहे हैं। चेहरे पर मुर्दनी छाई है, होंठ सूख रहे हैं, आँखों से आँसू बह रहे हैं। न सिर की फ़िक्र है, न पाँव की। आज़ाद चकराए, क्या मांजरा है। पूछा—क्यों भई, ख़ैर तो है? अभी तो भले-चंगे थे, इतनी जल्दी कायापलट कैसे हो गई?

अफ़ीमची—भई, मैं तो मर मिटा। कहीं से अफ़ीम ले आओ। पिऊँ, तो आँखें खुलें; जान में जान आवे। छुटपन ही से अफ़ीम का आदी हूँ। वक़्त पर न मिले, तो जान निकल जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—अरे यार, अफ़ीम छोड़ो; नहीं, इसी तरह एक दिन दम निकल जायगा।

अफ़ीमची—तो क्या आप अमृत पीकर आए हैं? मरना तो एक दिन सभी को है।

आज़ाद—मियाँ, हो बड़े तीखे; "रस्सी जल गई, मगर बल न गया।" पड़े सिसक रहे हो, मगर जवाब तुर्की-ब-तुर्की ज़रूर दोगे।

अफ़ीमची—जनाब, अफ़ीम लानी हो तो लाइए, वर्ना यहाँ बक-बक सुनने का दिमाग़ नहीं।

आज़ाद—अफ़ीम लानेवाले कोई और ही होंगे, हम तो इस फ़िक्र में बैठे हैं कि आप मरें, तो मातम करें। हाँ, एक बात मानो तो अभी लपक जाऊँ, ज़रा लकड़ी के सहारे से उस हरे-भरे पेड़ के तले चलो, वहाँ हरी-हरी घास पर लोट मारो, ठंडी-ठंडी हवा खाओ, तब तक मैं आता हूँ।

अफ़ीमची—अरे मियाँ, यहाँ जान भारी है। चलना-फिरना, उठना-बैठना कैसा!

आख़िर, आज़ाद ने उन्हें पीठ पर लादा, और ले चले। उनकी यह हालत कि आँखें बंद, मुँह खुला हुआ; मालूम ही नहीं कि जाते कहाँ हैं। आज़ाद ने उनको नदी में ले जाकर ग़ोता दिया। बस, क़यामत आ गई। अफ़ीमची आदमी, पानी की सूरत से नफ़रत, लगे चिल्लाने—बड़ा ग़च्चा दे गया, मारा, पटरा कर दिया! उम्र-भर में आज ही नदी में क़दम रक्खा; खुदा तुझसे समझे; सन-से जान निकल गई, ठिठुर गया; अरे ज़ालिम, अब तो रहम कर। आज़ाद ने एक और ग़ोता दिया। ताबड़तोड़ कई ग़ोते दिए। अब उनकी कैफ़ियत कुछ न पूछिए। करोड़ों गालियाँ दीं। आज़ाद ने उनको रेती में छोड़ दिया, और लंबे हुए। चलते-चलते एक बरगद के पेड़ के नीचे पहुँचे, जिसकी टहनियाँ आसमान से बातें

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करती थीं, और जटाएँ पाताल की ख़बर लाती थीं। देखा, एक हज़रत नशे में चूर एक दुबली-पतली टट्टुई पर सवार टिक-टिक करते जा रहे हैं।

आज़ाद—इस टट्टुई पर कौन लदा है?

शराबी—अच्छा जी, कौन लदा है! ऐसा न हो कि कहीं मैं उतरकर अंजर-पंजर ढीले कर दूँ। यों नहीं पूछता कि इस हवाई घोड़े पर आसन जमाए, बाग उठाए कौन सवार जाता है। आँखों के आगे नाक, सूझे क्या ख़ाक। टट्टू ऐसे ही हुआ करते हैं?

आज़ाद—जनाब, क़सूर हुआ, माफ़ कीजिए। सचमुच यह तो तुर्की नस्ल का पूरा घोड़ा है। खुदा झूठ न बुलावे, जमना-पार की बकरी इससे कुछ ही बड़ी होगा।

शराबी—हाँ, अब आप आए राह पर। इस घोड़े की कुछ न पूछिए। मा के पेट से फुदकता निकला था।

आज़ाद—जी हाँ, वह तो इसकी आँखें ही कहे देती हैं। घोड़ा क्या, उड़न-खटोला है।

शराबी—इसकी क़ीमत भी आपको मालूम है?

आज़ाद—ना साहब। भला मैं क्या जानूँ। आप तो ख़ैर गधे पर सवार हुए हैं, यहाँ तो टाँगों की सवारी के सिवा और कोई सवारी मयस्सर ही नहीं हुई। मगर उस्ताद, कितनी ही तारीफ़ करो, मेरी निगाह में तो नहीं जँचता।

शराबी—अच्छा, तो इसी बात पर कड़कड़ाए देता हूँ।

यह कहकर एँड़ लगाई, मगर टट्टू ने जुंबिश तक न की। वह और अचल हो गया। अब चाबुक-पर-चाबुक मारते हैं, एँड़-पर-एँड़ लगाते हैं, और वह टसकने का नाम तक नहीं लेता। आज़ाद ने कहा—बस, ज़्यादा शेख़ी में न आइए, ठंडी-ठंडी हवा खाइए।

यह कहकर आज़ाद तो चले, मगर शराबी के पाँव डगमगाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगे। बाग अब छूटी और अब छूटी। दस क़दम चले, और बाग रोक ली। पूछा—मियाँ मुसाफ़िर, मैं नशे में तो नहीं हूँ?

आज़ाद—जी नहीं, नशा कैसा? आप होश की बातें कर रहे हैं।

शराबी इसी तरह बार-बार आज़ाद से पूछता था। आख़िर, जब आज़ाद ने देखा कि यह अब घुड़िया पर से लुढ़का ही चाहते हैं, तो झट घुड़िया को एक खेत में हाँक दिया, और ग़ुल मचाया कि ओ किसान, ओ किसान, देख, यह तेरा खेत चराए लेता है। किसान के कान में भनक पड़ी, तो लठ काँधे पर रख, लाखों गालियाँ देता हुआ झपटा। आज बचा बना के छोड़ूँगा; रोज़ सुअ-रिया चरा ले जाते थे, आज बहुत दिन के बाद हत्थे चढ़े हो। नज़दीक गया, तो देखता है कि टट्टू है और एक आदमी उस पर लदा है। किसान चालाक था। बोला—आप हैं बाबू साहब! चलिए, आपको घर ले चलूँ। वहीं खाना खाइए, और आराम से सोइए। यह कहकर घुड़िया की रास थामे हुए काँजीहाउस पहुँचा, और टट्टू को काँजीहाउस में ढकेलकर चंपत हुआ। यह बेचारे रात-भर काँजीहाउस में रहे, सुबह को किसी तरह घर पहुँचे।

सोलहवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद के पाँव में तो आँधी-रोग था। इधर-उधर चक्कर लगाए, रास्ता नापा और पड़कर सो रहे। एक दिन साँड़नी की ख़बर लेने के लिये सराय की तरफ़ गए, तो देखा, बड़ी चहल-पहल है। एक तरफ़ रोटियाँ पक रही हैं, दूसरी तरफ़ दाल बघारी जाती है। भठियारियाँ मुसाफ़िरों को घेर-घारकर ला रही हैं, साफ़-सुथरी कोठरियाँ दिखला रही हैं। एक कोठरी के पास एक मोटा-ताज़ा आदमी जैसे ही चारपाई पर बैठा, पट्टी टूट गई। आप गड़ाप-से झिलँगे में हो रहे। अब बार-बार उचकते हैं, मगर उठा

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं जाता। चिल्ला रहे हैं कि भाई, मुझे कोई उठाओ। आख़िर, भठियारों ने दाहना हाथ पकड़ा, बाईं तरफ़ मियाँ आज़ाद ने हाथ दिया, और आपको बड़ी मुशकिल से खींच-खाँच के निकाला। झिलँगे से बाहर आए, तो सूरत बिगड़ी हुई थी। कपड़े कई जगह मसक गए थे। झल्लाकर भठियारी से बोले—वाह, अच्छी चारपाई दी! जो मेरे हाथ-पाँव टूट जाते, या सिर फूट जाता, तो कैसी होती?

भठियारी—ऐ वाह मियाँ, "उलटा चोर कोतवाल को डाटे।" एक तो छपरखट को चकनाचूर कर डाला, पट्टी के बहत्तर टुकड़े हो गए, दँगे टका और छः रुपए पर पानी फेर दिया, दूसरे हमीं को ललकारते हैं।

आज़ाद—जनाब, इन भठियारियों के मुँह न लगिए, कहीं कुछ कह बैठें, तो मुफ़्त की झेंप हो। ज़रा देख-भालकर बैठा कीजिए। कहाँ से आ रहे हैं?

हकीम—यहीं तक आया हूँ।

आज़ाद—आप आए कहाँ से हैं?

हकीम—जी, गोपामऊ मकान है।

आज़ाद—यहाँ किस ग़रज़ से आना हुआ?

हकीम—हकीम हूँ।

आज़ाद—यह कहिए, आप तबीब हैं।

हकीम—तबीब आप खुद होंगे, हम हकीम हैं।

आज़ाद—अच्छा साहब, आप हकीम ही सही; क्या यहाँ हिकमत कीजिएगा?

हकीम—और नहीं तो क्या, भाड़ झोंकने आया हूँ? या सनीचर पैरों पर सवार था? भला यह तो फ़र्माइए कि यह कैसी जगह है? लोग किस फ़ैशन के हैं? आब-हवा कैसी है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—यह न पूछिए जनाब। यहाँ के बाशिंदे पूरे घुटे हुए, आठोंगाँठ कुम्मैत हैं। और, आब-हवा तो ऐसी है कि बरसों रहिए, पर सिर में दर्द तक न हो। पाव-भर की ख़ूराक हो, तो तीन पाव खाइए। डकार तक आवे, तो मुझे सज़ा दीजिए।

यह सुनकर हकीम साहब ने मुँह बनाया, और बोले—तब तो बुरे फँसे!

आज़ाद—क्यों, बुरे क्यों फँसे? शौक़ से हिकमत कीजिए। आब-हवा अच्छी है, बीमारी का नाम नहीं।

हकीम—हज़रत, आप निरे बुद्धू हैं। एक तो आपने यह गोला मारा कि आब-हवा अच्छी है। इतना नहीं समझते कि आब-हवा अच्छी है, तो हमसे क्या वास्ता, हमे कौन पूछेगा। बस, हाथ-पर-हाथ रक्खे मक्खियाँ मारा करेंगे। हम तो ऐसे शहर जाना चाहते हैं, जहाँ हैज़े का घर हो, बुख़ार पीछा न छोड़ता हो, दस्त और पेचिश की सबको शिकायत हो, चेचक का वह ज़ोर हो कि ख़ुदा की पनाह। तब अलबत्ता हमारी हँडिया चढ़े। आपने तो वल्लाह, आते ही गोला मारा। आप फ़रमाते हैं कि यहाँ पाव-भर के बदले तीन पाव ग़िज़ा हज़म होती है। आमदनी टका नहीं और खायँ चौगुना। तो कहिए, मरे या जिए? बंदा सवेरे ही बोरिया-बँधना उठाकर चंपत होगा। ऐसी जगह मेरी बला रहे, जहाँ सब हट्टे-कट्टे ही नज़र आते हैं। भला कोई ख़ास मरज़ भी है यहाँ? या मरज़ का इस तरफ़ गुज़र ही नहीं हुआ?

आज़ाद—हज़रत, यहाँ के पानी में यह असर है कि बरसों का मरीज़ आवे, और एक क़तरा पी ले, तो बस, ख़ासा हट्टा-कट्टा हो जाय।

हकीम—पानी क्या अमृत है! तो सही, जो पानी में ज़हर न मिला दिया हो।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—जनाब, हज़ारों कुएँ और पचासों बावलियाँ हैं, किस-किस में ज़हर मिलाते फिरिएगा ?

हकीम—ख़ैर भाई, समझा जायगा ; मगर बुरे फँसे ! इस वक़्त होश ठिकाने नहीं हैं ! ओ भठियारी, ज़री हमको पंसारी की दूकान से तोला-भर सिकंजबीन तो ला देना।

भठियारी—ऐ मियाँ, पंसारी यहाँ कहाँ ? किसी फ़क़ीर की दुआ ऐसी है कि यहाँ हकीम और पंसारी जमने ही नहीं पाता। कई हकीम आए, मगर क़ब्र में हैं। कई पंसारियों ने दूकान जमाई, मगर चिता में फूँक दिए गए। यहाँ तो बीमारी ने आने की क़सम खाई है।

हकीम—भई, बड़ा निकम्मा शहर है। ख़ुदा के लिये हमें टट्टू किराया कर दो, तो रफ़ू-चक्कर हो जायँ। ऐसे शहर की ऐसी तैसी!

इन्हें धता बताकर आज़ाद सराय के दूसरे हिस्से में जा पहुँचे। क्या देखते हैं, एक बुज़ुर्ग आदमी बिस्तर जमाए बैठे हैं। आज़ाद बेतकल्लुफ़ तो थे ही, 'सलाम अलेक' कहकर पास जा बैठे। वह भी बड़े तपाक से पेश आए। हाथ मिलाया, गले मिले, मिज़ाज पूछा।

आज़ाद—आप यहाँ किस ग़रज़ से तशरीफ़ लाए हैं ?

उन्होंने जवाब दिया—जनाब, मैं वकील हूँ। यहाँ वकालत करने का इरादा है। कहिए, यहाँ की अदालत का क्या हाल है ?

आज़ाद—यह न पूछिए। यहाँ के लोग भीगी बिल्ली हैं ; लड़ना-भिड़ना जानते ही नहीं। साल-भर में दो-चार मुक़दमे शायद होते हों। चोरी-चकारी यहाँ कभी सुनने ही में नहीं आती। ज़मीन, आराज़ी, लगान, पट्टीदारी के मुक़दमे कभी सुने ही नहीं। क़र्ज़ कोई ले न दे।

वकील साहब का रंग उड़ गया। मगर हकीमजी की तरह झक्की तो थे नहीं, आहिस्ता से बोले—सुभान-अल्लाह, यहाँ के लोग बड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भले आदमी हैं। ख़ुदा उनको हमेशा नेक रास्ते पर ले जाय। मगर दिल में अफ़सोस हुआ कि इस टीम-टाम, धूम-धाम से आए, और यहाँ भी वही ढाक के तीन पात। जब मुक़दमे ही न होंगे, तो खाऊँगा क्या, दुश्मन का सिर। इन्हें भी झाँसा देकर आज़ाद आगे बढ़े, तो देखा, चारपाई बिछाए शहतूत के पेड़ के नीचे एक साहब बैठे हुक़्क़ा उड़ा रहे हैं। आज़ाद ने पूछा—आपका नाम ?

वह बोले—गुम-नाम हूँ।

आज़ाद—वतन कहाँ है ?

वह—फ़क़ीर जहाँ पड़ रहे, वहीं उसका घर।

आज़ाद—आपका पेशा क्या है ?

वह—ख़ूने-जिगर खाना।

आज़ाद—तो आप शायर हैं, यह कहिए।

आज़ाद चारपाई के एक कोने पर बैठ गए और बेतकल्लुफ़ होकर बोले—जनाब, हुक़्क़ा तो मेरे हवाले कीजिए, और आप अपना कलाम सुनाइए। शायर साहब ने बहुत कुछ चुना-चुनी के बाद दूसरे का कलाम अपना कहकर सुनाया—

> क्या हाल हो गया है दिले-बेक़रार का ;
> आज़ार हो किसी को इलाही, न प्यार का।
> मशहूर है जो रोज़े-क़यामत जहान में ;
> पहला पहर है मेरी शबे-इंतिज़ार का।
> इमसाल देखना मेरी वहशत के बलबले ;
> आया है धूमधाम से मौसम बहार का।
> राह उनकी तकते-तकते जो मुद्दत गुज़र गई ;
> आँखों को हौसला न रहा इंतिज़ार का।

आज़ाद—सुभान-अल्लाह, आपका कलाम बहुत ही पाकीज़ है। कुछ और उस्तादों के कलाम सुनाइए।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शायर—बहुत ख़ूब, सुनिए।

दाग़ दे जाते हैं जब आते हैं;
यह शिगूफ़ा नया वह लाते हैं।

आज़ाद—सुभान-अल्लाह ! दाग़ के लिये शिगूफ़ा, क्या ख़ूब!

शायर—यार तक वार कहाँ पाते हैं;
रास्ता नाप के रह जाते हैं।

आज़ाद—वाह, क्या बोलचाल है।

शायर—फिर जुनूँ दश्त न दिखलाए हमें;
आज तलवे मेरे खुजलाते हैं।

आज़ाद—वाह-वाह, क्या ज़बान है !

शायर—फूल का जाम पिला ओ साक़ी;
काँटे तालू में पड़ जाते हैं।

आज़ाद—फूल के लिये काँटे, क्या ख़ूब !

शायर—कंघी के नाम से होते हैं ख़फ़ा।
बात सुलझी हुई उलझाते हैं।

आज़ाद—बहुत ख़ूब।

शायर—अच्छा जनाब, यह तो फ़र्माइए, यहाँ के रईसों में कोई शायरी का क़दरदान भी है ?

आज़ाद—क़िब्ला, यह न पूछिए। यहाँ मारवाड़ी अलबत्ता रहते हैं। शायर या मुंशी की सूरत से नफ़रत है। यहाँ के रईसों से कुछ भी भरोसा न रखिए।

शायर—तब तो यहाँ आना ही बेकार हुआ। आख़िर, क्या एक भी रंगीन-मिज़ाज रईस नहीं है।

आज़ाद—अब आप तो मानते ही नहीं। यहाँ क़दरदाँ ख़ुदा का नाम है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्रहवाँ परिच्छेद

आज़ाद के दिल में एक दिन समाई कि आज किसी मसजिद में नमाज़ पढ़ें, जुमे का दिन है, जामे-मसजिद में खूब जमाव होगा। फ़ौरन् मसजिद में आ पहुँचे। क्या देखते हैं, बड़े-बड़े ज़ाहिद और मौलवी, क़ाज़ी और मुफ़्ती बड़े-बड़े अमामे सिर पर बाँधे नमाज़ पढ़ने चले आ रहे हैं; अभी नमाज़ शुरू होने में देर है, इसलिये इधर-उधर की बातें करके वक़्त काट रहे हैं। दो आदमी एक दरख़्त के नीचे बैठे जिन्न और चुड़ैल की बातें कर रहे हैं। एक साहब नवजवान हैं, मोटे-ताज़े; दूसरे साहब बुड्ढे हैं, दुबले-पतले।

बुड्ढे—तुम तो दिमाग़ के कीड़े चाट गए। बड़े बक्की हो। लाखों दफ़े समझाया कि यह सब ढकोसला है, मगर तुम्हें तो कच्चे घड़े की चढ़ी है, तुम कब सुननेवाले हो।

जवान—आप बुड्ढे हो गए, मगर बच्चों की-सी बातें करते हैं। अरे साहब, बड़े-बड़े आलिम, बड़े-बड़े माहिर भूतों के क़ायल हैं। बुढ़ापे में आपकी अक़्ल भी सठिया गई!

बुड्ढे—अगर आप भूत-प्रेत दिखा दें, तो टाँग के रास्ते निकल जाऊँ। मेरी इतनी उम्र हुई, कभी किसी भूत की सूरत न देखी। आप अभी कल के लौंडे हैं, आपने कहाँ देख ली?

जवान—रोज़ ही देखते हैं जनाब। कौन-सा ऐसा मुहल्ला है, जहाँ भूत और चुड़ैल न हों? अभी परसों की बात है, मेरे एक दोस्त ने आधी रात के वक़्त दीवार पर एक चुड़ैल देखी। बाल-बाल मोती पिरोए हुए, चोटी कमर तक लटकती हुई, ऐसी हसीन कि परियाँ झख मारें। वह सन्नाटा मारे पड़े रहे, मिनके तक नहीं। मगर आप कहते हैं, झूठ है।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुड्ढे—जी हाँ, झूठ है—सरासर झूठ। हमारा ख़याल वह बला है, जो सूरत बना दे, चला-फिरा दे, बातें करते सुना दे। आप क्या जानें, अभी जुमा-जुमा आठ दिन की तो पैदाइश है। और मियाँ, करोड़ बातों की एक बात तो यह है कि मैं बिना देखे न पतियाऊँगा। लोग बात का बतंगड़ और सुई का भाला बना देते हैं। एक सही, तो निन्यानवे झूठ। और आप ऐसे ढुलमुल-यक़ीन आदमियों का तो ठिकाना ही नहीं। जो सुना, फ़ौरन् मान लिया। रात को दरख़्त की फुनगी पर बंदर देखा, और थरथराने लगे कि प्रेत झाँक रहा है। बोले, और गला दबोचा। हिले, और शामत आई। अँधेरे-घुप में तो यों ही इंसान का जी घबराता है। जो भूत-प्रेत का ख़याल जम गया, तो सारी चौकड़ी भूल गए। हाथ-पाँव सब फूल गए। बिल्ली ने म्याऊँ किया, और जान निकल गई। चूहे की खड़बड़ सुनी, और बिल ढूँढ़ने लगे। अब जो चीज़ सामने आवेगी, प्रेत बन जायगी। यहाँ सब पापड़ बेल चुके हैं। कई जिन्न हमने उतारे, कई चुड़ैलों से हमने महल्ले ख़ाली कराए। जहाँ दस जूते खोपड़ी पर जमाए, और प्रेत ने बक़चा सँभाला। यों गप उड़ाने को कहिए, तो हम भी बेपर की उड़ाने लगें। याद रक्खो, ये ओझे-सयाने सब रँगे-सियार हैं। रोटी कमा खाने के लटके हैं। बंदर न नचाए, मुर्ग़ न लड़ाए, पतंग न उड़ाए, भूत-प्रेत ही झाड़ने लगे।

जवान—ख़ैर, इस तू-तू मैं-मैं से क्या वास्ता? चलिए हमारे साथ। कोई दो-तीन कोस के फ़ासले पर एक गाँव है, वहाँ एक साहब रहते हैं। अगर आपकी खोपड़ी पर उनके अमल से भूत न चढ़ बैठे, तो मूँछ मुड़वा डालूँ। कहिएगा, शरीफ़ नहीं, चमार है। बस, अब चलिए, आपने तो जहाँ ज़रा-सी चढ़ाई और कहने लगे कि पीर, पयंबर, देवी, देवता, भूत-प्रेत सब ढकोसला हैं। लेकिन आज ठीक बनाए जाइएगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कहकर दोनों उस गाँव की तरफ़ चले। मियाँ आज़ाद तो दुनिया-भर के बेफ़िक्रे थे ही, शौक़ चर्राया कि चलो, सैर देख आओ। यह भी पुराने ख़यालों के जानी दुश्मन थे। कहाँ तो नमाज़ पढ़ने मसजिद आए थे, कहाँ छू-छक्का देखने का शौक़ हुआ; मसजिद को दूर ही से सलाम किया, और सीधे सराय चले। अरे कोई इक्का किराए का होगा? अरे मियाँ, कोई भठियारा इक्का भाड़े करेगा?

भठियारा—जी हाँ, कहाँ जाइएगा?

आज़ाद—सकजमलदीपुर।

भठियारा—क्या दीजिएगा?

आज़ाद—पहले घोड़ा-इक्का तो देखें—'वर घोड़ा नख़ास मोल!'

भठियारा—वह क्या कमानीदार इक्का खड़ा है, और यह सुरंग घोड़ी है, हवा से बातें करती जाती है; बैठे और दन-से पहुँचे।

इक्का तैयार हुआ। आज़ाद चले, तो रास्ते में एक साहब से पूछा—क्यों साहब, इस गाँव को सकजमलदीपुर क्यों कहते हैं? कुछ अजीब बेढंगा-सा नाम है। उसने कहा—इसका बड़ा क़िस्सा है। एक साहब शेख़ जमालुद्दीन थे। उन्होंने गाँव बसाया, और इसका नाम रक्खा शेख़जमालुद्दीनपुरा। गँवार आदमी क्या जानें, उन्होंने शेख़ का सक, जमाल का जमल और उद्दीन का दी बना दिया।

इक्केवाले से बातें होने लगीं। इक्केवाला बोला—हुज़ूर, अब रोज़गार कहाँ। सुबह से शाम तक जो मिला, खा-पी बराबर। एक रुपया जानवर खा गया, दस-बारह आने घर के ख़र्च में आए, आने-दो आने सुलफ़े-तमाखू में उड़ गए। फिर मोची-के-मोची। महाजन के पचीस रुपए छः महीने से बेबाक न हुए। जो कहीं कच्ची में चार-पाँच कोस ले गए, तो पुट्ठियाँ धँस गईं, पैंजनी, हाल,

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धुरा, सब निकल गया। दो-चार रुपए के मत्थे गई। रोज़गार तो तुम्हारी सलामती से तब हो, जब यह रेल उड़ जाय। देखिए, आप ही ने सात गंडे जमलदीपुर के दिए, मगर तीन चक्कर लगाकर।

कोई पौने दो घंटे में आज़ाद सकजमलदीपुर पहुँचे। पता-वता तो इनको मालूम था ही, सीधे शाह साहब के मकान पर जा पहुँचे। ठट-के-ठट आदमी जमा थे। औरत-मर्द टूटे पड़ते थे। एक आदमी से उन्होंने पूछा—क्या आज यहाँ कोई मेला है? उसने कहा—मेला-वेला नाहीं, एक मनई के मूड़ पर देबी आई हैं, तौन मेहरारू, मनसेधू सब देखै आवत हैं। इसी झुंड में आज़ाद को वह बूढ़े मियाँ भी मिल गए, जो भूत-चुड़ैल को ढकोसला कहा करते थे। अकेले एक तरफ़ ले जाकर कहा—जनाब, मैंने मसजिद में आपकी बातें सुनी थीं। क़सम खाता हूँ जो कभी भूत-प्रेत का क़ायल हुआ हूँ। अब ऐसी कुछ तदबीर करनी चाहिए कि इन शाह साहब की क़लई खुल जाय।

इतने में शाह साहब नीले रँग का तहमद बाँधे, लंबे-लंबे बालों में हिना का तेल डाले, माँग निकाले, खड़ाऊँ पहने तशरीफ़ लाए। आँखों में तेज भरा हुआ था। जिसकी तरफ़ नज़र भर कर देखा, वही काँप उठा। किसी ने क़दम लिए, किसी ने झुककर सलाम किया। शाह साहब ने गुल मचाना शुरू किया—धूनी मेरी जलती है, जलती है और बलती है, धूनी मेरी जलती है। खड़ी मूँछोंवाला है, लंबे गेसूवाला है, मेरा दरजा आला है। झूम-झूमकर जब उन्होंने यह आवाज़ लगाई, तो सब लोग सन्नाटे में आ गए। एकाएक आपने अकड़कर कहा—किसी को दावा हो, तो आकर मुझसे कुश्ती लड़े। हाथी को टक्कर दूँ, तो चिग्घाड़कर भागे; कौन आता है?

अब सुनिए, पहले से एक आदमी को सिखा-पढ़ा रक्खा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह तो सधा हुआ था हीं, झट सामने आकर खड़ा हो गया, और बोला—हम लड़ेंगे। बड़ा काड़ियल जवान था ; गैंडे की-सी गरदन, शेर का-सा सीना; मगर शाह साहब की तो हवा बँधी हुई थी। लोग उस पहलवान की हालत पर अफ़सोस करते थे कि बेचारा है; शाह साहब चुटकियों में चुर्र-मुर्र कर डालेंगे।

ख़ैर, दोनों आमने-सामने आए, और शाह साहब ने गरदन पकड़ते ही इतनी ज़ोर से पटका कि वह बेहोश हो गया। आज़ाद ने बूढ़े मियाँ से कहा—जनाब, यह मिली भगत है। इसी तरह गँवार लोग मूड़े जाते हैं। मैं ऐसे मक्कारों की क़ब्र तक से वाक़िफ़ हूँ। ये बातें हो ही रही थीं कि शाह साहब ने फिर अकड़ते हुए आवाज़ लगाई—कोई और ज़ोर लगावेगा ? मियाँ आज़ाद ने आव देखा न ताव, झट लँगोट बाँध, चट-से कूद पड़े। आओ उस्ताद, एक पकड़ हमसे भी हो जाय। तब तो शाह साहब चकराए कि यह अच्छे बिगड़े-दिल मिले। पूछा—आप अँगरेज़ी पढ़े हैं ? आज़ाद ने कड़ककर कहा—अँगरेज़ी नहीं, अँगरेज़ी का बाप पढ़ा हूँ। बस, अब सँभलिए, मैं आ गया। यह कहकर, घुटना टेक कलाज़ंग के पेच पर मारा, तो शाह साहब चारों ख़ाने चित्त ज़मीन पर धम-से गिरे। इनका गिरना था कि मियाँ आज़ाद छाती पर चढ़ बैठे। अब बताओ बचा, काट लूँ नाक, कतर लूँ कान, बाँधूँ दुम में नमदा ! बदमाश कहीं का ! बूढ़े मियाँ ने झपटकर आज़ाद को गोद में उठा लिया। वाह उस्ताद, क्यों न हो ! शाह साहब उसी दिन गाँव छोड़कर भागे।

शाह साहब को पटकनी देकर और गाँव के ढुलमुल यक़ीन गँवारों को समझा-बुझाकर आज़ाद बूढ़े मियाँ के साथ-साथ शहर की तरफ़ चल खड़े हुए। रास्ते में उन्हीं शाह साहब की बातें होने लगीं—

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—क्यों, सच कहिएगा, कैसा अड़ंगा दिया ? बहुत बिलबिला रहे थे। यहाँ उस्तादों की आँखें देखी हैं। पोर-पोर में पेंचैती कूट-कूटकर भरी है। एक-एक पेंच के दो-दो सौ तोड़ याद हैं। मैं तो उसे देखते ही भाँप गया कि यह बना हुआ है। लड़ंतिए का तो कैंडा ही उसका न था। गरदन मोटी नहीं, छाती चौड़ा नहीं, बदन कटा-पिटा नहीं, कान टूटे नहीं। ताड़ गया कि घामड़ है। गरदन पकड़ते ही दबा बैठा।

बूढ़े मियाँ—अब इस गाँव में भूलकर भी न आवेगा। एक मर्तबा का ज़िक्र सुनिए, एक बने हुए सिद्ध पलथी मारकर बैठे, और लगे अकड़ने कि कोई छिपाकर हाथ में फूल ले, हम चुटकियों में बता देंगे। मेरे बदन में आग लग गई। मैंने कहा—अच्छा, मैंने फूल लिया, आप बतलाइए तो सही। पहले तो आँखें नीली-पीली करके मुझे डराने लगे। मैंने कहा—हज़रत, मैं इन गीदड़-भभकियों में नहीं आने का। यह पुतलियों का तमाशा किसी नादान को दिखाओ। बस, बताओ, मेरे हाथ में क्या है ? थोड़ी देर तक सोच-साचकर बोले—पीला फूल है। मैंने कहा—बिलकुल झूठ। तब तो घबराए, और कहने लगे—मुझे धोखा हुआ। पीला नहीं, हरा फूल है। मैंने कहा—वाह भई लालबुझक्कड़, क्यों न हो ! हरा फूल आज तक देखा न सुना, यह नया गुल खिला। मेरा यह कहना था कि उनका गुलाब-सा चेहरा कुम्हला गया। कोई उस वक़्त उनकी बेकली देखता। मैं जामे में फूला न समाता था। आख़िर, इतने शरमिंदा हुए कि वहाँ से पत्तातोड़ भागे। हम ये सब खेल खेले हुए हैं।

आज़ाद—ऐसे ही एक शाह साहब को मैंने भी ठीक किया था। एक दोस्त के घर गया, तो क्या देखता हूँ कि एक फ़क़ीर साहब शान से बैठे हुए हैं, और अच्छे-अच्छे पढ़े-लिखे आदमी उन्हें घेरे खड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। मैंने पूछा—आपकी तारीफ़ कीजिए, तो एक साहब ने, जो उस पर ईमान ला चुके थे, दबे दाँतों कहा—शाह साहब ग़ैबदाँ (त्रिकालदर्शी) हैं। आपके कमालों के झंडे गड़े हुए हैं। दस-पाँच ने तो उन्हें आसमान ही पर चढ़ा दिया। मैंने दिल में कहा—बचा, तुम्हारी ख़बर न ली, तो कुछ न किया। पूछा, क्यों शाहजी, यह तो बताइए, हमारे घर में लड़का कब तक होगा? शाहजी समझे, यह भी निरे चोंगा ही हैं। चलो, अनाप-शनाप बताकर उल्लू बनाओ, और कुछ ले मरो। मेरे बाप-दादे और उनके बाप के परदादे का नाम पूछा। यहाँ याद का यह हाल है कि बाप का नाम तो याद रहता है, दादाजान का नाम किस गधे को याद हो। मगर ख़ैर, जो ज़बान पर आया, ऊल-जलूल बता दिया। तब फ़र्माते क्या हैं, बच्चा, दो महीने के अंदर-ही-अंदर बेटा ले। मैंने कहा—हैं शाह साहब, ज़रा सँभले हुए। अब तो कहा, अब न कहिएगा। पंद्रह दिन तो बंदे की शादी को हुए, और आप फ़र्माते हैं कि दो महीने के अंदर-ही-अंदर लड़का ले। वल्लाह, दूसरा कहता, तो खून पी लेता। इस फ़िक़रे पर यार लोग खिलखिला-कर हँस पड़े, और शाहजी के हवास ग़ायब हो गए। दिल में तो करोड़ों ही गालियाँ दी होंगी, मगर मेरे सामने एक न चली। जनाब, उस दयार में लोग उन्हें खुदा समझते थे। शाहजी कभी रुपए बरसाते थे, कभी बेफ़स्ल के मेवे मँगवाते थे, कभी घड़े को चकनाचूर करके फिर जोड़ देते थे। सैकड़ों ही अलसेटें याद थीं। मेरा जवाब सुना, तो हक्का-बक्का हो गए। ऐसे भागे कि पीछे फिरकर भी न देखा। जहाँ मैं हूँ, भला किसी सिद्ध या शाहजी का रंग तो जम जाय।

यही बातें करते हुए लोग फिर अपने-अपने घर सिधारे।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अट्ठारहवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद एक दिन चले जाते थे, तो देखते क्या हैं, एक चौराहे के नुक्कड़ पर भंगवाले की दूकान है, और उस पर उनके एक लँगोटिए यार बैठे डींग की ले रहे हैं—हमने जो ख़र्च कर डाला, वह किसी को पैदा करना भी नसीब न हुआ होगा, लाखों कमाए, करोड़ों लुटाए, किसी के देने में, न लेने में। आज़ाद ने झुककर कान में कहा—वाह भई उस्ताद, क्यों न हो, अच्छी लंतरानियाँ हैं। बाबा तो आपके उम्र-भर बर्फ़ बेचा किए, और दादा जूते की दूकान रखते-रखते बूढ़े हुए। आपने कमाया क्या, लुटाया क्या? याद है, एक दफ़े साढ़े छः रुपए की मुहर्रिरी पाई, मगर उससे भी निकाले गए। उसने कहा—आप भी निरे गावदी हैं। अरे मियाँ, अब गप उड़ाने से भी गए? भंगवाले की दूकान पर गप न मारूँ, तो और कहाँ जाऊँ? फिर इतना तो समझो कि यहाँ हमको जानता कौन है। मियाँ आज़ाद तो एक सैलानी आदमी थे ही, एक तिपाई पर टिक गए। देखते क्या हैं, एक दरख़्त के तले सिरकी का छप्पर पड़ा है, एक तख़्त बिछा है, भंगवाला सिल पर रगड़ लगा रहा है। लगे रगड़ा, मिटे झगड़ा। दो-चार बिगड़े-दिल बैठे गुल मचा रहे हैं—दाता तेरी दूकान पर हुन बरसे, ऐसा चकाचक पिला, जिसमें जूती खड़ी हो। थोड़ा-सा धतूरा भी गड़बड़ हो, जिसमें खूब रंग जमे। इतने में मियाँ आज़ाद के दोस्त बोल उठे—उस्ताद, आज तो दूधिया बनाओ। पीते ही ले उड़ें। चुल्लू में उल्लू हो जायँ। दूकानवाले ने उन्हें मीठी केवड़े से बसी हुई भंग पिलवाई। आप पी चुके, तो अपने दोस्त हरभज को भंग का एक गोला खिलाया, और फिर वहाँ से सैर करने चले। इन्हें मुटापे के सबब से लोग भदभद कहा करते थे। चलते-चलते हरभज ने पूछा—क्यों यार, यह कौन मुहल्ला है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भदभद—चीनीबाज़ार ।

हरभज—वाह, कहीं हो न, यह चिनियाबाज़ार है ।

भदभद—चिनियाबाज़ार कैसा, चीनीबाज़ार क्यों नहीं कहते ।

हरभज—हम गली-गली, कूचे-कूचे से वाक़िफ़ हैं, आप हमें रास्ता बताते हैं ? चिनियाबाज़ार तो दुनिया कहती है, आप कहने लगे, चीनीबाज़ार है ।

भदभद—अच्छा तो ख़बरदार, मेरे सामने अब चिनियाबाज़ार न कहिएगा ।

हरभज—अच्छा किसी तीसरे आदमी से पूछो ।

आज़ाद ने दोनों को समझाया—क्यों लड़े मरते हो ? मगर सुनता कौन था । सामने से एक आदमी चला आता था । आज़ाद ने बढ़कर पूछा—भई, यह कौन मुहल्ला है ? उसने कहा—चिनियाबाज़ार । अब हरभज और भदभद ने उसे दिक़ करना शुरू किया । चीनीबाज़ार है कि चिनियाबाज़ार, यही पूछते हुए आध कोस तक उसके साथ गए । उस बेचारे को इन झगड़ों से पीछा छुड़ाना मुशकिल हो गया । बार-बार कहता था कि भई, दोनों सही हैं । मगर ये एक न सुनते थे । जब सुनते-सुनते उसके कान पक गए, तो वह बेचारा चुपके-से एक गली में चला गया ।

तीनों आदमी फिर आगे चले । मगर वह मसला हल न हुआ । दोनों एक दूसरे को बुरा-भला कहते थे ; पर दो में से एक को भी यह तसकीन न होती थी कि चिनियाबाज़ार और चीनीबाज़ार में ऐसा कौन-सा बड़ा फ़र्क़ है ।

हरभज—जानते भी हो, इसका नाम चिनियाबाज़ार क्यों पड़ा ?

भदभद—जानता क्यों नहीं । पहले यहाँ दिसावर से चीनी आकर बिका करती थी ।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरभज—तुम्हारा सिर ! यहाँ चीन के लोग आकर आबाद हो गए थे, जभी से यह नाम पड़ा।

भदभद—गावदी हो !

इस पर दोनों गुथ गए। इसने उसको पटका, उसने इसको पटका। भदभद मोटे थे, खूब पिटे।

आज़ाद ने उन दोनों को यहीं छोड़ा, और खुद घूमते-घामते जौहरीबाज़ार की तरफ़ जा निकले। देखा, एक लड़का झुका हुआ कुछ लिख रहा है। आज़ाद ने लिफ़ाफ़ा दूर से देखते ही ख़त का मज़मून भाँप लिया। पूछा—क्यों भई, इस गाँव का क्या नाम है?

लड़का—दिन को रतौंधी तो नहीं होती? यह गाँव है या शहर?

आज़ाद—हाँ, हाँ, वही शहर। मैं मुसाफ़िर हूँ, सराय का पता बता दीजिए।

लड़का—सराय किसलिये जाइएगा? क्या किसी भठियारी से रिश्तेदारी है?

आज़ाद—क्यों साहब, मुसाफ़िरों से भी दिल्लगी! हम तरजुमा करते हैं। ख़त हो, अर्ज़ी हो, दरख़्वास्त हो, उसका वह तरजुमा कर दें कि पढ़नेवाला दंग रह जाय।

लड़का—तब तो जनाब, आप बड़े काम के आदमी हैं। तो हमारी इस अर्ज़ी का तरजुमा कर दो। एक चवन्नी दूँगा।

आज़ाद—ख़ैर, लाइए, बोहनी कर लूँ। अर्ज़ी पढ़िए।

लड़का—आप ही पढ़ लीजिए।

आज़ाद—(अर्ज़ी पढ़कर) सुभान-अल्लाह, यह अर्ज़ी है या घर का दुखड़ा। भला तुम्हारे कितने लड़के-लड़कियाँ होंगी?

लड़का—अजी, अभी यहाँ तो शादी ही नहीं हुई।

आज़ाद—तो फिर यह क्या लिख मारा कि सारे कुनबे का बार मेरे सिर है। और, नौकरी भी क्या माँगते हो कि ज़माने-भर का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूड़ा साफ़ करना पड़े ! लड़का हुआ और बंपुलीस झाँकने लगे; कभी भंगियों से तक़रार हो रही है, कभी भंगिनों से चख़ चल रही है। अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है, पढ़ो-लिखो, जमकर मेहनत करो, नौकरी की तुम्हें क्या फ़िक्र है ?

लड़का—आप अर्ज़ी लिखते हैं कि सलाह बताते हैं ? मैं तो आपसे सलाह नहीं पूछता।

आज़ाद—मियाँ, पढ़ने-लिखने का यह मतलब नहीं है कि नौकरी ही करे। और नहीं, तो बंपुलीस का दारोग़ा ही सही। ख़ासे जौहरी बने हो, ऐसी कौन-सी मुसीबत आ पड़ी है कि इस नौकरी पर जान देते हो ?

इतने में एक लाला साहब क़लमदान लिए, ऐनक लगाए, आकर बैठ गए।

आज़ाद—कहिए, आपको भी कुछ तरजुमा कराना है ?

लाला—जी हाँ, इस अर्ज़ी का तरजुमा कर दीजिए। मेरे बुढ़ापे पर तरस खाइए।

आज़ाद—अच्छा, अपनी अर्ज़ी पढ़िए।

लाला—सुनिए—

"ग़रीबपरवर सलामत,

अपना क्या हाल कहूँ, कोई दो दर्ज़न तो बाल-बच्चे हैं। आख़िर, उन्हें सेर-सेर-भर आटा चाहिए या नहीं। जोड़िए, कितना हुआ। और जो यह कहिए कि सेर-भर कोई लड़का नहीं खा सकता; तो जनाब, मेरे लड़के बच्चे नहीं हैं, कई-कई बच्चों के बाप हैं। इस हिसाब से ८०) का तो आटा ही हुआ। १०) की दाल रखिए। बस, मैं और कुछ नहीं चाहता। मगर जो यह कहिए कि इससे कम में गुज़र करूँ, तो जनाब, यह मेरे किए न होगा। रोटियों में ख़ुदा का भी साझा नहीं।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मेरी लियाक़त का आदमी इस दुनिया में तो आपको मिलेगा नहीं, हाँ, शायद उस दुनिया में मिल जाय। बच्चे मैं खेला सकता हूँ, बाज़ार से सौदे ला सकता हूँ। बनिए के कान कतर लूँ, तो सही। क़िस्से-कहानियों का तो मैं ख़ज़ाना हूँ। नित्य नई कहानियाँ कहूँ। मौक़ा आ पड़े, तो जूते साफ़ कर सकता हूँ; मेम साहब और बाबा लोगों को गाकर खुश कर सकता हूँ। ग़रज़ हरफ़न-मौला हूँ। पढ़ा-लिखा भी हूँ। बदनसीबी से मिडिल-पास तो नहीं हूँ, लेकिन अपने दस्तख़त कर लेता हूँ। जी चाहे, इम्तिहान ले लीजिए।

"अब रही ख़ानदान की बात। तो जनाब, कमतरीन के बुज़ुर्ग हमेशा बड़े-बड़े ओहदों पर रहे। मेरे बड़े भाई की बीवी जिसे फूफी कहते हैं, और जिससे मज़ाक़ का भी रिश्ता है, उसके बाप के ससुर के चचेरे भाई नहर के मोहकमे में २०) महीने पर दारोग़ा थे। मेरे बाबाजान म्युनिसिपलिटी में सफ़ाई के जमादार थे, और १०) महीना मुशाहरा पाते थे। चूँकि सरकार का हुक्म है कि अच्छे ख़ानदान के लोगों की परवरिश की जाय, इसलिये दो-एक बुज़ुर्गों का ज़िक्र कर दिया। वरना यहाँ तो सभी ओहदेदार थे। कहाँ तक गिनाऊँ।

"अब तो अर्ज़ी में और कुछ लिखना नहीं बाक़ी रहा। अपनी ग़रीबी का ज़िक्र कर ही दिया। लियाक़त की भी कुछ थोड़ी-सी चर्चा कर दी, और अपने ख़ानदान का भी कुछ ज़िक्र कर दिया।

"अब अर्ज़ है कि हुज़ूर, जो हमारे आक़ा हैं, मेरी परवरिश करें। अगर मुझ पर हुज़ूर की निगाह न हुई, तो मजबूर होकर मुझे अपने बाल-बच्चों को मिर्च के टापू को भरती कराना पड़ेगा।"

मियाँ आज़ाद ने जो यह अर्ज़ी सुनी, तो लोटने लगे। इतना हँसे कि पेट में बल पड़-पड़ गए। जब ज़रा हँसी कम हुई, तो पूछा— लाला साहब, इतना और बता दीजिए कि आप हैं कौन ठाकुर?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाला—जी, बंदा तो अगिनहोत्री है।

आज़ाद—तो फिर आपके शरीफ़-ख़ानदान होने में क्या शक है। मियाँ आदमी बनो। जाकर बाप-दादों का पेशा करो। भाड़ झोकने में जो आराम है, वह गुलामी करने में नहीं। मुझसे आपकी अर्ज़ी का तरजुमा न होगा।

उन्नीसवाँ परिच्छेद

एक दिन मियाँ आज़ाद साँड़नी पर सवार हो घूमने निकले, तो एक थिएटर में जा पहुँचे। सैलानी आदमी तो थे ही, थिएटर देखने लगे, तो वक़्त का ख़याल ही न रहा। थिएटर बंद हुआ, तो बारह बज गए थे। घर पहुँचना मुशकिल था। सोचे, आज रात को सराय ही में पड़ रहें। सोए, तो घोड़े बेचकर। भठियारी ने आकर जगाया—अजी उठो, आज तो जैसे घोड़े बेचकर सोए हो। ऐ लो, वह आठ का गजर बजा। अँगड़ाइयों-पर-अँगड़ाइयाँ ले रहे हैं, मगर उठने का नाम नहीं लेते।

एक चंडूबाज़ भी बैठे हुए थे। बोले—तो तुमको क्या पड़ी है? सोने नहीं देतीं। क्या जाने, किस मौज में पड़े हैं। लहरी आदमी तो हुई हैं। मगर सच कहना, कैसा धावत सैलानी है। दूसरा इतना घूमे तो हलकान हो जाय। और जो जगाना ही मंज़ूर है, तो लोटे की टोंटी से ज़रा-सा पानी कान में छोड़ दो। देखो, कैसे कुलबुलाकर उठ बैठते हैं।

भठियारी ने चुल्लू से मुँह पर छींटे देने शुरू किए। दस-ही-पाँच बूँदें गिरी थीं कि आज़ाद हायँ-हायँ करते उठ खड़े हुए, और बोले—यह क्या दिल्लगी है! कैसी मीठी नींद सो रहा था, लेके जगा दिया!

भठियारी—इतनी रात तक कहाँ घूमते रहे कि अभी नींद ही नहीं पूरी हुई।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—कहीं नहीं, ज़रा थिएटर देखने लगा था।

चंडूबाज़—सुना, तमाशा बहुत अच्छा होता है। आज हमें भी दिखा देना। भई, तुम्हारी बदौलत थिएटर तो देख लें। कै बजे शुरू होता है?

आज़ाद—यही, कोई नौ बजे।

चंडूबाज़—तो फिर मैं चल चुका। नौ बजे शुरू हो, बारह बजे ख़त्म हो। कहीं एक बजे घर पहुँचें। मुहल्ले-भर में आग ढूँढ़ें, हुक़्क़ा भरें, तवा जमावें, घंटा-भर गुड़गुड़ावें। पलँग पर जायँ, तो नींद उचाट। करवटों पर करवटें लें, तब कहीं चार बजते-बजते आँख लगे। फिर जो भलेमानुस चार बजे सोवे, वह दोपहर तक उठने का नाम न लेगा। लीजिए, दिन यों गया। रात यों गई। अब इंसान चंडू कब पिए, दास्तान कब सुने, पीनक के मज़े कब उड़ावे? कौन जाय? क्या गुलाबो-शिताबो के तमाशे से अच्छा होता होगा? रीछवाले ही का तमाशा न देखे? मियाँ ऐंठासिंह के मज़े न उड़ावे, बकरी पर तने बैठे हैं, छींक पड़ी और खट-से फुँदनीदार टोपी अलग। भई, कोई बेधा हो, जो वहाँ जाय। और फिर रुपए किसके घर से आवें? जब से अफ़ीम सोलह रुपए सेर हो गई, तब से तो ग़रीबों का और भी दिवाला निकल गया। और चंडू के ठेकों ने तो सत्यानास ही कर दिया। सैलानी तो शहर का चूहा-चूहा है, मगर टिकट का नाम न हो। और भई, साफ़ तो यों है कि हम लोग मुफ़्त के तमाशा देखनेवालों में से हैं। मेला-ठेला तो कोई छूटने ही नहीं पाता। सावन-भर ऐशबाग़ के मेले न छोड़े; कभी इमलियों में झूल रहे हैं, कभी बंदरों की सैर देख रहे हैं। बहुत किया, तो एक गंडे के पौंडे लिए। दो पैसे बढ़ाए, और साक़िन की दूकान पर दम लगाया। चलिए, पाँच-छः पैसे में मेला हो गया। सबसे बड़ी मुसीबत तो यह है कि वहाँ नादिरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुक्म है कि कोई धुआँ न उड़ावे, नहीं तो हम सोचे थे कि चंडू का सामान लेते चलेंगे, और मज़े से किसी कोने में लेटे हुए उड़ाते जायँगे। इसमें किसी के बाप का क्या इजारा।

भठियारिन—भई, टिकट माफ़ हो जाय, तो मैं भी चलूँ।

आज़ाद—उनको क्या पड़ी है भला, जो बंबई से अंगड़-खंगड़ लेकर इतनी दूर बेगार भुगतने आवें। वही बेठिकाने बात कहती हो, जिसके सिर न पैर।

चंडूबाज़—अच्छा, तो तुम्हारी ख़ातिर ही सही। तुम भी क्या याद करोगी। एक दिन हम भी चवन्नी गलावेंगे। तमाशा होता कहाँ है?

आज़ाद—यही छतरमंज़िल में, दस क़दम पर।

चंडूबाज़—दस क़दम की एक ही कही। तुम्हारी तरह यहाँ किसी के पाँव में सनीचर तो है नहीं। सात बजे से चलना शुरू करें, तो दस बजे पहुँचें। बग्घी किराए पर करें, तो एक रुपया आने का और एक रुपया जाने का और ठुक जाय। 'मुफ़लिसी में आटा गीला।'

आज़ाद—अजी मेरी साँड़नी पर बैठ लेना।

भठियारिन—मुझे भी उसी पर बिठा लेना। रात का वक़्त है, कौन देखता है।

शाम हुई, तो मियाँ आज़ाद ने साँड़नी कसी, और सराय से चले। भठियारी भी पीछे बैठ गई। मगर चंडूबाज़ ने साँड़नी की सूरत देखी, तो बैठने की हिम्मत न पड़ी। जब साँड़नी ने तेज़ चलना शुरू किया, तो भठियारी बोली—इस मुई सवारी पर ख़ुदा की सँवार! अल्लाह की क़सम, मारे हचकोलों के नाक में दम आ गया। आज़ाद को शरारत सूझी, तो एक एड़ लगाई। वह और भी तेज़ हुई। तब तो भठियारी आग-भभूका हो गई—यह दिल्लगी

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहने दीजिए ; मुझे भी कोई और समझे हो ? मैं लाखों सुनाऊँगी ले बस, सीधी तरह चलना हो, तो चलो; नहीं मैं चीख़ती हूँ। पे का पानी तक हिल गया। ऐसी सवारी को आग लगे। मियाँ आज़ाद ने ज़रा लगाम को खींचा, तो साँड़नी बलबलाने लगी। बी भठियारी तो समझीं कि अब जान गई। देखो, यह छेड़-छाड़ अच्छी नहीं। हमें उतार ही दो। लो, और सुनो, ज़रा-से हचकों में मुँह के बल आ रहूँ, तो चकनाचूर ही हो जाऊँ। तुम मुसंडों को इसका क्या डर। रोको, रोको, रोको। हाय, मेरे अल्लाह, मैं किस बला में फँस गई ! मियाँ, अपने ख़ुदा से डरो, बस, हमें उतार ही दो। इत्तफ़ाक़ से साँड़नी एक दरख़्त की परछाहीं देखकर ऐसी भड़की कि दस क़दम पीछे हट आई। उसका बिचकना था कि बी भठियारी धम-से ज़मीन पर गिर पड़ीं। ख़ुदा की मार, वह तो कहो, पक्की सड़क न थी, नहीं तो हड्डी-पसली चूर-चूर हो जाती।

चंडूबाज़—शाबाश है तेरी मा को, पटकनी भी खाई, मगर वही तेवर। दूसरी हयादार होती, तो लाख बरस तक सवार होने का नाम न लेती। सवारी क्या है, जनाज़ा है।

भठियारी—चलिए, आपकी जूती की नोक से। हम बेहया ही सही। क्या झाँसे देने आए हैं, जिसमें मैं उतर पड़ूँ, और आप मज़े से जम जायँ। मुँह धो रखिए, हमने कच्ची गोलियाँ नहीं खेली हैं।

मगर इस झमेले में इतनी देर हो गई कि जब थिएटर पहुँचे, तो तमाशा ख़त्म हो गया था। तमाशाई लोग बाहर निकल रहे थे।

आज़ाद—लीजिए, सारा मज़ा किरकिरा हो गया। इसी से मैं तुम लोगों को साथ न ले आता था।

चंडूबाज़—औरतों को तो मेले-ठेले में ले ही न जाना चाहिए। हमेशा अलसेट होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भठियारी—जी हाँ, और क्या। मेले-ठेले तो आप-जैसे खुर्राटों ही के लिये होते हैं।

आज़ाद तमाशाइयों की बातें सुनने लगे—

१—यार, इनके पास सामान तो खूब लैस है।

२—वाह, क्या कहना, परदे तो ऐसे देखे न सुने। बस, यहीं यक़ीन होता है कि बारहदरी का फाटक है या परीख़ाना। जंगल का सामान दिखाया, तो वही बेल-बूटे, वही दूब, वही पेड़, वही झाड़ियाँ, बस, बिलकुल सुंदर-बन मालूम होता है।

३—और सब्ज़परी की तारीफ़ ही न करोगे?

४—हज़रत, वह कहीं लखनऊ में छः महीने भी तालीम पावे, तो फिर आफ़त ही ढावे। लाखों लूट ले जाय, लाखों।

दूसरी तरफ़ गए, तो दो आदमी और ही तरह की बातें कर रहे थे—

१—अजी, धोखा है, धोखा और कुछ नहीं।

२—हाँ, टन-टन की आवाज़ तो आती है, बाक़ी ख़ैर-सल्लाह।

अब आज़ाद यहाँ बैठकर क्या करते। सोचे, आओ, साँड़नी पर बैठें और चलकर सराय में मीठी नींद के मज़े लें। मगर बाहर आकर देखते हैं, तो साँड़नी ग़ायब। थिएटर के अहाते में एक दरख़्त से बाँध दिया था। मालूम नहीं, तुड़ाकर भागी या कोई चुरा ले गया। बहुत देर तक इधर-उधर ढूँढ़ा किए, मगर साँड़नी का पता न लगा। उधर और सवारियाँ भी तमाशाइयों को ले-लेकर चली गईं। तब आज़ाद ने भठियारी से कहा—अब तो पाँव-पाँव चलने की ठहरेगी।

भठियारी—ना साहब, मुझसे पाँव-पाँव न चला जायगा।

चंडूबाज़—देखिए, कहीं कोई सवारी मिले, तो ले आइए। यह बेचारी पाँव-पाँव कहाँ तक चलेंगी?

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—तो तुम्हीं क्यों नहीं लपक जाते ?

भठियारी (अलारक्खी)—ऐ हाँ, और क्या। चढ़ने को तो सब पहले तुम्हीं दौड़ोगे। तुम्हें बातचीत करने की भी तमीज़ नहीं।

आज़ाद—सवारी न मिलेगी, ठंडे-ठंडे घर की राह लो, बातें करते-करते चले चलेंगे।

दूसरे दिन आज़ाद ने साँड़नी के खोने की थाने में रपट की; मगर जिस आदमी को भेजा था, उसने आकर कहा—हुज़ूर, थानेदार ने रपट नहीं लिखी, और आपको बुलाया है।

आज़ाद—कौन, थानेदार? हमसे थानेदार से वास्ता? उनसे कह कि आपको खुद मियाँ आज़ाद ने याद किया है, अभी हाज़िर हों।

अलारक्खी—ले, बस बैठे रहो। बहुत उजड्डपना अच्छा नहीं होता। वाह, कहने लगे, हम न जायँगे। बड़े वह बने हैं। आखिर साँड़नी की रपट लिखवाई है कि नहीं? फिर अब दौड़ो-धूपो नहीं, तो बनेगी क्योंकर? और वहाँ तक जाते क्या चूड़ियाँ टूटती हैं, या पाँव की मेंहदी गिर जायगी?

आज़ाद—अई, हमसे थानेदार से एक दिन चख़ चल गई थी। ऐसा न हो, वह कोतवाली के चबूतरे पर बैठकर ज़ोम में आ जाय, तो फिर मैं ले ही पड़ूँगा। इतना समझ लेना, मैं आधी बात सुनने का रवादार नहीं। साँड़नी मिले या जहन्नुम में जाय, इसकी परवा नहीं, मगर कोई एँड़ा-बेंड़ा फ़िक़रा सुनाया, और मैंने कुर्सी के नीचे पटका। क्यों सुनें, चोर नहीं कि कोतवाल से डरूँ, जुआरी नहीं कि प्यादे की सूरत देखते ही जान निकले, बदमाश नहीं कि मुँह छिपाऊँ, मरियल नहीं कि दो बातें सह जाऊँ। कोई बोला, और मैंने तलवार निकाली; फिर वह नहीं, या मैं नहीं।

अलारक्खी—अरे, वह बेचारा तो एक हँसमुख आदमी है। लड़ाई क्यों होने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—ख़ैर, तुम्हारी ख़ुशी है, तो चलता हूँ। मगर चलो तुम भी साथ, रास्ते में दो घड़ी दिल्लगी ही होगी।

आख़िर, मियाँ आज़ाद और अल्लारक्खी दोनों थाने चले। एक कानिस्टिबिल भी साथ था। राह में एक आदमी अकड़ता हुआ जा रहा था। आज़ाद उसका अकड़ना देखकर आग हो गए। क़रीब जाकर एक धक्का जो दिया, तो उसने पचास लुढ़कनियाँ खाईं। थोड़ी दूर और चले थे कि एक आदमी चादर बिछाए उस पर जड़ी-बूटी फैलाए बैठा गप उड़ा रहा था। इस बूटी से अस्सी बरस का बूढ़ा जवान हो जाय, इस जड़ को पानी में घिसकर एक तोला पिए, तो शेर का पंजा फेर दे। आज़ाद उसकी तरफ़ झुक पड़े—कहो भई खिलाड़ी, यह क्या स्वाँग रचा है? आज कितने अक़्ल के अंधे, गाँठ के पूरे जाल में फँसे? यह कहकर एक ठोकर जो मारी, तो सारी बूटियाँ, पत्तियाँ, जड़ें एक में मिल गईं। और आगे चले, तो गुल-गपाड़े की आवाज़ आई। एक हलवाई ग्राहक से तकरार कर रहा था।

हलवाई—खाली भजिया नाहीं बिकत है हमरी दुकान पर, कस-कस देई भला।

ग्राहक—अबे, मैं कहता हूँ, कहीं एक गुद्दा न दूँ।

आज़ाद—गुद्दा तो पीछे दीजिएगा, मैं एक गुद्दा कहीं आपकी गुद्दी पर न जमाऊँ।

ग्राहक—आप कौन हैं बोलनेवाले?

आज़ाद—उस बेचारे हलवाई को तुम क्यों ललकारते हो?

अल्लारक्खी—ऐ है, मियाँ, तुम कोई ख़ुदाई फ़ौजदार हो? किसी के फटे में तुम कौन हो पाँव डालनेवाले?

कानिस्टिबिल—भइया, यो बड़े लड़ाका, बस काव कहों।

यहाँ से चले, तो थाने आ पहुँचे।

कानिस्टिबिल—हुजूर, ले आया, वह खड़े हैं।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थानेदार—अल्लाह! अलारक्खी भी हैं। मैं तो चाल ही से सम॰ गया था। कुछ बैठने को दो इन्हें, कोई है? सच कहना, तुम्हें चाल से कैसा पहचान लिया।

आज़ाद—अपने अपनों को सभी पहचान लेते हैं।

थानेदार—यह कौन बोला? कौन है भई?

अलारक्खी—ऐ, बस चलो, देख लिया। मुँह देखे की मुहब्ब॰ है। घर की थानेदारी और अब तक मुई साँड़नी न मिली। तुम॰ तो बड़ी-बड़ी उम्मेदें थीं।

थानेदार (आज़ाद से)—कहो जी, वह साँड़नी तुम्हारी है॰

आज़ाद—'तुम' का जवाब यहाँ नहीं देते; 'आप' कहिए; मैं को॰ चरकटा नहीं हूँ।

भठियारी—हाय मेरे अल्लाह, मैं क्या करूँ? यह तो जहाँ जा॰ हैं, दंगा मचाते हैं।

थानेदार—क्या कुछ इनसे साँठ-गाँठ है? सच कहना, तुम्हें क़स॰ है अपने शेख़ सद्दू की।

अलारक्खी—लो, तुम्हें मालूम ही नहीं। अच्छी थानेदारी क॰ हो। मैं तो इनके घर पड़ गई हूँ न।

थानेदार—तो यह कहिए, लाओ भई, साँड़नी काँजीहाउस॰ निकलवाओ।

साँड़नी आ मौजूद हुई। मियाँ आज़ाद सवार हुए। भठिया॰ भी पीछे बैठी।

आज़ाद—आज तुम कई आदमियों के सामने हमें अपना मि॰ बना चुकी हो। मुकर न जाना।

अलारक्खी—ज़रा चोंच सम्हाले हुए; कहीं साँड़नी पर से ढके॰ न दूँ।

अलारक्खी को यक़ीन हो गया कि आज़ाद मुझ पर रीझ ग॰

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब निकाह हुआ ही चाहता है। यों ही बहुत नख़रे किया करती थी, अब और भी नख़रे बघारने लगी। नौ का अमल हो गया था, चारपाई पर धूप फैली हुई थी, मगर मकर किए पड़ी हुई थी। इतने में चंडूबाज़ आए। आते ही पुकारा—मियाँ आज़ाद, मियाँ आज़ाद! अलारक्खी! यह आज क्या है यहाँ, ख़ुदा ही ख़ैर करे। दस का अमल और अभी तक खटिया ही पर पड़े हैं। कल रात को तमाशा भी तो न था। (दरख़्त की तरफ़ देखकर और साँड़नी बँधी हुई पाकर) जभी ख़ुश-ख़ुश सो रहे हैं। अरे मियाँ, क्या साँप सूँघ गया? यह माजरा क्या है? हाँ, अल्लाह कहकर उठ तो बैठ मेरे शेख़।

आज़ाद (अँगड़ाई लेकर)—अरे क्या सुबह हो गई?

चंडूबाज़—सुबह गई खेलने, आँख तो खोलो, अब कोई दम में बारह की तोप दगा चाहती है दन-से। देखना आज दिन-भर सुस्ती न रहे तो कहना। वह तो जहाँ आदमी ज़रा देर करके उठा, और हाथ-पाँव टूटने लगे। अब एक काम करो, सिर से नहा डालो।

आज़ाद—क्या बक-बक लगाई है, सोने नहीं देता।

अलारक्खी चुपके-चुपके सब सुन रही है; मगर उठती नहीं। चंडूबाज़ उसकी चारपाई की पट्टी पर जा बैठे, और बोले—ऐ उठ अल्लाह की बंदी, ऐसा सोना भी क्या? यह कहकर आपने उसके बिखरे हुए बाल, जो ज़मीन पर लटक रहे थे, समेटकर चारपाई पर रक्खे। उधर मियाँ आज़ाद की आँख खुल गई।

चंडूबाज़ (गुदगुदाकर)—उठो, मेरी जान की क़सम, वह हँसी आई, वह मुसकिराई।

आज़ाद—ओ गुस्ताख़, अलग हटकर बैठ, हमारे सामने यह बेअदबी!

चंडूबाज़—उँह-उँह, बड़े वारिसअलीख़ाँ बन बैठे! भई, आख़िर

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुमको भी तो जगाया था, अब इनको जगाना शुरू किया, तिनके क्यों हो भला ? मैं तो सीधा-सादा, भोला-भाला आदमी हूँ।

आज़ाद—जी हाँ, हमें तो कंधा पकड़कर जगाया। यह मालूम हुआ कि चारपाई को जूड़ी चढ़ी या भूचाल आ गया, और इन्हें गुदगुदाकर जगाते हो। क्यों बचा ?

अलारक्खी जगी तो थी ही, खिलखिलाकर हँस पड़ी—ऐ हट मरदुए, यह पलँग पर आकर बैठ जाना क्या; मुझे कोई वह समझ रक्खा है ? चंडूबाज़ ने तैश खाकर कहा—वाह-वाह, पलँग की अच्छी कही। 'रहें झोपड़ों में और ख़्वाब देखें महलों का।' कभी बाबाराज भी पलँग देखा था।

अलारक्खी—मियाँ, मुझसे यह जली-कटी बातें न कीजिए ज़री। वह हम झोपड़ों ही में रहते हैं सही; अब तो एक भलेमानस के घर पड़नेवाले हैं। क्यों मियाँ आज़ाद, है न, देखो मुकर न जाना।

आज़ाद—वाह, मुकरने की एक ही कही, 'नेकी और पूछ-पूछ'।

अलारक्खी—तिस पर भी तुम्हें शरम नहीं आती कि इस उजड्ड ने मुझे हाथ लगाया, और तुम मुलुर-मुलुर देखा किए। दूसरा होता, तो महनामथ मचाता।

चंडूबाज़—क्यों खड़वाती हो भला मुफ़्त में ? हमें क्या मालूम था कि यहाँ निकाह की तैयारियाँ हो रही हैं।

मियाँ आज़ाद हाथ-मुँह धोने बाहर गए, तो चंडूबाज़ और अलारक्खी में यों बातें होने लगीं—

चंडूबाज़—यार, फाँसा तो बड़े मुड्ढ को ! अब जाने न देना। ऐसा न हो, निकल जाय। भई, क़सम ख़ुदा की, औरत क्या, बिजली की गाँठ है तू।

अलारक्खी—मगर तुम भी कितने बेशहूर हो, उसके सामने आपने गुदगुदाना शुरू किया। अब वह खटके कि न खटके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारी जो बात है दुनिया से अनोखी । ताड़-सा क़द बढ़ायाँ, मगर तमीज़ छू नहीं गई ।

चंडूबाज़—अब तुमसे झगड़े कौन ? मैं किसी के दिल की बात थोड़े ही पढ़ा हूँ । मगर भई, पक्की कर लो ।

अलारक्खी—हाँ, पक्की-पोढ़ी होनी चाहिए । किसी अच्छे वकील से सलाह लो । वह कौन वकील हैं, जो कुम्मैत घोड़े की जोड़ी पर निकलते हैं, अजी वही, जो गबरू-से हैं अभी ।

चंडूबाज़—वकीलों की न पूछो, तेरह सौ साठ हैं । किसी के पास ले चलेंगे ।

अलारक्खी—नहीं, वाह, किसी बूढ़े वकील के यहाँ तो मैं न जाऊँगी । ऐसी जगह चलो; जो जवान हो, अच्छी सलाह दे ।

चंडूबाज़—अच्छा, आज इतवार है । शाम को मियाँ आज़ाद से कहना कि हमें अपनी बहन के यहाँ जाना है । बस, हम फाटक के उस तरफ़ दबके खड़े रहेंगे, तुम आना । हम-तुम चलकर सब मामला भुगता देंगे ।

अलारक्खी—अच्छा-अच्छा, तुम्हें खूब सूझी ।

इतने में आज़ाद मुँह-हाथ धोकर आए, तो अलारक्खी ने कहा—हमें तो आज बहन के यहाँ न्योता है, कोई कच्ची दो घड़ी में आजाऊँगी ।

आज़ाद—ज़रा साली की सूरत हमें भी तो दिखा दो । ऐसा भी क्या परदा है, कहो तो, हम भी साथ-साथ चले चलें ।

अलारक्खी—वाह मियाँ, तुम तो उँगली पकड़ते ही पहुँचा पकड़ने लगे ! यह कहकर अलारक्खी कोठरी में गई, और सोलह सिंगार करके निकली, तो आज़ाद फड़क गए । पटियाँ जमी हुई, गोरी-गोरी नाक में काली-काली लौंग, प्यारे-प्यारे मुखड़े पर हलका-सा घूँघट, हाथों में कड़े, पाँव में छड़े, छम-छम करती चली ।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंडूबाज़—ज़रा उनके सामने चमक-चमक के बातें करना, या नहीं कि झेंपने लगो।

अलारक्खी—मुझे और आप सिखावें! चमकना भी कुछ सिखाने से आता है। मेरी तो बोटी-बोटी यों ही फड़का करती है। तुम चलो तो, जो मेरी बातों और आँखों पर लट्टू न हो जायँ, तो अलारक्खी नहीं। कुछ ऐसा करूँ कि वह भी निकाह पर रज़ामंद हो जायँ, तो उनसे और आज़ाद से ज़रा जूती चले।

वकील साहब अपने बाग़ में तख़्त पर बैठे दोस्तों के साथ बातें कर रहे थे कि ख़िदमतगार ने आकर कहा—हुज़ूर, एक औरत आई है। कहती है, कुछ कहना है।

दोस्त—कैसी औरत है भई? जवान है या खप्पट?

ख़िदमतगार—हुज़ूर, यह तो देखने से मालूम हो, मुल है अभी जवान।

वकील—कहो, सुबह आवे।

दोस्त—वाह-वाह, सुबह की एक ही कही। अजी बुलाओ भी। हमारे सिर की क़सम बुलाओ। कहो, टोपी तुम्हारे क़दमों पर रख दें।

अलारक्खी छड़ों को छम-छम करती, अजब मस्तानी चाल से इठलाती, बोटी-बोटी फड़काती हुई आई। जिसने देखा, फड़क गया। सब रँगीले, बिगड़े-दिल, बेफ़िक्रे जमा थे। एक साहब नवाब थे, दूसरे साहब मुंशी। आपस में मज़ाक़ होने लगा—

नवाब—बंदगीअर्ज़ है! ख़ुदा की क़सम, आप एक ही न्यारिए हैं।

मुंशी—भई, सूरत से तो भलेमानस मालूम होते थे, लेकिन एक ही रसिया निकले।

वकील—भई, अब हम कुछ न कहेंगे। और कहें क्या, छा गई। बी साहबा, आप किसके पास आई हैं? कहाँ से आना हुआ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलारक्खी—अब ऐसी अजीरन हो गई।

वकील—नहीं-नहीं, वाह, बैठो, इधर तख़्त पर आओ।

अलारक्खी—हाँ, बनाइए, हम तो सीधे-सादे हैं साहब।

नवाब—आप भोली हैं, बजा है!

वकील—औरत है या परिस्तान की परी!

नवाब—रीझे-रीझे, लो बी, अब पौ-बारह हैं।

अलारक्खी—हुजूर, हम ये पौ-बारह और तीन काने तो जानते नहीं, हमारा मतलब निकल जाय, तो आप सब साहबों का मुँह मीठा कर देंगे।

दोस्त—आपकी बातें ही क्या कम मीठी हैं!

इतने में चंडूबाज़ भी आ पहुँचे।

चंडूबाज़—हुजूर तो इन्हें जानते न होंगे। यह अलारक्खी हैं। इनका नाम दूर-दूर तक रोशन है।

वकील—इनका क्या, इनके सारे ख़ानदान का नाम रोशन है।

चंडूबाज़—सराय में एक आज़ाद नामी जवान आकर ठहरे हैं। वह इनके ऊपर जान देते हैं, और यह उन पर मरती हैं। कई आदमियों के सामने वह क़बूल चुके हैं कि इनके साथ निकाह करेंगे। मगर आदमी हैं रँगीले, ऐसा न हो कि इनकार कर जायँ। बस, इनकी यही अर्ज़ है कि हुजूर कोई ऐसी तदबीर बतावें कि वह निकल न सकें।

अलारक्खी—मुझ ग़रीबनी से कोई छप्पन टके तो आपको मिलने नहीं हैं। रहा, इतना सवाब कीजिए, जिसमें वह शिकंजे में जकड़ जायँ।

मुंशी—अगर निकाह ही करने का शौक़ है, तो हम क्या बुरे हैं?

वकील—एक तुम्हीं क्या, यहाँ सब झंडे-तले के शोहदे छूटे

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए लुच्चे जमा हैं। जिसको यह पसंद करें, उसी के साथ निकाह हो जाय।

अलारक्खी—हुजूर लोग तो मुझसे दिल्लगी करते हैं।

वकील—अच्छा, कल आओ, तो हम तुम्हें वह तरकीब बतावें कि तुम भी याद करो।

अलारक्खी—मगर बंदी ने कभी सरकार-दरबार की सूरत देखी नहीं। आप वकालत कीजिएगा ?

मुंशी—हाँ जी हाँ, इसमें मिन्नत ही क्या है। मगर जानती हो, ये वकील तो रुपए के आशना हैं।

अलारक्खी—वाह, रुपया यहाँ अल्लाह का नाम है। हम हैं, चाहे बेच लो।

वकील—अच्छा, कल आओ, पहले देखो तो वह क्या कहते हैं।

अलारक्खी अब यहाँ से उठना चाहती थी, मगर उठे कैसे। कनखियों से चंडूबाज़ की तरफ़ देखा कि अब यहाँ से चलना चाहिए। वह भी उनका मतलब समझ गए। बोले—ऐ हुज़ूर, ज़रा घड़ी को तकलीफ़ दीजिएगा, देखिए तो, कै बजे हैं।

अलारक्खी—मैं अटकल से कहती हूँ, कोई बारह बजे होंगे।

चंडूबाज़—मैं भी कहूँ, यह जम्हाइयों-पर-जम्हाइयाँ क्यों आ रही हैं। नशे का वक़्त टल गया। हलवाइयों की दूकानें भी बढ़ गई होंगी। मलाई से भी गए। हुज़ूर, अब तो रुख़सत कीजिए। आज तो चंडू की लौ लगी है, आज सबेरे-सबेरे आज़ाद की मनहूस सूरत देखी थी, जभी यह हाल हुआ।

अलारक्खी—ले ख़बरदार, अबकी कहा तो कहा, अब आज़ाद का नाम लिया, तो मुझसे बुरा कोई नहीं ; ज़बान खींच लूँगी। नाहक़ किसी पर छुरा रखना अच्छा नहीं।

नवाब—अरे भई, कोई है, देखो, दूकानें बढ़ न गई हों, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनको यहीं चंडू पिलवा दें। ज़रा दो घड़ी और बी अलारक्खी से सोहबत गरमावें।

ख़िदमतगार—जाने को कहिए मैं जाऊँ, मुल दूकानें कब की बढ़ गई हैं; बाज़ार-भर में सन्नाटा पड़ा है; चिड़ियाँ-चुनगुन तक सो रही हैं; अब कोई दम में चक्कियाँ चलेंगी।

अलारक्खी—ऐ, क्या आधी रात ढल गई? ले, अब तो बंदी रुख़सत होती है।

मुंशी—वाह, इस अँधेरी रात में ठोकरें खाती कहाँ जाओगी।

अलारक्खी—नहीं हुज़ूर, अब आँखें बंद हुई जाती हैं। बस, अब रुख़सत। हुज़ूर, भूलिएगा नहीं। इतनी देर मज़े से बातें की हैं। याद रखिएगा लौंडी को।

मुंशी—वह हँसते आए, यहाँ से हमें रुला के चले;
न बैठे आप मगर दर्दे-दिल उठा के चले।

वकील—दिखा के चाँद-सा मुखड़ा छिपाया जुल्फ़ों में;
दुरंगी हमको ज़माने की वह दिखा के चले।

नवाब—न था जो कूचे में अपना क़याम मद्दे-नज़र;
तो मेरे बाद मेरी ख़ाक भी उड़ा के चले।

ख़ुदा के लिये इतना तो इक़रार करती जाओ कि कल ज़रूर मिलेंगे, हाथ-पर-हाथ मारो।

अलारक्खी—आप लोगों ने क्या जादू कर दिया; अब रुख़सत कीजिए।

वकील—यह भी कोई हँसी है कि रुख़सत का लेके नाम;
सौ बार बैठे-बैठे हमें तुम रुला चले।

नवाब—आँखों-आँखों में ले गए वह दिल;
कानों-कानों हमें ख़बर न हुई।

अलारक्खी यहाँ से चली, तो राह में डींग मारने लगी—क्यों,

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब-के-सब हमारी छवि पर लोट गए न ? यहाँ तो फ़क़ीर की दुआ है कि जिस महफ़िल में बैठ जाऊँ, वहीं कटाव होने लगे।

दोनों सराय में पहुँचे, तो देखा, आज़ाद जाग रहे हैं।

अलारक्खी—आज क्या है कि पलक तक न झपकी ? यह किसकी याद में नींद उचाट है ?

आज़ाद—हाँ, हाँ, जलाओ, दो-दो बजे तक हवा खाओ, और हमसे आकर बातें बनाओ।

अलारक्खी—ऐ वाह, यह शक, तब तो मीज़ान पट चुकी। अब इनके मारे कोई भाई-बहन छोड़ दे। अब यह बताओ कि निकाह का कौन दिन ठीक करते हो ? हम आज सबसे कह आए कि मियाँ आज़ाद के घर पड़ेंगे।

आज़ाद—क्या सचमुच तुम सबसे कह आईं ? कहीं ऐसा करना भी नहीं। मैं दिल्लगी करता था। ख़ुदा की क़सम, फ़क़त दिल्लगी ही थी। मैं परदेसी आदमी, शादी-ब्याह करता फिरूँगा, और फिर भठियारी से ? माना कि तुम हो परी, मगर फिर भठियारिन ही तो ! चार दिन के लिये सराय में आकर टिके, तो यहाँ से यह बला ले जायँ।

अलारक्खी—ऐ चोंच सँभाल मरदुए ! और सुनिएगा, हम बला हैं, जिस पर सारे शहर की निगाह पड़ती है। दूसरा कहता, तो ख़ून-ख़राबा कर डालती। मगर करूँ क्या, क़ौल हार चुकी हूँ। बिरादरी-भर में कलंक का टीका लगेगा। बला की अच्छी कही, तुम्हारे मुँह से मेरी एड़ी गोरी है, चाहे मिला लो।

आज़ाद—तो बी साहबा, सुनिए, किसकी शादी किसका ब्याह !

अलारक्खी—इन बातों से न निकलने पाइएगा। कल ही तो मैं नालिश दागती हूँ। इक़रार करके मुकर जाना क्या ख़ालाजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का घर है ? मियाँ, मैं जो अपनीवाली पर आई, तो बड़ा घर ही दिखाऊँगी। किसी और भरोसे न भूलना। मुझसे बुरा कोई नहीं।

आज़ाद—खुदा की पनाह, मैं अब तक समझता था कि मैं ही बड़ा घाघ हूँ, मगर इस औरत ने मेरे भी कान काटे। भुला दी सारी चौकड़ी। खुदा कहीं तड़का जल्दी से हो, तो मैं दूसरी कोठरी लूँ।

अल्लारक्खी (नाक पर उँगली रखकर)—रो दे, रो दे! इससे छोकरी ही हुए होते, तो किसी भलेमानस का घर बसता। भला मजाल पड़ी है कि कोई भठियारी टिकावे।

आज़ाद—तो सारे शहर-भर में आपका राज है कुछ ?

अल्लारक्खी—हई है, हई है, क्या हँसी-ठट्ठा है ? कल-परसों तक आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा !

आज़ाद—चलिए, आपकी बला से !

चंडूबाज़—बला-वला के भरोसे न रहिएगा। दो-चार दिन ताथेइया मचेगी।

आज़ाद—ज़री आप चुपके बैठे रहिएगा। यह तो कामिनी हैं, लेकिन तुम्हारी मुफ़्त में शामत आ जायगी।

चंडूबाज़—मेरे मुँह न लगिएगा, इतना कहे देता हूँ !

आज़ाद ने उठकर दो-चार चाँटे जड़ दिए। अल्लारक्खी ने बीच-बचाव कर दिया। अल्लाह करे, हाथ टूटें, ले के ग़रीब को पीट डाला।

चंडूबाज़—मेरी भी तो दो-एक पड़ गईं जी !

अल्लारक्खी—ऐ चुप भी रह, बोलने को मरता है।

इस तरह लड़-झगड़कर तीनों सोए।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सवेरे आज़ाद की आँख खुली, तो देखा, एक शाहज़ी उनके सिरहाने खड़े उनकी तरफ़ देख रहे हैं। शाहजी के साथ एक लड़का भी है, जो अलारक्खी को दुआएँ दे रहा है। आज़ाद ने समझा, कोई फ़क़ीर है, झट उठकर उनको सलाम किया। फ़क़ीर ने मुस्किराकर कहा—हुज़ूर, मेरा इनाम हुआ। सच कहिएगा, ऐसे बहुरूपिए कम देखे होंगे। आज़ाद ने देखा, ग़च्चा खा गए, अब बिना इनाम दिए गला न छूटेगा। बस, अलारक्खी की भड़कीली दुलाई उठाकर दे दी। बहुरूपिए ने दुलाई ली, झुककर सलाम किया, और लंबा हुआ। लौंडे ने देखा कि मैं ही रहा जाता हूँ। बढ़कर आज़ाद का दामन पकड़ा। हुज़ूर, हमें कुछ भी नहीं? आज़ाद ने जेब से एक रुपया निकालकर फेंक दिया। तब अलारक्खी चमककर आगे बढ़ीं, और बोलीं—हमें?

आज़ाद—तुम्हारे लिये जान हाज़िर है।

चंडूबाज़—यह सब ज़बानी दाख़िला है। बीबी को यह ख़बर ही नहीं कि दुलाई इनाम में चली गई। उलटे चली हैं माँगने। यह तो न हुआ कि चाँदी के छड़े बनवा देते, या किसी दिन हमी को दो-चार रुपए दे डालते। जाओ मियाँ, बस, तुमको भी देख लिया। गों के यार हो, 'चमड़ी जाय, दमड़ी न जाय।'

अलारक्खी—कहीं तेरे सिर गरमी तो नहीं चढ़ गई। ज़रा चँदिया के पट्टे कतरवा डाल। यह चमड़ी और दमड़ी का कौन मौक़ा था। यह बताइए, अब निकाह की कब तैयारियाँ हैं?

आज़ाद—अभी निकाह की उम्मेद आपको है? वल्लाह, कितनी भोली हो!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलारक्खी—तो क्या आप निकल भी जायँगे ? ऐ, मैं तो चढ़ूँगी अदालत ! कह-कहकर मुकर जाना क्या हँसी-ठट्ठा है !

आज़ाद—तो क्या नालिश कीजिएगा ?

अलारक्खी—क्यों, क्या कोई शक भी है ? हम क्या किसी के दबैल हैं ?

चंडूबाज़—और गवाह को देख रखिए। दुलाई क्या झप-से उठा दी। पराई दुलाई के आप कौन देनेवाले थे ? अजी, मैं तो वह-वह सवाल-जवाब करूँगा कि आपके होश उड़ जायँगे।

आज़ाद—अच्छी बात है, यह शौक़ से नालिश करें, और आप गवाही दें। इन्हें तो क्या कहूँ, पर तुम्हें समझूँगा।

चंडूबाज़—मुझसे ऐसी बातें न कीजिएगा, नहीं मैं फिर गुद्दा ही दूँगा।

अलारक्खी—चल, हट, बड़ा आया वहाँ से गुद्दा देनेवाला। अभी मैं चिमट जाऊँ, तो चीख़ने लगे, उस पर गुद्दा देंगे।

आज़ाद—तो फिर जाइए वकील के यहाँ, देर हो रही है।

अलारक्खी—तो क्या सचमुच तुम्हें इनकार है ? मियाँ, आँखें खुल जायँगी। जब सरकार का प्यादा आवेगा, तो भागने को जगह न मिलेगी।

चंडूबाज़—यह हैं शोहदे, यों नहीं मानने के। चलो चलें, दिन चढ़ता आता है। अभी कंघी-चोटी में तुम्हें घंटों लगेंगे, और वह सरकारी-दरबारी आदमी ठहरे। मुवक्किल सुबह-शाम घेरे रहते हैं। जब देखो, बग्घियाँ, टमटम, फ़िटन, जोड़ी, गाड़ी, हाथी, घोड़े, पालकी, इक्के, ताँगे, याबू, फ़िनस, म्याने दरवाज़े पर मौजूद।

आज़ाद—क्या और किसी सवारी का नाम याद नहीं था ? आज सरूर ख़ूब गठे हैं।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंडूबाज़—अजी यहाँ अलारक्खी की बदौलत रोज़ ही सरूरगं रहते हैं।

अलारक्खी ने कोठरी में जाकर सिंगार किया, और निखरक चलीं, तो आज़ाद की निगाह पड़ ही गई। चार आँखें हुईं, तो दोनों मुसकिरा दिए। चंडूबाज़ ने यह शेर पढ़ा—

उनको देखा तो यह हँस देते हैं;
आँख छिपती ही नहीं यारी की।

अलारक्खी एक हरी-हरी छतरी लगाए छम-छम करती चलीं। बिगड़े-दिल आवाज़ें कसते थे, पर वह किसी तरफ़ आँख उठाक न देखती थीं। चंडूबाज़ 'हटो, बचो' करते चले जाते थे। ज़रा हट जाना सामने से। ऐं, क्या छकड़ा आता है, क्यों हट जायँ! अख़्ख़ाह, यह कहिए, आपकी सवारी आ रही है। लो साहब, हट गए। एक रसिया ने पीछा किया। ये लोग आगे-आगे चले जाते हैं, और मियाँ रसिया पीछे-पीछे ग़ज़लें पढ़ते चले आ रहे हैं। चंडूबाज़ ने देखा कि यह अच्छे बिगड़े-दिल मिले। साथ जो हुआ, तो पीछा ही नहीं छोड़ते। आप हैं कौन? या आगे बढ़िए या पीछे चलिए। किसी भलेमानस को सताते क्यों हैं। इस पर अलारक्खी ने चंडूबाज़ के कान में चुपके से कहा—यह भी तो शकल-सूरत से भलेमानस मालूम होते हैं। हमें इनसे कुछ कहना है।

चंडूबाज़—आप तो वकील के पास चलती थीं, कहाँ इस सिड़ी सौदाई से साँठ-गाँठ करने की सूझी! सच है, हसीनों के मिज़ाज का ठिकाना ही क्या। बोले—अजी साहब, ज़रा इधर गली में आइएगा, आपसे कुछ कहना है।

रसिया—वाह, 'नेकी और पूछ-पूछ।'

तीनों गली में गए, तो अलारक्खी ने कहा—कहीं तुम्हारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी है ? यहाँ इस गलियारे में क्या कहूँ, कोई आवे, कोई जाय। खड़े-खड़े कहीं बातें हुआ करती हैं ?

चंडूबाज़ सोचे कि दूसरा गुल खिला चाहता है । पूछा—मियाँ, तुम्हारा मकान यहाँ से कितनी दूर है ? जो काले कोसों हो, तो मैं लपककर बग्घी किराया कर लूँ। इनसे इतनी दूर न चला जायगा । इनको तो मारे नज़ाकत के छतरी ही का सँभालना भारी है।

रसिया—नहीं साहब, दूर नहीं है । बस, कोई दस क़दम आइए। रसिया ने छतरी ले ली, और ख़िदमतगार की तरह छतरी लगाकर साथ-साथ चलने लगे। चंडूबाज़ ने देखा, अच्छा गावदी मिला । खुद भी छतरी के साए में रईस बने हुए चलने लगे। थोड़ी देर में रसिया के मकान पर आ पहुँचे।

रसिया—वह आएँ घर में हमारे, खुदा की कुदरत है,
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते हैं।

यहाँ तो सच्चे आशिक़ हैं। जिसको दिल दिया, उसको दिया । जान जाय, माल जाय, इज़्ज़त जाय, सब मंजूर है।

चंडूबाज़—अच्छा, अब इनका मतलब सुनिए। यह बेचारी अभी अठारह-उन्नीस बरस की होंगी। अभी कल तो पैदा हुई हैं। अब सुनिए कि इनके मियाँ इनसे लड़-झगड़कर हैदराबाद भाग गए। वहाँ किसी को घर मे डाल लिया। अब यह अकेली हैं, इनका जी घबराता है। इतने में एक शौक़ीन रईस सराय में उतरे, बड़े खूबसूरत कल्ले-ठल्ले के जवान हैं।

अलारक्खी—मियाँ, आँखें तो ऐसी रसीली कि देखी न सुनी ।

चंडूबाज़—ऐ, तो मुझी को अब कहने दो। तुम तो बात काटे देती हो। हाँ, तो मैं कहता था कि इनकी-उनकी आँखें चार हुईं, तो इधर यह, उधर वह, दोनों घायल हो गए। पहले तो आँखों-ही-

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँखों में बातें हुआ कीं। फिर खुल के साफ़ कह दिया कि हम तुम्हें ब्याहेंगे। मगर फिर न-जाने क्या समझकर मुकर गए। अब इरा इरादा है कि उन पर नालिश ठोक दें।

रसिया—अजी उनको भाड़ में झोंको। जो ब्याह ही करना है तो हमसे निकाह पढ़वाओ। उनको धता बताओ।

अल्लारक्खी—सच कहूँ, तुम मर्दों का हमें एतबार दमड़ी भर भी नहीं रहा। अब जी नहीं चाहता कि किसी से दिल मिलावें।

रसिया—तुमने अभी हमें पहचाना ही नहीं। पाँचों उँगलियाँ बराबर नहीं होतीं। हम शरीफ़ज़ादे हैं!

अल्लारक्खी—लोग यही समझते हैं कि अल्लारक्खी बड़ी खुशनसीब है। मगर मियाँ मैं किससे कहूँ, दिल का हाल कोई क्या जाने।

चंडूबाज़—यही देखिए, अर्ज़ीदावा है।

रसिया—अरे यह किस पागल ने लिखा है जी? ऐसा भला कहीं हो सकता है कि सरकार आज़ाद से तुम्हारा निकाह करवा ही दे। हाँ, इतना हो सकता है कि हरजा दिलवा दे। पर उसका सबूत भी ज़रा मुशकिल है।

अल्लारक्खी—अजी होगा भी, मसौदा फाड़ डालो। आज़ाद से अब मतलब ही क्या रहा।

रसिया—हम बतावें, नालिश तो दाग दो। हरजा मिला तो हर्ज ही क्या है। बाक़ी ब्याह किसी के अख़्तियार में नहीं। उधर तुमने मुक़दमा जीता, इधर हम बरात लेकर आए।

अल्लारक्खी—तो चलो, तुम भी वकील के यहाँ तक चले चलो।

रसिया—हाँ, हाँ, चलो।

तीनों आदमी वकील के यहाँ पहुँचे। लेकिन बड़ी देर तक बाहर ही टापा किए। यह रईस आए, वह अमीर आए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई महाजन आया । बड़ी देर के बाद इनकी तलबी हुई; मगर वकील साहब जो देखते हैं, तो अलारक्खी का मुँह उतरा हुआ है, न वह चमक-दमक है, न वह मुसकिराना और लजाना । पूछा—आख़िर, माजरा क्या है ? आज इतनी उदास क्यों हो ? कहाँ वह छवि थी, कहाँ यह उदासी छाई हुई है ? अलारक्खी ने इसका तो जवाब कुछ न दिया, फूट-फूटकर रोने लगी । आँसू का तार बँध गया । वकील सन्नाटे में । आज यह क्या माजरा है, इनकी आँखों में आँसू !

चंडूबाज़—हुज़ूर, यह बड़ी पाकदामन हैं । जितनी ही चंचल हैं, उतनी ही समझदार । मेरा ख़ुदा गवाह है, बुरी राह चलते आज तक नहीं देखा । इनकी पाकदामनी की क़सम खानी चाहिए । अब यह फ़रमाइए, मुक़दमा कैसे दायर किया जाय ।

रसिया—जी हाँ, कोई अच्छी तदबीर बताइए । ज़बरदस्ती शादी तो हो नहीं सकती । अगर कुछ हरजाना ही मिल जाय, तो क्या बुरा ? भागते भूत की लँगोटी ही सही। कुछ तो ले ही मरेंगी ।

चंडूबाज़—मरें इनके दुश्मन, आप भी कितने फूहड़ हैं, वाह !

वकील—अच्छा, यह तो बताइए कि वह रईस कहाँ से आवेंगे, जो कहें कि हमसे और इनसे ब्याह की ठहरी थी ?

रसिया—अब बता ही दूँ । बंदा ही कहेगा कि हमसे महीनों से बातचीत है, आज़ाद बीच में कूद पड़े । वल्लाह, वह-वह जवाब दूँ कि आप भी ख़ुश हो जायँ ।

वकील—वाह, तो फिर क्या पूछना । हम आपको दो-एक चुटकिले बता देंगे, फिर आप फ़र्राटे भरने लगिएगा । मगर दो-एक गवाह तो ठहरा लीजिए ।

चंडूबाज़—एक गवाह तो मैं ही बैठा हूँ, फ़र्राटेबाज़ ।

ख़ैर, तीनों आदमी कचहरी पहुँचे । जिस पेड़ के नीचे जाकर

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठे, वहाँ मेला-सा लग गया। कचहरी-भर के आदमी टूटे पड़ते हैं; धक्कमधक्का हो रहा है। चंडूबाज़ वारिसअलीख़ाँ बने बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। जाओ भई, अपना काम करो, आख़िर यहाँ कोई मेला है, क्या भेड़िया-धसान है।

१—आप लाए ही ऐसी हैं।

२—अच्छा, हम खड़े हैं, आपका कुछ इजारा है? वा अच्छे आए।

३—भाई, ज़री हँस-बोल लें, आख़िर मरना तो है ही।

जब एक बजा, तो बी अलारक्खी अठलाती हुई सवाल दे चलीं। चंडूबाज़ एक हाथ में हुक्का लिए हैं, दूसरे में छतरी ख़िदमतगार बने चले जाते हैं। लोग इधर-उधर झुंड-के-झुंड खड़े हैं; पर कोई बताता नहीं कि अर्ज़ी कहाँ दी जाती है। ए कहता है, दाहने हाथ जाओ। दूसरा कहता है, नहीं-नहीं, बा बाएँ। बड़ी मुशकिल से इजलास तक पहुँचीं।

उधर आज़ाद पड़े-पड़े सोच रहे थे कि इस बेफ़िक्री का क ठिकाना है? जो कहीं नवाब के आदमी छूटें, तो चोर-के-चोर ब और उल्लू-के-उल्लू बनाए जायँ। किसी को मुँह दिखाने ला न रहें। आबरू पर पानी फिर गया। अभी देखिए, क्या-क्या होता है—कहाँ-कहाँ ठोकरें खाते हैं!

इतने में सराय में लेना-लेना का गुल मचा। यह भी भड़भड़ा कर कोठरी से बाहर निकले, तो देखते हैं कि साँड़नी ने रस्सी तोड़-ताड़कर फेक दी है, और सराय-भर में उचकती फिरती है। पहले एक मुसाफ़िर के टट्टू की तरफ़ झुकी, और उसको मारे पुरतों के बौखला दिया। मुसाफ़िर बेचारा एक लग्गा लिए खटाखट हा साफ़ कर रहा है। फिर जो वहाँ से उछली, तो दो-तीन बैलों का कचूमर ही निकाल डाला। गाड़ीवान हाँय-हाँय कर रहा है; लेकि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस हाँय-हाँय से भला ऊँट समझा किए हैं। यहाँ से झपटी, तो तीन-चार इक्कों के अंजर-पंजर अलग कर दिए। आज़ाद तोबड़ा दिखा रहे हैं, और आवाज़ें कर रहे हैं। लोग तालियाँ बजा देते हैं, तो वह और भी बौखला जाती है। बारे बड़ी मुशकिल से नकेल उनके हाथ में आई। उसे बाँधकर कहीं जाने की तैयारी कर रहे थे कि अलारक्खी और चंडूबाज़ अदालत के एक मज़कूरी के साथ आ पहुँचे। आज़ाद ने मुँह फेर लिया, और मीठे सुरों में गाने लगे—

ठानी थी दिल में, अब न मिलेंगे किसी से हम ;
पर क्या करें कि हो गए नाचार जी से हम।

मज़कूरी—हुज़ूर, सम्मन आया है।

आज़ाद—तुम मेरे पास होते हो गोया ;
जब कोई दूसरा नहीं होता।

मज़कूरी—सम्मन आया है, गाने को तो दिन-भर पड़ा है, लीजिए, दस्तख़त तो कर दीजिए।

आज़ाद—धो दिया अश्के-नदामत को गुनाहों ने मेरे ;
तर हुआ दामन, तो बारे पाक-दामन हो गया।

मज़कूरी—अजी साहब, मेरी भी सुनिएगा ?

आज़ाद—क्या हमसे कहते हो !

मज़कूरी—और नहीं तो किससे कहते हैं ?

आज़ाद—कैसा सम्मन, लाओ ज़रा, पढ़ें तो। लो, सचमुच नालिश ही जड़ दी।

मज़कूरी ने सम्मन पर दस्तख़त कराए, और अलारक्खी को घेरा। आज तो हाथ गरमाओ, एक चेहरा शाही लाओ। अलारक्खी ने कहा—ऐ तो अभी सूत न कपास, इनाम-विनाम कैसा ? मुक़दमा जीत जायँ, तो देते अच्छा लगे।

मज़कूरी—तुम जीती दाख़िल हो बीबी। अच्छा, कल आऊँगा।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मियाँ आज़ाद के पेट में चूहे कूदने लगे कि यह तो बेढब हुई। मैंने ज़रा दिल-बहलाव के लिये दिल्लगी क्या कर दी कि यह मुसीबत गले आ पड़ी। अब तो ख़ैरियत इसी में है कि यहाँ से मुँह छिपाकर भाग खड़े हों। बी अल्लारक्खी चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगीं—अब तो चाँदी है। जीते, तो घी के चिराग़ जलावेंगे। एक ने कहा—यह न कहो, मुँह मीठा करेंगे; गुलगुले खिलावेंगे। दूसरी ने कहा—न खिलावेंगी, तो निकाह के दिन ढोलक कौन बजावेगा! आज़ाद मौक़े की ताक में थे ही, अल्लारक्खी की आँख चूकते ही झट से काठी कसी, और भागे। नाके तक तो उनको किसी ने न टोका, मगर जब नाके से कोई गोली-भर के टप्पे पर बाहर निकल गए, तो मियाँ चंडूबाज़ से चार आँखें हुईं। अरे! ग़ज़ब ही हो गया, अब धर लिए गए।

चंडूबाज़—ऐ बड़े भाई, किधर की तैयारियाँ हैं? यह भाग जाना हँसी-ठट्ठा नहीं है कि काठी कसी और चल खड़े हुए। आँखों में ख़ाक झोंककर चले आए होंगे। लो बस, उतर पड़ो, आओ, ज़री हुक़्क़ा तो पी लो।

आज़ाद—इस दम में हम न आवेंगे। ये फ़िक़रे किसी गँवार को दीजिए। आप अपना हुक़्क़ा रहने दें। बस, अब हम ख़ूब पी चुके। नाकों दम कर दिया बदमाशों ने! चले थे मुक़द्दमा दायर करने! किस मज़े-से कहते हैं कि हुक़्क़ा पिए जाओ। ऐसे ही तो आप बड़े दोस्त हैं।

चंडूबाज़—नेकी का ज़माना ही नहीं। हमने तो कहा, इतने दिन मुलाक़ात रही है, आओ भाई, कुछ ख़ातिर कर दें, फिर ख़ुदा जाने, कब मिलना हो।

आज़ाद—ख़ुदा न करे, तुम-जैसे मनहूसों की सूरत ख़्वाब में भी नज़र आवे।

चंडूबाज़ ने गुल मचाना शुरू किया—दौड़ो, चोर है, लेना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चोर, चोर ! मियाँ आज़ाद ने चंडूबाज़ पर सड़ाक-से कोड़ा फटकारा, और साँड़नी को एक एड़ लगाई । वह हवा हो गई । शहर से बाहर हुए, तो राह में दो मुसाफ़िरों को यों बातें करते सुना—

१—अरे मियाँ, आजकल लखनऊ में एक नया गुल खिला है । किसी न्यारिए ने करोड़ों रुपए के जाली स्टांप बनाए, और लंदन तक में जाकर कूड़े किए । सुना, काबुल में दो जालिए पकड़े गए, मुश्कें कस ली गईं, और रेल में बंद करके यहाँ भेज दिए गए । अल्लाह जानता है, ऐसा जाल किया कि जौ-भर भी फ़र्क़ मालूम हो, तो मूँछें मुड़वा लो ! सुना है, कोई डेढ़ सौ-दो सौ बरस से बेचते थे, और कुछ चोरी-छिपे नहीं, खुल्लमखुल्ला ।

२—वाह, दुनिया में भी कैसे-कैसे काइयाँ पड़े हैं । ऐसों के तो हाथ कटवा डाले ।

१—वाह, वाह, क्या क़दरदानी की है ! उन्होंने तो वह काम किया कि हाथ चूम ले, जागीरें दे ।

आज़ाद को पहले मुसाफ़िर की गपोड़ेबाज़ी पर हँसी आ गई । क्या झप-से जालियों को काबुल तक पहुँचा दिया, और हिंदुस्थान के स्टांप लंदन में बिकवाए । पूछा—क्यों साहब, किसने जाली स्टांप बेचे ?

मुसाफ़िरों ने समझा, यह कोई पुलीस-अफ़सर हैं, टोह लेने चले हैं, ऐसा न हो कि हमको भी गिरफ़्तार कर लें । बग़लें झाँकने लगे ।

आज़ाद—आप अभी कहते न थे कि जालिए गिरफ़्तार किए गए हैं ?

मुसाफ़िर—कौन ? हम ? नहीं तो !

आज़ाद—जी, आप बातें नहीं कर रहे थे कि स्टांप किसी ने बनाए, और डेढ़-दो सौ बरस से बेचते चले आए ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसाफ़िर—हुज़ूर, हमको तो कुछ मालूम नहीं।

आज़ाद—अभी बताओ सूअर, नहीं हम तुमको बड़ा घर दिखावेगा और बेड़ी पहनावेगा।

मियाँ आज़ाद तो उनकी चितवनों से ताड़ गए थे कि दोनों-के-दोनों चोंगा हैं, मारे डर के स्टांप का लफ़्ज़ ज़बान पर नहीं लाते। जैसे ही उन्होंने डाँट बताई, एक तो बगटुट पच्छिम की तरफ़ भागा, और दूसरा खड़भड़ करता हुआ पूरब की तरफ़। मियाँ आज़ाद आगे बढ़े। राह में देखा, कई मुसाफ़िर एक पेड़ के साए में बैठे बातें कर रहे हैं—

१—कोई ऐसी तदबीर बताइए कि लू न लगे। आजकल के दिन बड़े बुरे हैं।

२—इसकी तरकीब यह है कि प्याज़ की गट्ठी पास रक्खे। या दो-चार कच्चे आम तोड़ लो, आमों को पहले भून लो, जब पिल-पिले हों, तो गूदा निकालकर छिलका फेंक दो, और ज़रा-सी शक्कर डालकर, पानी में घोलकर पी जाओ।

१—कहीं ऐसा ग़ज़ब भी न करना! पानी में तो बरफ़ डालनी ही न चाहिए। पानी का गिलास बरफ़ में रख दो, जब खूब ठंडा हो जाय, तब पियो। बरफ़ का पानी नुक़सान करता है।

२—वाह, लाखों आदमी पीते हैं।

१—अजी लाखों आदमी झख मारते हैं। लाखों चोरियाँ भी तो करते हैं, फिर इससे मतलब? हमने लाखों आदमियों को देखा है कि गढ़ों और तालाबों का पानी सफ़र में पीते हैं। आप पीजिएगा? हज़ारों आदमी धूप में चलकर खड़े-खड़े तीन-चार लोटे पानी पी जाते हैं। मगर यह कोई अच्छी बात थोड़े ही है।

और आगे बढ़े, तो एक भठ्ठुरी आ निकला। वह आज़ाद को पहचानता था। देखते ही बोला—तुम्हारी नवाब साहब के यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी तलाश है जी । तुम ग़ायब कहाँ हो गए थे ऊँट लेकर ? अब मैं जाकर कहूँगा कि मैंने प्रश्न देखा, तो निकला, आज़ाद पाँच कोस के अंदर-ही-अंदर हैं । जब तुम लुपदेनी पहुँच जाओगे, तो फिर हमारी चढ़ती कला होगी । तुमको भी आधोआध बाँट देंगे । मगर भंडा न फोड़ना । चढ़ बाज़ी है ।

आज़ाद—वल्लाह, क्या सूझी है ! मंजूर है ।

भड्डरी ने पोथी सँभाल अपनी राह ली, और नवाब के यहाँ धर धमके ।

ख़ोजी—अजी जाओ भी, तुम्हारी एक बात भी ठीक न निकली ।

नवाब—बरसों हमारा नमक तुमने खाया है, बरसों । एक-दो दिन नहीं, बरसों । अब इस वक़्त कुछ परशन-वरशन भी देखोगे, या बातें ही बनाओगे ? हमको तो मुसलमान भाई तुम्हारी वजह से काफ़िर कहने लगे, और तुम कोई अच्छा-सा हुक्म नहीं लगाते ।

भड्डरी—वह हुक्म लगाऊँ कि पट ही न पड़े !

ख़ोजी—अजी, डींगिए हो ख़ासे । कहीं किसी रोज़ मैं क़रौली न भोंक दूँ । सिवा बेपर की उड़ाने के, बात सीखी ही नहीं । भले आदमी, साल-भर में एक दफ़े तो सच बोला करो ।

झम्मन—वाह, सच बोलते, तो क़साई के कुत्ते की तरह फूल न जाते ।

नवाब—यह क्या वाहियात बात !

भड्डरी—हुज़ूर, हमसे-इनसे हँसी होती है । यह हमें कहते हैं, हम इन्हें । अब आप कोई फूल मन में लें ।

नवाब—ये ढकोसले हमको अच्छे नहीं मालूम होते । हमें साफ़-साफ़ बता दो कि मियाँ आज़ाद कब तक आवेंगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भड्डुरी ने उँगलियों पर कुछ गिन-गिनाकर कहा—पानी के पास हैं।

झम्मन—वाह उस्ताद! पानी के पास एक ही कही। लड़की न लड़का, दोनों तरह अपनी ही जीत।

भड्डुरी—यहाँ से कोई तीन कोस के अंदर हैं।

दुन्नी—हुज़ूर, यह बड़ा फ़ैलिया है। आप पूछते हैं, आज़ाद कब आवेंगे। यह कहता है, तीन कोस के अंदर-ही-अंदर हैं। सिवा झूठ, सिवा झूठ।

भड्डुरी—अच्छा, जाकर देख लो। जो नाके के पास आज़ाद आते न मिलें, तो नाक काट डालूँ, पोथी जला दूँ। कोई दिल्लगी है!

नवाब—चाबुक-सवार को बुलवाकर हुक्म दो कि अभी सरपट जाय और देखे, मियाँ आज़ाद आते हैं या नहीं। आते हों, तो इस भड्डुरी का आज घर भर दूँ। बस, आज से इसका कलमा पढ़ने लगूँ।

चाबुक-सवार ने बाँका मुड़ासा बाँधा, और सुरंग घोड़ी पर चढ़ चला। मगर पचास ही क़दम गया होगा कि घोड़ी भड़की और तेज़ी में दूसरे नाके की राह ली। चाबुक-सवार बहुत अकड़े बैठे हुए थे; मगर रोक न सके, धम-से मुँह के बल नीचे आ रहे। ख़ोजी ने नवाब साहब से कहा—हुज़ूर, घोड़ी ने नाज़िरअली को दे पटका, और क्या जाने किस तरफ़ निकल गई।

नवाब—चलो, ख़ैर समझा जायगा। तुम टाँघन कसवाओ और दौड़ जाओ।

ख़ोजी—हुज़ूर, मैं तो बूढ़ा हो गया, और रही-सही सकत अफ़ीम ने ले ली। टाँघन है बला का शरीर। कहीं फेंक-फाक दे, हाथ-पाँव टूटें, तो दीन-दुनिया, दोनों से जाऊँ। आज़ाद ख़ुद भी गए, और हम सबको भी बला में डाल गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इधर चाबुक-सवार ने पटकनी खाई, उधर लौंडों ने तालियाँ बजाईं। मगर शहसवार ने गर्द झाड़ी, एक दूसरा कुम्मैत घोड़ा कसा, और कड़कड़ा दिया। हवा से बातें करते जा रहे हैं। बग़िया में पहुँचे, तो देखा, साँड़नी की काकरेज़ी झूल झलक रही है, और ऊँटनी गरदन झुकाए चौतरफ़ा मटक रही है। जाकर आज़ाद के गले से लिपट गए।

आज़ाद—कहिए, नवाब के यहाँ तो ख़ैरियत है?

सवार—जी हाँ, ख़ैर-सल्लाह के ढेर हैं। मगर आपकी राह देखते-देखते आँखें पथरा गईं। ओ मियाँ, कुछ और भी सुना? उस बटेर की क़ब्र बनाई गई है! सामने जो बेल-बूटों से सजा हुआ मक़बरा दिखाई देता है, वह उसी का है।

आज़ाद—यह कहिए, यार लोगों ने क़ब्र भी बनवा दी! वल्लाह, क्या-क्या फ़िक़्रेबाज़ हैं।

सवार—बस, तुम्हारी ही कसर थी। कहो, हमने सुना, ख़ूब गुलछर्रे उड़ाए। चलो, फिर अब नवाब ने याद किया है।

आज़ाद—ऐं, उन्हें हमारे आने की कहाँ से ख़बर हो गई?

सवार—अजी, अब यह सारी दास्तान राह में सुना देंगे।

आज़ाद—अच्छा, तो पहले आप हमारा ख़त नवाब के पास ले जायँ। फिर हम शान के साथ चलेंगे।

यह कहकर आज़ाद ने यह ख़त लिखा—

"आज क़लम की बाछें खिली जाती हैं; क्योंकि मियाँ सफ़-शिकन की सवारी आती है। हुज़ूर के नमक की क़सम, इधर पताल तक और उधर सातवें आसमान तक हो आया, तब जाके खोज पाया। शाहजी साहब रोज़ ढाढ़ें मार-मारकर रोते हैं। कल मैंने बड़ी ख़ुशामद की, और आपकी याद दिलाई, तो ठंडी आह खींचकर रह गए। बड़ी-बड़ी दलीलें छाँटते थे। पहले फ़रमाया—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दरीं बज़्म रह नेस्त बेगाना रा ;

मैंने छूटते ही जवाब दिया—

कि परवानगी दाद परवाना रा ।

खिल-खिलाकर हँस पड़े, पीठ ठोंकी, और फ़रमाया—शाबाश बेटे, नवाब साहब की सोहबत में तुम बहुत बर्क़ हो गए। पूरे दो हफ़्ते तक मुझसे रोज़ बहस रही। आख़िर मैंने कहा—आप चलिए, नहीं मैं ज़हर खाकर मर जाऊँगा। मुझे समझाया कि ज़िंदगी बड़ी न्यामत है। ख़ैर, तुम्हारी ख़ातिर से चलता हूँ। लेकिन एक शर्त यह है कि जब मैं वहाँ पहुँचूँ, तो नवाब के सामने ख़ोजी पर बीस जूते पड़ें। मैंने क़ौल दिया, तब कहीं आए।"

सवार यह ख़त लेकर हवा की तरह उड़ता हुआ नवाब साहब के यहाँ पहुँचा।

नवाब—कहो बेटा कि बेटी? जल्दी बोलो। यहाँ पेट में चूहे कूद रहे हैं।

सवार—हुज़ूर, ग़ुलाम ने राह में दम लिया हो, तो जरबाना दूँ।

ख़ोजी—कितने बेतुके हो मियाँ। 'कहें खेत की, सुनें खलियान की।' भला अपनी कारगुज़ारी जताने का यह कौन मौक़ा है? मारे मशोख़त के दुबले हुए जाते हैं!

सवार ने आज़ाद का ख़त दिया। मुंशीजी पढ़ने के लिये बुलाए गए। ख़ोजी घबराए कि आज़ाद ने यह कब की कसर ली। बोले—हुज़ूर, यह मियाँ आज़ाद की शरारत है। शाह साहब ने यह शर्त कभी न की होगी। बंदे से तो कभी गुस्ताख़ी नहीं हुई।

नवाब—ख़ैर, आने तो दो। क्यों भई मीर साहब, रम्माल ने तो बयान किया था कि सफ़शिकन के दुश्मन जन्नत में दाख़िल हुए। यह मियाँ आज़ाद को कहाँ से मिल गए?

मीर साहब—हुज़ूर, ख़ुदा का भेद कौन जान सकता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भडुरी—मेरा प्रश्न कैसा ठीक निकला जो है सो, मानो निशाने पर तीर खट-से बैठ गया।

इतने में अंदर छोटी बेगम को ख़बर हुई। बोलीं—इनका-जैसा पोंगा आदमी खुदाई-भर में न होगा। ज़री-सा तो बटेर, और पाजियों ने उसका मक़बरा बनवा दिया। रोज़ कहाँ तक बकूँ।

लौंडी—बीबी, बुरा मानो या भला, तुम्हें वे राहें ही नहीं मालूम कि मियाँ क़ाबू में आ जायँ।

बेगम—मेरी जूती की नोक को क्या ग़रज़ पड़ी है कि उनके बीच में बोले। मैं तो आप ही डरा करती हूँ कि कोई मुझी पर तूफ़ान न बाँध दे।

उधर नवाब साहब ने हुक्म दिया कि सफ़शिकन की सवारी धूम से निकले। इतना इशारा पाना था कि ख़ोजी और मीर साहब लगे जुलूस का इंतज़ाम करने। छोटी बेगम कोठे पर खड़े-खड़े ये तैयारियाँ देख रही थीं, और दिल में हँस रही थीं। उस वक़्त कोई ख़ोजी को देखता, दिमाग़ नहीं मिलते थे। इसको डाँट, उसको डपट; किसी पर धौल जमाई, किसी के चाँटा लगाया; इसको पकड़ लाओ, उसको मारो। कभी मशालची को गालियाँ दीं, कभी पंशाख़ेवाले पर बिगड़ पड़े। आगे-आगे निशान का हाथी था। हरी-हरी झूल पड़ी हुई। मस्तक पर सेंदुर से गुल-बूटे बने हुए। इसके बाद हिंदोस्तानी बाजा कक्कड़-झय्यम! इसके पीछे फूलों के तख़्त—चमेली खिला ही चाहती है, कलियाँ चिटकने ही को हैं। चंडूबाज़ों के तख़्त में तो कमाल कर दिया। दो-चार पीनक में हैं, दस-पाँच ऊँघे पड़े हुए। कोई चंडूबाज़ाना ठाट से पौंडा छील रहा है। एक गँडेरी चूस रहा है। शिकार का वह समा बाँधा कि वाह-जी-वाह! एक शिकारी बंदूक़ छतियाए, घुटना टेके, आँख दबाए निशाना लगा रहा है। बस, दाँय की आवाज़ आया ही चाहती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। हिरन चौकड़ियाँ भरते जाते हैं। इसके बाद अँगरेज़ी बाजा। इसके बाद घोड़ों की क़तार—कुम्मैत, कुम्मैत सुरंग, कुरंग, नुक़रा, सब्ज़ा, अरबी, तुर्की, वेलर छम-छम करते जा रहे हैं। घोड़े दुलहिन बने हुए थे। इसके बाद फिर अरगन बाजा; फिर तामदान, पालकी, नालकी, सुखपाल। इसके बाद परियों के तख़्त एक-से-एक बढ़कर। सबके पीछे रोशनचौकीवाले थे। रोशनी का इंतज़ाम भी चौकस था। पंशाख़े और लालटेनें झक-झक कर रही थीं। इस ठाट से जुलूस निकला। सारा शहर यह बरात देखने को फटा पड़ता था। लोग चक्कर में थे कि अच्छी बरात है, दूल्हे का पता ही नहीं। बरात क्या, गोरख-धंधा है।

जब जुलूस बग़िया में पहुँचा, तो आज़ाद हाथी पर सवार होकर सफ़शिकन को काबुक में बिठाए हुए चले।

ख़ोजी—मसल मशहूर है—"सौ बरस के बाद घूरे के भी दिन बहुरते हैं।" हमारे दिन आज बहुरे कि आप आए, और शाहजी को लाए। नवाब के यहाँ सन्नाटा पड़ा हुआ था। सफ़शिकन के ग़म में सब पर मुर्दनी छाई हुई थी। बस, लोग यही कहते थे कि आज़ाद साँड़नी लेकर लंबे हुए। एक मैं ही तुम्हारी हिमायत किया करता था।

मीर साहब—जी हाँ, हम भी आप ही की तरफ़ से लड़ते थे, हम और यह, दोनों।

आज़ाद—भई, कुछ न पूछो। ख़ुदा जाने, किन-किन जंगलों की ख़ाक छानी, तब कहीं यह मिले।

ख़ोजी—यहाँ लोग ग़प उड़ा रहे थे। किसी ने कहा—भाँडों के यहाँ नौकरी कर ली। कोई तूफ़ान बाँधता था कि किसी भठियारी के घर पड़ गए। मगर मैं यही कहे जाता था कि वह शरीफ़ आदमी हैं, इतनी बेहयाई कभी न करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी और मीर साहब, दोनों आज़ाद को मिलाना चाहते थे, मगर वह एक ही उस्ताद। समझ गए कि अब नवाब के यहाँ हमारी भी तूती बोलेगी, तभी ये सब हमारी ख़ुशामद कर रहे हैं। बोले—अजी, रात जाती है या आती है? अब देर क्यों कर रहे हो? पंशाख़े चढ़ाओ। घोड़े चलाओ। जब जुलूस तैयार हुआ, तो आज़ाद एक हाथी पर जा डटे। बटेर की काबुक को आगे रख लिया। ख़ोजी और मीर साहब को पीछे बिठाया, और जुलूस चला। चौक में तो पहले ही से हुल्लड़ था कि नवाबवाला बटेर बड़ी शान से आ रहा है। लाखों आदमी चौक में तमाशा देखने को डटे हुए थे, छतें फटी पड़ती थीं। बाजे की आवाज़ जो कानों में पड़ी, तो तमाशाई लोग उमड़ पड़े। निशान का हाथी झंडे का फुरेरा उड़ाता सामने आया। लेकिन ज्यों ही चौक में पहुँचा, वैसे ही दीवानी के दो मज़कूरियों ने डाँटकर कहा—हाथी रोक ले। आज़ाद के नाम वारंट आया है।

लोगों के होश उड़ गए। फ़ीलवान ने जो देखा कि सरकारी आदमी लाल-लाल पगिया बाँधे, काली-काली वरदी डाटे, ख़ाकी पतलून पहने, चपरास लटकाए हाथी रोके खड़े हैं, तो सिटपिटा गया, और हाथी को जिधर उन्होंने कहा, उधर ही फेर दिया। जुलूस में हुल्लड़ मच गया। कोई तख़्त लिए भागा जाता है, कोई झंडे लिए दबका फिरता है। घोड़े थान पर पहुँचे। तामदान और पालकियों को छोड़कर कहार अड्डे पर हो रहे। बाजेवाले गलियों में घुस गए।

आज़ाद और ख़ोजी मज़कूरियों के साथ चले, तो शहर के बाहर जा पहुँचे। एकाएक हाथी जो गरजा, तो ख़ोजी और मीर साहब पीनक से चौंक पड़े।

ख़ोजी—एँ, पंशाख़े चढ़ाओ, पंशाख़े! अबे, यह क्या अंधेर मचा रक्खा है! ज़री यों ही आँख झपक गई, तो सारी की-कराई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिहनत ख़ाक में मिला दी । अब मैं उतरकर कोड़े फटकारूँगा, तब मानेंगे । बातों के आदमी कहीं लातों से मानते हैं ।

मीर साहब—हैं, हैं ! ओ पीलवान ! यह हाथी क्या आतशबाज़ी से भड़कता है ? बढ़ा ले चलो । मील-मील, धत-धत । अरे भई ख़ोजी, यह किस मैदान में आ निकले ? आख़िर, यह माजरा क्या है भाई ?

ख़ोजी—पंशाख़े चढ़ाओ, पंशाख़े । और इन बाजेवालों को क्या साँप सूँघ गया है ? ज़रा ज़ोर-ज़ोर छेड़े जाओ । अब तो बिहाग का वक़्त है, बिहाग का ।

मीर साहब—अजी, आँखें तो खोलिए, रोशनी का चिराग़ गुल हो गया । मुसीबत में आ फँसे । आप वही बेवक़्त की शहनाई बजा रहे हैं । इस जँगले में आपको बिहाग की धुन समाई है ।

ख़ोजी—पंशाख़े चढ़ाओ, पंशाख़े । नहीं, मैं कच्चा पैसा तो दूँगा नहीं । झप-से चढ़ाना तो पंशाख़े । शाबाश है बेटा ।

मीर साहब तो जले-भुने बैठे ही थे ; ख़ोजी ने जब कई बार पंशाख़ों की रट लगाई, तो वह झल्ला उठे । ख़ोजी को हाथी पर से नीचे ढकेल ही तो दिया । अरा-रा-रा धम । कौन गिरा ? ज़री टोह तो लेना, कौन गिरा ?

आज़ाद—तुम गिरे, तुम । आप ही तो लुढ़के हैं, टोह क्या लें !

ख़ोजी—अरे, मैं ! यह तो कहिए, हड्डी-पसली बच गई ? यारो, ज़री देखना तो हमारा सिर बचा या नहीं ?

मज़कूरी—बचा है, बचा । नाहीं फूट । पहिरि खिहिन सुथना, औ चले फारसी छाँटै । ई बोझ उठाव ।

ख़ोजी—हाँय-हाँय, कोई मज़दूरा समझा है ! शरीफ़ और पाजी को नहीं पहचानता ? ले, अब उतारता है बोझ, या नाले में फेंक दूँ ? ओ गीदी ! लाना तो मेरी क़रौली । क्या मैं गधा हूँ ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीर साहब—गधे नहीं, तो और हो कौन ?

मज़कूरी—तैं को हस रे ? अरे तैं को हस ? उतर हाथी पर से। उतरत है कि हम आवन फिर, तैं अस न मनिहै।

मीर साहब—कहता किससे है ? कुछ बेधा तो नहीं है ! कुछ नाविर हैं, हम लो, आए।

मज़कूरी—अच्छा, तो यह बोझ उठा। थरिया-लोटिया रख मूड़े पर और अगुवा।

मीर साहब ने नीचे उतरकर देखा, तो सरकारी प्यादा वरदी डाटे खड़ा है। लगे थर-थर काँपने। चुपके-से बोझ उठाया, और मचल-मचलकर चलने लगे। दोनों मज़कूरी हाथी पर जा बैठे। ख़ोजी और मीर साहब, दोनों खदे-फँदे गिरते-पड़ते जाने लगे।

ख़ोजी—वाह री क़िस्मत ! क्यों जी मीर साहब, हम तो ख़ुदा की याद में थे, तुमको क्या हुआ था ?

मीर साहब—जहाँ आप थे, वहीं मैं भी था। यह सारी शरारत आज़ाद की है।

आज़ाद—ज़री चोंच सम्हाले हुए, नहीं मैं उतरता हूँ।

चलते-चलते तड़का हो गया। ख़ोजी बोले—लो भाई, हमारा तो भोर ही हो गया। अब जो बोझ उठाकर ले चले, उसकी सत्तर पुश्त पर लानत। यह कहकर बोझ फेंक दिया। जब ज़रा दिन चढ़ा, तो गोमती के किनारे पहुँचे। एक मज़कूरी ने कहा—ओ पीलवान, हाथी रोक दे, इनाम लेई।

फ़ीलवान—अरे, तो नहा लेना, कैसे गवँरदल हो ?

आज़ाद—कहो ख़ोजी, नहाओगे ?

ख़ोजी—यों ही न गला घोंट डालो !

नदी के पार पहुँचे, तो चंडूबाज़ की सूरत नज़र पड़ी।

चंडूबाज़—बड़े भाई, सलाम। कहो, ख़ैर-सल्लाह ? आँखें तुमको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ढूँढ़ती थीं, देखने को तरस गए। अब कहो, क्या इरादे हैं? अल्ला-रक्खी ने यह ख़त दिया है, पढ़कर चुपके-से जवाब लिख दो।

आज़ाद ने ख़त खोला और पढ़ा—

"'क्यों जी, इसी मुँह से कहते थे कि तुमसे ब्याह करूँगा! तुम तो चकमा देकर सिधारे, और यहाँ दिल कराहा करता है। नहा-धोकर कुरानशरीफ़ पर हाथ धरो कि ब्याह का वादा नहीं किया था? क्यों नाहक़ इंसाफ़ का गला कुंद छुरी से रेतते हो। इस ख़त का जवाब लिखना, नहीं मैं अपनी जान दे दूँगी।"

आज़ाद ने जवाब लिखा—

"सुनो बीबी, हम कोई उठाईगीरे नहीं हैं। हम ठहरे शरीफ़, तुम हो भठियारी। भला, फिर हमसे क्योंकर बने। अब उस ख़याल को दिल से निकाल दो। तुम्हारे कारन मज़कूरियों की क़ैद में हूँ। तुम्हें मुँह न लगाता, तो इतना ज़लील क्यों होता।"

चंडूबाज़ तो ख़त लेकर रवाना हुए, उधर का क़िस्सा सुनिए। नवाब झूम-झूमकर बग़ीचे में टहल रहे थे, आँखें फाड़-फाड़कर देखते थे कि जुलूस अब आया, और अब आया। एकाएक चोबदार ने आकर कहा—ख़ुदावंद, लुट गए, लुट गए! वह देखो साहब तुम्हारे, लुट गए।

नवाब—अरे, कुछ मुँह से कहेगा भी, क्या ग़ज़ब हो गया?

चोबदार—ख़ुदावंद, बरात को उठाईगीरों ने लूट लिया!

नवाब—बरात? बरात किसकी? कहीं शाहजी की सवारी से तो मतलब नहीं है? उफ़्, हाथों के तोते उड़ गए।

चोबदार—वह देखो साहब तुम्हारे, बरात चली आ रही थी। तमाशाई इतने जमा थे कि छतें फटी पड़ती थीं। देखो साहब तुम्हारे, जैसे बादशाह की सवारी हो। मुदा जैसे ही चौक में पहुँचे कि देखो साहब तुम्हारे, दो चपरासियों ने हाथी को फेर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस साहब तुम्हारे, सारी बरात तितर-बितर हो गई। कहाँ तो बाजे बज रहे थे, कहाँ साहब तुम्हारे, सन्नाटा छा गया।

नवाब—भला शाहजी कहाँ हैं ?

चोबदार—हुज़ूर, शाहजी को लिए फिरते हैं। यहाँ देखो साहब तुम्हारे—

नवाब—कोई है, इधर आना, इसके कल्ले पर खड़े हो जितनी बार इसके मुँह से 'वहाँ देखो साहब तुम्हारे' निकले, उतने जूते इस पर पड़ें। गधा एक बात कहता है, तो तीन सौ साठ दफ़े 'ओ देखो साहब तुम्हारे।'

चाबुक-सवार—हुज़ूर, इस वक़्त गुस्से का मौक़ा नहीं, कोई ऐसी फ़िक्र कीजिए कि शाहजी तो छूट आवें।

नवाब—एँ, क्या वह भी गिरफ़्तार हो गए ?

सवार—जी, आज़ाद, ख़ोजी, हाथी, सब-के-सब पकड़ लिए गए।

नवाब—तो यह कहिए, बेड़े-का-बेड़ा गया है। हमें यह क्या मालूम था भला, नहीं तो एक गारद साथ कर देते। आख़िर, कुछ मालूम भी हुआ कि यह धर-पकड़ कैसी थी ? सच तो यों है कि इस वक़्त मेरे हाथ-पाँव फूल गए। रुपए हमसे लो, और दौड़-धूप तुम लोग करो।

मुसाहबों की बन आई। अब क्या पूछना है, आपस में हँडिया पकने लगी। वल्लाह, ऐसा मौक़ा फिर तो हाथ आवेगा नहीं। जो कुछ लेना हो, ले लो, और उम्र-भर चैन करो। इस वक़्त यह बौखलाया हुआ है। जो कुछ कहोगे, बेधड़क दे निकलेगा। लेकिन, एक काम करो, दस-पाँच आदमी मिल-जुलकर बातें बनाओ। एक आदमी के किए कुछ न होगा। कहीं भड़क गया, तो ग़ज़ब ही हो जायगा। ख़ुदा करे, रोज़ इसी तरह वारंट जारी हो। मगर इतना याद रखिएगा कि कहीं अंदर ख़बर हुई, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेगम साहबा छछूँदर की तरह नाचेंगी । फिर करते-धरते कुछ बन पड़ेगा ।

मुबारकक़दम दरवाज़े के पास खड़ी सब सुन रही थी। लपक कर गई, और छोटी बेगम को बुला लाई । ज़री जल्दी-जल्दी क़दम उठाइए, ये सब जाने क्या वाही-तबाही बक रहे हैं। मुँह झुलस दे पकड़ के । बेगम साहबा दबे पाँव गईं, तो सुनकर मारे गुस्से के लाल हो गईं, और नवाब को अंदर बुलाया।

मुबारकक़दम—ये हुज़ूर के मुसाहब, अल्लाह जानता है, एक अड़ीमार हैं, जिनके काटे का मंतर ही नहीं । जो है, वह झूठों का सरदार। मगर हुज़ूर उनको क्या जाने क्या समझते हैं। पछुआ हवा चलती, तो ठंडा पानी पीते, अब दिन-भर शोरे का झला पानी मिलता है पीने को, और खुदा ने न्यामत खाने को दी। फिर उन्हें दूर की न सूझे, तो किसे सूझे ।

बेगम—ऐसे ही झूठे खुशामदियों ने तो लखनऊ को सत्यानाश कर दिया ।

नवाब—यह आज क्या है, क्या ?

बेगम—है क्या ? तुम्हारे मुसाहब मुँह पर तो तुम्हारी झूठी तारीफ़ें करते हैं, और पीठ-पीछे तुम्हें गालियाँ सुनाते हैं। इन सब को दुतकार क्यों नहीं देते ?

इधर तो ये बातें हो रही थीं, उधर मज़दूरियों ने आज़ाद को एक बाग़ में उतारा ।

ख़ोजी—मियाँ पीलवान, ज़री ज़ीना लगा देना ।

फ़ीलवान—अब आपके लिये ज़ीना बनवाऊँ, ऐसे तो खूब-सूरत भी नहीं हैं आप !

मीर साहब—ज़ीना क्या ढूँढ़ते हो, हाथी पर से कूदना कौन-सी बड़ी बात है !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कहकर मीर साहब बहुत ही अकड़कर दुम की तरफ़ से कूदे, तो सिर नीचे और पाँव ऊपर। रोक-रोक, हत् तेरे पीलवान की! सच है, गाड़ीवान, शुतुरवान, कोचवान, जितने वान हैं सब शरीर। लाख बचे मगर, औंधे हो गए। हमारा कल्ला ही जानता है। खट-से बोला। वह तो कहिए, मैं ही ऐसा बेहया हूँ कि बातें करता हूँ, दूसरा तो पानी न माँगता।

ख़ोजी खिलखिलाकर हँस पड़े। अब कहिए, हमने जो ज़ीना माँगा, तो हमें बनाने लगे।

मीर साहब—मियाँ, उतरते हो कि दूँ धक्का।

ख़ोजी बेचारे जान पर खेलकर जैसे ही उतरने को थे कि हाथी उठ खड़ा हुआ। या अली, या अली बचाइयो, ख़ुदा, मैं बड़ा गुनहगार हूँ।

इतना कह चुके थे कि अररर-धम, ज़मीन पर आकर ढेर हो गए। मीर साहब ने कहा—शाबास मेरे पट्ठे, ले झपाके से उठ तो जा।

ख़ोजी—यहाँ हड्डी-पसली का पता नहीं, आप फ़रमाते हैं, उठ तो जा! कितने बेदर्द हो!

दो आदमी वहीं बैठे कुछ इधर-उधर की बातें कर रहे थे। ख़ोजी और मीर साहब तो लकड़ियाँ खोजने लगे कि और नहीं तो सुलफ़ा ही उड़े, और आज़ाद इन दोनों अजनबियों की बातें सुनने लगे—

एक—भई, आख़िर मुँह फुलाए क्यों बैठे हो? क्या मुहर्रम के दिनों में पैदा हुए थे।

दूसरा—हाँ यार, क्यों न कहोगे। यहाँ जान पर बनी है, आप मुहर्रम लिए फिरते हैं। हमने बी अलारक्खी से कई रुपए महीने-भर के वादे पर लिए थे। उसको दो साल होने आए। अब वह कहती हैं, या तो हमारे रुपए दो, या हमारे मुक़दमे में गवाह हो

0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाओ। नहीं तो हम दाग देंगे, और बड़ा घर दिखावेंगे। वहाँ चक्की पीसनी होगी। सोचते हैं, गवाही दें, तो किस बिरते पर। मियाँ आज़ाद की तो सूरत ही नहीं देखी। और न दें, तो वह नालिश जड़े देती हैं। बस, यही ठान ली है कि आज शाम को झप-से चल खड़े हों। रेल को खुदा सलामत रक्खे कि भागूँ तो पता भी न मिले।

दूसरा—अरे मियाँ, वह तरकीब बताऊँ, जिसमें 'साँप मरे न लाठी टूटे।' तुम मियाँ आज़ाद से मिल जाओ; उधर अलारक्खी से भी मिले रहो। गवाही में गोल-मोल बातें कहो, और मूछों पर ताव देते हुए अदालत से आओ। बचा, तुम हो किस भरोसे पर। चार-चार गंडे में तुमको गवाह मिलते हैं, जो तड़-से झूठा कुरान या झूठी गंगा उठा लें। हमको कोई दो ही रुपए दे, कुरान उठवा ले। जो चाहे, कहवा ले। फिर वाही हो ख़ासे, दस मिलते हैं, दस! तुम्हें झूठ-सच से मतलब? सच वही है, जिसमें कुछ हाथ लगे। भई, यह तो कलजुग है। इसमें सच बोलना हराम है। और, जो कुत्ते ने काटा हो, तो सच ही बोलिए।

पहला—हज़रत सुनिए, सच फिर सच है, और झूठ फिर झूठ। इतना याद रखिएगा।

दूसरा—अबे जा, लाया वहाँ से झूठ फिर झूठ है। अरे नादान, इस ज़माने में झूठ ही सच है। एक ज़रा-सा झूठ बोलने में दस चेहरेशाही आए-गए होते हैं। ज़रा ज़बान हिला दी, और दस रुपए हज़म। दस रुपए कुछ थोड़े नहीं होते। हमें किसी से तुम दो गंडे ही दिलवा दो। देखो, हलफ़ उठा लेते हैं या नहीं।

आज़ाद—क्यों भई, और जो अपनी बात से फिर जाय, तो फिर कैसी हो? औरत की बात का एतबार क्या? बेहतर है कि अलारक्खी से स्टांप के काग़ज़ पर लिखवा लो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहला—वल्लाह, क्या सूझी है।

दूसरा—कैसा स्टांप जी ! हम क्या जानें क्या चीज़ है। बातें कर रहे हैं आप। आए वहाँ से स्टांप पर लिखवा लो ! हम क्या कोई चोर हैं ?

दोनों मज़कूरियों ने उपले जलाए, और खाना पकाने लगे। आज़ाद ने देखा, भागने का अच्छा मौक़ा है। दोनों की आँख बचाकर चल दिए, खट-से स्टेशन पर जाकर टिकट ले लिया, और एक दर्जे में जा बैठे। दो-तीन स्टेशनों के बाद रेल एक बड़े स्टेशन पर ठहरी। मियाँ आज़ाद ने असबाब को बग्घी पर लादा, और चल खड़े हुए। खट-से सराय में दाख़िल। एक कोठरी में जा डटे, और बिछौना बिछा खूब लहरा-लहराकर गाने लगे—

वहशत अयाँ है ख़ाक से मुझ ख़ाकसार की ;
भड़के हिरन भी सूँघ के मिट्टी मज़ार की।

एकाएक एक शाह साहब फ़ाखसई तहमत बाँधे, शरबती का केसरिया कुरता पहने, माँग निकाले, आँखों में सुरमा लगाए, एक जवान, चंचल, हसीन औरत के साथ आकर आज़ाद की चारपाई पर डट गए, और बोले—बाबा, हमारा नाम कुदमी शाह है। हसीनों पर जान देना हमारा ख़ास काम है। इस वक़्त आपने जो यह शेर पढ़ा, तो तबीयत फड़क गई। मगर बिना शराब के गाने का लुत्फ़ कहाँ ? शौक़ हो, तो निकालूँ प्याला और बोतल, खूब रँग जमे और सरूर गंठे।

आज़ाद—मैं तो तौबा कर चुका हूँ।

शाहजी—बचा, तौबा कैसी ? याद रख, तौबा तोड़ने के लिये और क़सम खाने के लिये है।

यह कहकर शाहजी ने झोली से सौंफ़ की विलायती मीठी शराब निकाली, और बोले—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब्ज़ बोतल में लाल-लाल शराब ;
ख़ैर ईमान का ख़ुदा हाफ़िज़ ।
शाहजी मैकदे में बैठे हैं ;
इस मुसलमान का ख़ुदा हाफ़िज़ ।

यह कहकर उस जवान औरत की तरफ़ देखकर शराब को प्याले में ढालने का इरादा किया । नाज़नीन एक अदा से आकर आज़ाद की चारपाई पर डट गई, और शराब का प्याला भरने लगी। भठियारी ने भी यह हाल देखा, तो बिजली की तरह चमकती हुई आई, और कड़ककर बोली—ऐ वाह मियाँ, अठारह-अठारह संडों को लेकर खटिया पर बैठते हो, और जो पाटी खट-से टूट जाय, तो किसके माथे ? ऐसे मुसाफ़िर भी नहीं देखे । एक तो ख़ुद ही दुबले-पतले हैं, दूसरे दस-दस को लेकर बैठते हैं । ले चारपाई ख़ाली कीजिए, हम ऐसे किराए से बाज़ आए ! आज़ाद की तो भठियारियों के नाम से रूह काँपती थी, चुपके-से चारपाई ख़ाली कर दी, और ज़मीन पर दरी बिछवाकर आ बैठे । नाज़नीन ने प्याला आज़ाद की तरफ़ बढ़ाया । पहले तो बहुत नहीं-नहीं करते रहे, लेकिन जब उसने क़समें खिला दीं, तो मजबूर होकर प्याला लिया और चढ़ा गए । दौर चलने लगा । वह भर-भर के जाम पिलाती जाती थी, और आज़ाद के जिस्म में नई जान आती जाती थी । अब तो वह मज़े में आकर खुल खेले, ख़ूब पी । 'मुफ़्त की शराब क़ाज़ी को भी हलाल है ।' यहाँ तक कि आँखें झपकने लगीं, ज़बान लड़खड़ाने लगी । बहकी-बहकी बातें करने लगे, और आख़िर नशे में चूर होकर धड़-से गिरे । शाहजी तो इस घात में आए ही थे, झपाक-से कपड़े बाँधे, जमा-जथा ली, और चलता धंधा किया । औरत भी उनके साथ-साथ लंबी हुई । मियाँ आज़ाद रात-भर बेहोश पड़े रहे । तड़के आँख खुली, तो हाल पतला । न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह शाह साहब हैं, न वह औरत, न दरी। ज़मीन पर पड़े लोट रहे हैं। प्यास के मारे गले में काँटे पड़े जाते हैं। उठे, तो लड़खड़ाकर गिर पड़े, फिर उठे फिर मुँह के बल गिरे। बारे बड़ी मुशकिल से खड़े हुए, पानी लाकर मुँह-हाथ धोए, और ख़ूब पेट भरकर पानी पिया, तो दिल को तसकीन हुई। एकाएक चारपाई पर निगाह पड़ी। देखा, सिरहाने एक ख़त रक्खा हुआ है। खोलकर पढ़ा—

"क्यों बचा! और पियो? अब पियोगे, तो जियोगे भी नहीं। कितने बड़े पियक्कड़ हो, बोतल-की-बोतल मुँह से लगा ली। अब अपनी क़िस्मत को रोओ। धत् तेरे की! क्या मज़े से माशूक़ के पास बैठे हुए गट-गट उड़ा रहे थे। गठरी घूम गई न! भई, हमारी ख़ातिर से एक जाम तो लो। कहो, तो उसी के हाथ भेजूँ। ले, अब हम जताए देते हैं, ख़बरदार, मुसाफ़िर का एतबार न करना, और सफ़र में तो किसी पर भरोसा रखना ही नहीं। देखो, आख़िर हम ले-देकर चल दिए। उम्र-भर सफ़र किया, मगर आदमी न बने।"

यह ख़त पढ़कर मियाँ आज़ाद पर सैकड़ों घड़े पड़ गए। बहुत कुछ गुल-गपाड़ा मचाया, सराय-भर को सिर पर उठाया, भठि-यारे को दो-चार चपतें लगाईं; मगर माल न मिला, न मिला। लोगों ने सलाह दी कि जाओ, थाने पर रपट लिखाओ। गिरते-पड़ते थाने में पहुँचे, तो क्या देखते हैं, थानेदार साहब बैठे हाँक रहे हैं—मैंने फ़लाँ गाँव में अट्ठारह डाकुओं से मुक़ाबिला किया, और चौंतीस बरस की चोरी बरामद की। सिपाही हाँ-में-हाँ मिलाते और भर्रे देते जाते थे कि आप ऐसे और आप वैसे, और आप डबल पैसे। इतने में आज़ाद पहुँचे। सलाम-बंदगी हुई।

थानेदार—कहिए, मिज़ाज कैसे हैं?

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—मिज़ाज फिर पूछ लेना, अब गठरी दिलवाओ उस्तादजी।

थानेदार—उस्तादजी किस भकुए का नाम है, और गठरी कैसी! आप भंग तो नहीं पी गए?

आज़ाद—ज़रा ज़बान सँभालकर बातें कीजिएगा। मैं टेढ़ा आदमी हूँ।

थानेदार—अच्छे-अच्छे टेढ़ों को तो हमने सीधा बनाया, आप हैं किस खेत की मूली? कोई है? वह हुलिया तो मिलाओ, हम तो इन्हें देखते ही पहचान गए।

ज्ञानसिंह ने हुलिया जो मिलाया, तो बाल का भी फ़र्क़ नहीं। पकड़ लिए गए, हवालात में बंद हो गए। मगर एक ही छुटे हुए आदमी थे। कानिस्टिबिल को वह भरें दिए, बातों-बातों में दोस्ती पैदा कर ली कि वह भी उनका दम भरने लगा। अब उसे फ़िक्र हुई कि इनको हवालात से टहला दे। आख़िर रात को पहरेदार की आँख बचाकर हवालात का दरवाज़ा खोल दिया। आज़ाद चुपके-से खिसक गए। दाएँ-बाएँ देखते दबे-पाँव जाने लगे। ज़रा आहट हुई, और इनके कान खड़े हुए। बारे ख़ुदा-ख़ुदा करके रास्ता कटा। सराय में पहुँचे, और भठिआरी को किराया देकर स्टेशन पर जा पहुँचे।

इक्कीसवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद रेल पर बैठकर नाविल पढ़ रहे थे कि एक साहब ने पूछा—जनाब, दो-एक दम लगाइए, तो पेचवान हाज़िर है। वल्लाह, वह धुआँधार पिलाऊँ कि दिल फड़क उठे। मगर याद रखिए, दो दम से ज़्यादा की सनद नहीं। ऐसा न हो, आप मैंसिया जोंक हो जायँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद ने पीछे फिरकर देखा, तो एक बिगड़े-दिल मज़े से बैठे हुक़ा पी रहे हैं। बोले, यह क्या अंधेर है भाई ? आप रेल ही पर गुड़गुड़ाने लगे; और हुक़ा भी नहीं, पेचवान। जो कहीं आग लग जाय, तो ?

बिगड़े-दिल—और जो रेल ही टकरा जाय, तो ? आसमान ही फट पड़े, तो ? इस 'तो' का तो जवाब ही नहीं है। ले, पीजिएगा, या बातें बनाइएगा ?

आज़ाद—जी, मुझे इसका शौक़ नहीं है।

यह कहकर फिर नाविल पढ़ने लगे। थोड़ी देर के बाद एक स्टेशन पर रेल ठहरी, तो ख़रबूज़े और आम पटे हुए थे। खँचियों-की-खँचियाँ भरी रक्खी थीं। बोले—क्यों भई, स्टेशन है या आम की दूकान ? या ख़रबूज़े की खान ? आमपुर है या ख़रबूज़ानगर ?

एक मुसाफ़िर बोले—अजी हज़रत, नज़र न लगाइए। अब की फ़सल तो खा लेने दीजिए। इसी पर तो ज़िंदगी का दार-मदार है। खेत में बेल बढ़ी, और यहाँ कच्चे बड़े की चढ़ी। आम बाज़ार में आए, और ईं जानिब बौराए। आम और ख़रबूज़े पर उधार खाए बैठे हैं। कपड़े बेच खायँ, बरतन नख़्ख़ास में पटील लावें, बदन पर लत्ता न रहे, चूल्हे पर तवा न रहे, उधार लें, सुथना तक गिरवीं रक्खें, बगड़ा करें, झगड़ा करें, मगर ख़रबूज़े पर छुरी ज़रूर चले। तड़का हुआ, चाकू हाथ में लिया, और ख़रबूज़े की टोह में चला। बाज़ार है कि महक रहा है, ख़रीदार हैं कि टूटे पड़ते हैं। रसीली खटकिन जवानी की उमंग में अच्छे-अच्छों को डाँट बताती है। मियाँ, अलग रहो, खँची पर न गिरे पड़ो। बस, दूर ही से भाव-ताव करो। लेना एक न देना दो, मुफ़्त का झंझट। ईं जानिब ने एक तराशा, दूसरा तराशा, तीसरा तराशा, खूब चक्खे। आँख चूकी, तो दो-चार फाँकें मुँह में दबाईं, और चलते-

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिरते नज़र आए। आदमी क्या, बंदर हो गए। उधर ख़रबूज़े गए, और आम की फ़सल आई, मुँह-माँगी मुराद पाई। जिधर देखिए, ढेर-के-ढेर चुने हैं। यहाँ सनक सवार हो गई। देखा, और झप-से उठाया : तराशा और खाया। माल-असबाब के कूड़े किए और बे-गिनती लिए। खाने बैठे, तो दो दाढ़ी खा गए चार दाढ़ी खा गए।

आज़ाद—यह दाढ़ी खाने के क्या माने ?

मुसाफ़िर—अजी हज़रत, आम इतने खाए कि गुठली और छिलके दाढ़ी तक पहुँचे।

मुसाफ़िर यह डींग हाँक ही रहे थे कि रेल ठहरी, और एक चपरासी ने आकर पूछा—फ़लाँ आदमी कहाँ है ?

आज़ाद—इस कमरे में इस नाम का कोई आदमी नहीं है।

मुसाफ़िर ने चपरासी की सूरत देखी, तो चादर से मुँह लपेट-कर खिड़की की दूसरी तरफ़ झाँकने लगे। चपरासी दूसरे दर्जे में चला गया।

आज़ाद—उस्ताद, तुमने मुँह जो छिपाया, तो मुझे शक होता है कि कुछ दाल में काला ज़रूर है। भई, और किसी से न कहो, यारों से तो न छिपाओ।

मुसाफ़िर—मुँह क्यों छिपाऊँ जनाब, क्या किसी का क़र्ज़ खाया है, या माल मारा है, या कहीं ख़ून करके आए हैं ?

आज़ाद—आप बहुत तीखे हूजिएगा, तो धरवा ही दूँगा। बस, कच्चा चिट्ठा कह सुनाओ, वरना मैं पुकारता हूँ फिर।

मुसाफ़िर—अरे, नहीं-नहीं, ऐसा ग़ज़ब भी न करना। साफ़-साफ़ बता दें ? हमने अब की फ़सल में ख़रबूज़े और आम ख़ूब छक-कर चक्खे, मगर टका क़सम को पास नहीं। पूछो, लावें किसके घर से ? पहले तो क़र्ज़ लिया, फिर एक दोस्त का मकान अपने नाम से पटील डाला। अब नालिश हुई है, सो हम भागे जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—ऐसे आम खाने पर लानत ! कैसे नादान हो ?

मुसाफ़िर—देखिए, नादान-वादान न बनाइएगा ! वरना बुरी ठहरेगी !

आज़ाद—अच्छा बुलाऊँ चपरासी को ?

मुसाफ़िर—जनाब, दस गालियाँ दे लीजिए, मगर जान तो छोड़ दीजिए।

इतने में एक मुसाफ़िर ने कई दर्जे फाँदे, यह उचका, यह आया, यह झपटा और धम-से मियाँ आज़ाद के पास हो रहा।

मुसाफ़िर—ग़रीबपरवर।

आज़ाद—किससे कहते हो ? हम ग़रीबपरवर नहीं, अमीर-परवर हैं ; ग़रीबपरवर हमारे दुश्मन हों।

मुसाफ़िर—अच्छा साहब, आप अमीर के बाप-परवर, दादा-पर-वरसही। हमारा आपसे एक सवाल है।

आज़ाद—सवाल स्कूल के लड़कों से कीजिए, या वकालत के उम्मेदवारों से।

मुसाफ़िर—दाता, ज़रा सुनो तो।

आज़ाद—दाता भंडारी को कहते हैं। दाता कहीं और रहते होंगे।

मुसाफ़िर—एक रुपया दिलवाओ, तो हज़ार दुआएँ दूँ।

आज़ाद—दुआ के तो हम क़ायल ही नहीं।

मुसाफ़िर—तो फिर गालियाँ सुनाऊँ ?

आज़ाद—गालियाँ दो, तो बत्तीसी पेट में हो।

मुसाफ़िर—अरे ग़ज़ब, लो, स्टेशन क़रीब आ गया। अब बेइज़्ज़त होंगे।

आज़ाद—यह क्यों ?

मुसाफ़िर—क्यों क्या, टिकट पास नहीं, घर से दो रुपए लेकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चले थे, रास्ते में लँगड़े आम दिखाई दिए। राल टपक पड़ी। आव देखा न ताव, दो रुपए टेंट से निकाले, और आम पर छुरी तेज़ की। अब गिरह में कौड़ी नहीं, 'पास न लत्ता, पान खायँ अलबत्ता।'

आज़ाद—वाह रे पेटू! भला तो यहाँ तक आए क्योंकर?

मुसाफ़िर—इसकी न पूछिए। यहाँ सैकड़ों ही अलसेटें याद हैं।

इतने में रेल स्टेशन पर आ पहुँची। टिकट-बाबू की काली-काली टोपी और सफ़ेद चमकती हुई खोपड़ी नज़र आई। टिकट! टिकट! टिकट निकालो। मियाँ आज़ाद तो टिकट देकर लंबे हुए; बाबू ने इनसे टिकट माँगा, तो लगे बग़लें झाँकने। वेल तुम्हारा टिकट कहाँ?

मुसाफ़िर—बाबूजी, हम पर तो अब की साल टिकस-विकस नहीं बँधा।

बाबू—यू फूल! तुम बेटिकट के चलता है उल्लू?

मुसाफ़िर—क्या आदमी भी उल्लू होते हैं? इधर तो देखने में नहीं आया, शायद आपके बंगाल में होता हो।

टिकट-बाबू ने कानिस्टिबिल को बुलाकर इनको हवालात भिजवाया। आम खाने का मज़ा मिला, मार और गालियाँ खाईं, सो घाते में।

घटाटोप अँधेरा छाया है, काला मतवाला बादल झूम-झूमकर पूरब की तरफ़ से आया है। वह घनेरी घटा कि हाथ-मारा न सूझे। अँधेरे ने कुछ ऐसी हवा बाँधी कि चाँद का चिराग़ गुल हो गया। यह रात है या सियहकारों का दिल? हरएक आदमी जरीब टेकता चल रहा है, मगर कलेजा दहल रहा है कि कहीं ठोकर न खायँ, कहीं मुँह के बल ज़मीन पर न लुढ़क जायँ। मियाँ आज़ाद स्टेशन से चले, तो सराय का पता पूछने लगे। एकाएक किसी आदमी से, सिर टकरा गया। वह बोला—अंधा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है क्या ? रास्ता बचा के चलो, पतंग रक्खे हुए हैं कहीं फट न जायँ।

आज़ाद—एं, रास्ते में पतंग कैसे ? अच्छी बेपर की उड़ाई।

पतंगबाज़—भई वल्लाह, क्या-क्या बिगड़े-दिलों से पाला पड़ जाता है ! हम तो नरमी से कहते हैं कि मियाँ ज़री दबकर जाओ, और आप तीखे हुए जाते हैं।

आज़ाद—अरे नादान, यहाँ हाथ-मारा सूझता ही नहीं, पतंग किस भकुए को सूझेंगे।

पतंगबाज़—क्या रतौंधी आती है ?

आज़ाद—क्या पतंग बेचने जा रहे हो ?

पतंगबाज़—अजी, पतंग बेचें हमारे दुश्मन। हम ख़ुद घर के अमीर हैं। यहाँ से चार कोस पर एक क़स्बा है, वहाँ के रईस हमारे लँगोटिए यार हैं। उनसे हमने पतंगों का मैदान बदा था। हम अपने यारों के साथ एक बारहदरी के कोठे पर थे, और वह अपने दीवानख़ाने की छत पर। कोई सात बजे से इधर भी कनकव्वे छपके, उधर भी बढ़े। ख़ूब लमडोरे लड़े। पाँच रुपए फ़ी पेच बदा था। यार, एक पतंग ख़ूब लड़ा। हमारा माँगदार बढ़ा था, और उधर का गोल-दुपन्ना। दस-बारह मिनट दाँव-घात के बाद पेच पड़ गए। पहले तो हमारे कन्ने नथ गए : हाथों के तोते उड़ गए ; समझे, अब कटे और अब कटे ; मगर वाह रे उस्ताद, ऐसे कन्ने छुड़ाए कि वाह जी वाह ! फिर पेच लड़ गए। पंसेरियों डोर पिला दी, कनकव्वा आसमान से जा लगा। जो कोई दम और ठहरता, तो वहीं जल-भुनकर ख़ाक हो जाता। इतने में हमने ग़ोता देकर एक भबका जो दिया, तो वह काटा। अब कोई कहता है कि हत्थे पर से उखड़ गया; कोई कहता है, डोर उलझ गई थी। एक कनकव्वे से हमने कोई नव-दस काटे। मगर उनकी तरफ़ कोई उस्ताद

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ गया। उसने खींच के वह हाथ दिखाए कि ख़ुदा की पनाह! हाथ ही टूटें मरदूद के! छक्के छुड़ा दिए। कभी सड़-सड़ करता हुआ नीचे से खींच गया। कभी ऊपर से पतंग पर छाप बैठा। आख़िर मैंने हिसाब जो लगाया, तो पचास रुपए के पेटे में आ गया। मगर यहाँ टका पास नहीं। हमने भी एक माल तक लिया है, अम्मा के सोने के कड़े किसी के हाथ पटीलेंगे; कोई दस तोले के होंगे। चुपके से उड़ा दूँगा, किसी को कानोकान ख़बर भी न होगी।

आज़ाद—आपके वालिद क्या पेशा करते हैं?

पतंगबाज़—ज़मींदार हैं। मगर मुझे ज़मींदारी से नफ़रत है, ज़मींदार की सूरत से नफ़रत है, इस पेशे के नाम से नफ़रत। शरीफ़ आदमी और लट्ठ लिए हुए मेड़-मेड़ घूम रहे हैं। हमसे यह न होगा। हम कोई मज़दूरे तो हैं नहीं। यह गँवारों ही को मुबारक रहे।

आज़ाद—हुज़ूर ने तालीम कहाँ तक पाई है? आप तो लंदन के अजायबख़ाने में रखने लायक़ हैं।

पतंगबाज़—यहीं के तहसीली स्कूल में कुछ दिन घास छीली है।

आज़ाद—क्या घसियारा बनने का शौक़ चर्राया था?

पतंगबाज़—जनाब, कोई छः-सात बरस पढ़े; मगर गंडेदार पढ़ाई, एक दिन हाज़िर, तो दस दिन नाग़ा। पहले दर्जे का इम्तिहान दिया, मगर लुढ़क गए। अब्बाजान ने कहा, अब हम तुम्हें नहीं पढ़ावेंगे। ख़ैर, इस झंझट से छुट्टी पाई, तो पेशकार साहब के लड़के से दोस्ती बढ़ाई। तब तक हम निरे जंगली ही थे। हद यह कि हुक़्क़ा पीना तक नहीं जानते थे। तो वजह क्या? अच्छी सोहबत में कभी बैठे ही न थे। छोटे मिर्ज़ा बेचारे ने हमें हुक़्क़ा पीना सिखाया। फिर तो उनके साथ चंडू के छींटे उड़ने लगे। पहले आप मुझे देखते, तो कहते क़ब्र में एक पाँव लटकाए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठा है। बदन में गोश्त का नाम नहीं, हड्डी-हड्डी गिन लीजिए। जब से छोटे मिर्ज़ा की सोहबत में ताड़ी पीने लगा, तब से ज़री हरा हूँ। पहले हम निरे गावदी ही थे। यह पतंग लड़ाना तो अब आया है। मगर अब की पचास के पेटे में आ गए। छोटे मिर्ज़ा से हमने तदबीर पूछी, तो वल्लाह, तड़-से बतलाया कि जब बहन, या भावज या बीवी की आँख चूके, तो कोई सोने की अदद साफ़ उड़ा दो। भई, ज़िला-स्कूल में पढ़ता, तो ऐसी अच्छी सोहबत न मिलती।

आज़ाद—वल्लाह, आप तो खराद पर चढ़ गए; "सब गुन पूरे, तुम्हें कौन कहे लँडूरे!"

पतंगबाज़—आप यहाँ कहाँ ठहरेंगे? चलिए, इस वक़्त ग़रीबख़ाने ही पर खाना खाइए; सराय में तो तकलीफ़ होगी। हाँ, जो कोई और बात हो, तो क्या मुज़ायक़ा, (मुसकिराकर) सच कहना उस्ताद, कुछ लसरका है?

आज़ाद—मियाँ, यहाँ दिल ही नहीं है पास, मुहब्बत करेंगे क्या। चलिए, आप ही के यहाँ मेहमान हों—यहाँ तो बेफ़िक्री के हाथ बिक गए हैं। मगर उस्ताद, इतना याद रहे कि बहुत तकलीफ़ न कीजिएगा।

पतंगबाज़—वल्लाह, यह तो वही मसल हुई कि बस, एक दस सेर का पुलाव तो बनवाइएगा, मगर तकल्लुफ़ न कीजिएगा! मानता हूँ आपको।

आज़ाद और पतंगबाज़ इक्के पर बैठे। इक्का हवा से बातें करता चला, तो खट-से मकान पर दाख़िल। अंदर से बाहर तक ख़बर हो गई कि मँझले मियाँ आ गए। मियाँ आज़ाद और वह, दोनों उतरे। इतने में एक लौंडी अंदर से आकर बोली—चलिए, बड़े साहब ने आपको याद किया है।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पतंगबाज़—ऐ है, नाक में दम कर दिया, आते देर नहीं हुई और बुला लगे। चलो, आते हैं। आपके लिये हुक्का भर लाओ। हज़रत, कहिए ज़री, वालिद से मिल आऊँ? गाना-वाना सुनिए, तो बुलाऊँ किसी को उधर लौंडी अंदर पहुँची, तो बड़े मियाँ से बोली—उनके पास उनके कोई दोस्त मसनद-तकिया लगाए बैठे हैं।

मियाँ—उनके दोस्तों की न कहो। शहर-भर के बदमाश, मक्कार, झूठों के सरदार उनके लँगोटिए यार हैं। भलेमानु से मिलते-जुलते तो उन्हें देखा ही नहीं।

लौंडी—नहीं मियाँ, सकल-सूरत से तो शरीफ़ भलेमानु मालूम होते हैं।

ख़ैर, रात को आज़ाद और मँझले मियाँ ने मीठी नींद के म उठाए, सुबह को हवाली-मवाली जमा हुए।

एक—हुज़ूर, कल तो ख़ूब-ख़ूब पेंच लड़े, और हवा अच्छी थी।

पतंगबाज़—पेंच क्या लड़े, पचास के माथे गई। ख़ैर, इस तो यहाँ ग़म नहीं, मगर किरकिरी बड़ी हुई।

दूसरा—वाह हुज़ूर, किरकिरी की एक ही कही। क़सम ख़ु की, वह लमडोरा पेंच निकाला कि देखनेवाले दंग रह गए ज़माना-भर यही कहता था कि भई, पेंच क्या काटा, कमा किया। कुछ इनाम दिलवाइए, ख़ुदावंद। आपके क़दमों की क़सम, आज शहर-भर में उस पेंच की धूम है। चालीस-पचास रुपयों की भी कोई हक़ीक़त है!

शाम के वक़्त आज़ाद और मियाँ पतंगबाज़ बैठे गप-शप क रहे थे कि एक मौलवी साहब लटपटी दस्तार खोपड़ी पर जमाए कानी आँख को उसके नीचे छिपाए, दूसरी में बरेली का सुरमा लगाए कमरे में आए। उन्होंने अलेकसलेम के बाद जेब से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक इश्तिहार निकालकर आज़ाद के हाथ में दिया। आज़ाद ने इश्तिहार पढ़ा, तो फड़क गए। एक मुशायरा होनेवाला था। दूर-दूर से शायर बुलाए गए थे। तरह का मिसरा था—

"हमसे उस शोख़ ने ऐयारी की"

मौलवी साहब तो उलटे पाँव लंबे हुए, यहाँ मुशायरे की तारीख़ जो देखते हैं, तो इकतीस फ़रवरी लिखी हुई है। हैरत हुई कि फ़रवरी तो उनतीस और कभी अट्ठाईस ही दिन का महीना होता है, यह इकतीस फ़रवरी कौन-सी तारीख़ है! बारे मालूम हुआ कि इसी वक़्त मुशायरा था। ख़ैर, दोनों आदमी बड़े शौक़ से पता पूछते हुए गुलाबी-बारहदरी में दाख़िल हुए। वहाँ बड़ी रौनक़ थी। नई-नई वज़ा, नए-नए फ़ैशन के लोग जमा हैं। किसी का दिमाग़ ही नहीं मिलता; जिसे देखो, तानाशाह बना बैठा है, दुनिया की बादशाहत को जूती की नोक पर मारता है। शायरी के शौक़ीन उमड़े चले आते हैं। कहीं तिल रखने की जगह नहीं। जब रात भीगी, और चाँदनी खूब निखरी, तो मुशायरा शुरू हुआ। शायरों ने चहकना शुरू किया। मजलिस के लोग एक-एक शेर पर इतना चीख़े-चिल्लाए कि होंठ और गले सूखकर काँटा हो गए। ओहो हो हो, आहा हा हा, वाह-वाह, सुभान-अल्लाह के दौंगरे बरस रहे थे। शायर ने पूरा शेर पढ़ा भी नहीं कि यार लोग ले उड़े। वाह, हज़रत, क्यों न हो! क़सम ख़ुदा की! क़लम तोड़ दिया! वल्लाह, आज इस लखनऊ में आपका कोई सानी नहीं! एक शायर ने यह ग़ज़ल पढ़ी—

हमको देखा, तो वह हँस देते हैं; आँख छिपती ही नहीं यारी की।

महफ़िल के लोगों ने पूरा शेर तो सुना नहीं, यारी को गाड़ी सुन लिया। गाड़ी की, वाह-वाह, क्या शेर फ़रमाया, गाड़ी की! अब जिसे देखिए, गुल मचा रहा है—गाड़ी की, गाड़ी की। मगर गुल-

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गपाड़े में सुनता कौन है। शायर बेचारा चीख़ता है कि हज़रत, गाड़ी की नहीं, यारी की : पर यार लोग अपना ही राग अलापे जाते हैं। तब तो मियाँ आज़ाद ने झल्लाकर कहा—साहबो, अगाड़ी न पिछाड़ी, चौपहिया न पालकी-गाड़ी, खुदा के वास्ते पहले शेर तो सुन लो, फिर तारीफ़ के पुल बाँधो। गाड़ी की नहीं, यारी की। आँख छिपती ही नहीं यारी की।

दूसरे शायर ने यह शेर पढ़ा—

उम्मीद रोज़े-वस्ल थी किस बदनसीब को ;
क़िस्मत उलट गई मेरे रोज़े-सियाह की।

हाज़िरीन—निगाह की, सुभान-अल्लाह निगाह की, हज़रत, यह आप ही का हिस्सा है।

शायर—निगाह नहीं, रोज़े-सियाह। निगाह से तो यहाँ कुछ माने ही न निकलेंगे।

यह कहकर उन्होंने फिर उसी शेर को पढ़ा, और सियाह के लफ़्ज़ पर खूब ज़ोर दिया कि कोई साहब फिर निगाह न कह उठें।

आधी रात तक हू-हक़ मचता रहा। कान-पड़ी आवाज़ न सुनाई देती थी। पड़ोसियों की नींद हराम हो गई। एक-एक शेर पढ़ने की चार-चार दफ़े फ़रमाइश हो रही है, और बॉस मार-तबा उठा-बैठो, सलाम-पर-सलाम और आदाब-पर-आदाब; अच्छी क़वायद हुई। लाला खुशवक़्तराय और मुंशी खुसँदराय तीन-तीन सौ शेरों की ग़ज़लें कह लाए थे, जिनका एक शेर भी दुरुस्त नहीं। एक बजे से पढ़ने बैठे, तो तीन बजा दिए। लोग कानों में उँगलियाँ दे रहे हैं, मगर वे किसी की नहीं सुनते।

वहाँ से मियाँ आज़ाद और उनके दोस्त घर आए। तड़का हो गया था। आज़ाद तो थोड़ी देर सोकर उठ गए, मगर मियाँ पतंगबाज़ ने दस बजे तक की ख़बर ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—आज तो आप बड़े सबेरे उठे। अभी तो दस ही बजे हैं। भई, बड़े सोनेवाले हो !

पतंगबाज़—जनाब, तड़का तो मुशायरे ही में हो गया था। जब आदमी सुबह को सोवेगा, तो दस बजे से पहले क्या उठेगा। और, सच तो यों है कि अभी और सोने को जी चाहता है। कुछ मुशायरे के झगड़े का भी हाल सुना? आप तो कोई चार बजे सो रहे थे। हमने सारी दास्तान सुनी। बड़ी चख़ चल गई। मौलवी बदर और मुंशी फ़िशार में तो लकड़ी चलते-चलते रह गई। जो मियाँ रंगीन न हों, तो दोनों में जूती चल जाय।

आज़ाद—यह क्यों, किस बात पर?

पतंगबाज़—कुछ नहीं, यों ही। मैं तो समझा, अब लकड़ी चली।

आज़ाद—तो मुशायरा क्या पाली थी? पूछिए, शायरी को लकड़ी और बाँक से क्या वास्ता? क़लम का ज़ोर दिखाना चाहिए कि हाथ का। किसी तरह बदर और फ़िशार में मिलाप करा दीजिए।

पतंगबाज़—ऐ तौबा। मिलाप, मिलाप हो चुका। बदर का यह हाल है कि बात की और ग़ुस्सा आ गया। और, मियाँ फ़िशार उनके भी चचा हैं। बात पीछे करते हैं, चाँटा पहले ही जमाते हैं।

आज़ाद—आख़िर बखेड़े का सबब क्या?

पतंगबाज़—सिवा हसद के और क्या कहूँ। हुआ यह कि फ़िशार ने पहले पढ़ा। इस पर मौलवी बदर बिगड़ खड़े हुए कि हमसे पहले इन्हें क्यों पढ़ने दिया गया। इनमें क्या बात है। हम भी तो उस्ताद के लड़के हैं। इस पर फ़िशार बोले—अभी बच्चे हो, हिज्जे करना तो जानते नहीं, शायरी क्या जानो। कुछ दिन उस्ताद की जूतियाँ सीधी करो, तो आदमी बनो। बदर ने

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आस्तीनें उलट लीं, और चढ़ दौड़े। फ़िशार के शागिर्दों ने भी हाथ सीधा किया। इस पर लोगों ने दौड़कर बीच-बचाव कर दिया।

शाम के वक़्त मियाँ आज़ाद ने कहा—भई, अब तो बैठे-बैठे जी घबराता है। चलिए, ज़रा चार-पाँच कोस सैर तो कर आवें। पतंगबाज़ ने चार-पाँच कोस का नाम सुना, तो घबराए। यह बेचारे महीन आदमी, आधकोस भी चलना कठिन था; दस क़दम चले, और हाँफने लगे। कहीं गए भी, तो टाँघन पर। भला दस मील कौन जाता? बोले—हज़रत, मैं इस सैर से बाज़ आया। आपको तो डाक के हरकारों में नौकरी करनी चाहिए। मुझे क्या कुत्ते ने काटा है कि बेसबब पँचकोसी चक्कर लगाऊँ, और आदमी से ऊँट बन जाऊँ? आप जाते हैं, तो जाइए, मगर जल्द आइएगा। सच कहते हैं, लंबा आदमी अक़्ल का दुश्मन होता है। यह गप उड़ाने का वक़्त है, या जंगल में घूमने का?

एक मुसाहिब—आप बजा फ़रमाते हैं, भलेमानसों को कभी जंगल की धुन समाई ही नहीं। और, हुज़ूर के यहाँ घोड़ा-बग्घी सब सवारियाँ मौजूद हैं। जूतियाँ चटख़ाते हुए आपके दुश्मन चलें।

आज़ाद—जनाब, यह नज़ाकत नहीं है, इसको तपेदिक़ कहते हैं। आप पाँच कोस न चलिए, दो ही कोस चलिए, आध ही कोस चलिए।

पतंगबाज़—नहीं जनाब, माफ़ फ़रमाइए।

आज़ाद लंबे-लंबे डग बढ़ाते पश्चिम की तरफ़ रवाना हुए।

बाईसवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद के पाँव में तो सनीचर था। दो दिन कहीं टिक जायँ, तो तलवे खुजलाने लगें। पतंगबाज़ के यहाँ चार-पाँच दिन जो जम गए, तो तबीयत घबराने लगी। लखनऊ की याद आई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोचे, अब वहाँ सब मामला ठंडा हो गया होगा। बोरिया-बँधना उठाया, और शिकरम-गाड़ी की तरफ़ चले। रेल पर बहुत चढ़ चुके थे, अब की शिकरम पर चढ़ने का शौक़ हुआ। पूछते-पूछते वहाँ पहुँचे। डेढ़ रुपए किराया तय हुआ, एक रुपया बयाना दिया। मालूम हुआ, सात बजे गाड़ी छूट जायगी, आप साढ़े छः बजे आ जाइए। आज़ाद ने असबाब तो वहीं रक्खा, अभी तीन ही बजे थे, पतंगबाज़ के यहाँ आकर ग़प-शप करने लगे। बातों-बातों में पौने सात बज गए। शिकरम की याद आई, बचा-खुचा असबाब मज़दूर के सिर पर लादकर लदे-फँदे घर से चल खड़े हुए। राह में लंबे-लंबे डग धरते, मज़दूरों को ललकारते चले आते हैं कि तेज़ चलो, क़दम जल्द उठाओ। जहाँ सन्नाटा देखा, वहाँ थोड़ी दूर दौड़ने भी लगे कि वक़्त पर पहुँचें; ऐसा न हो कि गाड़ी छूट जाय। वहाँ ठीक सात बजे पहुँचे, तो सन्नाटा पड़ा हुआ। आदमी न आदम ज़ाद। पुकारने लगे—अरे मियाँ चपरासी, मुंशीजी, अजी मुंशीजी! क्या साँप सूँघ गया? बड़ी देर के बाद एक चपरासी निकला। कहिए, क्या डाक कीजिएगा?

आज़ाद—और सुनिए। डाक कीजिएगा की एक ही कही। मियाँ बयाने का रुपया भी दे चुके।

चपरासी—अच्छा, तो इस घास पर बिस्तर जमाइए, ठंडी-ठंडी हवा खाइए, या ज़रा बाज़ार की सैर कर आइए।

आज़ाद—ऐं, सैर कैसी? डाक छूटेगी आख़िर किस वक़्त?

चपरासी—क्या मालूम, देखिए, मुंशीजी से पूछूँ।

आज़ाद ने मुंशीजी के पास जाकर कहा—अरे साहब, सात बजे बुलाया था, जिसके साढ़े सात हो गए! अब और कब तक बैठा रहूँ?

मुंशीजी—जनाब, आज तो आप-ही-आप हैं, और कोई मुसाफ़िर ही नहीं। एक आदमी के लिये चालान थोड़े छोड़ेंगे।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—कहीं इस भरोसे न रहिएगा ! बयाना दे चुका हूँ।
मुंशी—अच्छा, तो ठहरिए।

आठ बज गए, नव बज गए, दस बज गए, कोई ग्यारह बजे तीन मुसाफ़िर आए। तब जाकर शिकरम चली। कोई आधकोस तक तो दोनों घोड़े तेज़ी के साथ गए, फिर सुरंग बोल गया। यह गिरा, वह गिरा। कोचवान ने कोड़े-पर-कोड़े जमाना शुरू किया; पर घोड़े ने भी ठान ली कि टलूँगा ही नहीं। कोचमैन, घसियारा, बारगीर, सब-के-सब ठोक रहे थे; मगर वह खड़ा हाँफता है। बारे बड़ी मुशकिल से फूँक-फूँककर क़दम रखता हुआ दूसरी चौकी तक आया।

दूसरी चौकी में एक टट्टू दुबला-पतला, दूसरा घोड़ा मरा हुआ-सा था; हड्डियाँ-हड्डियाँ गिन लीजिए। यह पहले ही से रंग लाए। कोचमैन ने खूब कोड़े जमाए, तब कहीं चले। मगर दस क़दम चले थे कि फिर दम लिया। साईस ने आँखें बंद करके रस्सी फटकारनी शुरू की। फिर दस-बीस क़दम आहिस्ता-आहिस्ता बढ़े, फिर ठहर गए। ख़ुदा-ख़ुदा करके तीसरी चौकी आई।

तीसरी चौकी में एक दुबला-पतला मुश्की रंग का घोड़ा और दूसरा नुक़रा था। पहले ज़रा चीं-चपड़, फिर चले। एक आधकोस गए थे कि कीचड़ मिली, फिर तो क़यामत का सामना था। घोड़े थान की तरफ़ भागते थे, कोचमैन रास थामे टिक-टिक करता जाता था, बारगीर पहियों पर ज़ोर लगाते थे। मुसाफ़िरों को हुक्म हुआ कि उतर आइए; ज़रा हवा खाइए। बेचारे उतरे। आधकोस तक पैदल चले। घोड़े क़दम-क़दम पर मुँह मोड़े देते थे। वह चिल्ल-पों मची हुई थी कि ख़ुदा की पनाह। आधकोस के बाद हुक्म हुआ कि अपना-अपना बोझ उठाओ; गाड़ी भारी है। चलिए साहब, सबने गठरियाँ सँभालीं ! सिर पर असबाब लादे चले आते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। तीन घंटे में कहीं चौकी तय हुई, मुसाफ़िरों का दम टूट गया, कोचमैन और साईस के हाथ कोड़े मारते-मारते और पहियों पर ज़ोर लगाते-लगाते बेदम हो गए।

चौथी चौकी की जोड़ी देखने में अच्छी थी। लोगों ने समझा था, तेज़ जायगी; मगर जमाली ख़रबूज़ों की तरह देखने ही-भर की थी। कोचवान और बारगीरों ने लाख-लाख ज़ोर लगाया, मगर उन्होंने ज़रा कान तक न हिलाए, कनौती तक न बदली। बुत बने खड़े हैं, मैदान में अड़े हैं। कोई तो घास का मुट्ठा लाता है, कोई दूर से तोबड़ा दिखाता है, कोई पहिए पर ज़ोर लगाता है, कोई ऊपर से कोड़े जमाता है। आख़िर मुसाफ़िरों ने भी उतरकर ज़ोर लगाया; मगर टाँय-टाँय फ़िस। आख़िर घोड़ों के एवज़ बैल जोते गए।

पाँचवीं चौकी में बाबा आदम के वक़्त का एक घोड़ा आया। घोड़ा क्या ख़च्चर था। आँखें माँग रहा था। मक्खियाँ भिन-भिन करती थीं। रात को भी मक्खियों ने इसका पीछा न छोड़ा।

आज़ाद—अरे भई, अब चलो न। आख़िर यहाँ क्या हो रहा है। रास्ता चलने ही से कटता है।

कोचमैन—ऐ लो साहब, घोड़े का तो बंदोबस्त कर लें। एक ही घोड़ा तो इस चौकी पर है।

आज़ाद—अजी, दूसरी तरफ़ भैंस जोत देना।

एक मुसाफ़िर—या हम एक सहल तदबीर बतावें, मुसाफ़िरों से कहिए उतर पड़ें, बोझ अपना-अपना सिर पर लादें, और ज़ोर लगाकर बग्घी को एक चौकी तक ढकेल ले जाएँ।

इतने में एक भठियारा अपने टट्टू को टिक-टिक करता चला आता था। कोचवान ने पूछा, कहो भाई, भाड़ा करते हो? जो चाहे, सो माँगो, देंगे। नक़द दाम लो, और बग्घी पर बैठ जाओ। एक चौकी तक तुम्हारे टट्टू को बग्घी में जोतेंगे।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भठियारा—वाह, अच्छे आए! टटुआ कभी गाड़ी में जोता भी गया है? मुर्गी के बराबर टट्टू, और जोतने चले हैं शिकरम में। यों चाहे पीठ पर सवार हो लो, मुदा डाकगाड़ी में कसे जा सकता है।

कोचमैन—अरे भई, तुमको भाड़े से मतलब है, या तक़रीर करोगे? हम तो अपनी तरकीब से जोत लेंगे।

आज़ाद ने भठियारे से कहा—रुपया टेंट में रक्खो, और कहो, अच्छा, जोतो। कुछ थक-थकाकर आप ही हार जायँगे। रुपया तुम्हारे बाप का हो जायगा। वह भी राज़ी हो गया। अब कोचमैन ने टट्टू को जोतना चाहा; मगर उसने सैकड़ों ही बार पुश्तक उछाली, दुलत्तियाँ झाड़ीं, और गाड़ी के पास न फटका। इस पर कोचवान ने टट्टू को एक कोड़ा मारा। तब तो भठियारा आग हो गया। ऐ वाह मियाँ, अच्छे मिले, हमने पहले ही कह दिया था कि हमारा जानवर बग्घी में न चलेगा। आपने ज़बरदस्ती की। अब गधे की तरह गद-गद पीटने लगे।

वह तो टट्टू को बग़ल में दाब लंबा हुआ, यहाँ शिकरम मैदान में पड़ी हुई है। मुसाफ़िर जम्हाइयाँ ले रहे हैं। साईस चिलम-पर-चिलम उड़ाते हैं। सब मुसाफ़िरों ने मिलकर क़सम खाई कि अब शिकरम पर न बैठेंगे। ख़ुदा जाने, क्या गुनाह किया था कि यह मुसीबत सही। पैदल आना इससे कहीं अच्छा।

पाँचवीं चौकी के आगे पहुँचे, तो एक मुसाफ़िर ने, जिसका नाम लाला पलटू था, ठर्रे की बोतल निकाली, और लगा कुज्जी-पर-कुज्जी उड़ाने। मियाँ आज़ाद का दिमाग़ मारे बदबू के परेशान हो गया। मज़हब से तो उन्हें कोई वास्ता न था; क्योंकि ख़ुदा के सिवा और किसी को मानते ही न थे; लेकिन बदबू ने उन्हें बेचैन कर दिया। एक दूसरे मुसाफ़िर रिसालदार थे। उनकी जान भी अज़ाब में थी। वह शराब के नाम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर लाहौल पढ़ते, और उसकी बू से कोसों भागते थे। जब बहुत दिक़ हो गए, तो मियाँ आज़ाद से बोले—हज़रत, यह तो बेढब हुई। अब तो इनसे साफ़-साफ़ कह देना चाहिए कि ख़ुदा के वास्ते इस वक़्त न पीजिए। थोड़ी देर में हमको और आपको गालियाँ न देने लगें, तो कुछ हारता हूँ। ज़रा आँख दिखा दीजिए, जिसमें बहुत बढ़ने न पावें।

आज़ाद—ख़ुदा की क़सम, दिमाग़ फटा जाता है। आप डपट-कर ललकार दीजिए। न माने, तो मैं कान गरमा दूँगा।

रिसालदार—कहीं ऐसा ग़ज़ब भी न कीजिएगा! पंजे झाड़कर लड़ने को तैयार हो जायगा। शराबी के मुँह लगना कोई अच्छी बात थोड़े है।

दोनों में यही बातें हो रही थीं कि लाला पलटू ने हाँक लगाई—हरे-हरे बाग़ में गोला, बोला, पग आगे, पग पीछे। यह बेतुकी कहकर हाथ जो छिड़का, तो रिसालदार की दोनों टाँगों पर शराब की छींटें पड़ गईं। हाँय-हाँय, बदमाश, अलग हट! उठ जा यहाँ से। नहीं तो दूँगा एक लप्पड़।

पलटू—बरसो राम झड़ाके से; रिसालदार की बुढ़िया मर गई फाके से। हमारा बाप गधा था।

रिसालदार—चुप, खोंस दूँ बाँस मुँह में!

पलटू—अजी, तो हँसी-हँसी में रोए क्यों देते हो? वाह, हम तो अपने बाप को बुरा कहते हैं।

आज़ाद—क्या तुम्हारे बाप गधे थे?

पलटू—और कौन थे? आप ही बताइए। उमर-भर डोली उठाई, मगर मरते दम तक न उठाना आई।

रिसालदार—क्या कहार था?

पलटू—और नहीं तो क्या चमार था, या बेलदार था? या आपकी तरह रिसालदार था?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—है नशे में तो क्या, बात पक्की कहता है।

पलटू—अजी, इसमें चोरी क्या है? हम कहार, हमारा बाप कहार।

आज़ाद—कहिए, आपकी महरी तो ख़ैरियत से है।

पलटू—चल शिकरम, चल घोड़, बिगुल बजे भोपू भोपू। सामने काँटा, दुकान में आटा, कबड़िए के यहाँ भाँटा, रिसालदार के लगाऊँ चाँटा।

रिसालदार—ऐसा न हो कि मैं नशा-वशा सब हिरन कर दूँ। ज़बान को लगाम दे।

पलटू—अच्छा साईस है।

आज़ाद—अबे, साईसी इल्म दरियाव है।

पलटू—तेरा सिर नाव है, तू बनबिलाव है।

रिसालदार—कोचमैन, बग्घी ठहराओ।

पलटू—कोचमैन, बग्घी चलाओ।

मियाँ आज़ाद ने देखा, रिसालदार का चेहरा मारे ग़ुस्से के लाल हो गया, तो उन्होंने बात टाल दी, और पूछा—क्यों पलटू महराज, सच कहना, तुमने तो कभी डोली नहीं उठाई? पलटू बोले—नहीं, कभी नहीं। हाँ, बरतन माँजे हैं। मगर होश सँभालते ही मदरसे में पढ़ने लगे, और अब तार-घर में नौकर हैं। रिसालदारजी, लो, पीते हो? रिसालदार के मुँह के पास कुज्जी ले जाकर कहा—पियो, पियो। इतना कहना था कि रिसालदार जल-भुनके ख़ाक हो गए, तड़-से एक चाँटा रसीद किया, दूसरा और दिया, फिर तीन-चार और लगाए। पलटू मज़े से बैठे चपतें खाया किए। फिर एक क़हक़हा लगाकर बोले—अबे जा, बड़ा रिसालदार बना है। नाम बड़ा दरसन थोड़े। एक जूँ भी न मरी। रिसालदारी क्या ख़ाक करते हो? चलो, अब तो एक कुज्जी पियो। दूँ फिर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिसालदार—भई, इसने तो नाक में दम कर दिया। पीटते-पीटते हाथ थक गए।

कोचमैन—रिसालदार साहब, यह क्या गुल मच रहा है ?

आज़ाद—बड़ी बात कि तुम जीते तो बचे ! हम समझते थे कि साँप सूँघ गया। यहाँ मार-धार भी हो गई, तुम्हें ख़बर ही नहीं।

कोचमैन—मार-धार ! यह मार-धार कैसी ?

रिसालदार—देखो, यह सुअर बैठा शराब पी रहा है, और सबको गालियाँ देता है। मैंने ख़ूब पीटा, फिर भी नहीं मानता।

पलटू—झूठ हो ! किसने पीटा ? कब पीटा ? यहाँ तो एक जूँ भी न मरी।

कोचमैन—लाला, थोड़ी-सी हमको भी पिलाओ।

पलटू और कोचमैन, दोनों कोच-बक्स पर जा बैठे, और कुज्जियों का दौर चलने लगा। जब दोनों बदमस्त हुए, तो आपस में धौल-धप्पा होने लगा। इसने उसके थप्पड़ लगाया, उसने इसके एक टीप जड़ी। कोचमैन ने पलटू को ढकेल दिया। पलटू ने गिरते ही पाँव पकड़कर घसीटा, तो कोचमैन भी धम-से गिरे। दोनों चिमट गए। एक ने कूले पर लादा, दूसरा बग़ली डूबा। मुक्का चलने लगा। कोचमैन ने झपटके पलटू की टँगड़ी ली, पलटू ने उसके पट्टे पकड़े। रिसालदार को गुस्सा आया, तो पलटू के बेभाव की चपतें लगाईं। एक, दो, तीन करके कोई पचास तक गिन गए। आज़ाद ने देखा कि मैं ख़ाली हूँ। उन्होंने कोचमैन को चपतियाना शुरू किया।

आज़ाद—क्यों बचा, फिर पियोगे शराब ? सुअर, गाड़ी चलाता है कि शराब पीता है।

रिसालदार—तोड़ दूँ सिर, पटक दूँ बोतल सिर पर।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पलटू—तो आप क्या अकड़ रहे हैं ? आपकी रिसालदारी को तो हमने देख लिया ! देखो, कोचमैन के सिर पर आधे बाल रह गए, यहाँ बाल भी न बाँका हुआ।

रिसालदार—बस भई, अब हम हार गए।

इस झंझट में तड़का हो गया। मुसाफ़िर रात-भर के जगे हुए थे, झपकियाँ लेने लगे। मालूम नहीं, कितनी चौकियाँ आईं, और गईं। जब लखनऊ पहुँचे, तो दोपहर ढल चुकी थी।

तेईसवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद शिकरम पर से उतरे, तो शहर को देखकर बाग़-बाग़ हो गए। लखनऊ में घूमे तो बहुत थे, पर इस हिस्से की तरफ़ आने का कभी इत्तिफ़ाक़ न हुआ था। सड़कें साफ़, कूड़े-करकट का नाम नहीं, गंदगी का नाम नहीं। वहाँ एक रंगीन कोठी नज़र आई, तो आँखों ने वह तरावट पाई कि वाह जी, वाह। उसकी बनावट और सजावट ऐसी भाई कि सुभान-अल्लाह। बस, दिल में खुब ही तो गई। रविशें दुनिया से निराली, पौदों पर वह जोबन कि आदमी बरसों घूरा करे।

मियाँ आज़ाद ने एक हरे-भरे दरख़्त के साए में आसन जमाया। टहनियाँ हवा के झोंकों से झूमती थीं, मेवे के बोझ से ज़मीन को बार-बार चूमती थीं। आज़ाद ठंडे-ठंडे हवा के झोंकों का मज़ा ले रहे थे कि एक मुसाफ़िर उधर से गुज़रा। आज़ाद ने पूछा—क्यों साहब, इस कोठी में कौन रईस रहता है ?

मुसाफ़िर—रईस नहीं, एक रईसा रहती हैं। बड़ी मालदार हैं। रात को रोज़ बजरे पर दरिया की सैर को निकलती हैं। उनकी दोनों लड़कियाँ भी साथ होती हैं।

आज़ाद—क्यों साहब, लड़कियों की उम्र क्या होगी ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसाफ़िर—अब उमर का हाल मुझे क्या मालूम। मगर सयानी हैं, बड़ी तमीज़दार हैं। और, बुढ़िया तो आफ़त की पुड़िया है।

आज़ाद—शादी अभी नहीं हुई?

मुसाफ़िर—अभी शादी नहीं हुई; न कहीं बातचीत है। दोनों बहनों को पढ़ने-लिखने और सैर करने के सिवा कोई काम नहीं। सफ़ाई का दोनों को ख़्याल है। ख़ुदा करे, उनकी शादी अच्छे घरों में हो।

आज़ाद—आपने तो वह ख़बर सुनाई कि मुझे उन लड़कियों को सैर करते हुए देखने का शौक़ हो गया।

मुसाफ़िर—तो फिर इसी जगह बिस्तर जमा रखिए।

आज़ाद—आप भी आ जायँ, तो मज़ा आवे।

मुसाफ़िर—आ जाऊँगा।

आज़ाद—ऐसा न हो कि आप न आवें, और मुझे भेड़िया उठा ले जाय।

मुसाफ़िर—आप बड़े दिल्लगीबाज़ मालूम होते हैं। यहाँ अपने वादे के सच्चे हैं। बस, शाम हुई, और बंदा यहाँ पहुँचा।

यह कहकर वह हज़रत तो चलते हुए, और आज़ाद दरख़्तों से मेवे तोड़-तोड़कर खाने लगे। फिर चिड़ियों का गाना सुना। फिर दरिया की लहरें देखीं। कुछ देर तक गाते रहे। यहाँ तक कि शाम हो गई, और वह मुसाफ़िर न आया। आज़ाद दिल में सोचने लगे, शायद हज़रत झाँसा दे गए। अब शाम से क्या बाक़ी है। आना होता तो, आ न जाते। शायद आज बेगम साहबा बजरे पर सैर भी न करेंगी। सैर करने का यही तो वक़्त है। इतने में मियाँ मुसाफ़िर ने आकर पुकारा।

आज़ाद—ख़ैर, आप आए तो! मैं तो आपके नाम को रो चुका था।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसाफ़िर—ख़ैर, अब हँसिए। देखिए, वह हाथी आ रहा है। दोनों पालकियाँ भी साथ हैं।

आज़ाद—कहाँ, कहाँ? किधर?

मुसाफ़िर—ईंट की ऐनक लगाओ। इतनी बड़ी पालकी नहीं देख सकते! हाथी भी नहीं दिखाई देता! क्या रतौंधी आती है!

आज़ाद—आहा हा! वह देखिए। ऐं, वह तो दरख़्त के साए में रुक रही।

मुसाफ़िर—घबराइए नहीं, यहीं आ रही है। अब कोई और ज़िक्र छेड़िए, जिसमें मालूम हो कि दो मुसाफ़िर थककर खड़े बातें कर रहे हैं।

आज़ाद—यह आपको खूब सूझी! हाँ साहब, अब की आम की फ़सल खूब हुई। जिधर देखो, पटे पड़े हैं; मंडी जाइए, खाँचियों की-खाँचियाँ। तरबूज़ को देख आइए, कोई टके को नहीं पूछता। और आम के सामने तरबूज़ को कौन हाथ लगावे!

ये बातें हो ही रही थीं कि बजरा तैयार हुआ। दोनों बहनें और बेगम साहबा उसमें बैठीं। एकाएक पूरब की तरफ़ से काली मतवाली घटा झूमती हुई उठी, और बिजली ने चमकना शुरू किया। मल्लाह ने बजरे को खूँटे से बाँध दिया। दोनों लड़कियाँ हाथी पर बैठीं, और घर की तरफ़ चलीं। आज़ाद ने कहा—यह बुरा हुआ। तूफ़ान ने हत्थे ही पर टोंक दिया, नहीं तो इस वक़्त बजरे की सैर देखकर दिल की कली खिल जाती। आख़िर दोनों आदमी घूमते घामते एक बाग़ में पहुँचे, तो मियाँ मुसाफ़िर बोले—हज़रत, अब की आम इतनी कसरत से पैदा हुआ कि टके सेर नहीं, टके हज़ार लग गए! लेकिन बग़ीचेवाले का यह हाल है कि जहाँ किसी भलेमानस ने राह चलते कोई आम उठा लिया, और बस, पिल पड़ा। अभी परसों ही की तो बात है। यहाँ से कोई चार कोस पर

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक मुसाफ़िर मैदान में चला जाता था। एक काना-खुतरा आम टप-से ज़मीन पर टपक पड़ा। मुसाफ़िर को क्या मालूम कि कौन इधर-उधर ताक रहा है, चुपके-से आम उठा लिया। उठाना था कि दो गवँरदल लठ कंधे पर रक्खे "मार सारे का, मार सारे का" करते निकल आए। मुसाफ़िर ने आम झट ज़मीन पर पटक दिया। लेकिन एक गँवार ने आते ही गालियाँ देनी शुरू कीं, और दूसरे ने धूसा ताना। मुसाफ़िर भी छत्री आदमी था, आग हो गया। मारे गुस्से के उसका बदन थर-थर काँपने लगा। बढ़के जो एक चाँटा देता है, तो एक गँवार लड़खड़ाके धम-से ज़मीन पर। दूसरे ने जो यह हाल देखा, तो लठ ताना। राजपूत बग़ली डूबकर जा पहुँचा, और एक आँटी जो देता है, तो चारो शाने चित। हम भी कल एक बाग़ में फँस गए थे। शामत जो आई, तो एक दरख़्त के साए में दोपहरिया मनाने बैठ गए। बैठना था कि एक ने तड़-से गाली दी। अब सुनिए कि गाली तो दी हमको, लेकिन एक पहलवान भी क़रीब ही बैठा था। सुनते ही चिमट गया, और चिमटते ही कूले पर लादा। गिरे मुँह के बल। पहलवान छाप बैठा, हफ़्ते गाँठ लिए, हलसींगड़ा बाँधकर आसमान दिखा दिया, और अपने शागिर्दों से कहा—चढ़ जाओ पेड़ पर, और आम, पत्ते, बौर, टहनी, जो पाओ, तोड़-तोड़कर फेंक दो, पेड़ नोच डालो। लेकिन लोगों ने समझाया कि उस्ताद, जाने दो; गाली देना तो इनका काम है। यह तो इनके सामने कोई बात ही नहीं, ये इसी लायक़ हैं कि खूब धुने।

आज़ाद—क्यों साहब, धुने क्यों जायँ? ऐसा न करें, तो सारा बाग़ मुसाफ़िरों ही के लिये हो जाय। लोग पेड़-का-पेड़, जड़ और फुनगी तक, चट कर जायँ। आप तो समझे कि यह एक आम के लिये कट मरा, मगर इतना नहीं सोचते कि एक-ही-एक करके

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हज़ार होते हैं। इस ताकीद पर तो यह हाल है कि लोग बाग़ के बाग़ लूट खाते हैं ; और जो कहीं इतनी तू-तू मैं-मैं न हो, तो न जाने क्या हो जाय।

मियाँ मुसाफ़िर कल आने का वादा करके चले गए। आज़ाद आगे बढ़े, तो क्या देखते हैं, एक आदमी अपने लड़के को गोदी में लिए थपकी दे-देकर सुला रहा है—'आ जा री निंदिया, तू आ क्यों न जा ; मेरे बाले को गोद सुला क्यों न जा।' आज़ाद एक दिल्लगीबाज़ आदमी, जाकर उससे पूछते क्या हैं—किसका पिल्ला है ? वह भी एक ही काँइयाँ था, बोला—दूर रह, क्यों पिला पड़ता है ? आज़ाद यह जवाब सुनकर ख़ुश हो गए। बोले—उस्ताद, हम तो आज तुम्हारे मेहमान होंगे। तुम्हारी हाज़िर-जवाबी से जी ख़ुश हो गया। अब रात हो गई है, कहाँ जायँ ! उस हँसोड़ आदमी ने इनकी बड़ी ख़ातिर की, खाना खिलाया और दोनों ने दरवाज़े पर ही लंबी तानी। तड़के मियाँ आज़ाद की नींद खुली। हँसोड़ को जगाने लगे। क्यों हज़रत, पड़े सोया ही कीजिएगा, या उठिएगा भी ? वाह रे माचा-तोड़ ! बारे बहुत हिलाने-डुलाने पर मियाँ हँसोड़ उठे, और फिर लेट गए, मगर पैताने की तरफ़ सिर करके। इतने में दो-चार दोस्त और आ गए। वाह भई, वाह, हम दो कोस से आए और यहाँ अभी खाट ही नहीं छोड़ी ! भई, बड़ा सोनेवाला है। हमने मुँह-हाथ धोया, हुक्का पिया, बालों में तेल डाला, दो चपातियाँ खाईं, कपड़े पहने, और टहलते हुए यहाँ तक आए ; मगर यह अभी तक पड़े ही हुए हैं। आख़िर एक आदमी ने उनके कान में पानी डाल दिया। तब तो आप कुलबुलाए। देखो, देखो, हैं-हैं, नहीं मानते ! वाह, अच्छी दिल्लगी निकाली है !

एक दोस्त—ज़रा आँखें तो खोलिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हँसोड़—नहीं खोलते। आपका कुछ इज़ारा है?

दोस्त—देखिए, यह मियाँ आज़ाद तशरीफ़ लाए हैं, इधर मौलवी साहब खड़े हैं। इनसे तो मिलिए, सो-सोकर नहूसत फैला रक्खी है।

मौलवी—अजी हज़रत!

हँसोड़—भई, दिक़ न करो, हमें सोने दो। यहाँ मारे नींद के बुरा हाल है, आपको दिल्लगी सूझती है।

आज़ाद—भाई साहब!

हँसोड़—और सुनिए। आप भी आए वहाँ से जान खाने। सबेरे-सबेरे आपको बुलाया किस गधे ने था? भलेमानस के मकान पर जाने का यह कौन वक़्त है भला? कुछ आपका क़र्ज़ तो नहीं चाहता? चलिए, बोरिया-बँधना उठाइए! (आँखें खोलकर) अख़्ख़ा, आप हैं? माफ़ कीजिएगा। मैंने आपकी आवाज़ नहीं पहचानी।

मौलवी—कहिए, ख़ाकसार की आवाज़ तो पहचानी? या कुछ मीन-मेख है?

हँसोड़—अख़्ख़ा, आप हैं! माफ़ कीजिएगा, मैं अपने आपे में न था।

मौलवी—हज़रत, इतना भी नींद के हाथ बिक जाना भला कुछ बात है। आठ बजा चाहते हैं, और आप पड़े सो रहे हैं। क्या कल रतजगा था? ख़ैर, मैं तो रुख़सत होता हूँ, आप हकीम साहब के नाम ख़त लिख भेजिएगा। ऐसा न हो कि देर हो जाय। कहीं फिर न लुढ़क रहिएगा। आपकी नींद से हम हारे।

हँसोड़—अच्छा मियाँ आज़ाद, और बातें तो पीछे होंगी, पहले यह बतलाइए कि खाना क्या खाइएगा? आज मामा बीमार हो गई है, और घर में भी तबीयत अच्छी नहीं है। मैंने रोज़े की

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीयत की है। आप भी रोज़ा रख लें। फ़ायदे-का-फ़ायदा, और सवाब-का-सवाब।

आज़ाद—रोज़ा आपको मुबारक रहे। अल्लाह मियाँ हमें यों ही बख़्श देंगे। यह दिल्लगी किसी और से कीजिएगा।

हँसोड़—दिल्लगी के भरोसे न रहिएगा। मैं खरा आदमी हूँ। हाँ, ख़ूब याद आया। मौलवी साहब ख़त लिखने को कह गए हैं। दो पैसे का ख़ून और हुआ। कल भी रोज़ा रखना पड़ा।

आज़ाद—दो पैसे क्यों ख़र्च कीजिएगा? अब तो एक पैसे के पोस्टकार्ड चले हैं।

हँसोड़—सच? एक डबल में? भई, अँगरेज़ बड़े हिकमती हैं। क्यों साहब, वह पोस्टकार्ड कहाँ बिकते हैं?

आज़ाद—इतना भी नहीं जानते? डाकख़ाने में आदमी भेजिए।

हँसोड़—रोशनअली, डाकख़ाने से जाकर एक आने के पोस्टकार्ड ले आओ।

रोशन—मियाँ, मैं देहाती आदमी हूँ। अँगरेज़ी नहीं पढ़ा।

हँसोड़—अरे भई, तुम कहना कि वह लिफ़ाफ़े दीजिए, जो पैसे-पैसे में बिकते हैं। जा झट-से, कुत्ते की चाल जाना, और बिल्ली की चाल आना।

रोशन—अजी, मुझसे कहिए, तो मैं गधे की चाल जाऊँ, और बिसखोपड़े की चाल आऊँ। मुल डाकवाले मुझे पागल बनावेंगे। भला आज तक कहीं पैसे में लिफ़ाफ़ा बिका है!

हँसोड़—अबे, तुझे इस हुज्जत से क्या वास्ता? डाकख़ाने तक जायगा भी, या यहीं बैठे-बैठे दलीलें करेगा!

रोशन डाकख़ाने गया, और पोस्टकार्ड ले आया। मियाँ हँसोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झपटकर क़लम-दावात ले आए, और ख़त लिखने बैठे। मगर पुराने ज़माने के आदमी थे, तारीफ़ के इतने लंबे-लंबे जुमले लिखने शुरू किए कि पोस्टकार्ड भर गया, और मतलब ख़ाक न निकला। बोले—अब कहाँ लिखें?

आज़ाद—दोटप्पी बातें लिखिए। आप तो लगे अपनी लियाक़त बघारने! दूसरा लीजिए।

हँसोड़ ने दूसरा पोस्टकार्ड लिखना शुरू किया—"जनाब, अब हम थोड़े में बहुत-सा हाल लिखेंगे। देखिए, बुरा न मानिएगा। अब वह ज़माना नहीं रहा कि वह बीघे-भर के आदाब लिखे जायँ। वह लंबी-चौड़ी दुआएँ दी जायँ। वह घर का कच्चा चिट्ठा कह सुनाना अब रिवाज के ख़िलाफ़ है। अब तो हमने क़सम खाई है कि जब क़लम उठावेंगे, दस सतरों से ज़्यादा न लिखेंगे। इसमें चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय। अब आप भी इस फ़ैशन को छोड़ दीजिए।" अरे यह ख़त भी गया। अब तो तिल रखने की भी जगह नहीं। लीजिए, बात करते-करते दो पैसे का ख़ून हो गया। इससे दो पैसे का टिकट लाते, तो ख़र्रे-का-ख़र्रा लिख डालते।

आज़ाद—मैं देखूँ तो, आपने क्या लिखा है। वाह-वाह, इस पँवाड़े का कुछ ठिकाना है। अरे साहब, मतलब से मतलब रखिए। बहुत बेहूदा न बकिए। ख़ैर, अब तीसरा कार्ड लीजिए। मगर क़लम को रोके हुए। ऐसा न हो कि आप फिर वाही-तबाही लिखने लगें।

हँसोड़—अच्छा साहब, यों ही सही। बस, ख़ास-ख़ास बातें ही लिखूँगा।

यह कहकर उन्होंने यह ख़त लिखा—"जनाब फ़ज़ीलतमआब मौलाना साहब, आप यह पैसलूचा लिफ़ाफ़ा देखकर घबरायँगे कि यह क्या बला है। डाकख़ानेवालों ने यह नई फुलझड़ी छोड़ी है। आप देखते हैं, इसमें कितनी जगह है। अगर मुख़्तसर न लिखूँ,

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो क्या करूँ। लिखनी तो बहुत-सी बातें हैं, पर इस लिफ़ाफ़े को देखकर सब आरज़ूएँ दिल में रही जाती हैं। देखिए, अभी लिखा कुछ भी नहीं, मगर काग़ज़ को देखता हूँ, तो एक तरफ़ सब-का-सब लिप गया। दूसरी तरफ़ लिखूँ, तो पकड़ा जाऊँ।" लो साहब, यह पोस्टकार्ड भी ख़तम हुआ! मियाँ आज़ाद, ये तीनों पैसे आपके नाम लिखे गए। आप चाहे दें टका नहीं, लेकिन सलाह आप ही ने दी थी।

आज़ाद—मैंने यह कब कहा था कि आप ख़त में अपनी ज़िंदगी की दास्तान लिख भेजें? यह ख़त है या राँड़ का चर्ख़ा! इतने बड़े हुए, ख़त लिखने की लियाक़त नहीं। समझा दिया, सिखला दिया कि बस, मतलब से मतलब रक्खो। मगर तुम कब मानने लगे। ख़ुदा की क़सम, तुम्हारी सूरत से नफ़रत हो गई। बस, बेतुकेपन की हद हो गई!

हँसोड़—वाह री क़िस्मत! तीन पैसे गिरह से गए, और उल्लू-के-उल्लू बने। भला आप ही लिखिए, तो जानें। देखें तो सही, आप इस ज़रा-से काग़ज़ पर कुल मतलब क्योंकर लिखते हैं। इसके लिये तो बड़ा भारी उस्ताद चाहिए, जो पिस्ते पर हाथी की तसवीर बना दे।

आज़ाद—आप अपना मतलब मुझसे कहिए, तो अभी लिख दूँ।

हँसोड़—अच्छा सुनिए—मौलवी ज़ामिनअली आपकी ख़िदमत में पहुँचे होंगे। उनको वह तीस रुपएवाली जगह दिला दीजिएगा। आपका उम्र-भर एहसान होगा। बस, इसी को ख़ूब बढ़ा दीजिए।

आज़ाद—फिर वही झक! बढ़ा क्यों दूँ? यह न कहा कि बस, यही मेरा मतलब है, इसको बढ़ा दीजिए। लाओ पोस्टकार्ड, देखो, यों लिखते हैं—

"हज़रत सलामत, मौलवी ज़ामिनअली पहुँचे होंगे। वह तीस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुपएवाला ओहदा उनको दिलवा दीजिए, तो एहसान होगा। उम्मेद है कि आप ख़ैरियत से होंगे।"

लो, देखा, इतनी-सी बात को इतना बढ़ाया कि तीन-तीन ख़त लिखे और फाड़े।

हँसोड़—ख़ूब, यह तो अच्छा दुम-कटा ख़त है! अच्छा, अब पता भी तो लिखिए।

आज़ाद ने सीधा-सादा पता लिखकर हँसोड़ को दिखलाया, तो आप पूछने लगे—क्यों साहब, यह तो शायद वहाँ तक पहुँचे ही नहीं। कहीं इतना ज़रा-सा पता लिखा जाता है। इसमें मेरा नाम कहाँ है, तारीख़ कहाँ है?

आज़ाद—आपका नाम बेवकूफ़ों की फ़िहरिस्त में है, और तारीख़ डाकख़ाने में।

हँसोड़—अच्छा लाइए, दो-चार सतरें मैं भी बढ़ा दूँ।

हज़रत ने जो लिखना शुरू किया, तो पते की तरफ़ भी लिख डाला।—थोड़े लिखने को बहुत समझिएगा। आपका पुराना गुलाम हूँ। अब कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ती।

आज़ाद—हैं-हैं! ग़ारत किया न इसको भी?

हँसोड़—क्यों, जगह बाक़ी है, पूरा पैसा तो वसूल करने दो।

आज़ाद—जी, पैसा नहीं, एक आना वसूल हो गया। एक ही तरफ़ मतलब लिखा जाता है, दूसरी तरफ़ सिर्फ़ पता। आपसे तो हमने पहले ही कह दिया था।

यह बातें हो ही रही थीं कि कई लड़के स्कूल से निकले। उनमें एक बड़ा शरीर था। किसी पर धप जमाई, किसी के चपत लगाई, किसी के कान गरमा दिए। अपने से ड्योढ़े-दूने तक को चपतियाता था। आज़ाद ने कहा—देखो, यह लौंडा कितना बदमाश है। अपने से दूने तक की ख़बर लेता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हँसोड़—भई, ख़ुदा के लिये इसके मुँह न लगना। इसके काटे का मंतर ही नहीं। यह स्कूल-भर में मशहूर है। हज़रत दो दफ़े चोरी की इल्लत में धरे गए। इनके मारे महल्ले-भर का नाकों दम है। एक क़िस्सा सुनिए। एक दफ़े हज़रत को शरारत का शौक़ चर्राया, फिर सोचने की ज़रूरत न थी। फ़ौरन् सूझती है। शरारत तो इसकी ख़मीर में दाख़िल है। एक पाँव का जूता निकालकर हज़रत ने एक आलमारी पर रख दिया। जूते के नीचे एक किताब रख दी। थोड़ी देर के बाद एक लड़के से बोले—यार, ज़रा वह किताब उतारो, तो कुछ देख-दाख लूँ; नहीं तो मास्टर साहब बेतरह ठोकेंगे। सीधा-सादा लड़का चुपके-से वह किताब उठाने गया। जैसे किताब उठाई, वैसे ही जूती मुँह पर आई। सब लड़के खिलखिलाकर हँस पड़े। मास्टर साहब अँगरेज़ थे। बहुत ही झल्लाकर पूछा—यह किसकी जूती का पाँव है? अब आप बैठे चुपचाप पढ़ रहे हैं। गोया इनसे कुछ वास्ता ही न था। मगर इनका तो दर्जा-भर दुश्मन था। किसी लड़के ने इशारे से जड़ दी। मास्टर ने आपको बुलाया, और पूछा—वेल, दूसरा पाँव कहाँ तुम्हारा? दूसरा पाँव किडर?

लड़का—पाँव दोनों ये हैं।

मास्टर—वेल, जूती, जूती?

लड़का—जूती को खावे तूती।

मास्टर—बेंच पर खड़ा हो।

लड़का—यह सज़ा मंजूर नहीं; कोई और सज़ा दीजिए।

मास्टर—अच्छा, कल के सबक़ को सौ बार लिख लाना।

लड़का—वाह-वाह, और सबक़ याद कब करूँगा?

मास्टर—अच्छा, आठ आना जुर्माना।

दूसरे दिन आप आठ आने लाए, तो मोटे पैसे खट-खट करके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेज़ पर डाल दिए। मास्टर ने पूछा—अठन्नी क्यों नहीं लाया? बोले—यह शर्त नहीं थी।

इसी तरह एक बार एक भलेमानस के यहाँ कह आए कि तुम्हारे लड़के को स्कूल में हैज़ा हुआ है। उनके घर में रोना-पीटना मच गया। लड़के का बाप, चचा, भाई, मामू, सब दौड़ते हुए स्कूल पहुँचे। औरतों ने आठ-आठ आँसू रोना शुरू किया। वे लोग जो स्कूल गए, तो क्या देखते हैं, लड़का मज़े से गेंद खेलता है। अजी, और क्या कहें, इसने अपने बाप को एक बार नमक के धोखे में फिटकिरी खिला दी, और उस पर तुर्रा यह कि कहा, क्यों अब्बाजान, कैसा गहरा चकमा दिया।

शाम के वक़्त बूढ़े मियाँ आज़ाद के पास आकर बोले—चलिए, उधर बजरा तैयार है। आज़ाद तो उनकी ताक में बैठे ही थे, हँसोड़ को लेकर उनके साथ चल खड़े हुए। नदी के किनारे पहुँचे, तो देखा, बजरे लहरों पर फ़र्राटे से दौड़ रहे हैं। एक दरख़्त के साए में छिपकर यह बहार देखने लगे। उधर उन दोनों हसीनों ने बजरे पर से किनारे की तरफ़ देखा, तो आज़ाद नज़र पड़े। शरम से दोनों ने मुँह फेर लिए। लेकिन कनखियों से ताक रही थीं। यहाँ तक कि बजरा निगाहों से ओझल हो गया।

थोड़ी देर के बाद आज़ाद उन्हीं बूढ़े मियाँ के साथ उस कोठी की तरफ़ चले, जिसमें दोनों लड़कियाँ रहती थीं। क़दम-क़दम पर शेर पढ़ते थे, ठंडी साँसें भरते थे, और सिर धुनते थे। हालत ऐसी ख़राब थी कि क़दम-क़दम पर उनके गिर पड़ने का ख़ौफ़ था। हँसोड़ ने जो यह कैफ़ियत देखी, तो झपटकर मियाँ आज़ाद का हाथ पकड़ लिया, और समझाने लगे। इस रोने-धोने से क्या फ़ायदा? आख़िर यह तो सोचो कि कहाँ जा रहे हो? वहाँ तुम्हें कोई पहचानता भी है? मुफ़्त में शरमिंदा होने की क्या ज़रूरत?

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—भई, अब तो यह सिर है और वह दर। बस, आज़ाद है और उन बुतों का कूचा।

हँसोड़—यह महज़ नादानी है; यही हिमाक़त की निशानी है। मेरी बात मानो, बूढ़े मियाँ को फँसाओ, कुछ चटाओ, फिर उनकी सलाह के मुताबिक़ काम करो। बेसमझे-बूझे जाना और अपना-सा मुँह लेकर वापस आना हिमाक़त है।

ये बातें करते हुए दोनों आदमी कोठी के क़रीब पहुँचे। देखा, बूढ़े मियाँ इनके इंतज़ार में खड़े हैं। आज़ाद ने कहा—हज़रत, अब तो आप ही रास्ता दिखावें, तो मंज़िल पर पहुँच सकते हैं; वर्ना अपना तो हाल ख़राब है।

बूढ़े मियाँ—भई, हम तुम्हारे सच्चे मददगार और पक्के तरफ़दार हैं। अपनी तरफ़ से तुम्हारे लिये कोई बात उठा न रक्खेंगे। लेकिन यहाँ का बाबा आलम ही निराला है। यहाँ परिंदों के पर जलते हैं। हवा का भी गुज़र होना मुशकिल है। मगर दोनों मेरी गोद की खिलाई हुई हैं, मौक़ा पाकर आपका ज़िक्र ज़रूर करूँगा। मुशकिल यही है कि एक ऊँचे घर से पैग़ाम आया है, उनकी मा को शौक़ चर्राया है कि वहीं ब्याह हो।

आज़ाद—यह तो आपने बुरी ख़बर सुनाई! क़सम ख़ुदा की, मेरी जान पर बन जायगी।

बूढ़े मियाँ—सब्र कीजिए, सब्र। दिल को ढारस दीजिए। अब इस वक़्त जाइए, सुबह आइएगा।

आज़ाद रुख़सत होने ही वाले थे, तो क्या देखते हैं, दोनों बहनें झरोखों से झाँक रही हैं। आज़ाद ने यह शेर पढ़ा—

हम यही पूछते फिरते हैं ज़माने-भर से;
जिनकी तक़दीर बिगड़ जाती है, क्या करते हैं।

झरोखे में से आवाज़ आई—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीना भी आ गया मुझे, मरना भी आ गया ;
पहचानने लगा हूँ तुम्हारी नज़र को मैं।

इतना सुनना था कि मियाँ आज़ाद की आँखें मारे ख़ुशी के डबडबा आईं। झरोखे की तरफ़ फिर जो ताका, तो वहाँ कोई न था। चकराए कि किसने यह शेर पढ़ा। छलावा था, टोना था, जादू था, आख़िर था क्या ? इतने में बूढ़े मियाँ ने इशारे से कहा कि बस, अब जाओ, और तड़के आओ।

दोनों दोस्त घर की तरफ़ चले, तो मियाँ हँसोड़ ने कह —हज़रत, ख़ुदा के वास्ते मेरे घर पर कूद-फाँद न कीजिएगा, बहुत शेर न पढ़िएगा, कहीं मेरी बीबी को ख़बर हो गई, तो जीना मुशकिल हो जायगा।

आज़ाद—क्या बीवी से आप इतना डरते हैं ? आख़िर ख़ौफ़ काहे का ?

हँसोड़—आपको इस झगड़े से क्या मतलब ? वहाँ ज़रा भले आदमी की तरह बैठिएगा, यह नहीं कि गुल मचाने लगे। जो सुनेगा, वह समझेगा कि कहाँ के शोहदे जमा हो गए हैं।

आज़ाद—समझ गया, आप बीबी के गुलाम हैं। मगर हमें इससे क्या वास्ता। आम खाने से मतलब कि पेड़ गिनने से ?

दोनों आदमी घर पहुँचे, तो लौंडी ने अंदर से आकर कहा—बेगम साहबा आपको कोई बीस बेर पूछ चुकी हैं। चलिए, बुलाती हैं। मियाँ हँसोड़ ने ड्योढ़ी पर क़दम रक्खा ही था कि उनकी बीबी ने आड़े हाथों ही लिया। यह दिन-दिन-भर आप कहाँ ग़ायब रहने लगे ? अब तो आप बड़े सैलानी हो गए ! सुबह के निकले-निकले शाम को ख़बर ली। चलो मेरे सामने से जाओ। आज खाना-वाना ख़ैरसल्लाह है। हलवाई की दूकान पर दादाजी का फ़ातिहा पढ़ो, तंदूरी रोटियाँ उड़ाओ। यहाँ किसी को कुत्ते ने नहीं काटा

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वक़्-बे-वक़् चूल्हे का मुँह काला किया जाय। भले आदमी दो-एक घड़ी के लिये कहीं गए तो गए; यह नहीं कि दिन-दिन-भर पता ही नहीं। अच्छे हथकंडे सीखे हैं।

हँसोड़ ने चुपके से कहा—ज़रा आहिस्ता-आहिस्ता बातें करो। बाहर एक भलामानस टिका हुआ है। इतनी भी क्या बेहयाई?

इस पर वह चमककर बोलीं—बस, बस, ज़बान न खुलवाओ बहुत। तुम्हें जो दोस्त मिलता है, वही ग... सवार, जिसके घर न द्वार, जाने कहाँ के उलफ़ती इनको मिल जाते हैं, कभी किसी शरीफ़ आदमी से दोस्ती करते नहीं देखा? चलिए अब दूर हूजिए, नहीं हम बुरी तरह पेश आवेंगे! मुझसे बुरा कोई नहीं।

मियाँ हँसोड़ बेचारे की जान अज़ाब में कि घर में बीबी कोसने सुना रही है, बाहर मियाँ आज़ाद आड़े हाथों लेंगे कि आपकी बीबी ने आपको तो ख़ैर जो कुछ कहा, वह कहा ही था, मुझे क्यों ले डाला? मैंने उनका क्या बिगाड़ा था? अपना-सा मुँह ले-कर बाहर चले आए, और आज़ाद से कहा—यार, आज रोज़े की नीयत कर लो। बीबीजान फ़ौजदारी पर आमादा हैं। बात हुई और तिनक गईं। महीनों ही रूठी रहती हैं। मगर क्या करूँ, अमीर की लड़की हैं, नहीं तो मैं एक झल्ला हूँ—मुझे यह मि-ज़ाज कहाँ पसंद। इसलिये भई, आज फ़ाक़ा है।

आज़ाद—फ़ाक़ा करें आपके दुश्मन। चलिए, किसी नानबाई हलवाई की दूकान पर। मज़े से खाना खायँ।

हँसोड़—अरे यार, इतने ही होते, तो फिर बीबी की क्यों सुनते। टका पास नहीं, हलवाई क्या हमारा मामू है?

आज़ाद—इसकी फ़िक्र न कीजिए। आप हमारे साथ चलिए, और मज़े से मिठाई चखिए। वह तदबीर सूझी है कि कभी पट ही न पड़े।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों आदमी बाज़ार पहुँचे। आज़ाद ने रास्ते में हँसोड़ को समझा-बुझा दिया। हँसोड़ तो हलवाई की दूकान पर गए, और आज़ाद ज़रा पीछे रह गए। हँसोड़ ने जाते-ही-जाते हलवाई से कहा—मियाँ, आठ आने के पैसे दो, और आठ आने की पँचमेल मिठाई। हलवाई ने ताज़ी-ताज़ी मिठाई तौल दी, और आठ आने पैसे भी गिन दिए। हँसोड़ ने पैसे तो गाँठ में बाँधे, और मिठाई उसी की दूकान पर चखने लगे। इतने में मियाँ आज़ाद भी पहुँचे, और बोले—भई लाला, ज़रा ताज़ा बेसन के लड्डू तो एक रुपए के तौल देना। उसने एक रुपए के लड्डू तौलकर चंगेर उनके हाथ में दी। इतने में मियाँ हँसोड़ ने लकड़ी उठाई, और अपनी राह चले। हलवाई ने ललकारा—मियाँ चले कहाँ ? पहले रुपया तो देते जाओ।

हँसोड़—रुपया ! अच्छा मज़ाक़ है ! अबे, क्या तूने रुपया नहीं पाया। यहाँ पहले रुपया देते हैं, पीछे सौदा लेते हैं। अच्छे मिले ! क्या दो-दो दफ़े रुपया लोगे ? कहीं मैं थाने में रपट न लिखवा दूँ ! मुझे भी कोई गँवार समझे हो ! अभी चेहरेशाही दे चुका हूँ। अब क्या किसी का घर लेगा ?

अब हलवाई और हँसोड़ में तकरार होने लगी। बहुत-से आदमी जमा हो गए। कोई कहता है, लाला घास तो नहीं खा गए हो ; कोई कहता है, मियाँ एक रुपए के लिये नियत डामाडोल न करो ; ईमान सलामत रहेगा, तो बहुत रुपए मिलेंगे।

आज़ाद—लाला, कहीं इसी तरह मेरा भी रुपया न भूल जाना।

हलवाई—क्या, आपका रुपया ? आपने रुपया किसको दिया ?

अब जो सुनता है, वही हलवाई ही को उल्लू बनाता है। लोगों ने बहुत कुछ लानत-मलामत की कि शरीफ़ आदमी को बेइज़्ज़त करते हो। इतने में उस हलवाई का बुड्ढा बाप जो आया, तो देखता

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या है कि दूकान पर भीड़ लगी हुई है। पूछा, क्या माजरा है? क्या दूकान लुट गई? एक बिगड़े-दिल ने कहा—अजी, लुट तो नहीं गई, मगर अब तुम्हारी दूकान की साख जाती रही। अभी एक भलेमानस ने खन-से रुपया फेंका। अब कहता है कि हमने रुपया पाया ही नहीं। उसको छोड़ा; तो दूसरे शरीफ़ का दामन पकड़ लिया कि तुमने रुपया नहीं दिया; हालाँकि वह बेचारे सैकड़ों क़समें खाते हैं कि मैं दे चुका हूँ। हलवाई बड़ा तीखा बुड्ढा था, सुनते ही आग हो गया। झल्लाकर अपने लड़के की खोपड़ी पर तानके एक चपत लगाई, और बोला—कहता हूँ कि भंग न खाया कर, मानता ही नहीं। जाकर बैठ दूकान पर।

मियाँ आज़ाद और हँसोड़ ने मज़े से डेढ़ रुपए की मिठाई बाँध ली, और आठ आने के पैसे घाते में। जब घर पहुँचे, तो खूब मिठाई चक्खी। बची-बचाई अंदर भेज दी। हँसोड़ ने कहा—यार, इसी तरह कहीं से रुपया दिलवाओ, तो जानें। आज़ाद ने कहा—यह कितनी बड़ी बात है। अभी चलो। मगर किसी से माँग-मूँगकर कुछ अशर्फ़ियाँ बाँध लो। मियाँ हँसोड़ ने अपने एक दोस्त से शाम को लौटा देने के वादे पर कुछ अशर्फ़ियाँ लीं। दोनों ने रोशनअली को साथ लिया, और बाज़ार चले। पहले एक महाजन को अशर्फ़ियाँ दिखाईं, और परखाईं। बेचते हैं, खरी-खोटी देख लीजिए। महाजन ने उनको खूब कसौटी पर कसा, और कहा—उन्नीस के हिसाब से लेंगे। तब हँसोड़ दूसरी दूकान पर पहुँचे। वहाँ भी अशर्फ़ियाँ गिनवाईं और परखवाईं। इसके बाद आज़ाद ने तो अशर्फ़ियाँ लेकर घर की राह ली, और मियाँ हँसोड़ एक कोठी में पहुँचे। वहाँ कहा कि हमको दो सौ अशर्फ़ियाँ ख़रीदनी हैं। महाजन ने देखा, आदमी शरीफ़ है, फ़ौरन् दो सौ अशर्फ़ियाँ उनके सामने ढेर कर दीं। बीस रुपए की दर बताई। हँसोड़ ने महाजन के मुनीम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से एक पर्चे पर हिसाब लिखवाया, और अशर्फ़ियाँ बाँधकर कोठी के बाहर पहुँचे। गुल मचा—हाँय-हाँय, लेना-लेना, कहाँ-कहाँ! मियाँ हँसोड़ पैंतरा बदल सामने खड़े हो गए। बस, दूर ही से बात-चीत हो। सामने आए, और मैंने तुला हाथ दिया।

महाजन—ऐ साहब, रुपए तो दीजिए?

हँसोड़—कैसे रुपए! हम नहीं बेचते।

महाजन—क्या कहा, नहीं बेचते। क्या अशर्फ़ियाँ आपकी हैं?

हँसोड़—जी, और नहीं तो क्या आपके बाप की हैं? हम नहीं बेचते, आपका इज़ारा है कुछ? आप हैं कौन ज़बर्दस्ती करनेवाले?

इतने में आज़ाद भी वहाँ आ पहुँचे। देखा, तो महाजन और उनके मुनीमजी गुल मचा रहे हैं—तुम अशर्फ़ियाँ लाए कब थे? और हँसोड़ कह रहे हैं, हम नहीं बेचते। सैकड़ों आदमी जमा थे। पुलीस का एक जमादार भी आ मौजूद हुआ।

जमादार—यह क्या झगड़ा है लाला चुन्नामल? वह नहीं बेचते, तो ज़बर्दस्ती क्यों करते हो? अपने माल पर सबको अख़्तियार है।

महाजन—अच्छी पंचायत करते हो जमादार! यहाँ चार हज़ार रुपए पर पानी फिरा जाता है, आप कहते हैं, जाने भी दो। ये अशर्फ़ियाँ तो हमारी हैं। यह मियाँ ख़रीदने आए थे, हमने गिन दीं। बस, बाँध-बूँधकर चल खड़े हुए।

एक आदमी—वाह, भला कोई बात भी है। यह अकेले और आप दस। जो ऐसा होता, तो यह कोठी के बाहर भी आने पाते! आप सब मिलकर इनका अचार न निकाल लेते। इतने बड़े महाजन, और दो सौ अशर्फ़ियों के लिये ईमान छोड़े देते हो।

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमादार—बुरी बात !

हँसोड़—देखिए, आप बाज़ार-भर में दरियाफ़्त कर लें कि हमने कितनी दूकानों में ये अशर्फ़ियाँ दिखलाई और परखाई हैं ? बाज़ार-भर गवाह है, कुछ एक-दो आदमी वहाँ थोड़े थे। इसको भी जाने दीजिए। यह पर्चा पढ़िए। अगर यह बेचते होते, तो बीस की दर से हिसाब लगाते, या साढ़े उन्नीस से ? मुफ़्त में एक शरीफ़ के पीछे पड़े हैं, लेना एक न देना दो।

आख़िर यह तय हुआ कि बाज़ार में चलकर तहक़ीक़ात की जाय। मियाँ हँसोड़, साहूकार, उनके मुनीम, जमादार और तमाशाई, सब मिलकर बाज़ार चले। वहाँ तहक़ीक़ात की, तो दलालों और दूकानदारों ने गवाही दी कि बेशक इनके पास अशर्फ़ियाँ थीं, और इन्होंने परखाई भी थीं। अभी-अभी यहाँ से गए थे।

जमादार—लाला साहब, अब ख़ैर इसी में है कि चुपके रहिए ; नहीं तो बेढब ठहरेगी। आपकी साख जायगी, और मुनीम की शामत आ जायगी।

महाजन—क्या अंधेर है ! चार हज़ार रुपयों पर पानी पड़ गया, इतने रुपए कभी उम्र-भर में नहीं जमा किए थे, और जो है, हमी को उल्लू बनाता है। ख़ैर साहब, लीजिए हाथ धोए !

तीनों आदमी घर पहुँचे, तो बाछें खिली जाती थीं। जाते ही दो सौ अशर्फ़ियाँ खन-खन करके डाल दीं।

आज़ाद—देखा, यों लाते हैं। अब ये अशर्फ़ियाँ हमारी भाभी-जान के पास रक्खो।

हँसोड़—भई, तुम एक ही उस्ताद हो। आज से मैं तुम्हारा शागिर्द हो गया।

आज़ाद—लो, भाभी से तो ख़ुश-ख़बरी कह दो। बहुत मुँह फुलाए बैठी थीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मियाँ हँसोड़ ने घर में जाकर कहा—कहाँ हो। क्या सो रहीं?

बीवी—क्या कमाई करके लाए हो, जो डपट रहे हो?

हँसोड़—(अशर्फ़ियाँ खनकाकर) लो, इधर आओ, बहुत मिज़ाज न करो। ये लो, दस हज़ार रुपए की अशर्फ़ियाँ।

बीवी—ये बुत्ते किसी और को दीजिएगा! ये तो वही हैं, जो अभी मिर्ज़ा के यहाँ से मँगवाई थीं।

हँसोड़—वह यह हैं, इधर।

बीवी—देखूँ, (खिलखिलाकर) किसी के यहाँ फाँदे थे क्या? आख़िर लाए किसके घर से? बस चुपके-से हमारे संदूक़चे में रख दो।

हँसोड़—क्यों न हो, मार खायँ ग़ाज़ी मियाँ, माल खायँ मुजाविर।

बीवी—सच बताओ, कहाँ मिल गईं? तुम्हें हमारी क़सम!

हँसोड़—यह उन्हीं की करामात है, जिन्हें तुम शोहदा और लुच्चा बनाती थीं।

बीवी—मियाँ, हमारा कुसूर माफ़ करो। आदमी की तबीयत हमेशा एक-सी थोड़े ही रहती है। मैं तो तुम्हारी लौंडी हूँ।

आज़ाद—(बाहर से) हम भी सुन रहे हैं भाभी साहब। अभी तो आपने हमारे भाई बेचारे को डपट लिया था, घर से बाहर कर दिया; हमको जो गालियाँ दीं, सो घाते में। अब जो अशर्फ़ियाँ देखीं, तो प्यारी बीवी बन गईं। अब इनके कान न गरमाइएगा; यह बेचारे बेबाप के हैं।

बीवी ने अंदर से कहा—आप हमारे मेहमान हैं। आपको क्या कहूँ, आपकी हँसी सिर-आँखों पर।

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौबीसवाँ परिच्छेद

बड़ी बेगम साहबा पुराने ज़माने की रईसज़ादी थीं, टोने-टोटके में उन्हें पूरा विश्वास था। बिल्ली अगर घर में किसी दिन आ जाय तो आफ़त हो जाय। उल्लू बोला, और उनकी जान निकली। जूते पर-जूता देखा, और आग हो गईं। किसी ने सीटी बजाई, और उन्होंने कोसना शुरू किया। कोई पाँव-पर-पाँव रखकर सोया और आपने ललकारा। कुत्ता गली में रोया, और उनका दम निकल गया। रास्ते में काना मिला, और उन्होंने पालकी फेर दी। तेली की सूरत देखी, और ख़ून सूख गया। किसी ने ज़मीन पर लकीर बनाई, और उसकी शामत आई। रास्ते में कोई टोक दे तो उसके सिर हो जाती थीं। सावन के महीने में चारपाई बनवाने की क़सम खाई थी। जब देखा कि लड़कियाँ सयानी हो गईं, तो शादी की फ़िक्र हुई। ऊँचे-ऊँचे घरों से पैग़ाम आने लगे। बड़ी लड़की हुस्नआरा की शादी एक रईस के लड़के से तय हो गई। हुस्नआरा पढ़ी-लिखी औरत थी। उसे यह कब मंज़ूर हो सकता था कि बिना देखे-भाले शादी हो जाय। जिसकी सूरत ख़्वाब में भी नहीं देखी, जिसकी लियाक़त और आदत की ज़रा भी ख़बर नहीं, उसके साथ हमेशा के लिये बाँध दी जाऊँगी। सहेलियाँ तो उसे मुबारकबाद देती थीं, और उसकी जान पर बनी हुई थी। या ख़ुदा, किससे अपने दिल का दर्द कहूँ? बोलूँ, तो अड़ोस-पड़ोस की औरतें ताने दें कि यह लड़की तो सवार को खड़े-खड़े घोड़े पर से उतार दे। दिल-ही-दिल में बेचारी कुढ़ने लगी। अपनी छोटी बहन सिपहआरा से अपना दुख कहती थी, और दोनों बहनें गले मिलकर रोती थीं।

एक दिन दोनों बहनें बैठी हुई अख़बार पढ़ रही थीं। उसमें एक शरीर लड़के की दास्तान छपी हुई थी। पढ़ने लगीं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'यह हज़रत दो बार क़ैद भी रह चुके हैं, और अफ़सोस तो यह है कि एक रईस के साहबज़ादे हैं। परसों रात को आपने यह शरारत की कि एक रईस के यहाँ कूदे, और कोठरी का ताला तोड़-कर अंदर घुसने लगे। महाजन की लड़की ने जो आहट पाई, तो कुलबुलाकर उठ खड़ी हुई, और अपनी मा को जगाया। ज़री जागो तो, बिल्ली ने तेल का घड़ा गिरा दिया; बिल-बिल! उसकी मा गड़बड़ाकर जो उठीं, तो आप कोठरी के बाहर एक चारपाई के नीचे दबक रहे। उसने अपने लड़के को जगाया। वह जवान ताल ठोककर चारपाई पर से कूदा, चोर का कलेजा कितना। आप चार-पाई के नीचे से घबराकर निकले। महाजन का लड़का भी उनकी तरफ़ झपट पड़ा, और उन्हें उठाकर दे मारा। तब उस बदमाश ने कमर से छुरी निकाली, और उस महाजन के पेट में भोक दी। आनन-फ़ानन जान निकल गई। पड़ोसी और चौकीदार दौड़ पड़े, और उस शरीफ़ज़ादे को गिरफ़्तार कर लिया। अब वह हवालात में है। अफ़सोस की बात तो यह है कि उसकी शादी नव्वाब फ़रेटूँजंग की लड़की से क़रार पाई थी जिसका नाम हुस्न-आरा है।'

यह लेख पढ़कर हुस्नआरा आठ-आठ आँसू रोने लगी। उस-की छोटी बहन उसके गले से चिमट गई, और उसको बहुत कुछ समझा-बुझाकर अपनी बूढ़ी मा के पास गई। अख़बार दिखाकर बोली—देखिए, क्या ग़ज़ब हो गया था, आपने बेदेखे-भाले शादी मंजूर कर ली थी। बूढ़ी बेगम ने यह हाल सुना, तो सिर पीटकर बोलीं—बेटी, आज तड़के जब मैं पलँग से उठी, तो पट-से किसी ने छींका, और मेरी बाईं आँख भी फड़कने लगी। उसी दम पाँव-तले से मिट्टी निकल गई। मैं तो समझी ही थी कि आज कुछ असगुन होगा। चलो, अल्लाह ने बड़ी ख़ैर की। हुस्नआरा को

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी तरफ़ से छाती से लगाओ, और कह दो कि जिसे तुम पसंद करोगी, उसी के साथ निकाह कर दूँगी।

सिपहआरा अपनी बहन के पास आई, तो बाछें खिली हुई थीं। आते ही बोली—लो बहन, अब तो मुँह-माँगी मुराद पाई। अब उदास क्यों बैठी हो? खुदा-क़सम, वह खुश-ख़बरी सुनाऊँ कि जी खुश हो जाय।

हुस्नआरा—ऐ है, तो कुछ कहोगी भी। यहाँ क्या जाने, इस वक़्त किस ग़म में बैठे हैं। यह खुशी का कौन मौक़ा है?

सिपहआरा—ऐ वाह, हम यों बता चुके। बिना मिठाई लिए बतावेंगे। अम्माजान ने कह दिया कि आप जिसके साथ जी चाहे शादी कर लें। वह अब दख़ल न देंगी। हाँ शरीफ़ज़ादा और कल्ले-ठल्ले का जवान हो।

हुस्नआरा—खूबसूरती औरतों में देखी जाती है, मर्दों में इससे क्या काम? हाँ, काला-कलूटा न हो, बस।

सिपहआरा—यह आप क्या कहती हैं। 'आदमी-आदमी अंतर कोई हीरा कोई कंकर।' क्या चाँद में गहन लगाओगी?

हुस्नआरा—ऐ तो सूत न कपास, कोरी से लठमलठा!

इतने में बूढ़े मियाँ पीरबख़्श ने आवाज़ दी—बेटी, कहाँ हो? मैं भी आऊँ?

सिपहआरा—आओ, आओ, तुम्हारी ही तो कसर थी। आज सबेरे-सबेरे कहाँ थे? कल तो बजरा ऐसा डावाँडोल होता था जैसे तिनका बहा चला जाता है। कलेजा धक-धक करता था।

पीरबख़्श—तुमसे कुछ कहना है बेटी। देखो, तुम हमारी पोतियों से भी छोटी हो। तुम दोनों को मैंने गोदियों खिलाया है और तुम्हारी मा हमारे सामने ब्याह आई हैं। तुम दोनों को मैं अपने बेटे से ज़्यादा चाहता हूँ। मैं जो कहूँ, उसे कान लगाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनना। तुम अब सयानी हुईं। अब मुझे तुम्हारी शादी की फ़िकर है। पहले तुमसे सलाह ले लूँ, तो बेगम साहबा से अर्ज़ करूँ। यों तो कोई लड़की आज तक बिन ब्याही नहीं रही, लेकिन वर उन्हीं लड़कियों को अच्छा मिलता है, जो ख़ुश-नसीब हैं। तुम्हारी मा हैं तो पुरानी लकीर की फ़क़ीर, मगर यह मेरा ज़िम्मा कि जिसे तुम पसंद करो, उसे वह भी मंजूर कर लेंगी। आजकल यहाँ एक शरीफ़ नौजवान आकर ठहरे हैं। सूरत शाहज़ादों की-सी, आदत फ़रिश्तों की-सी, चलन भलेमानसों का-सा, बदन छरहरा, दाढ़ी-मूछ का नाम नहीं। अभी उठती जवानी है। शेर कहने में, बोल-चाल में, इल्म व कमाल में अपना सानी नहीं रखते। तसवीर ऐसी खींचें कि बोल उठे। बाँक-पटे में अच्छे-अच्छे बाँकों के दाँत खट्टे कर दिए। उनकी नस-नस में ख़ूबियाँ कूट-कूटकर भरी हैं। अगर हुस्नआरा के साथ उनका निकाह हो जाय, तो ख़ूब हो। पहले तुम देख लो, अगर पसंद आवें, तो तुम्हारी मा से ज़िक्र करूँ। हाँ, यह वही जवान हैं, जो बजरे के साथ तुमको देखते हुए बाग़ में जा रहे थे। याद आया?

हुस्नआरा—वहाँ तो बहुत-से आदमी थे, क्या जाने, किसको कहते हो। बेदेखे-भाले कोई क्या कहे।

सिपहआरा—मतलब यह कि दिखा दो। भला देखें तो, हैं कैसे।

पारबख़्श—ऐसे जवान तो हमने आज तक कभी देखे न थे। वह नूर है कि निगाह नहीं ठहरती। क़सम ख़ुदा की, जो बात करे, रीझ जाय।

हुस्नआरा—हम बतावें, जब हम बजरों पर हवा खाने चलें, तो उन्हें भी वहाँ लाओ। हम उनको देख लें, तब तुम अम्मा से कहो।

यहाँ ये बातें हो रही थीं, उधर मियाँ आज़ाद अपने हँसोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोस्त के साथ इसी कोठी की तरफ़ टहलते चले आ रहे थे। रास्ते में आठ-दस गधे मिले। गधेवाला उन सबों पर कोड़े फटकार रहा था। आज़ाद ने कहा—क्यों भई, आख़िर इन गधों ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, जो पीटते जाते हो? कुछ ख़ुदा का भी ख़ौफ़ है, या नहीं? गधेवाले ने इसका तो कुछ जवाब न दिया, गद-से एक और जमाई। तब तो मियाँ आज़ाद आग हो गए, बढ़कर गधेवाले के कई चाँटे लगाए। अबे, आख़िर इनमें जान है या नहीं? अगर न चलते, तो हम कहते—ख़ैर, यों ही सही। ख़ासे जा रहे हैं खटाखट, और आप पीट रहे हैं।

हँसोड़—आप कौन होते हैं बोलनेवाले? उसके गधे हैं, जो चाहता है, करता है।

आज़ाद—भई, हमसे तो यह नहीं देखा जाता कि किसी बेज़बान पर कोई आदमी ज़ुल्म करे, और हम बैठे देखा करें।

कोई दस ही क़दम आगे बढ़े होंगे कि देखा, एक चिड़ीमार कंपे में लासा लगाए, टट्टी पर पत्ते जमाए चिड़ियों को पकड़ता फिरता है। मियाँ आज़ाद आग-भभूका हो गए। इतने में एक तोता जाल में आ फँसा। तब तो मियाँ आज़ाद बौखला गए, ग़ुल मचाकर कहा—ओ चिड़ीमार, छोड़ दे इस तोते को, अभी छोड़। छोड़ता है या आऊँ? चिड़ीमार हक्का-बक्का हो गया, बोला—साहब, यह तो हमारा पेशा है। आख़िर इसको छोड़ दें, तो करें फिर क्या? आज़ाद बोले—भीख माँग, मज़दूरी कर, मगर यह पेशा छोड़ दे। यह कहकर आपने झोला, कंपा, जाल सब छीन-छान लिया। झोले को जो खोला, तो सब जानवर फुर्र से उड़ गए। इतना ही नहीं, कंपे को काट-कूटकर फेंका, जाल को नोच-नाचकर बराबर किया। तब जेब से निकालकर दस रुपए चिड़ीमार को दिए, और बड़ी देर तक समझाया!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हँसोड़—यार, तुम बड़े बेढब आदमी हो। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि तुम सनक गए हो।

आज़ाद—भई, तुम समझते ही नहीं कि मेरा असल मतलब क्या है।

हँसोड़—आप अपना मतलब रहने दीजिए। मेरा-आपका साथ न होगा। कहीं आप किसी बिगड़े-दिल से भिड़ पड़े, तो आपके साथ मेरी भी शामत आ जायगी।

आज़ाद—अच्छा, गुस्से को थूक दीजिए। चलिए हमारे साथ।

हँसोड़—अब तो रास्ते में न लड़ पड़िएगा?

आज़ाद—कह तो दिया कि नहीं।

दोनों आदमी आगे चले, तो क्या देखते हैं, राह में एक गाड़ीवान बैल की दुम ऐंठ रहा है। आज़ाद ने ललकारा—अबे ओ गाड़ीवान, ख़बरदार, जो आज से बैल की दुम ऐंठी।

हँसोड़—फिर वही बात! इतनी जल्दी भूल गए!

आज़ाद चुप हो गए। दोनों आदमी चुपचाप चलने लगे। थोड़ी देर में कोठी के क़रीब जा पहुँचे। एकाएक बूढ़े मियाँ पीरबख़्श आते दिखाई दिए। अलेकसलेम के बाद बातें होने लगीं।

आज़ाद—कहिए, उधर भी गए थे?

पीरबख़्श—हाँ साहब, गया क्यों न था। सबेरे-सबेरे जा पहुँचा और आपकी इतनी तारीफ़ की कि पुल बाँध दिए। और, फिर आप जानिए, गोकि बंदा आलिम नहीं, फ़ाज़िल नहीं, मुंशी नहीं, लेकिन बड़े-बड़े आलिमों की आँखें तो देखी हैं, ऐसी लच्छेदार बातें कीं कि आपका रंग जम गया। अब आपको देखने को बेक़रार हैं। हाँ, एक बुरी पख़ यह है कि आपका इम्तिहान लेंगी। ऐसा न हो कि वह कुछ पूछ बैठें, और आप बग़लें झाँकने लगें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हँसोड़—भई, इम्तिहान का तो नाम बुरा। शायद रह गए, तो फिर ?

आज़ाद—फिर आपका सिर ! रह जाने की एक ही कही। इम्तिहान के नाम से आप-जैसे गौखों की जान निकलती है, या मेरी !

पीरबख़्श—तो मैं जाकर कह दूँ कि वह आए हैं ?

यह कहकर पीरबख़्श घर में गए, और कहा—वह आए हैं, कहो, तो बुला लाऊँ। सिपहआरा ने कहा—अजनबी का खट-से घर में चला आना बुरा। पहले उनसे कहिए, चलकर बाग़ की सैर करें।

पीरबख़्श बाहर गए, और मियाँ आज़ाद को लेकर बाग़ में टहलने लगे। दोनों बहनें झरोखों से देखने लगीं। सिपहआरा बोली—बहन, सचमुच यह तो तुम्हारे लायक़ हैं। अल्लाह ने यह जोड़ी अपने हाथों से बनाई है।

हुस्नआरा—ऐ वाह, कैसी नादान हो ! भला शादी-ब्याह भी यों हुआ करते हैं ?

सिपहआरा—मैं एक न मानूँगी।

हुस्नआरा—मुझसे क्यों झगड़ती हो, अम्माजान से कहो।

सिपहआरा—अच्छा, तो मैं अम्माजान के यहाँ जाती हूँ; मगर देखिए, मुकर न जाइएगा।

यह कहकर सिपहआरा बड़ी बेगम के पास पहुँची, और आज़ाद का ज़िक्र छेड़कर बोली—अम्माजान, मैंने तो आज तक ऐसा खूबसूरत आदमी देखा ही नहीं। शरीफ़, हँसमुख और पढ़े-लिखे। आप भी एक दफ़े देख लें।

बड़ी बेगम ने सिपहआरा को छाती से लगाया, और हँसकर कहा—तू मुझसे उड़ती है ! यह क्यों नहीं कहती कि सिखाई-पढ़ाई आई हूँ।

सिपहआरा—नहीं अम्माजान, आप उन्हें ज़रूर बुलावें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेगम—हुस्नआरा से भी पूछा ? वह क्या कहती हैं ?

सिपह्आरा—वह तो कहती हैं, अम्माजान जिससे चाहें, उससे करें। मगर दिल उनका आया हुआ है।

बेगम—अच्छा, बुलवा लो।

सिपह्आरा वहाँ से लौटी, तो मारे ख़ुशी के उछली पड़ती थी। फ़ौरन् पीरबख़्श को बुलाकर कहा—आप मियाँ आज़ाद को अंदर लाइए। अम्माजान उन्हें देखना चाहती हैं।

ज़रा देर में पीरबख़्श मियाँ आज़ाद को लिए हुए बेगम के पास पहुँचे।

आज़ाद—आदाब बजा लाता हूँ।

बेगम—जीते रहो बेटा। आओ, इधर आकर बैठो। मिज़ाज तो अच्छे हैं ? सिपह्आरा तुम्हारी बड़ी तारीफ़ करती थी, और बेशक तुम हो इसी लायक़। तुमको देखकर तबीयत बहुत ख़ुश हुई।

आज़ाद—आपकी ज़ियारत का बहुत दिनों से शौक़ था। सच है, बड़े-बूढ़ों की क्या बात है।

बेगम—क्यों बेटा, हाथी को ख़्वाब में देखे, तो कैसा ?

आज़ाद—बहुत बुरा। मगर, हाँ, अगर हाथी किसी पर अपनी सूँड़ फेर रहा हो, तो समझना चाहिए कि आई हुई बला टल गई।

बेगम—शाबाश, तुम बड़े लायक़ हो।

बेगम साहब ने मियाँ आज़ाद को बड़ी देर तक बिठाया, और साथ ही खाना खिलाया। आज़ाद हाँ-में-हाँ मिलाते जाते थे, और दिल-ही-दिल में खिलखिलाते थे। जब शाम हुई, तो आज़ाद रुख़सत हुए।

आसमान पर बादल छाए हुए थे ; तेज़ हवा चल रही थी मगर दोनों बहनों को बजरे पर सैर करने की धुन समाई। दरिया के किनारे आ पहुँचीं। पीरबख़्श ने बजरा खोला, और दोनों

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहनों को बिठाकर सैर कराने लगे। बजरा बहाव पर फ़र्राटे से बहा जाता था। ठंडी-ठंडी हवाएँ, काली-काली घटाएँ, सिपहआरा की प्यारी-प्यारी बातें, बूँदों का गिरना, लहरों का थिरकना अजब बहार दिखाता था। इतने में हवा ने वह ज़ोर बाँधा कि मेंढा उछलने लगा। अब बजरे की यह हालत है कि डावाँडोल हो रहा है। यह डूबा, वह डूबा। पीरबख़्श था तो खुर्राट, लेकिन उसके भी हाथ-पाँव फूल गए। सैर-दरिया की कहानियाँ सब भूल गए। दोनों बहनें काँपने लगीं। एक दूसरे को हसरत की निगाह से देखने लगी। दो-की-दोनों रो रही थीं। मियाँ आज़ाद अभी तक दरिया के किनारे ही टहल रहे थे। बजरे को पानी में चक्कर खाते देखा, तो होश उड़ गए। इतने में एक दफ़े बिजली चमकी। सिपहआरा डरकर दौड़ी, मगर मारे घबराहट के नदी में गिर पड़ी। डूबते ही पहले ग़ोता खाया, और लगी हाथ-पाँव फटफटाने। ज़रा देर के बाद फिर उभरी, और फिर ग़ोता खाया। आज़ाद ने यह कैफ़ियत देखी, तो झटपट कपड़े उतारकर धम-से कूद ही तो पड़े। पहली डुबकी मारी, तो सिपहआरा के बाल हाथ में आए। उन्होंने झप-से ज़ुल्फ़ को पकड़कर खींचा, तो वह उभरी। यह वही सिपहआरा है, जो किसी अनजान आदमी को देखकर मुँह छिपा लेती और फुर्ती से भाग जाती थी। मियाँ आज़ाद उसे साथ लिए मल्लाही चीरते और खड़ी लगाते बजरे की तरफ़ चले। लेकिन बजरा हवा से बातें करता चला जाता था। पानी बल्लियों उछलता था। आज़ाद ने ज़ोर से पुकारा—ओ मियाँ पीरबख़्श, बजरा रोको। ख़ुदा के वास्ते रोको। पीरबख़्श के होश-हवास उड़े हुए थे। बजरा ख़ुदा की राह पर जिधर चाहता था, जाता था। मियाँ आज़ाद बहुत अच्छे पैराक थे। लेकिन बरसों से आदत छूटी हुई थी। दम फूल गया। इत्तिफ़ाक़ से एक भँवर में पड़ गए। बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़ोर मारा, मगर एक न चल सकी। उस पर एक मुसीबत यह और हुई कि सिपहआरा छूट गई। आज़ाद की आँखों से आँसू निकल पड़े। फिर बड़ी फुर्ती से झपटे, लाश को उभारा, और लादकर ले चले। मगर अब देखते हैं, तो बजरे का कहीं पता ही नहीं। दिल में सोचे, बजरा डूब गया और हुस्नआरा लहरों का लुक़मा बन गई। अब मैं सिपहआरा को लादे-लादे कहाँ तक जाऊँ। लेकिन दिल में ठान ली कि चाहे बचूँ, चाहे डूबूँ, सिपहआरा को न छोड़ूँगा। फिर चिल्लाए—यारो, कोई मदद को आओ। एक बुड्ढा आदमी किनारे पर खड़ा यह नज़ारा देख रहा था। आज़ाद को इस हालत में देखकर आवाज़ दी—शाबाश बेटा, शाबाश। मैं अभी आता हूँ। यह कहकर उसने कपड़े उतारे, और लँगोट बाँधकर धम-से कूद ही तो पड़ा। उसकी आवाज़ का सुनना था कि मियाँ आज़ाद को ढारस हुआ, वह तेज़ी के साथ चलने लगे। बुड्ढे आदमी ने दो ही हाथ खड़ी के लगाए थे कि साँस फूल गई, और पानी ने इस ज़ोर से थपेड़ा दिया कि पचास गज़ के फ़ासले पर हो रहा। अब न आज़ाद को वह सूझता है, और न उसको आज़ाद नज़र आते हैं। मल्लाह ने बजरे पर से बुड्ढे को देख लिया। समझा कि मियाँ आज़ाद हैं। पुकारा—अरे भई आज़ाद, ज़ोर करके इधर आओ। बुड्ढे ने बहुत हाथ-पैर मारे, मगर न जा सका। तब पीरबख़्श ने डाँड़ सँभाले, और बुड्ढे की तरफ़ चले। मगर अफ़सोस, दो-चार ही हाथ रह गया था कि एक मगर ने भाड़-सा मुँह खोलकर बुड्ढे को निगल लिया। मल्लाह ने सिर पीटकर रोना शुरू किया—हाय आज़ाद, तुम भी जुदा हुए! बेचारी सिपहआरा का साथ दिया! यह आवाज़ मियाँ आज़ाद के कानों में भी पड़ी। समझे, वही बुड्ढा, जो टीले पर से कूदा था, चिल्ला रहा है। इतने में बजरा नज़र आया, तो बाग़-

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाग़ हो गए। अब यह बिलकुल बेदम हो चुके थे; लेकिन बजरे को देखते ही हिम्मत बँध गई। ज़ोर से खड़ी लगानी शुरू की। बजरे के क़रीब आए, तो पीरबख़्श ने पहचाना। मारे ख़ुशी के तालियाँ बजाने लगे। आज़ाद ने सिपहआरा को बजरे में लिटा दिया, और दोनों ने मिलकर उसके पेट से पानी निकाला। फिर लिटाकर अपने बैग में से कोई दवा निकाली, और उसे पिला दी। अब हुस्नआरा की फ़िक्र हुई। वह बेचारी बेहोश पड़ी हुई थी। आज़ाद ने उसके मुँह पर पानी के छींटे दिए, तो ज़रा होश आया। मगर आँखें बंद। होश आते ही पूछा—प्यारी सिपहआरा कहाँ है? आज़ाद जीते बचे? पीरबख़्श ने पुकारकर कहा—आज़ाद तुम्हारे सिरहाने बैठे हैं, और सिपहआरा तुम्हारे पास लेटी है। इतना सुनना था कि हुस्नआरा ने आँख खोली, और आज़ाद को देखकर बोली—आज़ाद, मेरी जान अगर तुम पर से फ़िदा हो जाय, तो इस वक़्त मुझे उससे ज़्यादा ख़ुशी हो, जितनी सिपहआरा के बच जाने से हुई है। मैं सच्चे दिल से कहती हूँ, मुझे तुमसे सच्ची मुहब्बत है।

इतने में दवा का असर जो पहुँचा, तो सिपहआरा भी आहिस्ता से उठ बैठी। दोनों बहनें गले मिलकर रोने लगीं। हुस्नआरा बार-बार आज़ाद की बलाएँ लेती थी। मैं तुम पर वारी हो जाऊँ, तुमने आज वह किया, जो दूसरा कभी न करता। हवा बँध गई थी, बजरा आहिस्ता-आहिस्ता किनारे पर आ लगा। आज़ाद ने घास पर लेटकर कहा। उफ़, मर मिटे!

हुस्नआरा—बेशक सिपहआरा की जान बचाई, मेरी जान बचाई, इस बेचारे बुड्ढे की जान बचाई। इससे बढ़कर और अब क्या होगा!

पीरबख़्श—मियाँ आज़ाद, ख़ुदा तुमको ऐसा बुड्ढा करे कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारे परपोते मुझसे बड़े हो-होकर तुम्हारे सामने खेलें। मैं कुछ और ही समझा था। एक आदमी पैरता हुआ जाता था। मैंने समझा, तुम हो।

आज़ाद—हाँ, हाँ, मैं तो उसे भूल ही गया था। फिर वह कहाँ गया?

पीरबख़्श—क्या कहूँ, उसको तो एक मगर निगल गया।

आज़ाद—अफ़सोस! कितना दिलेर आदमी था। मुझे मुसीबत में देखकर धम-से कूद पड़ा।

सिपह्आरा—मुझ नसीबों-जली के कारन उस बेचारे की जान मुफ़्त में गई। मेरी आँखों में अँधेरा-सा छाया हुआ है। इस दरिया का सत्यानास हो जाय! जिस वक़्त मैं अपना गिरना और ग़ोते लगाना याद करती हूँ, तो रोएँ खड़े हो जाते हैं। पहले तो मैंने खूब हाथ-पाँव मारे, मगर जब नीचे बैठ गई, तो मुँह में पानी जाने लगा। मैंने दोनों हाथों से मुँह बंद कर लिया। फिर मुझे कुछ याद नहीं।

हुस्नआरा—बड़े गाढ़े वक़्त में काम आए।

पीरबख़्श—अब आप ज़रा सो रहिएगा, तो थकावट कम हो जायगी।

तीनों आदमी थककर चूर हो गए थे। वहीं हरी-हरी घास पर लेटे, तो तीनों की आँख लग गई। चार घंटे तक सोते रहे। जब नींद खुली, तो घर चलने की ठहरी। पीरबख़्श ने कहा—इस वक़्त बजरे पर सवार होना तो हिमाक़त है। सड़क-सड़क चलें।

आज़ाद—अजी, तो क्या हरदम तूफ़ान आया करता है?

दोनों बहनों ने कहा—हम तो इस वक़्त बजरे पर न चढ़ेंगे, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय।

आज़ाद ने कहा—जो इस वक़्त झिझक गईं, तो उम्र-भर ख़ौफ़ लगता रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा—चलिए रहने दीजिए, अब तो मारे थकावट के आपके बदन में इतनी ताक़त भी न रही होगी कि किसी की लाश को दो क़दम भी ले चलिए। ना साहब, बंदी नहीं जाने की। बजरे की सूरत देखने से बदन काँपता है। हम तुम्हें भी न जाने देंगे।

सिपहआरा—आप बजरे पर बैठे, और हम इधर दरिया में फाँद पड़े!

आख़िर यह तय हुआ कि पीरबख़्श बजरा लावें, और तीनों आदमी ऊपर-ऊपर घर की तरफ़ चलें।

आज़ाद ने मौक़ा पाया, तो बोले—अब तो हमसे कभी परदा न होगा? हम आपको अपना दिल दे चुके। हुस्नआरा ने कुछ जवाब न दिया, शरमाकर सिर झुका लिया।

रात बहुत ज़्यादा बीत गई थी। आज़ाद पीरबख़्श के साथ सोए। सुबह को उठे, तो क्या देखते हैं, हुस्नआरा के साथ उनकी दो फुफेरी बहनें छमाछम करती चली आती हैं। एक का नाम जहानआरा था, दूसरी का गेतीआरा। दोनों बहनों ने आज़ाद को झरोखे से देखा। तब जहानआरा हुस्नआरा से बोली—बहन, तुम्हारी पसंद की मैं क़ायल हो गई। ऐसा बाँका जवान मेरी नज़र से नहीं गुज़रा।

सिपहआरा—हम कहते न थे कि मियाँ आज़ाद-सा तरहदार जवान कम होगा। फिर, मेरी तो उन्होंने जान ही बचाई है। जब तक जिऊँगी, तब तक उनका दम भरूँगी।

इतने में पीरबख़्श भी आ पहुँचे। जहानआरा ने उनसे कहा—क्यों जी, इन सन-से सफ़ेद बालों में ख़िज़ाब क्यों नहीं लगाते! अब तो आप कोई दो सौ से ऊपर होंगे। क्या मरना बिलकुल भूल बैठे! तुम्हें तो मौत ने भी साँड़ की तरह छोड़ दिया!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीरबख़्श—बेटी, बहुत कट गई, थोड़ी बाक़ी है। यह भी कट जायगी। ख़िज़ाब लगाकर रूसियाह कौन हो!

सिपह्आरा—आज़ाद से तो अब कोई परदा है नहीं। उन्हें भी न बुला लें?

गेतीआरा—कभी की जान-पहचान होती, तो मुज़ायक़ा न था।

आज़ाद ने सामने से आकर कहा—फ़क़ीरों से भी जान-पहचान की ज़रूरत? फ़क़ीरों से कैसा परदा?

गेतीआरा—यह फ़क़ीर आप कब से हुए?

आज़ाद—जब से हसीनों की सोहबत हुई।

गेतीआरा—आप शायर भी तो हैं! अगर तबीयत हाज़िर हो, तो इस मिसरे पर एक ग़ज़ल कहिए—

मरज़े-इश्क़ लादवा देखा।

आज़ाद—तबीयत की तो न पूछिए, हर वक़्त हाज़िर रहती है; रहा दिमाग़, वह आपे में नहीं। फिर भी आपका हुक्म कैसे टालूँ। सुनिए—

शेख़, काबे में तूने क्या देखा; हम बुतों से मिले, ख़ुदा देखा।
सोज़-नाला ने कुछ असर न किया; हमने यह साज़ भी बजा देखा।
आह ने मेरी कुछ न काम किया; हमने यह तीर भी लगा देखा।
हर मरज़ की दवा मुक़र्रर है; मरज़े-इश्क़ लादवा देखा।
शक्ले नाख़ुन है गरचे अबरुए-यार; पर न इसको गिरहकुशा देखा।
हमने देखा न आशिक़े आज़ाद; और जो देखा तो मुब्तिला देखा।

गेतीआरा—माशा-अल्लाह, कैसी हाज़िर तबीयत है!

आज़ाद—इंसाफ़ के तो यह माने हैं कि मैंने आपको ख़ुश किया, अब आप मुझको ख़ुश करें।

गेतीआरा—आप कुछ फ़र्मावें, मैं कोशिश करूँगी।

आज़ाद—यह तो मेरी सूरत ही से ज़ाहिर है कि अपना दिल हुस्नआरा को दे चुका हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गेतीआरा—क्यों हुस्नआरा, मान क्यों नहीं जातीं? यह बेचारे तुम्हें अपना दिल दे चुके।

हुस्नआरा—वाह, क्या सिफ़ारिश है! क्यों मान लूँ, शादी कोई दिल्लगी है? मैं बेसमझे-बूझे हाँ न करूँगी। सुनिए साहब, मैं आपकी अदा, आपकी वफ़ा, आपकी चाल-ढाल, आपकी लियाक़त और शराफ़त पर दिल और जान से आशिक़ हूँ; मगर यह याद रखिए, मैं ऐसा काम नहीं करना चाहती, जिससे पढ़ी-लिखी औरतें बदनाम हों। हमें ऐसा चाल-चलन रखना चाहिए, जो औरों के लिये नमूना हो। इस शहर की सब औरतें मुझे देखती रहती हैं कि यह किस तरफ़ को जाती है। आपको कोई यहाँ जानता नहीं। आप पहले यहाँ शरीफ़ों में इज़्ज़त पैदा कीजिए, आपके यहाँ पंद्रहवें दिन मुशायरा हो, और लोग आपको जानें। कोई कोठी किराए पर लीजिए, और उसे ख़ूब सजाइए, ताकि लोग समझें कि सलीक़े का आदमी है, और रोटियों को मुहताज नहीं। शरीफ़ज़ादों के सिवा ऐरों-ग़ैरों से सोहबत न रखिए, और हर रोज़ जुमा की नमाज़ पढ़ने के लिये मसजिद जाया कीजिए। लेकिन दिखावा भी ज़रूरी है। एक सवारी भी रखिए, और सुबह-शाम हवा खाने जाइए, अगर इन बातों को आप मानें, तो मुझे शादी करने में कुछ उज्र नहीं। यों तो मैं आपके एहसान से दबी हुई हूँ, लेकिन आप समझदार आदमी हैं, इसलिये मैंने साफ़-साफ़ समझा दिया।

आज़ाद—ऐसे समझदार होने से बाज़ आए! हम गँवार ही सही। आपने जो कुछ कहा, सब हमें मंजूर है; लेकिन आप भी मुझे कभी-कभी यहाँ तक आने की इजाज़त दीजिए, और आपकी ये बहनें भी मुझसे मिला करें।

गेतीआरा—ज़री फिर तो कहिएगा! आपको अपनी हुस्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरा से काम है, या उनकी बहनों से ? हुस्नआरा ने आपसे जो कुछ कहा, उसको ग़ौर कीजिए। अभी जल्दी न कीजिए। आप शराब तो नहीं पीते ?

आज़ाद—शराब की सूरत और नाम से नफ़रत है।

हुस्नआरा—फिर आपके पास बजरे पर कहाँ से आई, जो आपने सिपहआरा को पिलाई।

आज़ाद—वाह, वह तो दवा थी।

जहानआरा—ऐ बाजी, भैया कब से सो रहा है। ज़रा जगा दो। दो घड़ी खेलने को जी चाहता है।

गेतीआरा—ना, कहीं ऐसा ग़ज़ब भी न करना। बच्चे जब सोते हों, तो उनको जगाना न चाहिए। उनको जगाना उनकी बाढ़ को रोकना है।

हुस्नआरा—इस वक़्त हवा बड़े ज़ोर से चल रही है, और तुमने भैया को बारीक शरबती पहना दी है। ऐ दिलबहार, फ़लालेन का कुर्ता नीचे पहना दो। यह रुपया कौन भैया के हाथ में दे गया ? और जो खेलते-खेलते मुँह में ले जाय, तो ?

दिलबहार—ऐ हुज़ूर, छीन तो लूँ, जब वह दे भी। वह तो रोने लगता है।

हुस्नआरा—देखो हम किस तरकीब से ले लेते हैं, भला रोवे तो, (चुमकारकर) भैया, (तालियाँ बजाकर) भैया, ला, तुझे चीज़ मँगा दूँ।

यह कहकर हुस्नआरा ने लड़के को गुदगुदाया। लड़का हँस पड़ा और रुपया हाथ से अलग।

दिलबहार—मौसी को कैसे चुपचुपाते रुपया दे दिया, और हमने हाथ ही लगाया था कि गुल मचाने लगा।

गेतीआरा—उम्र-भर तुमने लड़के पाले, मगर पालना न आया। बच्चों का पालना कुछ हँसी-खेल थोड़े ही है।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिलबहार—अभी मेरा सिन ही क्या है कि ये बातें जानूँ।

गेतीआरा—देखो, रात को दरख़्त के तले बच्चे को न सुलाया करो। बच्चा बीमार हो जाता है।

दिलबहार—हाँ, सुना है, लड़के भूत-प्रेत के झपेट में आ जाते हैं।

हुस्नआरा—झपेट और भूत-प्रेत सब ढकोसला है। रात को दरख़्त के नीचे सोना इसलिये बुरा है कि रात को दरख़्त से ज़हरीली हवा निकलती है।

इधर तो ये बातें हो रही थीं, औरतों की तालीम का ज़िक्र छिड़ा हुआ था, हुस्नआरा औरतों की तालीम पर ज़ोर दे रही थी, उधर मियाँ पीरबख़्श को बाल बनवाने का शौक़ जो चर्राया, तो हज्जाम को बुलवाया। हज्जाम बाल बनाते-बनाते कहने लगा—हुज़ूर, एक दिन मैं सराय में गया था, तो वहाँ यह भी टिके हुए थे—वही जो जवान-से हैं, गोरे-गोरे, बजरे पर सैर करने गए थे—हाँ, याद आ गया, मियाँ आज़ाद, वह भी वहाँ मिले। वह साहब तुम्हारे उस सराय की भठियारी से शादी करने को थे, मुल फिर निकल गए। उसने इन पर नालिश जड़ दी, तो वहाँ से भागे। उस भठियारी को ऊँट पर सवार करके रात को लिए फिरते थे। पीरबख़्श ने यह क़िस्सा सुना, तो सन्नाटे में आ गए। बोले—ख़बरदार, और किसी से न कहना।

पचीसवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद हुस्नआरा के यहाँ से चले, तो घूमते-घामते हँसोड़ के मकान पर पहुँचे, और पुकारा। लौंडी बोली कि वह तो कहीं गए हैं, आप बैठिए।

आज़ाद—भाभी साहब से हमारी बंदगी कह दो, और कहो, मिज़ाज पूछते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौंडी—बेगम साहबा सलाम कहती हैं, और फ़र्माती हैं कि कहाँ रहे ?

आज़ाद—इधर-उधर मारा-मारा फिरता था।

लौंडी—वह कहती हैं, हमसे बहुत न उड़िए। यहाँ कच्ची गोलियाँ नहीं खेलीं। कहिए, आपकी हुस्नआरा तो अच्छी हैं। यह बजरे पर हवा खाना और यहाँ आकर बुत्ते बताना।

आज़ाद—आपसे यह कौन कच्चा चिट्ठा कह गया ?

लौंडी—कहती हैं कि मुझसे भी परदा है ? इतना तो बता दीजिए कि बरात किस दिन चढ़ेगी ? हमने सुना है, हुस्नआरा आप पर बेतरह रीझ गईं। और, क्यों न रीझें, आप भी तो माशा-अल्लाह गबरू जवान हैं।

आज़ाद—फिर भाई किसके हैं, जैसे वह खूबसूरत, वैसे हम।

लौंडी—फ़र्माती हैं कि धाँधली रहने दीजिए।

आज़ाद—भाभी साहब, यह घूँघट कैसा ? हमसे कैसा परदा ? इतने में किसी ने पीछे से मियाँ आज़ाद की आँखें बंद कर लीं।

आज़ाद चिल्ला उठे—भाई साहब।

हँसोड़—वहाँ तो आपने खूब रंग जमाया।

आज़ाद—अजी, आपकी दुआ है, मैं भला क्या रंग जमाता। मगर दोनों बहनें एक-से-एक बढ़कर हैं। हुस्नआरा की दो बहनें और आई थीं। वल्लाह, खूब मज़े रहे।

हँसोड़—खुशनसीब हो भाई, जहाँ जाते हो, वहीं पौ-बारह होते हैं। वल्लाह, मान गया।

आज़ाद—मगर भई, एक ग़लती हो गई। उन्होंने किसी तरह भाँप लिया कि मैं शराब भी पीता हूँ।

हँसोड़—बड़े अहमक़ हो भई, कोई ऐसी हरकत करता है। तुम्हारी सूरत से नफ़रत हो गई।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—अजी, मुझे तो अपनी सूरत से आप नफ़रत हो गई, मगर अब कुछ तदबीर तो बताओ ?

हँसोड़—उसी बुड्ढे को साँटो, तो काम चले।

इस वक़्त दोनों आदमी खाना खाकर लेटे। जब शाम हुई, तो दोनों हुस्नआरा की तरफ़ चले। भरी बरसात के दिन, कोई गो के टप्पे पर गए होंगे कि पच्छिम की तरफ़ से मतवाली काली घ झूमती हुई आई, और दम-के-दम में चारों तरफ़ अँधेरा छा गया दूकानदार दूकानें झटपट बंद करने लगे। ख़ोंचेवालों ने ख़ों सँभाला, और लंबे हुए। कोई टट्टू को सोंटे-पर-सोंटा लगाता है; कि का बैल दुम दबाए भागा जाता है। कहार पालकी उठाए, क़दम उड़ उड़े जाते हैं, दहने जंगी, बाएँ चरख़ा—हूँ-हूँ-हूँ। पैदल चलनेवाले क़दम उठाते हैं, पाँयचे चढ़ाते हैं। किसी ने जूतियाँ बग़ल में दब और सरपट भागा। किसी ने कमर कसी, और घोड़े को एँड़ दी अँधेरा इस ग़ज़ब का है कि राह सूझती ही नहीं, एक-पा भद-भद करके गिरता है, और मियाँ आज़ाद क़हक़हे लगाते हैं क्यों हज़रत, पूछना न पाछना, और धमाक-से लुढ़क जाना!

आज़ाद—बस, और थोड़ी दूर रह गया है।

हँसोड़—आपको थोड़ी दूर होगा, यहाँ तो क़दम-भर चल मुशकिल हो रहा है। ज़रा देख-भालकर क़दम उठाइएगा। त हवा ने क्या ज़ोर बाँधा, मैं तो वल्लाह, काँपने लगा। अगर सल हो, घर पलट चलें। वह लीजिए, बूँदें भी पड़ने लगीं। कि भलेमानुस के पास जाने का भला यह कौन मौक़ा है।

आज़ाद—अजी, ये बातें उससे कीजिए, जो अपने होश हो। यहाँ तो दीवानापन सवार है।

इतने में बड़ी बेगम का महल नज़र पड़ा। आज़ाद ने ख़ु ख़ुशी के टोपी उछाल दी। तब तो हँसोड़ ने बिगड़कर उसे एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुएँ में फेंक दिया, और कहा—बस, तुममें यही तो ऐब है कि अपने आपे में नहीं रहते। 'ओछे के घर तीतर, बाहर रक्खूँ कि भीतर।'

आज़ाद—या तंग न कर नासेह नादाँ, मुझे इतना;
या लाके दिखा दे दहन ऐसा, कमर ऐसी।

तुम रूखे फीके आदमी, चेहरे पर भूसा उड़ रहा है। तुम ये मुहब्बत की बातें क्या जानो?

जब महल के क़रीब पहुँचे, तो चौकीदार ने ललकारा—कौन? मियाँ हँसोड़ तो झिझके, मगर आज़ाद ने बढ़कर कहा—हम हैं, हम।

चौकीदार—अजी, हम का नाम तो फ़र्माइए, या ठंडी-ठंडी हवा खाइए।

आज़ाद—हम? हमारा नाम मियाँ आज़ाद है। तुम दिलबहार को इत्तिला कर दो।

ख़ैर, किसी तरह आज़ाद अंदर पहुँचे। हुस्नआरा उस वक़्त सो रही थीं, और सिपहआरा बैठी एक शायर का दीवान पढ़ रही थी। आज़ाद की ख़बर सुनते ही बोली—कहाँ हैं कहाँ, बुला लाओ। मियाँ आज़ाद मकान में दाख़िल हुए।

सिपहआरा—वह आएँ घर में हमारे ख़ुदा की क़ुदरत है;
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते हैं।

आज़ाद—यह रूखी ख़ातिरदारी कब तक होगी? हमें दूल्हा भाई कब से कहिएगा?

सिपहआरा—ख़ुदा वह दिन दिखावे तो।

आज़ाद—आपकी बाजी कहाँ हैं?

सिपहआरा—आज कुछ तबीयत नासाज़ है। दिलबहार, जगा दो। कहो, मियाँ आज़ाद आए हैं।

हुस्नआरा अँगड़ाई लेतीं, अठखेलियाँ करती चलीं, और आज़ाद के क़रीब आकर बैठ गईं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—इस वक़्त हमारे दिल की कली खिल गई।

सिपहआरा—क्यों नहीं, फिर मुँह-माँगी मुराद भी तो मिल गई।

आज़ाद—आख़िर अब हम कब तक तरसा करें ? आज मैं क़बुलवाए उठूँ, तो आज़ाद नहीं।

हुस्नआरा—हमारा तो इस वक़्त बुरा हाल है। नींद ख चली आती है। अब हमें सोने जाने दीजिए।

आज़ाद—(दुपट्टा पाँव से दबाकर) हाँ, जाइए, आराम कीजिए।

हुस्नआरा—शरारत से आप बाज़ नहीं आते ! दामन तो दबा हैं, और कहते हैं, जाइए-जाइए, क्योंकर जायँ ?

आज़ाद—दुपट्टे को फेक जाइए।

हुस्नआरा—बजा है, यह किसी और को सिखाइए, (बैठ अब साफ़ कह दूँ।

आज़ाद—ज़रूर ; मगर आपके तेवर इस वक़्त बेढब हैं, ख़ु ही ख़ैर करे ! जो कुछ कहना हो कह डालिए। ख़ुदा करे, मैं मतलब की बात मुँह से निकले।

हुस्नआरा—आप लायक़ हैं, मगर एक परदेसी आदमी, न ठिकाना, घर न बार। किसी से आपका ज़िक्र करूँ, तो क कहूँ ? किसके लड़के हैं ? किसके पोते हैं ? किस ख़ानदान के हैं शहर-भर में यही ख़बर मशहूर हो जायगी कि हुस्नआरा ने ए परदेसी के साथ शादी कर ली। मुझे तो इसकी परवा नहीं ; लेकिन डर यह है कि कहीं इस निकाह से लोग पढ़ी-लिखी औरतों को नीची नज़र से न देखने लगें। बात वह करनी चाहिए कि ध न लगे। मैं पहले भी कह चुकी हूँ, और अब फिर कहती हूँ शहर में नाम पैदा कीजिए, इज़्ज़त कमाइए, चार भले आदमियों में आपकी क़दर हो।

आज़ाद—कहिए, आग में फाँद पड़ूँ ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा—माशा-अल्लाह, कही भी तो निराली ! अगर आग में फाँद पड़े, तो लोग आपको सिड़ी समझेंगे।

सिपहआरा—कोई किताब लिखिए।

हुस्नआरा—नहीं; कोई बहादुरी की बात हो कि जो सुने, वाह-वाह करने लगे, और फिर अच्छी-अच्छी रईसज़ादियाँ चाहें कि उनके साथ मियाँ आज़ाद का ब्याह हो जाय। इस वक़्त मौक़ा भी अच्छा है। रूम और रूस में लड़ाई छिड़नेवाली है। रूम की मदद करना आपका फ़र्ज़ है। आप रूम की तरफ़ से लड़िए, और जवाँमर्दी के जौहर दिखाइए, तमगे़ लटकाए हुए आइए, तो फिर हिंदोस्तान-भर में आप ही की चर्चा हो।

आज़ाद—मंज़ूर, दिलोजान से मंज़ूर। जाऊँ और बीच खेत जाऊँ। मरे, तो सीधे जन्नत में जायँगे। बचे, तो तुमको पावेंगे।

सिपहआरा—मेरे तो लड़ाई के नाम से होश उड़े जाते हैं। (हुस्नआरा से चिमटकर) बाजी, तुम कैसी बेदर्द हो, कहाँ काले कोसों भेजती हो। तुम्हें ख़ुदा की क़सम, इस ख़याल से बाज़ आओ। आज़ाद जायँगे, तो फिर उनकी सूरत देखने को तरस जाओगी। दिन-रात आँसू बहाओगी। क्यों मुफ़्त में किसी की जान की दुश्मन हुई हो?

किनारे दरिया पहुँच के पानी पिया नहीं एक बूँद तिस पर;
चढ़ी है मौजों की हमसे त्योरी हुबाब आँखें बदल रहे हैं।

यह कहते-कहते सिपहआरा की आँखों से गोल-गोल आँसू की बूँदें गिरने लगीं।

हुस्नआरा—हैं-हैं, बहन, यह मुफ़्त का रोना-धोना अच्छा स्वाँग है। वह मुबारक दिन मेरी आँखों के सामने फिर रहा है, जब आज़ाद तमगे़ लटकाए हुए हमारे दरवाज़े पर खड़े होंगे।

मियाँ आज़ाद पर इस वक़्त वह जोबन था कि ओहोहो, जवानी

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फटी पड़ती थी। आँखें सुर्ख़, जैसे कबूतर का ख़ून; मुखड़ा गो[ya] जैसे गुलाब का फूल; कपड़े वह बाँके पहने थे कि सिर से पाँव त[क] एक-एक अंग निखर गया था; टोपी वह बाँकी कि बाँकपन [भी] लोट जाय; कमर से दोहरी तलवारें लटकी हुईं। हुस्नआरा को उ[नका] चाँद-सा मुखड़ा ऐसा भाया कि जी चाहा, इसी वक़्त निकाह कर [लें]; मगर दिल पर ज़ब्त किया।

आज़ाद—आज हम घर से मौत की तलाश ही में निकले थे—

जब से सुना कि मरने का नाम ज़िंदगी है;
सिर से कफ़न को बाँधे क़ातिल को ढूँढ़ते हैं।

सिपह्आरा—प्यारे आज़ाद, ख़ुदा के वास्ते इस ख़याल से बा[ज़] आओ।

आज़ाद—या हाथ तोड़े जायँगे, या खोलेंगे नक़ाब।

हुस्नआरा-सी बीबी पाना दिल्लगी नहीं है। अब हम फिर शा[दी] का हर्फ़ भी ज़बान पर लावें, तो जवाँमर्द नहीं। अब हमारी-इनकी शादी उसी रोज़ होगी, जब हम मैदान से सुर्ख़रू होकर लौटेंगे। हम सिर कटवावेंगे, ज़ख़्म-पर-ज़ख़्म खायँगे, मगर मैदान से क़दम न हटावेंगे।

सिपह्आरा—जो आपने दालान तक भी क़दम रक्खा, तो हम रो-रोकर जान दे देंगे।

आज़ाद—तुम घबराओ नहीं, जीते बचे, तो फिर आवेंगे। हमारे दिल से हुस्नआरा की और तुम्हारी मुहब्बत जाती रहे, यह मुशकिल है। तुम मेरी ख़ातिर से रोना-धोना छोड़ दो। आख़िर क्या लड़ाई में सब-के-सब मर ही जाते हैं?

सिपह्आरा—इतनी दूर जाकर ऐसी ही तक़दीर हो, तो आदमी लौटे। अब मेरी ज़िंदगी मुहाल है। मुझे दफ़नाके जाना। अल्लाह जाने, किन-किन जंगलों में रहोगे, कैसे-कैसे पहाड़ों पर चढ़ना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा, कहाँ-कहाँ लड़ना-भिड़ना होगा। एक ज़रा-सी गोली तो हाथी का काम तमाम कर देती है, इंसान की कौन कहे। तुम वहाँ गोलियाँ खाओगे, और हम दिन-रात बैठे-बैठे कुढ़ा करेंगे। एक-एक दिन एक-एक बरस हो जायगा। और, फिर क्या जाने, आओ न आओ। लड़ाई-चढ़ाई पर जाना कुछ हँसी थोड़े ही है। यह तो तुम्हीं मरदों का काम है। हम तो यहीं से नाम सुन-सुनकर काँपते हैं।

हुस्नआरा—मेरी प्यारी बहन, ज़रा सब्र से काम लो।

सिपह्आरा—न मानूँगी, न मानूँगी।

हुस्नआरा—सुन तो लो।

सिपह्आरा—जी, बस, सुन चुकी। खून कीजिए, और कहिए, सुन तो लो।

हुस्नआरा—यह क्या बुरी-बुरी बातें मुँह से निकालती हो। हमें बुरा मालूम होता है। मैं उनको ज़बर्दस्ती थोड़े ही भेजती हूँ। वह तो आप जाते हैं।

सिपह्आरा—समुंदर-समुंदर जाना पड़ेगा। कोई तूफ़ान आ गया, तो जहाज़ ही डूब जायगा।

आज़ाद—अब रात ज़्यादा आई, आप लोग आराम करें, हम कल रात को यहाँ से कूच करेंगे।

सिपह्आरा—इस तरह जाना था, तो हमारे पास दिल दुखाने आए क्यों थे? (हाथ पकड़कर) देखूँ, आप क्योंकर जाते हैं।

आज़ाद—दिलोजिगर खून हो चुके हैं, हवास तक अपने जा चुके हैं;
वही मुहब्बत का हौसला है, हज़ार सदमे उठा चुके हैं।

हुस्नआरा—हाय, किस ग़ज़ब में जान पड़ी। हाथ-पाँव टूटे जाते हैं, आँखें जल रही हैं। आज़ाद, अगर मुझे दुनिया में किसी की चाह है, तो तुम्हारी। लेकिन दिल से लगी है कि तुम रूसियों को नीचा दिखाओ। मरना-जीना मुक़द्दर के हाथ है। कौन रहा है, और कौन रहेगा!

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताज में जिनके टकते थे गौहर ;
ठोकरें खाते हैं वह सर-ता-सर।
है न शीरीं न कोहकन का पता ;
न किसी जा है नल-दमन का पता।
यही दुनिया का कारख़ाना है ;
यह उलट-फेर का ज़माना है।

आज़ाद—हम तो जाते हैं, तुम सिपहआरा को समझाती रहना। नहीं तो राह में मेरे क़दम न उठेंगे। कल रात को मिलकर कू करूँगा।

हुस्नआरा—बहन, इनको जाने दो, कल आवेंगे।

सिपहआरा—जाइए, मैं आपको रोकनेवाली कौन!

आज़ाद यहाँ से चले कि सामने से मियाँ चंडूबाज़ आते हुए मिल गए। गले से लिपटकर बोले—वल्लाह, आँखें आपको ढूँढ़ती थीं। सूरत देखने को तरस गए। वह जो चलते वक़्त आपने तानकर चाबुक जमाया था, उसका निशान अब तक बना है। बारे मिले ख़ूब। बी अलारक्खी तो मर गईं, बेचारी मरते वक़्त, ख़ुदा की क़सम, अल्लाह-अल्लाह कहा कीं, और दम तोड़ने के पहले तीन दफ़ा आज़ाद-आज़ाद कहकर चल बसीं।

आज़ाद ने चंडूबाज़ की सूरत देखी, तो हाथ-पाँव फूल गए। रूम का जाना और तमग़े लटकाना भूल गए। सोचे, अब इज़्ज़त ख़ाक में मिली। लेकिन जब चंडूबाज़ ने बयान किया कि अलारक्खी चल बसीं और मरते वक़्त तक मेरे ही नाम की रट लगाती रहीं, तो बड़ा अफ़सोस हुआ। आँखों से आँसू बहने लगे। बोले—भई, तुमने बुरी ख़बर सुनाई। हाय, मरते वक़्त दो बातें भी न करने पाए।

चंडूबाज़—क्या अर्ज़ करूँ, क़सम ख़ुदा की, इस प्यार और इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हसरत से तुम्हें याद किया कि क्या कहूँ। मेरी तो रोते-रोते हिचकी बँध गई। ज़रा-सा भी खटका होता तो कहतीं—आज़ाद आए! आप अपना एक रूमाल वहाँ भूल आए हैं, उसको हर रोज़ देख लिया करती थीं। मरते वक़्त कहा कि हमारी क़ब्र पर यह रूमाल रख देना।

आज़ाद—(रोकर) उफ़्, कलेजा मुँह को आता है। मुझे क्या मालूम था कि उस ग़रीब को मुझसे इतनी मुहब्बत थी।

चंडूबाज़—एक गुलदस्ता अपने हाथ से बनाकर दे गई हैं कि अगर मियाँ आज़ाद आ जायँ, तो उनको दे देना, और कहना, अब हश्र में आपकी सूरत देखेंगे।

आज़ाद—भई, इसी वक़्त दो। ख़ुदा के वास्ते अभी लाओ। मैं तो मरा बेमौत। लाओ, गुलदस्ता ज़रा चूम लूँ। आँखों से लगाऊँ, गले से लगाऊँ।

चंडूबाज़—(आँसू बहाकर) चलिए, मैं सराय में उतरा हुआ हूँ। गुलदस्ता साथ है। उसको जान से भी ज़्यादा प्यार करता हूँ।

दोनों आदमी मिलकर चले। राह में अलारक्खी के रूप-रंग और भोली-भोली बातों का ज़िक्र रहा। चलते-चलते दोनों सराय में दाख़िल हुए। मियाँ आज़ाद जैसे ही चंडूबाज़ की कोठरी में घुसे, तो क्या देखते हैं कि बी अलारक्खी बगले के पर-जैसा सफ़ेद कपड़ा पहने खड़ी हैं। देखते ही मियाँ आज़ाद का रंग फ़क़ हो गया। चुप, अब हिलते हैं न बोलते हैं।

अलारक्खी—(तालियाँबजा कर) आदाब-अर्ज़ करती हूँ। ज़री इधर नज़र कीजिए! यह कोसों की राह तय करके हम आप ही की ज़ियारत के लिये आए हैं, और आपको हमसे ऐसी नफ़रत कि आँख तक नहीं मिलाते! वाह री क़िस्मत! अब ज़रा सिर तो

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिलाइए, गरदन तो उठाइए, वह चाँद-सा मुखड़ा तो दिखाइए। हाय, क्या ज़ुल्म है, जिन पर हम जान देते हैं, वह हमारी सूरत से बेज़ार हैं। कहिए, आपकी हुस्नआरा तो अच्छी हैं? ज़रा हमको तो उनका जोबन दिखाओ। हमने सुना, कभी-कभी बजरों पर दरिया की सैर को जाती हैं, कभी हमजोलियों को लेकर जश्न मनाती हैं। क्यों हज़रत, हम बक रहे हैं, या भूक रहे हैं? हमारा ही लहू पिए, जो इधर न देखे।

आज़ाद—ख़ुदा की क़सम, सिर्फ़ तुम्हीं को देखने आया हूँ।

चंडूबाज़—भाई आज़ाद की रोते-रोते हिचकी बँध गई थी। क़सम ख़ुदा की, मैंने जो यह फ़िक़रा चुस्त किया कि अलारक्खी ने मरते वक़्त आज़ाद-आज़ाद कहके दम तोड़ा, तो यह बेहोश होकर गिर पड़े।

अलारक्खी—ख़ैर, इतनी तो ढारस हुई कि मरने के बाद भी हमको कोई पूछेगा; लेकिन—

आए तुरबत पॅ बहुत रोए, किया याद मुझे;
ख़ाक उड़ाने लगे जब कर चुके बरबाद मुझे।

आज़ाद—अलारक्खी, अब हमारी इज़्ज़त तुम्हारे हाथ है। अगर तुम्हें हमसे मुहब्बत है, तो हमें दिक़ न करो। नहीं हम संखिया खाकर जान दे देंगे। अगर हमें जिलाना चाहती हो, तो हमें आज़ाद कर दो।

अलारक्खी—सुनो आज़ाद, हम भी शरीफ़ज़ादी हैं; मगर अल्लाह को यही मंजूर था कि हम भठियारी बनकर रहें। याद है, हमारे बुड्ढे मियाँ ने तुम्हें ख़त देकर हमारे मकान पर भेजा था, और तुम कई दिन तक हमारे घर का चक्कर लगाते रहे थे? हम दिन-रात दुआ करते थे। आख़िर वह तो क़ब्र में पाँव लटकाए बैठे ही थे, चल बसे। उस दिन हमने मसजिद में घी के चिराग़ जलाए। मुझ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खींचकर यहाँ लाया। लेकिन अल्लाह जानता है, जो मेरी आँखें किसी से लड़ी हों। तुमसे ब्याह करने का बहुत शौक़ था; लेकिन तुम राज़ी न हुए। अब हमने सुना है कि हुस्नआरा के साथ तुम्हारा निकाह होनेवाला है। अल्लाह मुबारक करे। अब हमने आपको इजाज़त दे दी, खुशी से ब्याह कीजिए; लेकिन हमें भूल न जाना। लौंडी बनकर रहूँगी, मगर तुमको न छोड़ूँगी।

आज़ाद—उफ़्, तुम वह हो, जिसका उस बूढ़े से ब्याह हुआ था? यह भेद तो अब खुला। मगर हाय, अफ़सोस, तुमने यह क्या किया। तुम्हारी मा ने बड़ी ही बेवक़ूफ़ी की, जो तुम-जैसी कामिनी का एक बुड्ढे के साथ ब्याह कर दिया।

अलारक्खी—अपनी तक़दीर!

कुछ देर तक आज़ाद बैठे अलारक्खी को तसल्ली देते रहे। फिर गला छुड़ाकर, चकमा देकर निकल खड़े हुए। कुछ ही दूर आगे बढ़े थे कि तबले की थपक कानों में आई। घर का रास्ता छोड़ महफ़िल में जा पहुँचे। देखा, वहाँ खूब धमा-चौकड़ी मच रही है। एक ने ग़ज़ल गाई, दूसरी ने ठुमरी, तीसरी ने टप्पा। आज़ाद एक ही रसिया, वहीं जम गए। अब इस सनक को देखिए कि ग़ैर की महफ़िल और आप इंतज़ाम करते हैं, किसी हुक़्क़े की चिलम भरवाते हैं, किसी गुड़गुड़ी को ताज़ा करवाते हैं; कभी ठुमरी की फ़र्माइश की, कभी ग़ज़ल की। दस-पंद्रह गँवारों ने जो गाने की आवाज़ सुनी, तो धँस पड़े। मियाँ आज़ाद ने उन्हें धक्के देकर बाहर किया। मालिक-मकान ने जो देखा कि एक शरीफ़ नौजवान आदमी इंतज़ाम कर रहे हैं, तो इनको पास बुलाया, तपाक-से बिठाया, खाना खिलाया। यही बहार देखते-देखते आज़ाद ने रात काट दी। वहाँ से उठे, तो तड़का हो गया था।

मियाँ आज़ाद को आज ही रूम के सफ़र की तैयारी करनी थी।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी फ़िक्र में बदहवास जा रहे थे। क्या देखते हैं, एक बाग़ में झूले पड़े हैं; कई लड़कियाँ हाथ-पाँव में मेंहदी रचाए, गले में हार डाले पेंग लगा रही हैं, और सब-की-सब सुरीली आवाज़ से लहरा-लहराकर यों गा रही हैं—

नदिया-किनारे बेला किनने बोया, नदिया-किनारे;
बेला भी बोया, चमेली भी बोई, बिच-बिच बोया रे गुलाब, नदिया-किनारे।

आज़ाद को यह गीत ऐसा भाया कि थोड़ी देर ठहर गए। फिर खुद झूले पर जा बैठे, और पेंग लगाने लगे। कभी-कभी गाने भी लगते थे। इस पर लड़कियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ती थीं। एका-एक क्या देखते हैं कि एक काला-कलूटा, मरियल-सा आदमी खड़ा लड़कियों को घूर रहा है। आज़ाद ने कई बार यह कैफ़ियत देखी, तो उनसे रहा न गया, एक चपत जमा ही तो दी। टीप खाते ही वह झल्ला उठा, और गालियाँ देकर कहने लगा—न हुई विला-यती इस वक़्त पास, नहीं तो भुट्टा-सा सिर उड़ा देता। और, जो कहीं जवान होता, तो खोदकर गाड़ देता। और, जो कहीं भूखा होता, तो कच्चा ही खा जाता। और, जो कहीं नशे की चाट होती, तो घोलके पी जाता।

आज़ाद पहचान गए, यह मियाँ ख़ोजी थे। कौन ख़ोजी? नवाब के मुसाहब। कौन नवाब? वही बटेरबाज़, जिनके सफ़शिकन को ढूँढ़ने आज़ाद निकले थे। बोले—अरे, भाई ख़ोजी हैं? बहुत दिनों के बाद मुलाक़ात हुई। मिज़ाज तो अच्छा है?

ख़ोजी—जी हाँ, मिज़ाज तो अच्छा है; लेकिन खोपड़ी भन्ना रही है। भला हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था? वह तो कहिए मैं तुम्हें पहचान गया; नहीं तो इस वक़्त जान से मार डालता।

आज़ाद—इसमें क्या शक, आप हैं ही ऐसे दिलेर! आप इधर कैसे आ निकले?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—आप ही की तलाश में तो आया था।

आज़ाद—नवाब तो अच्छे हैं ?

ख़ोजी—अजी, वह गए चूल्हे में। यहाँ सर भन्ना रहा है। ले अब चलो, तुम्हारे साथ चलें। कुछ तो खिलवाओ यार। मारे भूख के बेदम हुए जाते हैं।

आज़ाद—हाँ, हाँ, चलिए, खूब शौक़ से।

दोनों मिलकर चले, तो आज़ाद ने ख़ोजी को शराब की दूकान पर ले जाकर इतनी शराब पिलाई कि वह टें हो गए, उन्हें वहीं छोड़ मियाँ हँसोड़ के घर जा पहुँचे।

मियाँ हँसोड़ बहुत नाराज़ हुए कि मुझे तो ले जाकर हुस्नआरा के मकान के सामने खड़ा कर दिया, और आप अंदर हो रहे। आधी रात तक तुम्हारी राह देखता रहा। यह आख़िर आप रात को थे कहाँ ?

आज़ाद अभी कुछ जवाब देनेवाले ही थे कि एक तरफ़ से मियाँ पीरबख़्श को आते देखा, और दूसरी तरफ़ से चंडूबाज़ को। आप दूर ही से बोले—अजीब तरह के आदमी हो मियाँ! वहाँ से कहकर चले कि अभी आता हूँ, पल-भर की भी देर न होगी, और तब के गए-गए अब तक सूरत नहीं दिखाई, अलारक्खी बेचारी ढाढ़ें मार-मारकर रो रही हैं। चलिए, उनके आँसू तो पोंछिए।

मियाँ पीरबख़्श ने ये बातें सुनीं, तो उनके कान खड़े हुए। हज्जाम के मुँह से तो यह सुन ही चुके थे कि मियाँ आज़ाद किसी सराय में एक भठियारिन पर लट्टू हो गए थे, पर अब तक हुस्न-आरा से उन्होंने यह बात छिपा रक्खी थी। इस वक़्त जो फिर वही ज़िक्र सुना, तो दिल में सोचने लगे कि वहाँ तो लड़कियों को रात-रात-भर नींद नहीं आती; हुस्नआरा तो किसी क़दर ज़ब्त भी करती हैं, मगर सिपहआरा बेचारी फूट-फूटकर रोती है; और

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहाँ यह हाल है कि कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। बोले—आप चल रहे हैं, या यहीं बैठे हुए बी अलारक्खी के दुखड़े सुनिएगा! अगर कहीं दोनों बहनें सुन लें, तो कैसी हो? बस, अब भलमंसी इसी में है कि मेरे साथ चले चलिए; नहीं तो हुस्नआरा से हाथ धोइएगा, और फिर अपनी फूटी क़िस्मत को रोइएगा।

चंडूबाज़—मियाँ, होश की दवा करो! भला मजाल है कि यह अलारक्खी को छोड़कर यहाँ से जायँ। क्या ख़ूब, हम तो सैकड़ों कुएँ झाँकते यहाँ आए, आप बीच में बोलनेवाले कौन?

आज़ाद—अजी, इन्हें बकने भी दो, हम तुम्हारे साथ अलारक्खी के पास चलेंगे। उस मुहब्बत की पुतली को दग़ा न देंगे। तुम घबराते क्यों हो? खाना तैयार है, आज मीठा पुलाव पकवाया है; तुम ज़रा बाज़ार से लपककर चार आने की बालाई ले लो। मज़े से खाना खायँ। क्यों उस्ताद, है न मामले की बात, लाना हाथ।

चंडूबाज़ बालाई का नाम सुनते ही खिल उठे। झप-से पैसे लिए, और लुढ़कते हुए चले बालाई लाने। मियाँ आज़ाद उन्हें चुत्ता देकर पीरबख़्श से बोले—चलिए हज़रत, हम और आप चलें। रास्ते में बातें होती जायँगी।

दोनों आदमी वहाँ से चले। आज़ाद तो डबल चाल चलने लगे, पर मियाँ पीरबख़्श पीछे रह गए। तब बोले—अजी, ज़रा क़दम रोके हुए चलिए। किसी ज़माने में हम भी जवान थे। अब यह फ़र्माइए कि यह अलारक्खी कौन है? जो कहीं हुस्नआरा सुन पावें, तो आपकी सूरत न देखें; और बड़ी बेगम तो तुमको अपने महल के एक मील इधर-उधर फटकने न दें। आप अपने पाँव में आप कुल्हाड़ी मार रहे हैं। अब शादी-वादी होना ख़ैर-सल्लाह है। सोच लीजिए कि अगर वहाँ इसकी बात चली, तो क्या जवाब दीजिएगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—जनाब, यहाँ सोचने का मरज़ नहीं। उस वक़्त जो ज़बान पर आएगा, कह जाऊँगा। ऐसी वकालत करूँ कि आप भी दंग हो जायँ—ज़बान से फुलझड़ी छूटने लगे।

इतने में कोठी सामने नज़र आई, और ज़रा देर में दोनों आदमी महल में दाख़िल हुए। सिपहआरा तो आज़ाद से मिलने दौड़ी, मगर हुस्नआरा अपनी जगह से न उठी। वह इस बात पर रूठी हुई थी कि इतना दिन चढ़ आया, और मियाँ आज़ाद ने सूरत न दिखाई।

हुस्नआरा—बहन, इनसे पूछो कि आप क्या करने आए हैं?

आज़ाद—आप ख़ुद पूछिए। क्या मुँह नहीं है या मुँह में ज़बान नहीं है?

सिपहआरा—यह अब तक आप कहाँ ग़ायब रहे?

हुस्नआरा—अजी, हमें इसकी क्या परवा। कोई आवे या न आवे, हम किसी के हाथ बिके थोड़े ही हैं।

सिपहआरा—बाजी की आँखें रोते-रोते लाल हो गईं।

हुस्नआरा—पूछो, आख़िर आप चाहते क्या हैं?

आज़ाद—पूछे कौन, आख़िर आप ख़ुद क्यों नहीं पूछतीं—

कहूँ क्या मैं तुझसे कि क्या चाहता हूँ;
जफ़ा हो चुकी, अब वफ़ा चाहता हूँ।
बहुत आशना हैं ज़माने में, लेकिन—
कोई दोस्त दर्द-आशना चाहता हूँ।

हुस्नआरा—इनसे कह दो, यहाँ किसी को वाही-तबाही बकवाद सुनने का शौक़ नहीं है। मालूम है, आप बड़े शायर की दुम हैं!

सिपहआरा—बहन, तुम लाख बनो, दिल की लगी कहीं छिपाने से छिपती है।

हुस्नआरा—चलो, बस, चुप भी रहो। बहुत कलेजा न पकाओ।

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे दिल पर जो गुज़र रही है, हमी जानते हैं। चलो, हम तुम कमरा ख़ाली कर दें। जिसका जी चाहे बैठे, जिसका जी चाहे जाय। हयादार के लिये एक चुल्लू काफ़ी है।

यह कहकर हुस्नआरा उठी, और सिपहआरा भी खड़ी हुई। मियाँ आज़ाद ने सिपहआरा का पहुँचा पकड़ लिया। अब दिल्लगी देखिए कि मियाँ आज़ाद तो उसे अपनी तरफ़ खींचते हैं, और हुस्नआरा अपनी तरफ़ घसीटती हुई कह रही हैं—हमारी बहन का हाथ कोई पकड़े, तो हाथ ही टूटें। जब हमने टका-सा जवाब दे दिया, तो फिर यहाँ आनेवाला कोई कौन! वाह, ऐसे हयादार भी नहीं देखे।

आज़ाद—साहब, आप इतना ख़फ़ा क्यों होती हैं? ख़ुदा के वास्ते ज़रा बैठ तो जाइए। माना कि हम ख़तावार हैं, मगर हमारा जवाब तो सुनिए। ख़ुदा गवाह है, हम बेक़सूर हैं।

हुस्नआरा—बस, बस, ज़बान न खुलवाइए। बस, अब रुख़सत। आप अब छः महीने के बाद सूरत दिखाइएगा, हम भी कलेजे पर पत्थर रख लेंगे।

यह कहकर हुस्नआरा तो वहाँ से चली गई, और मियाँ आज़ाद अकेले बैठे-बैठे सोचने लगे कि इसे कैसे मनाऊँ। आख़िर उन्हें एक चाल सूझी। अरगनी पर से चादर उतार ली, और मुँह ढाँपकर लेट रहे। चेहरा बीमारों का-सा बना लिया, और कराहने लगे। इत्तिफ़ाक़ से मियाँ पीरबख़्श उस कमरे में आ निकले। आज़ाद की सूरत जो देखी, तो होश उड़ गए। जाकर हुस्नआरा से बोले—जल्द पलँग बिछवाओ, मियाँ आज़ाद को बुख़ार हो आया है।

हुस्नआरा—है-है, यह क्या कहते हो! पाँव-तले से ज़मीन निकल गई।

सिपहआरा—कलेजा धड़-धड़ करने लगा! ऐसी सुनानी ख़ुदा सातवें दुश्मन को भी न सुनावे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा—हाय मेरे अल्लाह, मैं क्या करूँ! मैंने अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारी।

ज़रा देर में पलँग बिछ गया। हुस्नआरा, उसकी बहन, पीरबख़्श और दिलबहार चारपाई के पास खड़े होकर आँसू बहाने लगे।

दिलबहार—मियाँ, किसी हकीमजी को बुलाओ।

सिपहआरा—चेहरा कैसा ज़र्द हो गया!

पीरबख़्श—मैं अभी जाकर हकीम साहब को लाता हूँ।

हुस्नआरा—हकीमजी का यहाँ क्या काम? और, यों आप चाहे जिसको बुलावें।

मियाँ पीरबख़्श तो बाहर गए और हुस्नआरा पलँग पर जा बैठी, मियाँ आज़ाद का सिर अपने ज़ानू पर रक्खा। सिपहआरा फूलों का पंखा झलने लगी।

हुस्नआरा—मेरी ज़बान कट पड़े। मेरी ही जली-कटी बातों ने यह बुख़ार पैदा किया।

यह कहकर उसने आहिस्ता-आहिस्ता आज़ाद की पेशानी को सहलाना शुरू किया। आज़ाद ने आँखें खोल दीं, और बोले—

मेरे जनाज़े को उनके कूचे में नाहक़ अहबाब लेके आए;
निगाहे-हसरत से देखते हैं वह रुख़ से परदा हटा-हटाकर।
सहर है नज़दीक, शब है आख़िर, सरा से चलते हैं हम मुसाफ़िर;
जिन्हें है मिलना, वे सब हैं हाज़िर, जरस से कह दो, कोई सदा कर।

हुस्नआरा—क्यों हज़रत, यह मक्कारी! ख़ुदा की पनाह, मेरी तो बुरी गत हो गई!

आज़ाद—ज़रा उसी तरह इन नाज़ुक हाथों से फिर माथा सहलाओ।

हुस्नआरा—मेरी बला जाती है, वह वक़्त ही और था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—मैंने कहा जो उनसे कि शब को यहीं रहो ;
आँखें झुकाके बोले कि किस एतबार पर ?

हुस्नआरा—आपने आख़िर यह स्वाँग क्यों रचा ? छिपाइए नहीं, साफ़-साफ़ बताइए ।

आज़ाद—अब कहती हो कि तुम मेरी महफ़िल में आए क्यों ;
आता था कौन, कोई किसी को बुलाए क्यों ?
कहता हूँ साफ़-साफ़ कि मरता हूँ आप पर ;
ज़ाहिर जो बात हो, उसे कोई छिपाए क्यों ?

यहाँ मारे बुख़ार के दम निकल रहा है, आप मक्र समझती हैं।

यहाँ दोनों में यही नोकझोंक हो रही थी, इतने में मियाँ ख़ोजी पता पूछते हुए आ पहुँचे ।

ख़ोजी—मियाँ होत, ज़रा आज़ाद को तो बुलाओ।

दरबान—किससे कहते हो ? आए कहाँ से ? हो कौन ?

ख़ोजी—एँ, यह तो कुछ बातूनी-सा मालूम होता है। ख़बर इत्तला कर दे कि ख़्वाजा साहब आए हैं ।

दरबान—ख़्वाजा साहब ? हमें तो जुलाहे-से मालूम होते हो। भलेमानसों की सूरत ऐसी ही हुआ करती है ?

आज़ाद ने ये बातें सुनीं, तो बाहर निकल आए, और ख़ोजी को बुला लिया ।

ख़ोजी—भई, ज़रा आईना तो मँगवा देना ।

आज़ाद—यह आईना क्या होगा ? बंदगी न सलाम, बात न चीत, आते-ही-आते आईना याद आया । बंदर के हाथ में आईना भला कौन देने लगा !

ख़ोजी—अजी मँगवाते हो या दिल्लगी करते हो। दरबान से हमसे झौड़ हो गई। मरदूद कहता है, तुम्हारी सूरत भलेमानसों की-सी नहीं। अब कोई उससे पूछे, फिर क्या चमार की-सी है, या पाजी की-सी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—भई अगर सच पूछते हो, तो तुम्हारी सूरत से एक तरह का पाजीपन बरसता है। खुदा चाहे पाजी बनावे, मगर पाजी की सूरत न बनावे। पर अब उसका इलाज ही क्या?

ख़ोजी—वाह, इसका कुछ इलाज ही नहीं? डॉक्टरों ने मुरदे तक के जिला लेने का तो बंदोबस्त कर लिया है; आप फ़रमाते हैं, इलाज ही नहीं। अब पाजी न बनेंगे, पाजी बनके जिए तो क्या।

आज़ाद—कल हम रूम जानेवाले हैं, चलते हो साथ?

ख़ोजी—न चले, उस पर भी लानत, न ले चले, उस पर भी लानत!

आज़ाद—मगर वहाँ चंडू न मिलेगा, इतना याद रखिए।

ख़ोजी—अजी अफ़ीम मिलेगी कि वह भी न मिलेगी? बस, तो फिर हम अपना चंडू बना लेंगे। हमें ज़रूर ले चलिए।

आज़ाद अंदर जाकर बोले—हुस्नआरा, अब रुख़सत का वक़्त क़रीब आता जाता है; हँसी-खुशी रुख़सत करो; खुदा ने चाहा तो फिर मिलेंगे।

हुस्नआरा की आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगे। बोली—हाय, अंदरवाला नहीं मानता। उसको भी तो समझाते जाओ। यह किसका होकर रहेगा?

आज़ाद—तुम्हारी यह हालत देखकर मेरे क़दम रुके जाते हैं। अब हमें जाने दो। ज़िंदगी शर्त है, हम फिर मिलेंगे, और जश्न करेंगे। यह कहकर आज़ाद बाहर चले आए, और ख़ोजी के साथ चले। ख़ोजी ने समझा था, रूम कहीं लखनऊ के आस-पास होगा। अब जो सुना कि सात समुंदर पार जाना पड़ेगा, तो हक्का-बक्का हो गए। हाथ-पाँव काँपने लगे। भई, हम समझे थे, दिल्लगी करते हो। यह क्या मालूम था कि सचमुच तंग-तोबड़ा चढ़ाकर भागा ही चाहते हो। मियाँ, तुम लाख आलिम-फ़ाज़िल सही, फिर भी लड़के ही हो;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह ख़याल दिल से निकाल डालो। एक ज़रा-सी चने के बराबर गोली पड़ेगी, तो टाँय-से रह जाओगे। आपको कभी मोरचे पर जाने का शायद इत्तिफ़ाक़ नहीं हुआ। ख़ुदा भलेमानस को न ले जाय। ग़ज़ब का सामना होता है। वह गोली पड़ी, यह मर गया। दाँय-दाँय की आवाज़ से कान के परदे फट जाते हैं। तोप का गोला आया, और अठारह आदमियों को गिरा दिया। गोला फटा, और बहत्तर टुकड़े हुए, और एक-एक टुकड़े ने दस-दस आदमियों को उड़ा दिया। जो कहीं तलवार चलने लगी, तो मौत सामने नज़र आती है, बेमौत जान जाती है। खटाखट तलवार चल रही है, और हज़ारों आदमी गिरते जाते हैं। सो भई, वहाँ जाना कुछ ख़ालाजी का घर थोड़े ही है। ख़ुदा के लिये उधर रुख़ न करना। और, बंदा तो अपने हिसाब जानेवाले को कुछ कहता है। हम एक तरकीब बतावें, वह काम क्यों न कीजिए कि हुस्नआरा आपको ख़ुद रोकें और लाखों क़समें दें। आप अंदर जाकर बैठिए, और हमको चिक के पास बिठाइए। फिर देखिए, मैं कैसी तक़रीर करता हूँ कि दोनों बहनें काँप उठें; उनको यक़ीन हो जाय कि मियाँ आज़ाद गए, और अंटाग़फ़ील हुए। मैं साफ़-साफ़ कह दूँगा कि भई आज़ाद, ज़रा अपनी तसवीर तो खिंचवा लो। आख़िर आप तो जाते ही हो। वल्लाह, जो कहीं यह तक़रीर सुन पावें, तो हश्र तक तुम्हें न जाने दें, और झप-से शादी हो जाय।

आज़ाद—बस, अब और कुछ न फ़रमाइएगा। मरना-जीना किसी के अख़्तियार की बात तो है नहीं; लाखों आदमी कोरे आते हैं, और हज़ारों राह चलते लोट जाते हैं। हुस्नआरा हमसे कहें कि टर्की जाओ, और हम बातें बनावें, उसको धोखा दें! जिससे मुहब्बत की, उससे फ़रेब! यह मुझसे हरगिज़ न होगा, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय। आप मियाँ हँसोड़ के यहाँ जाइए, और उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Ha

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से कहिए कि हम अभी आते हैं । हम पहुँचे और खाना खाकर लंबे हुए । ख़ोजी तो गिरते-पड़ते चले, मगर दो क़दम जाकर फिर पलटे । भई, एक बात तो सुनो । क्या-क्या पकवा रक्खूँ ? आज़ाद बहुत ही झल्लाए । अजब नासमझ आदमी हो ! यह भी कोई पूछने की बात है भला ! उनके यहाँ जो कुछ मुमकिन होगा, तैयार करेंगे । यह कहकर आज़ाद तो अपने दो-चार दोस्तों से मिलने चले, उधर मियाँ ख़ोजी हँसोड़ के घर पहुँचे । जाकर गुल मचाना शुरू किया कि जल्द खाना तैयार करो, मियाँ आज़ाद अभी-अभी जानेवाले हैं । उन्होंने कहा है कि पाँच सेर मीठे टुकड़े, सात सेर पुलाव, दस सेर फ़ीरनी, दस ही सेर खीर, कोई चौदह सेर ज़रदा, कोई पाँच सेर मुरब्बा और मीठे अचार की अचारियाँ जल्द तैयार हों । मियाँ हँसोड़ की बीबी खाना पकाने में बर्क़ थीं । हाथोहाथ सब सामान तैयार कर दिया । मियाँ आज़ाद शाम को पहुँचे ।

हँसोड़—कहिए, आज तो सफ़र का इरादा है । खाना तैयार है; कहिए, तो निकलवाया जाय । बर्फ़ भी मँगवा रक्खी है ।

आज़ाद—खाना तो हम इस वक़्त न खायँगे, ज़रा भी भूख नहीं है ।

हँसोड़—ख़ैर, आप न खाइएगा, न सही । आपके और दोस्त कहाँ हैं ? उनके साथ दो निवाले तुम भी खा लेना ।

आज़ाद—दोस्त कैसे ! मैंने तो किसी दोस्त के लिये खाना पकाने को नहीं कहा था ।

हँसोड़—और सुनिएगा ! क्या आपने अपने ही लिये दस सेर खीर, अठारह सेर मीठे टुकड़े और ख़ुदा जाने क्या-क्या अल्लम-ग़ल्लम पकवाया है ?

आज़ाद—आपसे यह कहा किस नामाकूल ने ?

हँसोड़—ख़ोजी ने, और किसने ? बैठे तो हैं, पूछिए न ।

In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—ख़ोजी तुम मरभुखे ही रहे। यह इतनी चीज़ें क्या सिर पर लादकर ले जाओगे? लाहौल बिला कूवत।

ख़ोजी—लाहौल काहे की? आप न खाइए, मैं तो डटकर खा चुका। रास्ते के लिये भी बाँध रक्खा है।

आज़ाद—अच्छा, तो अब बोरिया-बधना उठाइए, लादिए-फाँदिए।

ख़ोजी—जनाब, इस वक़्त तो यह हाल है, जैसे चूहे को कोई पारा पिला दे। अब बंदा लोट मारेगा। और यह तो बताओ, सवारी क्या है?

आज़ाद—इक्का।

ख़ोजी—ग़ज़ब ख़ुदा का! तब तो मैं जा चुका। इक्के पर तो यहाँ कभी सवार ही नहीं हुए। और फिर खाना खाकर तो ला ही जाऊँगा।

ख़ैर, मियाँ आज़ाद ने झटपट खाना खाया, और असबाब कसकर तैयार हो गए। ख़ोजी पड़े ख़र्राटे ले रहे थे; रोते-गाते उठे। बाहर जाकर देखते हैं, तो एक समंद घोड़ी पूरी, दूसरा मरियल टट्टू। आज़ाद घोड़ी पर सवार हुए, और मियाँ हँसोड़ की बीबी से बोले—भाभी, भूल न जाइएगा। भाई साहब तो भुलक्कड़ आदमी हैं, आप याद रखिएगा। आपके हाथ का खाना उम्र-भर न भूलूँगा। उन्होंने रुख़सत करते हुए कहा—जिस तरह पीठ दिखाते हो, ख़ुदा करे, उसी तरह मुँह भी दिखाओ। इमाम ज़ामिन को सौंपा।

अब सुनिए कि मियाँ ख़ोजी ने अपने मरियल टट्टू को जो देखा, तो घबराए। घोड़े पर कभी ज़िंदगी-भर सवार न हुए थे। लाख चाहते हैं कि सवार हो जायँ, मगर हिम्मत नहीं पड़ती। यार लोग डराते हैं—देखो, देखो, वह पुस्तक उछाली, वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुलत्ती झाड़ी, वह मुँह खोलकर लपका; मगर टट्टू खड़ा है, कान तक नहीं हिलाता। एक दफ़े आँख बंद करके हज़रत ने चाहा कि लद लें, मगर यारों ने तालियाँ जो बजाईं, तो टट्टू भागा, और मियाँ ख़ोजी भद-से ज़मीन पर। देखा, कहते न थे कि हम इस टट्टू पर न सवार होंगे। मगर आज़ाद ने दो घड़ी दिल्लगी देखने के लिये हमको उल्लू बनाया। वह तो कहो हड्डी-पसली बच गई, नहीं तो चुरमुर ही हो ज़ाती। ख़ैर, दो आदमियों ने उनको उठाया, और लादकर घोड़ी की पीठ पर रख दिया। उन्होंने लगाम हाथ में ली ही थी कि एक बिगड़े-दिल ने चाबुक जमा दिया। टट्टू दुम दबाकर भागा, और मियाँ ख़ोजी लुढ़क गए। बारे आज़ाद ने आकर उनको उठाया।

ख़ोजी—अब क्या रूम तक बराबर इस टट्टू ही पर जाना होगा?

आज़ाद—और नहीं, क्या आपके वास्ते उड़नखटोला आवेगा?

ख़ोजी—भला इस टट्टू पर कौन जायगा?

आज़ाद—टट्टू, आप तो इसे टाँघन कहते थे!

ख़ोजी—भई, हमें आज़ाद कर दो। हम बाज़ आए इस सफ़र से।

आज़ाद—अरे बेवकूफ़, रेल तक इसी पर चलना होगा। वहाँ से बंबई तक रेल पर जायँगे।

मियाँ आज़ाद और ख़ोजी आगे बढ़े। थोड़ी देर में ख़ोजी का टट्टू भी गरमाया, और आज़ाद की घोड़ी के पीछे क़दम बढ़ाकर चलने लगा। चलते-चलते टट्टू ने शरारत की। बूट के हरे-भरे खेत देखे, तो उधर लपका। किसान ने जो देखा, तो लट्ठ लेकर दौड़ा, और लगा बुरा-भला कहने। उसकी जोरू भी चमककर लपकी, और कोसने लगी कि पलवइया मर जाय, कीड़े पड़ें, अभी-अभी पेट फटै, दाढ़ीजार की लहास निकलै। और, किसान भी गालियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देने लगा—अरे यो टट्टू कौन सार केर आय ? ससुर हमरे खेत में पैठाय दिहिस। मियाँ ख़ोजी गालियाँ खाकर बिगड़ गए। उनमें एक सिफ़त यह थी कि बे सोचे-समझे लड़ पड़ते थे; चाहे अपने से दुगना-चौगना हो, वह चिमट ही जाते थे। गुस्से की यह ख़ासियत है कि जब आता है, कमज़ोर पर। मगर मियाँ ख़ोजी का गुस्सा भी निराला था, वह जब आता था, शहज़ोर पर। किसान ने उनके टट्टू को कई लट्ठ जमाए, तो मियाँ ख़ोजी तड़-से उतरकर किसान से गुथ गए। वह गँवार आदमी, बदन का करारा, और यह दुबले-पतले महीन आदमी, हवा के झोंके में उड़ जायँ। उसने इनकी गरदन दबोची, और गद-से ज़मीन पर फेंका। फिर उठे, तो उसकी जोरू इनसे चिमट गई, और लगी हाथा-पाई होने। उसने घूँसा जमाया, और इनके पट्टे पकड़कर फेंका, तो चारो शाने चित। दो थप्पड़ भी रसीद किए—एक इधर एक उधर। किसान खड़ा हँस रहा है कि मेहरारू से जीत नाहीं पावत, यह मुसंडन से का लड़िहै भला! किसान की जोरू तो ठोंक-ठाँककर चल दी, और आपने पुकारना शुरू किया—क़सम अब्बाजान की, जो कहीं छुरा पास होता, तो इन दोनों की लाश इस वक़्त फड़कती होती। वह तो कहिए, ख़ुदा को अच्छा करना मंज़ूर था कि मेरे पास छुरा न था, नहीं तो इतनी क़रौलियाँ भोंकता कि उमर-भर याद करते। खड़ा तो रह ओ गीदी! इस पर गाँववालों ने ख़ूब क़हक़हा उड़ाया। एक ने पूछा—क्यों मियाँ साहब, छुरी होती, तो क्या भोंककर मार जाते? इस पर मियाँ ख़ोजी और भी आग हो गए।

मियाँ आज़ाद कोई दो गोली के टप्पे पर निकल गए थे। जब ख़ोजी को पीछे न देखा, तो चकराए कि माजरा क्या है। घोड़ी फेरी, और आकर ख़ोजी से बोले—यहाँ खेत में कब तक पड़े रहोगे? उठो, गर्द झाड़ो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—क़रौली न हुई पास, नहीं तो इस वक़्त दो लाशें यहाँ फड़कती हुई देखते।

आज़ाद—अजी, वह तो जब देखते तब देखते, इस वक़्त तो तुम्हारी लोथ देख रहे हैं।

उन्होंने फिर ख़ोजी को उठाया, और टट्टू पर सवार कराया। थोड़ी देर में फिर दोनों आदमियों में एक खेत का फ़ासला हो गया। ख़ोजी से एक पठान ने पूछा कि शेख़जी, आप कहाँ रहते हैं? हज़रत ने झट-से एक कोड़ा जमाया, और कहा—अबे, हम शेख़ नहीं, ख़्वाजा हैं। वह आदमी गुस्से से आग हो गया, और टाँग पकड़कर घसीटी, तो ख़ोजी खट-से ज़मीन पर। अब चारों शाने चित पड़े हैं, उठने का नाम नहीं लेते। आज़ाद ने जो पीछे फिरकर देखा, तो टट्टू आ रहा है, मगर ख़ोजी नदारद। पलटे, देखें, अब क्या हुआ। इनके पास पहुँचे, तो देखा, फिर उसी तरह ज़मीन पर पड़े क़रौली की हाँक लगा रहे हैं।

आज़ाद—तुम्हें शर्म नहीं आती! कमज़ोर मार खाने की निशानी। दम नहीं है, तो कटे क्यों मरते हो? मुफ़्त में जूतियाँ खाना कौन जवाँमरदी है?

ख़ोजी—वल्लाह, जो क़रौली कहीं पास हो, तो चलनी ही कर डालूँ। वह तो कहिए, ख़ैरियत हुई कि क़रौली न थी, नहीं तो इस वक़्त क़ब्र खोदनी पड़ती।

आज़ाद—अब उठोगे भी, या परसों तक यों ही पड़े रहोगे तुमने तो अच्छा नाक में दम कर दिया!

ख़ोजी—अजी, अब न उठेंगे, जब तक क़रौली न ला दोगे, बस, अब बिना क़रौली के न बनेगी।

आज़ाद—बस, अब बेहूदा न बको; नहीं तो मैं अब की एक लात जमाऊँगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ैर, दोनों आदमी यहाँ से चले तो ख़ोजी बोले—यहाँ जो[ड़] जोड़ में दर्द हो रहा है। उस किसान की मुसंडी औरत ने तो कचूमर ही निकाल डाला। मगर क़सम है ख़ुदा की, जो कहीं क़रौली पास होती, तो ग़ज़ब ही हो जाता। एक को तो जीता छोड़ता ही नहीं।

आज़ाद—ख़ुदा गंजे को पंजे नहीं देता। क़रौली की आपको हमेशा तलाश रही, मगर जब आए, पिट ही के आए, जूतियाँ ही खाईं। ख़ैर, यह दुखड़ा कोई कहाँ तक रोवे, अब यह बताओ कि हम क्या करें? जी मतला रहा है, बंद-बंद टूट रहा है, आँखें जलती हैं।

ख़ोजी—लैनडोरी आ गई। अब हज़रत भी आते होंगे।

आज़ाद—यह लनडोरी कैसी? और हज़रत कौन? मैं कुछ नहीं समझा। ज़रा बताओ तो?

ख़ोजी—अभी लड़के न हो, बुख़ार की आमद है। आँखों की जलन, जी का मतलाना, बदन का टूटना, सब उसी की अलामतें हैं। इस वक़्त घोड़े पर सवार होकर चलना बुरा है। अब आप घोड़े से उतर पड़िए, और चलकर कहीं लेट रहिए, कहना मानिए।

आज़ाद—यहाँ कोई अपना घर है, जो उतर पड़ूँ? किसी से पूछो तो कि गाँव कितनी दूर है। ख़ुदा करे, पास ही हो, नहीं तो मैं यहीं गिर पड़ूँगा, और क़ब्र भी यहीं बनेगी।

ख़ोजी—अजी, ज़रा दिल को सँभालो। कोई इतना घबराता है? क़ब्र कैसी? ज़रा दिल को ढारस दीजिए।

आज़ाद—वल्लाह, फुँका जाता हूँ, बदन से आग निकल रही है।

ख़ोजी—वह गाँव सामने ही है, ज़रा घोड़ी को तेज़ कर दो।

आज़ाद ने घोड़ी को ज़रा तेज़ किया, तो वह उड़ गई। ख़ोजी ने भी कोड़े-पर-कोड़ा जमाना शुरू किया। मगर लद्दू टट्टू कहाँ तक जाता? आख़िर ख़ोजी ने झल्लाकर एक एड़ जो दी, तो व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगले पाँव पर खड़ा हो गया, और मियाँ ख़ोजी सँभल न सके, धम-से ज़मीन पर आ रहे। अब टट्टू पर बिगड़ रहे हैं कि न हुई क़रौली इस वक़्त, नहीं तो इतनी भोंकता कि बिलबिलाने लगता। ख़ैर, किसी तरह उठे, टट्टू को पकड़ा, और लदकर चले। दो-चार दिल्लगीबाज़ आदमियों ने तालियाँ बजाई, और कहना शुरू किया—लदा है, लदा है, लेना, जाने न पावे। ख़ोजी बिगड़ खड़े हुए। हटो सामने से, नहीं हंटर जमाता हूँ। मुझे भी कोई ऐसा-वैसा समझे हो। मैं सिपाही आदमी हूँ। नवाबी में दो-दो तलवारें कमर से लगी रहती थीं। अब लाख कमज़ोर हो गया हूँ, लेकिन अब भी तुम-जैसे पचास पर भारी हूँ। लोगों ने ख़ूब हँसी उड़ाई। जी हाँ, आप ऐसे ही जवाँमर्द हैं। ऐसे सूरमा होते कहाँ हैं!

ख़ोजी—उतरूँ घोड़े से, आऊँ?

यारों ने कहा—नहीं साहब, ऐसा ग़ज़ब भी न कीजिएगा! आप ठहरे पहलवान, और सिपाही आदमी, कहीं मार डालिए आकर, तो कोई क्या करेगा।

इस तरह गिरते-पड़ते एक सराय में पहुँचे, और अंदर जाकर कोठरियाँ देखने लगे। सराय-भर में चक्कर लगाए, लेकिन कोई कोठरी पसंद न आई। भठियारियाँ पुकार रही हैं कि मियाँ मुसाफ़िर, इधर आओ, इधर देखो, ख़ासी साफ़-सुथरी कोठरी है। टट्टू बाँधने की जगह अलग। इतना कहना था कि मियाँ ख़ोजी आग हो गए। क्या कहा, टट्टू है, यह पीगू का टाँघन है। एक भठियारी ने चमककर कहा—टाँघन है या गधा? तब तो ख़ोजी झल्लाने और छुरी और क़रौली की तलाश करने लगे। इस पर सराय-भर की भठियारियों ने उन्हें बनाना शुरू किया। आख़िर आप इतने दिक़ हुए कि सराय के बाहर निकल आए, और बोले—भई, चलो, आगे के गाँव में रहेंगे। यहाँ सब-के-सब शरीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। मगर आज़ाद में इतना दम कहाँ कि आगे जा सकें। सा[illegible] में गए, और एक कोठरी में उतर पड़े। ख़ोजी ने भी वहीं बिस्[illegible] जमाया। साईस तो कोई साथ था नहीं, ख़ोजी को अपने हा[illegible] हाथ से दोनों जानवरों के खरेरा करना पड़ा। भठियारी ने समझ[illegible] यह साईस है।

भठियारी—ओ साईस भैया, ज़रा घोड़ी को उधर बाँधो।

ख़ोजी—किसे कहती है री, साईस कौन है?

भठियारी—ऐ तो बिगड़ते क्यों हो मियाँ, साईस नहीं, च[illegible] कट सही।

आज़ाद—चुप रहो, यह हमारे दोस्त हैं।

भठियारी—दोस्त हैं, सूरत तो भलेमानसों की-सी नहीं है।

ख़ोजी—भई आज़ाद, ज़रा आईना तो निकाल देना। [illegible] आदमी कह चुके। आज मैं अपना चेहरा ज़रूर देखूँगा। आख़ि[illegible] सबब क्या कि जिसे देखो, यही कहता है।

आज़ाद—चलो, वाहियात न बको, मेरा तो बुरा हाल है।

भठियारी ने चारपाई बिछा दी, और आज़ाद लेटे। ख़ोजी [illegible] कहा—अब तबीयत कैसी है?

आज़ाद—बुरी गत है; जी चाहता है, इस वक़्त ज़हर खा लूँ।

ख़ोजी—ज़रूर, और उसमें थोड़ी संखिया भी मिला लेना।

आज़ाद—मर कमबख़्त, दिल्लगी का यह मौक़ा है?

ख़ोजी—अब बूढ़ा हुआ, मरूँ किस पर। मरने के दिन तो गए। अब तुम ज़रा सोने का ख़याल करो। दो-चार घड़ी नींद आ जा[illegible] तो जी हलका हो जाय।

इतने में भठियारी ने आकर पूछा—मियाँ कैसे हो?

आज़ाद—क्या बताऊँ, मर रहा हूँ।

भठियारी—किस पर?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—तुम पर।

भठियारी—ख़ुदा की सँवार।

आज़ाद—किस पर ?

भठियारी ने ख़ोजी की तरफ़ इशारा करके कहा—इन पर।

ख़ोजी—अफ़सोस, न हुई क़रौली !

आज़ाद—होती, तो क्या करते ?

ख़ोजी—भोंक लेते अपने पेट में।

आज़ाद—भई, अब कुछ इलाज करो ; नहीं तो मुफ़्त में दम निकल जायगा।

भठियारी—एक हकीम यहाँ रहते हैं। मैं बुलाए लाती हूँ।

यह कहकर बी भठियारी जाकर हकीमजी को बुला लाई। मियाँ आज़ाद देखते हैं, तो अजब ढंग के आदमी—धोती बाँधे, गाढ़े की मिरज़ई पहने, चेहरे से देहातीपन बरस रहा है, आदमियत छू ही नहीं गई।

आज़ाद—हकीम साहब, आदाब।

हकीम—नाहीं दबवाव नहीं। बुख़ार में दाबे नुक़सान होत है।

आज़ाद—आपका नाम ?

हकीम—हमारा नाम दाँगलू।

आज़ाद—दाँगलू या जाँगलू ?

हकीम—नुस्ख़ा लिखूँ।

आज़ाद—जी नहीं, माफ़ कीजिए। बस, यहाँ से तशरीफ़ ले जाइए।

हकीम—बुख़ार में अक-बक करत हैं, चाँद के पट्टे कतरवा डालो।

ख़ोजी—कुछ बेधा तो नहीं हुआ ! न हुई क़रौली, नहीं तो तोंद पर रख देता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हकीम—भाई, हमसे इनका इलाज न हो सकिहै। अब एक होय, तो इलाज करें। यो पागल को है हो? हमका भलुई आ पलवा बकत है ससुर।

आख़िर ख़ोजी ने झल्लाकर उनको उठा दिया, और यह नुस्ख़ा लिखा—

आलूबुख़ारा दो दाना, तमरहिंदी छः माशा, अर्क़ गावज़बाँ दो तोला।

आज़ाद—यह नुस्ख़ा तो आप कल पिलावेंगे, यहाँ तो रात-भर में काम ही तमाम हो जायगा।

ख़ोजी—इस वक़्त बंदा कुछ नहीं देने का। हाँ, आलू का पानी पीजिए, पाँच दाने भिगोए देता हूँ। खाना इस वक़्त कुछ न खाना।

आज़ाद—वाह, खाना न मिला, तो मैं आप ही को चट कर जाऊँगा। इस भरोसे न रहिएगा।

ख़ोजी—वल्लाह, एक दाना भी आपके पेट में गया, और आप बरस-भर तक यों ही पड़े रहे। आलू का पानी भी घोट-घोट करके पीना। यह नहीं कि प्याला मुँह से लगाया, और ग़ट-ग़ट पी गए।

यह कहकर ख़ोजी ने चंदन घिसकर आज़ाद की छाती पर रक्खा। पालक के पत्ते चारपाई पर बिछा दिए। खीरा काटकर माथे पर रक्खा, और ज़रा-सा नमक बारीक पीसकर पाँव में मला। तलवे सहलाए।

आज़ाद—यहाँ तो कोई हकीम भी नहीं।

ख़ोजी—अजी, हम ख़ुद इलाज करेंगे। हकीम न सही, हकीमों की आँखें तो देखी हैं।

आज़ाद—इलाज तक मुज़ायक़ा नहीं, मगर मार न डालना भाई! हाँ, ज़रा इतना एहसान करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद की बेचैनी कुछ कम हुई, तो आँख लग गई। एकाएक पड़ोस की कोठरी से शोर-गुल की आवाज़ आई। आज़ाद चौंक पड़े, और पूछा—यह कैसा शोर है ? भठियारी, तुम ज़रा जाकर उनको ललकारो।

ख़ोजी—कहो कि एक शरीफ़ आदमी बुख़ार में पड़ा हुआ है। ख़ुदा के वास्ते ज़रा ख़ामोश हो जाओ।

भठियारी—मियाँ, मैं ठहरी औरतज़ात, और वे मरदुए। और फिर अपने आपे में नहीं। जो मुझी पर पिल पड़े, तो क्या करूँगी ? हाँ, भठियारे को भेजे देती हूँ।

भठियारे ने जाकर जो उन शराबियों को डाँटा, तो सब-के-सब उस पर टूट पड़े, और चपतें मार-मारकर भगा दिया। इस पर भठियारी तैश में आकर उठी, और उँगलियाँ मटकाकर इतनी गालियाँ सुनाईं कि शराबियों का नशा हिरन हो गया। वे इतना डरे कि कोठरी का दरवाज़ा बंद कर लिया।

लेकिन थोड़ी देर में फिर शोर हुआ, और आज़ाद की नींद उचट गई। ख़ोजी की जो शामत आई, तो शराबियों की कोठरी के दरवाज़े को इस ज़ोर से धमधमाया कि चूल निकल आई। सब शराबी झल्लाकर बाहर निकल आए, और ख़ोजी पर बेभाव की पड़ने लगीं। उन्होंने इधर-उधर छुरी और क़रौली की बहुत कुछ तलाश की, मगर ख़ूब पिटे। इसके बाद वे सब सो गए, रात-भर कोई न मिनका। सुबह को उस कोठरी से रोने की आवाज़ आई। ख़ोजी ने जाकर देखा, तो एक आदमी मरा पड़ा है, और बाक़ी सब खड़े रो रहे हैं। पूछा, तो एक शराबी ने कहा—भाई, हम सब रोज़ शराब पिया करते हैं। कल की शराब बहुत तेज़ थी। हमने बहुत मना किया; पर इसने बोतल-की-बोतल ख़ाली कर दी। रात को हम लोग सोए, तो इतना अलबत्ता कहा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलेजा फुँका जा रहा है। अब जो देखते हैं, तो मरा हुआ है। आप तो जान से गया, और हमको भी क़त्ल कर गया।

ख़ोजी—ग़ज़ब हो गया! अब तुम सब धरे जाओगे, और सज़ा पाओगे।

शराबी—हम कहेंगे कि साँप ने काटा था।

ख़ोजी—कहीं ऐसी भूल भी न करना।

शराबी—अच्छा, भाग जायँगे।

ख़ोजी—तब तो ज़रूर ही पकड़े जाओगे। लोग ताड़ जायँगे कि कुछ दाल में काला है।

शराबी—अच्छा, हम कहेंगे कि छुरी मारकर मर गया, और गले में छुरी भी भोंक देंगे।

ख़ोजी—यह सब हिमाक़त है, मैं जैसे कहूँ, वैसे करो। तुम सब-के-सब रोओ और सिर पीटो। एक कहे कि मेरा सगा भाई था; दूसरा कहे कि मेरा बहनोई था; तीसरा उसे मामूँ बतावे। जो कोई पूछे कि क्या हुआ था, तो गुर्दे का दर्द बताना। ख़ूब चिल्ला-चिल्लाकर रोना। जो यों आँसू न आवें, तो मिरचे लगा लो। आँखों में धूल झोंक लो। ऐसा न हो कि गड़बड़ा जाओ, और जेलख़ाने जाओ।

इधर तो शराबियों ने रोना-पीटना शुरू किया, उधर किसी ने जाकर थाने में जड़ दी कि सराय में कई आदमियों ने मिलकर एक महाजन को मार डाला। थानेदार और दस चौकीदार रप-रप करते आ पहुँचे। अरे ओ भठियारी, बता, वह महाजन कहाँ टिका हुआ था!

भठियारिन—कौन महाजन? किसी का नाम तो लीजिए।

थानेदार—तेरा बाप, और कौन!

भठियारिन—मेरा बाप। उसकी तलाश है, तो क़ब्रिस्तान जाइए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थानेदार—खून कहाँ हुआ ?

भठियारिन—खून ! अरे तोबा कर बंदे ! खून हुआ होगा थाने पर।

थानेदार—अरे, इस सराय में कोई मरा है रात को ?

भठियारिन—हाँ, तो यों कहिए। वह देखिए, बेचारे खड़े रो रहे हैं। उनके भाई थे। कल दर्द हुआ। रात को मर गए।

थानेदार—लाश कहाँ है ?

शराबी—हुज़ूर, यह रक्खी है। हाय, हम तो मर मिटे। घर में जाकर क्या मुँह दिखावेंगे, किस मुँह से अब घर जायँगे। किसी डॉक्टर को बुलवाइए, ज़रा नब्ज़ तो देख ले।

थानेदार—अजी, अब नब्ज़ में क्या रक्खा है। बेचारा बुरी मौत मरा। अब इसके दफ़न-कफ़न की फ़िक्र करो।

थानेदार चला गया, तो मियाँ ख़ोजी खूब खिलखिलाकर हँसे कि वल्लाह, क्या बात बनाई है। शराबियों ने उनकी खूब आवभगत की कि वाह उस्ताद, क्या झाँसा दिया। आपकी बदौलत जान बची; नहीं तो न-जाने किस मुसीबत में फँस जाते।

थोड़ी ही देर बाद किसी कोठरी से फिर शोर-गुल सुनाई दिया।

आज़ाद—अब यह कैसा गुल है भाई ? क्या यह भी कोई शराबी है ?

भठियारी—नहीं, एक रईस की लड़की है। उस पर एक परेत आया है। ज़रा-सी लड़की, लेकिन इतनी दिलेर हो गई है कि किसी के सँभाले नहीं सँभलती।

आज़ाद—यह सब ढकोसला है।

भठियारी—ऐ वाह, ढकोसला है। इस लड़की का भाई आगरे में था, और वहाँ से पाँच सौ रुपए अपने बाप की थैली से चुरा

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाया। यहाँ जो आया, तो लड़की ने कहा कि तू चोर है, चो[री] करके आया है।

आज़ाद—अजी, उस लड़के ने अपनी बहन से कह दिया होगा; नहीं तो भला उसे क्या ख़बर होती?

भठियारी—भला ग़ज़लें उसे कहाँ से याद हैं?

आज़ाद—इसमें अचरज की कौन-सी बात है? तुम्हें भी दो-चार ग़ज़लें याद ही होंगी।

भठियारी—मैं यह न मानूँगी। अपनी आँखों देख आई हूँ।

आज़ाद तो खिचड़ी पकवाकर खाने लगे, और मियाँ ख़ोजी घास लाने चले। जब घसियारी ने बारह आने माँगे, तो आपने क़रौली दिखाई। इस पर घसियारी ने गट्ठा इन पर फेंक दिया। बेचारे गट्ठे के बोझ से ज़मीन पर आ रहे। निकलना मुशकिल हो गया। लगे चीख़ने—न हुई क़रौली, नहीं तो बता देता। अच्छे-अच्छे डाकू मेरा लोहा मानते हैं। एक नहीं, पचासों को मैंने चपरगट्टू किया है। यह घसियारिन और मुझसे लड़े! अब उठाती है गट्ठा या आकर क़रौली भोंक दूँ।

लोगों ने गट्ठा उठाया, तो मियाँ ख़ोजी बाहर निकले। दाढ़ी-मूछ पर मिट्टी जम गई थी, लत-पत हो गए थे। उधर आज़ाद खिचड़ी खाकर लेटे ही थे कि क़ै हुई, और फिर बुख़ार हो आया। तड़पने लगे। तब तो ख़ोजी भी घबराए। सोचे, अब विना हकीम के काम न चलेगा। भठियारी से पूछकर एक हकीम के यहाँ पहुँचे।

हकीम साहब पालकी पर सवार होकर आ पहुँचे।

आज़ाद—आदाब बजा लाता हूँ।

ख़ोजी—बेहद कमज़ोरी है। बात करने की ताक़त नहीं।

हकीम—यह आपके कौन हैं?

ख़ोजी—जी हुज़ूर, यह ग़ुलाम का लड़का है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हकीम—आप मुझे मसख़रे मालूम होते हैं।

खोजी—जी हाँ, मसख़रा न होता, तो लड़के का बाप ही क्यों होता।

आज़ाद—जनाब, यह बेहया-बेशर्म आदमी है। न इसको जूतियाँ खाने का डर, न चपतियाए जाने का ख़ौफ़। इसकी बातों का तो ख़याल ही न कीजिए।

ख़ोजी—हकीम साहब, मुझे तो कुछ दिनों से बवासीर की शिकायत हो गई है।

हकीम—अजी, मैं खुद इस शिकायत में गिरफ़्तार हूँ। मेरे पास इसका आज़माया हुआ नुस्ख़ा मौजूद है।

ख़ोजी—तो आपने अपने बवासीर का इलाज क्यों न किया?

आज़ाद—ख़ोजी, तुम्हारी शामत आई है। आज पिटोगे।

ख़ैर, हकीम साहब ने नुस्ख़ा लिखा, और रुख़सत हुए। अब सुनिए कि नुस्ख़े में लिखा था—रोग़न-गुल। आपने पढ़ा रोग़न-गिल, यानी मिट्टी का तेल। आप नुस्ख़ा बँधवाकर लाए, और मिट्टी के तेल में पकाकर आज़ाद को पिलाया, तो मिट्टी के तेल की बदबू आई। आज़ाद ने कहा—यह बदबू कैसी है? इस पर मियाँ ख़ोजी ने उन्हें ख़ूब ही ललकारा। वाह, बड़े नाज़ुक-मिज़ाज हैं, अब कोई इत्र पिलावे आपको, या केसर का खेत चरावे, तब आप खुश हों। आज़ाद चुप हो रहे, लेकिन थोड़ी ही देर बाद इतने ज़ोर का बुख़ार चढ़ा कि ख़ोजी दौड़े हुए हकीम साहब के पास गए, और बोले—जनाब, मरीज़ बहुत बेचैन है। और क्यों न हो, आपने भी तो मिट्टी का तेल नुस्ख़े में लिख दिया।

हकीम—मिट्टी का तेल कैसा? मैं कुछ समझा नहीं।

ख़ोजी—जी हाँ, आप काहे को समझने लगे। आप ही तो रोग़न-गिल लिख आए थे।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हकीम—अरे भले आदमी, क्या ग़ज़ब किया ! कैसे जाँगलुओं से पाला पड़ा है। हमने लिखा रोग़न-गुल, और आप मिट्टी का तेल दे आए ! वल्लाह, इस वक़्त अगर आप मेरे मकान पर न आए होते, तो खड़े-खड़े निकलवा देता।

ख़ोजी—आपके हवास तो ख़ुद ही ठिकाने नहीं। आपके मकान पर न आया होता, तो आप निकलवा कहाँ से देते ! जनाब, पहले फ़स्द खुलवाइए।

यह कहकर मियाँ ख़ोजी लौट आए। आज़ाद ने कहा—भई, हकीम को तो देख चुके, अब कोई डॉक्टर लाओ।

ख़ोजी—डॉक्टरों की दवा गरम होती है। बुख़ार का इलाज इन लोगों को मालूम ही नहीं।

आज़ाद—आप हैं अहमक़ ! जाकर चुपके-से किसी डॉक्टर को बुला लाइए।

ख़ोजी पता पूछते हुए अस्पताल चले, और डॉक्टर को बुला लाए।

डॉक्टर—ज़बान दिखाओ, ज़बान !

आज़ाद—बहुत ख़ूब।

डॉक्टर—आँखें दिखाओ !

आज़ाद—आँखें दिखाऊँ, तो घबराकर भागो।

डॉक्टर—क्या बक-बक करता है, आँख दिखा।

ख़ैर, डॉक्टर साहब ने नुस्ख़ा लिखा, और फ़ीस लेकर चंपत हुए। आज़ाद ने चार घंटे उनकी दवा की, मगर प्यास और बेचैनी बढ़ती गई। सेरों बर्फ़ पी गए, मगर तसकीन न हुई। उल्टे और पेचिश ने नाक में दम कर दिया। सुबह होते-होते मियाँ ख़ोजी एक वैद्यराज को बुला लाए। उन्होंने एक गोली दी, और शहद के साथ चटा दी। थोड़ी देर में आज़ाद के हाथ-पाँव अकड़ने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी बहुत घबराए, और दौड़े वैद्य को बुलाने। राह में एक होम्योपैथिक डॉक्टर मिल गए। यह उन्हें घेर-घारकर लाए। उन्होंने एक छोटी-सी शीशी से दवा की दो बूँदें पानी में डाल दीं। उसके पीते ही आज़ाद की तबीयत और भी बेचैन हो गई।

मियाँ आज़ाद ने दो-तीन दिन में इतने हकीम, डॉक्टर और वैद्य बदले कि अपनी ही मिट्टी पलीद कर ली। इस क़दर ताक़त भी न रही कि खटिया से उठ सकें। ख़ोजी ने अब उन्हें डाँटना शुरू किया—और सोइए ओस में! ज़रा-सी लुंगी बाँध ली और तर बिछौने पर सो रहे। फिर आप बीमार न हों, तो क्या हम हों। रोज़ कहता था कि ओस में सोना बुरा है; मगर आप सुनते किसकी हैं। आप अपने को तो जालीनूस समझते हैं, और बाक़ी सबको गधा। दुनियाँ में बस, एक आप ही तो बुक़रात हैं।

भठियारी—ऐ तुम भी अजीब आदमी हो! भला कोई बीमार को ऐसे डाँटता है? जब अच्छे हो जायँ, तो खूब कोस लेना। और जो ओस की कहते हो, तो मियाँ, यह तो आदत पर है। हम तो दस बरस से ओस ही में सोते हैं। आज तक ज़ुकाम भी जो हुआ हो, तो क़सम ले लो।

आज़ाद—कोसने दो। अब यहाँ घड़ी-दो घड़ी के और मेहमान हैं। अब मरे। न-जाने किस बुरी साइत घर से चले थे। हुस्नआरा के पास ख़त भेज दो कि हमको आकर देख जायँ। आज इस वक़्त सराय में लेटे हुए बातें कर रहे हैं, कल-परसों तक क़ब्र में होंगे—

आग़ोश-लहद में जब कि सोना होगा;
जुज़ ख़ाक, न तकिया न बिछौना होगा।
तनहाई में आह कौन होवेगा अनीस;
हम होवेंगे और क़ब्र का कोना होगा।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—मैं डरता हूँ कि कहीं तुम्हें सरसाम न हो जाय।

भठियारी—चुप भी रहो, आख़िर कुछ अक़्ल भी है?

आज़ाद—मेरे दिन ही बुरे आए हैं। इनका कोई क़सूर नहीं।

भठियारा—आपने भी तो हकीम की दवा की। हकीम लटकाए रहते हैं।

आज़ाद—ख़ुदा हकीमों से बचावे। मूँग की खिचड़ी दे-देकर मरीज़ को अधमरा कर डालते हैं। उस पर प्याले भर-भर दवा। अगर दो महीने में भी खटिया छोड़ी, तो समझिए कि बड़ा ख़ुश-नसीब था।

ख़ोजी—जी हाँ, जब डॉक्टर न थे, तब तो सब मर ही जाते थे।

आज़ाद—ख़ैर, चुप रहो, सिर मत खाओ। अब हमें सोने दो।

मियाँ आज़ाद की आँख लग गई। ख़ोजी भी ऊँघने लगे। एक आदमी ने आकर उनको जगाया, और कहा—मेरे साथ आइए, आपसे कुछ कहना है। ख़ोजी ने देखा, तो इनकी ख़ासी जोड़ थी। उनसे अंगुल-दो अंगुल दबते ही थे।

ख़ोजी—तो आप पिले क्यों पड़ते हैं? दूर ही से कहिए, जो कुछ कहना हो।

मुसाफ़िर—मियाँ आज़ाद कहाँ हैं?

ख़ोजी—आप अपना मतलब कहिए। यहाँ तो आज़ाद-वाज़ाद कोई नहीं है। आप अपना ख़ास मतलब कहिए।

मुसाफ़िर—अजी आज़ाद हमारे बहनोई हैं। हमारी बहन ने भेजा है कि देखो कहाँ हैं।

ख़ोजी—उनकी शादी तो हुई नहीं, बहनोई क्योंकर बन गए!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसाफ़िर—कितने अक़्ल के दुश्मन हो। भला कोई बेवजह किसी को अपना बहनोई बनावेगा ?

ख़ोजी—भला आज़ाद की बीबी कहाँ हैं ? हमको तो दिखा दीजिए।

मुसाफ़िर—अजी, इसी सराय के उस कोने में चलो, दिखा दें। तुमसे क्या चोरी है।

मियाँ ख़ोजी कोठरी के अंदर गए। बालों में तेल डाला। सफ़ेद कपड़े पहने। लाल फुँदनेदार टोपी दी। मियाँ आज़ाद का एक ख़ाकी कोट डाटा, और जब ख़ूब बन-ठन चुके, तो आईना लेकर सूरत देखने लगे। बस, ग़ज़ब ही तो हो गया। दाढ़ी के बाल ऊँचे-नीचे पाए, मूछें गिरी पड़ी। आपने क़ैंची लेकर बाल बराबर करना शुरू किया। क़ैंची तेज़ थी, एक तरफ़ की मूछ बिलकुल उड़ गई। अब क्या करते, अपने पाँव में कुल्हाड़ी मारी। मजबूर होकर बाहर आए, तो मुसाफ़िर उन्हें देखकर हँस पड़ा। मगर आदमी था चालाक, ज़ब्त किए रहा, और ख़ोजी को साथ ले चला। जाकर क्या देखते हैं कि एक औरत, इत्र में बसी हुई, रंगीन कपड़े पहने चारपाई पर सो रही है। ज़ुल्फ़ें काली नागिन की तरह लहराती हुई गरदन के इर्द-गिर्द पड़ी हुई हैं। ख़ोजी लगे आँखें सेकने। इतने में उस औरत ने आँखें खोल दीं, और ख़ोजी को देखकर ललकारा—तुम कौन ? यहाँ क्या काम ?

ख़ोजी—आपके भाई पकड़ लाए।

औरत—अच्छा, पंखा झलो; मगर आँखें बंद करके। ख़बरदार मुझे न देखना।

ख़ोजी पंखा झलने लगे, और उस औरत ने झूठ-मूठ आँखें बंद कर लीं। ज़रा देर में आँख जो खोली, तो देखा कि ख़ोजी आँखें फाड़-फाड़कर देख रहे हैं। उसका आँखें खोलना था कि मियाँ ख़ोजी ने आँखें ख़ूब ज़ोर से बंद कर लीं।

Public Domain, Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औरत—क्यों जी, घूरते क्यों हो ? बताओ क्या सज़ा दूँ ?

ख़ोजी—इत्तिफ़ाक़ से आँख खुल गई।

औरत—अच्छा बताओ, मियाँ आज़ाद कहाँ हैं ?

उधर मियाँ आज़ाद की आँख जो खुली, तो ख़ोजी नदारद। जब घंटों हो गए, और ख़ोजी न आए, तो उनका माथा ठनका कि कमज़ोर आदमी हैं ही, किसी से टर्राए होंगे, उसने गरदन नापी होगी। भठियारे को भेजा कि जाकर ज़रा देखो तो। उसने हँसकर कहा—ज़री-से तो आदमी हैं, भेड़िया उठा ले गया होगा। दूसरा बोला—आज हवा सन्नाटे की चलती है, कहीं उड़ गए होंगे। आख़िर भठियारी ने कहा कि उन्हें तो एक आदमी बुलाकर ले गया है। ख़ोजी ख़ूब बन-ठनकर गए हैं।

आज़ाद के पेट में चूहे दौड़ने लगे कि ख़ोजी को कौन पकड़ ले गया। गिड़गिड़ाकर भठियारी से कहा—चाहे जो हो, ख़ोजी को लाओ। किसी से पूछो-पाछो। आख़िर गए कहाँ ?

इधर मियाँ ख़ोजी उस औरत के साथ बैठे दस्तरख़्वान पर हत्थे लगा रहे थे। खाते जाते थे, और तारीफ़ें करते जाते थे। एक लुक़मा खाया, और कई मिनट तक तारीफ़ की। यह तो तारीफ़ ही करते रहे, उधर मियाँ मुसाफ़िर ने दस्तरख़्वान साफ़ कर दिया। ख़ोजी दिल में पछताए कि हमसे क्या हिमाक़त हुई। पहले ख़ूब पेट-भर खा लेते, फिर चाहे दिन-भर बैठ तारीफ़ करते। उस औरत ने पूछा कि कुछ और लाऊँ ? शर्माइएगा नहीं। यह आपका घर है। ख़ोजी कुछ माँगनेवाले ही थे कि मियाँ मुसाफ़िर ने कहा—नहीं जी, अब क्या हैज़ा कराओगी ? यह कहकर उसने दस्तर-ख़्वान हटा दिया, और ख़ोजी मुँह ताकते रह गए। खाना खाने के बाद पान की बारी आई। दो ही गिलौरियाँ थीं। मुसाफ़िर ने एक तो उस औरत को दी, और दूसरी अपने मुँह में रख ली। ख़ोजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर मुँह देखकर रह गए। इसके बाद मुसाफ़िर ने उनसे कहा—मियाँ होत, अरे भाई, तुमसे कहते हैं।

ख़ोजी—किससे कहते हो जी ? क्या कहते हो ?

मुसाफ़िर—यही कहते हैं कि ज़रा पलँग से उतरकर बैठो। क्या मज़े से बराबर जाकर डट गए! उतरा कि मैं पहुँचूँ ? और देखिएगा, आप पलँग पर चढ़कर बैठे हैं। अपनी हैसियत को नहीं देखता।

ख़ोजी—चुप गीदी, न हुई क़रौली, नहीं तो भोंक देता।

औरत—क़रौली पीछे ढूँढ़िएगा, पहले ज़रा यहाँ से खिसककर नीचे बैठिए।

ख़ोजी—बहुत अच्छा, अब बैठूँ तो तोप पर उड़ा देना।

मुसाफ़िर—ले चलो, उठो, यह लो, झाड़ू। अभी झाड़ू दे डालो।

ख़ोजी—झाड़ू तुम दो। हमको भी कोई भड़भूजा समझा है ? हम ख़ानदानी आदमी हैं। रईसों से इस तरह बातें करता है गीदी!

मुसाफ़िर—हमें तो नानबाई-सा मालूम होता है। चलिए, उठिए, झाड़ू दीजिए। बड़े रईसज़ादे बनकर बैठे हैं! रईसों की ऐसी ही सूरत हुआ करती है ?

ख़ोजी ने दिल में सोचा कि जिससे मिलता हूँ, वह यही कहता है कि भलेमानस की ऐसी सूरत नहीं होती। और, इस वक़्त तो एक तरफ़ की मूछ ही उड़ गई है, भलामानस कौन कहेगा। कुछ नहीं, अब हम पहले मुँह बनवावेंगे। बोले—अच्छा, रुख़सत।

मुसाफ़िर—वाह, क्या दिल्लगी है। बैठिए, चिलम भरके जाइएगा।

मियाँ ख़ोजी ऐसे झल्लाए कि चिमट ही तो गए। दोनों में

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चपतबाज़ी होने लगी। दोनों का क़द कोई छः-छः बालिश्त का, दोनों मरियल, दोनों चंडूबाज़। यह आहिस्ता से उनको चपत लगाते हैं, वह धीरे से इन पर धप जमाते हैं। उन्होंने इनके कान पकड़े, इन्होंने उनकी नाक पकड़ी। उन्होंने इनको काट खाया, इन्होंने उनको नोच लिया। और मज़ा यह कि दोनों रो रहे हैं। मियाँ ख़ोजी क़रौली की धुन बाँधे हुए हैं। आख़िर दोनों हाँप गए, न यह जीते, न वह। ख़ोजी लड़खड़ाकर गिरे, तो चारों शाने चित। उस हसीना ने दो-तीन धौल ऊपर से जमा दिए। इनका तो यह हाल हुआ, उधर मियाँ मुसाफ़िर ने चक्कर खाया, और धम्म से ज़मीन पर। आख़िर हसीना ने दोनों को उठाया, और कहा- बस, लड़ाई हो चुकी। अब क्या कट ही मरोगे? चलो, बैठो।

ख़ोजी—न हुई क़रौली, नहीं तो भोंक देता। हात् तेरे की!

मुसाफ़िर—वह तो मैं हाँप गया, नहीं तो दिखा देता आसमान मज़ा। कुछ ऐसा-वैसा समझ लिया है। सैकड़ों पेच याद हैं।

हसीना—ख़बरदार, जो अब किसी की ज़बान खुली! चलो, अब चलें मियाँ आज़ाद के पास। उनकी भी तो ख़बर लें, जिस काम के लिये यहाँ तक आए हैं।

शाम हो गई थी। हसीना दोनों आदमियों के साथ आज़ाद की कोठरी में पहुँची, तो क्या देखती है कि आज़ाद सोए हैं, और भठियारी बैठी पंखा झल रही है। उसने चट आज़ाद का कंधा पकड़कर हिलाया। आज़ाद की आँख खुल गई। आँख का खुलना था कि देखा, अलारक्खी सिरहाने खड़ी हैं, और मियाँ चंडूबाज़ सामने खड़े पाँव दबा रहे हैं। आज़ाद की जान-सी निकल गई। कलेजा धड़-धड़ करने लगा, होश पैतरे हो गए। या ख़ुदा, यहाँ यह कैसे पहुँची? किसने पता बताया? ज़रा बीमारी हल्की हुई, तो इस बला ने आ दबोचा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक आफ़त से तो मर-मरके हुआ था जीना ;
पड़ गई और यह कैसी, मेरे अल्लाह, नई ।

ख़ोजी—हज़रत, उठिए, देखिए, सिरहाने कौन खड़ा है । वल्लाह, फड़क जाओ तो सही ।

आज़ाद—(अलारक्खी से) बैठिए-बैठिए, खूब मिलीं !

ख़ोजी—अजी, अभी हमसे और आपके साले से बड़ी ठाँय-ठाँय हो गई । वह तो कहिए, क़रौली न थी, नहीं सालारजंग के पनत्तर बिगाड़ दिए होते ।

आज़ाद ने ख़ोजी, चंडूबाज़ और भठियारी को कमरे के बाहर जाने को कहा । जब दोनों अकेले रह गए, तो आज़ाद ने अलारक्खी से कहा—कहिए, आप कैसे तशरीफ़ लाई हैं ? हम तो वह आज़ाद ही नहीं रहे । वह दिल ही नहीं, वह उमंग ही नहीं । अब तो रूम ही जाने की धुन है ।

अलारक्खी—प्यारे आज़ाद, तुम तो चले रूम को, हमें किस-के सिपुर्द किए जाते हो ? न हो, ज़मीन ही को सौंप दो । अब हम किसके होकर रहें ?

आज़ाद—अब हमारी इज़्ज़त और आबरू आप ही के हाथ है । अगर रूम से जीते वापस आए, तो तुमको न भूलेंगे । अल्लाह पर भरोसा रक्खो, वही बेड़ा पार करेगा । मेरी तबीयत दो-तीन दिन से अच्छी नहीं है । कल तो नहीं, परसों ज़रूर रवाना हूँगा ।

ख़ोजी—(भीतर आकर) बी अलारक्खी अभी पूछ रही थीं कि मुझको किसके सिपुर्द किए जाते हो ; आपने इसका कुछ जवाब न दिया । जो कोई और न मिले, तो हमीं यह मुसीबत सहें । हमारे ही सिपुर्द कर दीजिए । आप जाइए, हम और यह यहाँ रहेंगे ।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—तुम यहाँ क्यों चले आए ? निकलो यहाँ से।

अलारक्खी बड़ी देर तक आज़ाद को समझाती रही—हमारा ख़याल न करो, हमारा अल्लाह मालिक है। तुम हुस्नआरा क़ौल हारे हो, तो रूम जाओ, और ज़रूर जाओ, ख़ुदा ने चाहा, सुर्ख़रू होकर आओगे। मैं भी जाकर हुस्नआरा ही के रहूँगी। उन्हें तसल्ली देती रहूँगी। ज़रा जो किसी पर खुलने कि मुझसे-तुमसे क्या ताल्लुक़ है। इतना ख़याल रहे कि जहाँ डाक जाती हो, वहाँ से ख़त बराबर भेजते जाना। ऐसा न हो भूल जाओ। नहीं तो वह कुढ़-कुढ़कर मर ही जायँगी। और, तो जो हाल है, उसको ख़ुदा ही जानता है। अपना किससे कहूँ ?

आज़ाद—अलारक्खी, ख़ुदा की क़सम, हम तुमको अपना सच्चा दोस्त नहीं जानते थे। तुमको मेरा इतना ख़याल और इतनी मुहब्बत है, यह तो आज मालूम हुआ।

इस तरह दो-तीन घंटे तक दोनों ने बातें कीं। जब अलारक्खी रवाना हुई, तो दोनों गले मिलकर ख़ूब रोए।

छब्बीसवाँ परिच्छेद

आज़ाद ने सोचा कि रेल पर चलने से हिंदोस्तान की हा देखने में न आवेगी। इसलिये वह लखनऊ के स्टेशन पर सवार होकर घोड़े पर चले थे। एक शहर से दूसरे शहर जाना, जंगल देहात की सैर करना, नए-नए आदमियों से मिलना उन्हें प था। रेल पर ये मौक़े कहाँ मिलते। अलारक्खी के चले जाने के दिन बाद वह भी चले। घूमते-घामते एक क़स्बे में जा पहुँचे बीमारी से तो उठे ही थे, थककर एक मकान के सामने बि बिछाया और डट गए। मियाँ ख़ोजी ने आग सुलगाई, और चि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Ha

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरने लगे। इतने में उस मकान के अंदर से एक बूढ़े मियाँ निकले, और पूछा—आप कहाँ जा रहे हैं?

आज़ाद—इरादा तो बड़ी दूर का करके चला हूँ, रूम का सफ़र है। देखूँ, पहुँचता हूँ या नहीं।

बूढ़े मियाँ—खुदा आपको सुर्ख़रू करे। हिम्मत करनेवाले की मदद खुदा करता है। आइए, आराम से घर में बैठिए। यह भी आप ही का घर है।

आज़ाद उस मकान में गए, तो क्या देखते हैं कि एक जवान औरत चिक़ उठाए मुसकिरा रही है। आज़ाद ज्यों ही फ़र्श पर बैठे, वह हसीना बाहर निकल आई, और बोली—मेरे प्यारे आज़ाद, आज बरसों के बाद तुम्हें देखा। सच कहना, कितनी जल्दी पहचान गई। आज मुँह-माँगी मुराद पाई।

मियाँ आज़ाद चकराए कि यह हसीना कौन है, जो इतनी मुहब्बत से पेश आती है। अब साफ़-साफ़ कैसे कहें कि हमने तुम्हें नहीं पहचाना। उस हसीना ने यह बात ताड़ ली, और मुसकिराकर कहा—

हम ऐसे हो गए अल्लाह-अकबर, ऐ तेरी क़ुदरत!
हमारा नाम सुनकर हाथ वह कानों पॅ धरते हैं।

आप और इतनी जल्द हमें भूल जायँ! हम वह हैं, जो लड़कपन में तुम्हारे साथ खेला किए हैं। तुम्हारा मकान हमारे मकान के पास था। मैं तुम्हारे बाग़ में रोज़ फूल चुनने जाया करती थी। अब समझे कि अब भी नहीं समझे?

आज़ाद—अहाहा, अब समझा, ओफ़् ओह! बरसों बाद तुम्हें देखा। मैं भी सोचता था कि या ख़ुदा यह कौन है कि ऐसी बेधड़क होकर मिली। मगर पहचानते, तो क्योंकर पहचानते? तब में और अब में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ है। सच कहता हूँ ज़ीनत, तुम कुछ और ही हो गई हो।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़ीनत—आज किसी भले का मुँह देखकर उठी थी। जब से तुम गए, ज़िंदगी का मज़ा जाता रहा—

> यह हसरत रह गई किस-किस मज़े से ज़िंदगी कटती ;
> अगर होता चमन अपना, गुल अपना, बाग़बाँ अपना।

आज़ाद—यहाँ भी बड़ी-बड़ी मुसीबतें झेलीं ; लेकिन तुम्हें देखते ही सारी कुलफ़तें दूर हो गईं—

> तब लुत्फ़-ज़िंदगी है, जब अब्र हो, चमन हो ;
> पेशे-नज़र हो साक़ी, पहलू में गुलबदन हो।

यहाँ अख़्तर नहीं नज़र आती ?

ज़ीनत—है तो, मगर उसकी शादी हो गई। तुम्हारे देखने के लिये बहुत तड़पती थी। उस बेचारी को चचाजान ने जान-बूझकर खारी कुएँ में ढकेल दिया। एक लुच्चे के पाले पड़ी है, दिन-रात रोया करती है। अब्बाजान जब से सिधारे, इनके पाले पड़े हैं। जब देखो, सोटा लिए कल्ले पर खड़े रहते हैं। ऐसे शोहदे के साथ ब्याह दिया, जिसका ठौर न ठिकाना। मैं यह नहीं कहती कि कोई रुपएवाला या बहादुरशाह के ख़ानदान का होता। ग़रीब आदमी की लड़की कुछ ग़रीबों ही के यहाँ खूब रहती है। सबसे बड़ी बात यह है कि समझदार हो, चाल-चलन अच्छा हो ; यह नहीं कि पढ़े न लिखे, नाम मुहम्मदफ़ाज़िल : अलिफ़ के नाम बे नहीं जानते, मगर दावा यह है कि हम भी हैं पाँचवें सवारों में। हमारे नज़दीक जिसकी आदत बुरी हो, उससे बढ़कर पाजी कोई नहीं। मगर अब तो जो होना था, सो हुआ ; तुम खूब जानते हो आज़ाद कि साली को अपने बहनोई का कितना प्यार होता है ; मगर क़सम लो, जो उसका नाम लेने को भी जी चाहता हो। बीवी का ज़ेवर सब बेचकर चट कर गया—कुछ दाँव पर रख आया, कुछ के औने-पौने किए। मकान-वकान सब इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुए के फेर में घूम गया। अब टके-टके को मुहताज है। डर मालूम होता है कि किसी दिन यहाँ आकर कपड़े-लत्ते न उठा ले जाय। चचा को उसका सब हाल मालूम था, मगर लड़की को भाड़ में झोक ही दिया। आती होगी, देखना, कैसी घुलके काँटा हो गई है। हड्डी-हड्डी गिन लो। ऐ अख़्तर, ज़रा यहाँ आओ। मियाँ आज़ाद आए हैं।

ज़रा देर में अख़्तर आई। आज़ाद ने उसको और उसने आज़ाद को देखा, तो दोनों बेअख़्तियार खिलखिलाकर हँस पड़े। मगर ज़रा ही देर में अख़्तर की आँखें भर आईं, और गोल-गोल आँसू टप-टप गिरने लगे। आज़ाद ने कहा—बहन, हम तुम्हारा सब हाल सुन चुके; पर क्या करें, कुछ बस नहीं। अल्लाह पर भरोसा रक्खो, वही सबका मालिक है। किसी हालत में आदमी को घबराना न चाहिए। सब्र करनेवालों का दर्जा बड़ा होता है।

इस पर अख़्तर ने और भी आठ-आठ आँसू रोना शुरू किया।

ज़ीनत बोली—बहन, आज़ाद बहुत दिनों के बाद आए हैं। यह रोने का मौक़ा नहीं।

आज़ाद—अख़्तर, वह दिन याद हैं, जब तुमको हम चिढ़ाया करते थे, और तुम अंगूर की टट्टी में रूठकर छिप रहती थीं; हम ढूँढ़-ढाँढ़कर तुम्हें मना लाते थे, और फिर चिढ़ाते थे? हमको जो तुम्हारी दोनों की मुहब्बत है, इसका हाल हमारा ख़ुदा ही जानता है। काश ख़ुदा यह दिन न दिखाता कि मैं तुमको इस मुसीबत में देखता। तुम्हारी वह सूरत ही बदल गई।

अख़्तर—भाई, इस वक़्त तुमको क्या देखा, जैसे जान-में-जान आ गई। अब पहले यह बताओ कि तुम यहाँ से जाओगे तो नहीं? इधर तुम गए, और उधर हमारा जनाज़ा निकला। बरसों बाद तुम्हें देखा है, अब न छोड़ूँगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी तरह बातें करते-करते रात हो गई। आज़ाद ने दोनों बहनों के साथ खाना खाया। तब ज़ीनत बोली—आज पुरानी सोहबतों की बहार आँखों में फिर गई। आइए खाना खाकर चमन में चलें। बाग़ तो वीरान है; मगर चलिए, ज़रा दिल दहलावें। क़सम लीजिए, जो महीनों चमन का नाम भी लेती हों—

नज़र आता है गुल आज़ुर्दा, दुश्मन बाग़बाँ मुझको;
बनाना था न ऐसे बोस्ताँ में आशियाँ मुझको।

खाना खाकर तीनों बाग़ की सैर करने चले।

आज़ाद—ओहोहो, यह पुराना दरख़्त है। इसी के साए में हम रात-रात बैठे रहते थे। आहाहा, यह वह रविश है, जिस पर हमारा पाँव फिसला था, और हम गिरे, तो अख़्तर खूब खिल-खिलाकर हँसी। तुम्हारे यहाँ एक बूढ़ी औरत थी, ज़ैनब की मा।

अख़्तर—थी क्यों, क्या अब नहीं है? ऐ वह हमसे-तुमसे हट्टी-कट्टी है; ख़ासी कठौता-सी बनी हुई है।

आज़ाद—क्या वह बूढ़ी अभी तक ज़िंदा है? क्या आक़बत के बोरिए बटोरेगी?

चलते-चलते बाग़ में एक जगह दीवार पर लिखा देखा कि मियाँ आज़ाद ने आज इस बाग़ की सैर की।

इतने में ज़ीनत के बूढ़े चचा आ पहुँचे, और बोले—भई, हमने आज जो तुम्हें देखा, तो ख़याल न आया कि कहाँ देखा है। ख़ूब आए। यह तो बतलाओ, इतने दिन रहे कहाँ? ज़ीनत तुम्हें रोज़ याद किया करती थी; उठते-बैठते तुम्हारा ही नाम ज़बान पर रहता था। अब आप यहीं रहिए। ज़ीनत को जो तुमसे मुहब्बत है, वह उसका और तुम्हारा, दोनों का दिल जानता होगा। मेरी दिली आरज़ू है कि तुम दोनों का निकाह हो जाय। इसी बाग़ में रहिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अपना घर सँभालिए। मैं तो अब गोशे में बैठकर ख़ुदा की बंदगी करना चाहता हूँ।

मियाँ आज़ाद ये बातें सुनकर पानी-पानी हो गए। 'हाँ' कहें, तो नहीं बनती, 'नहीं' कहें, तो शामत आवे। सन्नाटे में थे कि कहें क्या। आख़िर बहुत देर के बाद बोले—आपने जो कुछ फ़रमाया, वह आपकी मेहरबानी है। मैं तो अपने को इस लायक़ नहीं समझता। जिसका ठौर न ठिकाना, वह ज़ीनत के क़ाबिल कब हो सकता है?

मियाँ आज़ाद तो यहाँ चैन कर रहे थे, उधर मियाँ ख़ोजी का हाल सुनिए। मियाँ आज़ाद की राह देखते-देखते पीनक जो आ गई, तो टट्टू एक किसान के खेत में जा पहुँचा। किसान ने ललकारा—अरे किसका टट्टू है? आप ज़रा भी न बोले। उसने खूब गालियाँ दीं। आप बैठे सुना किए। जब उसने टट्टू को पकड़ा, और काँजीहौस ले चला, तब आप उसके लिपट गए। उसने झल्लाकर एक धक्का जो दिया, तो आपने बीस लुढ़कनियाँ खाईं। वह टट्टू को ले चला। जब ख़ोजी ने देखा कि वह हारी-जीती एक नहीं मानता, तो आप धम-से टट्ट की पीठ पर हो रहे। अब आगे-आगे किसान, पीछे-पीछे टट्टू, और टट्टू की पीठ पर ख़ोजी। राह-चलते लोग देखते थे, और तालियाँ बजाते थे। ख़ोजी बार-बार क़रौली की हाँक लगाते थे। इस तरह काँजीहौस पहुँचे। अब काँजीहौस का चपरासी और मुंशी बार-बार कहते हैं कि हज़रत, टट्टू पर से उतरिए, इसे हम भीतर बंद करेंगे; मगर आप उतरने का नाम नहीं लेते; ऊपर बैठे-बैठे क़रौली और तमंचे का रोना रो रहे हैं। आख़िर मजबूर होकर मुंशी ने ख़ोजी को छोड़ दिया। आप टट्टू लिए हुए मूछों पर ताव देते घर की तरफ़ चले, गोया कोई क़िला जीतकर आए हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उधर आज़ाद से अख़्तर ने कहा—क्यों भई, वे पहेलियाँ भी याद हैं, जो तुम पहले बुझवाया करते थे ? बहुत दिन हुए कोई चीसताँ सुनने में नहीं आई।

आज़ाद—अच्छा बूझिए—

आँ चीस्त दहन हज़ार दारद ;

(वह क्या है जिसके सौ मुँह होते हैं ?)

दर हर दहने दो मार दारद।

(हर मुँह में दो साँप होते हैं)

शाहेस्त नशिस्ता वर सरे-तख़्त ;

(एक बादशाह तख़्त पर बैठा हुआ है)

आँ रा हमा दर शुमार दारद।

(उसी को सब गिनते हैं)

अख़्तर—हज़ार मुँह। यह तो बड़ी टेढ़ी खीर है।

ज़ीनत—गिनती कैसी ?

आज़ाद—कुछ न बतावेंगे। जो ख़ुदा की बंदगी करते हैं, वह आपी समझ जायँगे।

अख़्तर—अहाहा, मैं समझ गई। अल्लाह की क़सम, समझ गई। तसबीह है ; क्यों, कैसी बूझी ?

आज़ाद—हाँ। अच्छा, यह तो कोई बूझे—

राजा के घर आई रानी,
औघट-घाट वह पीवे पानी।
मारे लाज के डूबी जाय,
नाहक़ चोट परोसी खाय।

ज़ीनत—भई, हमारी समझ में तो नहीं आता। बता दो, बस, बूझ चुकी।

अख़्तर—वाह, देखो, बूझते हैं। घड़ियाल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—वल्लाह, खूब बूझी। अब की बूझिए—

एक नार जब सभा में आवे,
सारी सभा चकित रह जावे।
चातुर चातुर वाके यार,
मूरख देखैं मूँह पसार।

ज़ीनत—जो इसको कोई बूझ दे, तो मिठाई खिलाऊँ।

आज़ाद—यह इस वक़्त यहाँ है। बस, इतना इशारा बहुत है।

अख़्तर—हम हार गए, आप बता दें।

आज़ाद—बता ही दूँ, यह पहेली है।

ज़ीनत—अरे कितनी मोटी बात पूछी, और हम न बता सके!

अख़्तर—अच्छा, बस एक और कह दीजिए। लेकिन अब की कोई कहानी कहिए। अच्छी कहानी हो, लड़कों के बहलाने की न हो।

आज़ाद ने अपनी और हुस्नआरा की मुहब्बत की दास्तान बयान करनी शुरू की। बजरे पर सैर करना, सिपह्आरा का दरिया में डूबना और आज़ाद का उसको निकालना, हुस्नआरा का आज़ाद से रूम जाने के लिये कहना, और आज़ाद का कमर बाँधकर तैयार हो जाना, ये सारी बातें बयान कीं।

अख़्तर—बेशक सच्ची मुहब्बत थी।

आज़ाद—मगर मियाँ आशिक़ वहाँ से चले, तो राह में नीयत डावाँडोल हो गई। किसी और के साथ शादी कर ली।

अख़्तर—तोबा, तोबा! बड़ा बुरा किया! बस, ज़बानी दाख़िला था?

ज़ीनत—सच्ची मुहब्बत होती, तो हूर पर भी आँख न उठाता। रूम जाता और फिर जाता। मगर वह कोई मक्कार आदमी था।

आज़ाद—वह आशिक़ मैं ही हूँ, और माशूक़ हुस्नआरा है। मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी ही दास्तान सुनाई, और अपनी ही हालत बताई। अब जो हुक्म दो, वह मंजूर, जो सलाह बताओ, वह क़बूल। रूम जाने का वादा कर आया हूँ, मगर यहाँ तुमको देखा, तो अब क़दम नहीं उठता। क़सम ले लो, जो तुम्हारी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ करूँ।

इतना सुनना था कि अख़्तर की आँखें डबडबा आईं, और ज़ीनत का मुँह उदास हो गया। सिर झुकाकर रोने लगी।

अख़्तर—तो फिर आए यहाँ क्या करने ?

ज़ीनत—तुम तो हमारे दुश्मन निकले। सारी उमंगों पर पानी फेर दिया—

शिकवा नहीं है आप जो अब पूछते नहीं ;
वह शक्ल मिट गई, वह शबाहत नहीं रही।

अख़्तर—बाजी, अब इनको यही सलाह दो कि रूम जायँ। मगर जब वापस आवें, तो हमसे भी मिलें, भूल न जायँ।

इतने में बाहर से आवाज़ आई कि न हुई क़रौली, वर्ना ख़ून की नदी बहती होती, कई आदमियों का ख़ून हो गया होता। वह तो कहिए, ख़ैर गुज़री। आज़ाद ने पुकारा—क्यों भाई ख़ोजी, आ गए ?

ख़ोजी—वाह-वाह-वाह ! क्या साथ दिया ! हमको छोड़कर भागे, तो ख़बर भी न ली। यहाँ किसान से डंडा चल गया, काँजीहौस में एक चौकीदार से लाठी-पोंगा हो गया; मगर आपको क्या।

आज़ाद—अजी चलो, किसी तरह आ तो गए।

ख़ोजी—अजी, यही बूढ़े मियाँ राह में मिले, वह यहाँ तक ले आए। नहीं तो सचमुच घास खाने की नौबत आती।

मियाँ आज़ाद दूसरे दिन दोनों बहनों से रुख़सत हुए। रोते-रोते ज़ीनत की हिचकियाँ बँध गईं। आज़ाद भी नर्म-दिल आदमी थे। फूट-फूटकर रोने लगे। कहा—मैं अपनी तसवीर दिए जाता हूँ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे अपने पास रखना। मैं ख़त बराबर भेजता रहूँगा। वापस आऊँगा, तो पहले तुमसे मिलूँगा, फिर किसी और से। यह कह-कर दोनों बहनों को पाँच-पाँच अशर्फ़ियाँ दीं। फिर ज़ीनत के चचा के पास जाकर बोले—आप बुज़ुर्ग हैं, लेकिन इतना हम ज़रूर कहेंगे कि आपने अख़्तरी को जीते-जी मार डाला। दीन का रक्खा, न दुनिया का। आदमी अपनी लड़की का ब्याह करता है, तो देख लेता है कि दामाद कैसा है; यह नहीं कि शोहदे और बदमाश के साथ ब्याह कर दिया। अब आपको लाज़िम है कि उसे किसी दिन बुलाइए, और समझाइए, शायद सीधे रास्ते पर आ जाय।

बूढ़े मियाँ—क्या कहें भाई, हमारी क़िस्मत ही फूट गई। क्या हमको अख़्तरी का प्यार नहीं है? मगर करें क्या? उस बदनसीब को समझावे कौन? किसी की सुने भी।

आज़ाद—ख़ैर, अब ज़ीनत की शादी ज़रा समझ-बूझकर कीजि-एगा। अगर ज़ीनत किसी अच्छे वर ब्याही जाय, और उसी का शौहर चलन का अच्छा हो, तो अख़्तर के भी आँसू पुछें कि मेरी बहन तो खुश है, यही सही। चार दिन जो कहीं बहन के यहाँ जाकर रहेगी, तो जी खुश होगा, बड़ी ढारस होगी। अब बंदा तो रुख़्सत होता है, मगर आपको अपने ईमान और मेरी जान की क़सम है, ज़ीनत की शादी देख-भालकर कीजिएगा।

यह कहकर आज़ाद घर से बाहर निकले, तो दोनों बहनों ने चिल्ला-चिल्लाकर रोना शुरू किया।

आज़ाद—प्यारी अख़्तर, और प्यारी ज़ीनत, खुदा गवाह है, इस वक़्त अगर मुझे मौत आ जाय, तो समझूँ, जी उठा। मुझे खूब मालूम है, मेरी जुदाई तुम्हें अखरेगी; लेकिन क्या करूँ, किसी ऐसी-वैसी जगह जाना होता, तो ख़ैर, कोई मुज़ायक़ा न था, मगर एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी मुहिम पर जाना है, जिससे इनकार करना किसी मुसलमान को गँवारा नहीं हो सकता। अब मुझे हँसी-खुशी रुख़सत करो।

ज़ीनत ने कलेजा थामकर कहा—जाइए। इसके आगे मुँह से एक बात भी न निकली।

अख़्तर—जिस तरह पीठ दिखाई, उसी तरह मुँह भी दिखाओ।

सत्ताईसवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद और ख़ोजी चलते-चलते एक नए क़स्बे में जा पहुँचे और उसकी सैर करने लगे। रास्ते में एक अनोखी सज-धज के जवान दिखाई पड़े। सिर से पैर तक पीले कपड़े पहने हुए, ढीले पाँयचे का पाजामा, केसरिए केचुल-लोट का अँगरखा, केसरिया रँगी दुपल्ली टोपी, कंधों पर केसरिया रूमाल, जिसमें लचका टका हुआ। सिन कोई चालीस साल का।

आज़ाद—क्यों भई ख़ोजी, भला भाँपो तो, यह किस देश के हैं?

ख़ोजी—शायद काबुल के हों।

आज़ाद—काबुलियों का यह पहनावा कहाँ होता है?

ख़ोजी—वाह, ख़ूब समझे! क्या काबुल में गधे नहीं होते?

आज़ाद—ज़रा हज़रत की चाल तो देखिएगा, कैसे कुंदे झाड़ते हुए चले जाते हैं। कभी ज़री के जूते पर निगाह है, कभी रूमाल फड़काते हैं, कभी अँगरखा चमकाते हैं, कभी लचके की झलक दिखाते हैं। इस दाढ़ी-मूछ का भी ख़याल नहीं। यह दाढ़ी और यह लचके की गोट, सुभान-अल्लाह!

ख़ोजी—आपको ज़रा छेड़िए तो; दिल्लगी ही सही।

आज़ाद—जनाब, आदाबअर्ज़ है। वल्लाह, आपके लिबास पर तो वह जोबन है कि आँख नहीं ठहरती, निगाह के पाँव फिसले जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़र्दपोश—(शरमाकर) जी, इसका एक ख़ास सबब है।

आज़ाद—वह क्या ? क्या किसी सरकार से वर्दी मिली है ? या, सच कहना उस्ताद, किसी नाई से तो नहीं छीन लाए ?

ज़र्दपोश—(अपने नौकर से) रमज़ानी, ज़रा बता तो देना, हमें अपने मुँह से कहते हुए शरम आती है।

रमज़ानी—हुज़ूर, मियाँ का निकाह होनेवाला है। इसीं पहनावे की रस्म है हुज़ूर।

आज़ाद—रस्म की एक ही कही। यह अच्छी रस्म है—दाढ़ी-मूछवाले आदमी, और लचका, वन्नत, पट्ठा लगाकर कपड़े पहनें ! अरे भई, ये कपड़े दुलहिन के लिये हैं, या आप-जैसे मुछक्कड़-फक्कड़बेग के लिये ? ख़ुदा के लिये इन कपड़ों को उतारो, मरदों की पोशाक पहनो !

इधर आज़ाद तो यह फटकार सुनाकर अलग हुए, उधर ख़िदमतगार ने मियाँ ज़र्दपोश को समझाना शुरू किया—मियाँ, सच तो कहते थे ! जिस गली-कूचे में आप निकल जाते हैं, लोग तालियाँ बजाते और हँसी उड़ाते हैं।

ज़र्दपोश—हँसने दो जी; हँसते ही घर बसते हैं।

ख़िदमतगार—मियाँ, मैं जाहिल आदमी हूँ, मुल बुरी बात बुरी ही है। हम ग़रीब आदमी हैं, फिर भी ऐसे कपड़े नहीं पहनते।

मियाँ आज़ाद उधर आगे बढ़े, तो क्या देखते हैं, एक टुकड़ी सामने से आ रही है। उस पर तीन नौजवान रईस बड़े ठाट से बैठे हैं। तीनों ऐनकबाज़ हैं। आज़ाद बोले—यह नया फ़ैशन देखने में आया। जिसे देखो, ऐनकबाज़। अच्छी-ख़ासी आँखें रखते हुए भी अंधे बनने का शौक़ !

मियाँ आज़ाद को यह क़स्बा ऐसा पसंद आया कि उन्होंने दो-चार दिन यहीं रहने की ठानी। एक दिन घूमते-घामते एक नवाब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के दरबार में जा पहुँचे। सजी-सजाई कोठी, बड़े-बड़े कमरे। एक कमरे में ग़लीचे बिछे हुए, दूसरे में चौकियाँ, मेज़, मसहरियाँ क़रीने से रक्खी हुईं। ख़ोजी यह ठाट-बाट देखकर अपने नवाब को भूल गए। जाकर दोनों आदमी दरबार में बैठे। ख़ोजी तो नवाबों की सोहबत उठाए थे, जाते-ही-जाते कोठी की इतनी तारीफ़ की कि पुल बाँध दिए—हुज़ूर, ख़ुदा जानता है, क्या सजी-सजाई कोठी है। क़सम है हुसेन की, जो आज तक ऐसी इमारत नज़र से गुज़री हो। हमने तो अच्छे-अच्छे रईसों की मुसाहबत की है; मगर कहीं यह ठाट नहीं देखा। हुज़ूर बादशाहों की तरह रहते हैं। हुज़ूर की बदौलत हज़ारों ग़रीबों-शरीफ़ों का भला होता है। ख़ुदा ऐसे रईस को सलामत रक्खे।

मुसाहब—अजी, अभी आपने देखा क्या है? मुसाहब लोग तो अब आ चले हैं। शाम तक सब आ जायँगे। एक मेले-का-मेला रोज़ लगता है।

नवाब—क्यों साहब, यह फ़्रीमेशन भी जादूगर है शायद! आख़िर जादू नहीं, तो है क्या?

मुसाहब—हुज़ूर बजा फ़रमाते हैं। कुछ दिन हुए, मेरी एक फ़्रीमेशन से मुलाक़ात हुई। मैं, आप जानिए, एक ही काइयाँ। उनसे ख़ूब दोस्ती पैदा की। एक दिन मैंने उनसे पूछा, तो बोले—यह वह मज़हब है, जिससे बढ़कर दुनिया में कोई मज़हब ही नहीं। क्यों नहीं हो जाते फ़्रीमेशन? मेरे दिल में भी आ गई। एक दिन उनके साथ फ़्रीमेशन हुआ। वहाँ, हुज़ूर, करोड़ों लाशें थीं। सब-की-सब मुझसे गले मिलीं, और हँसीं। मैं बहुत ही डरा। मगर उन लोगों ने दिलासा दिया—इनसे डरते क्यों हो? हाँ, ख़बरदार, किसी से कहना नहीं; नहीं तो ये लाशें कच्चा ही खा जायँगी। इतने में ख़ुदावंद, आग बरसने लगी, और मैं जल-भुनकर ख़ाक हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। इसके बाद एक आदमी ने कुछ पढ़कर फूँका, तो फिर हट्टा-कट्टा मौजूद ! हुज़ूर, सच तो यों है कि दूसरा होता, तो रो देता ; लेकिन मैं ज़रा भी न घबराया। थोड़ी देर के बाद एक देव-जैसे आदमी ने मुझे एक हौज़ में ढकेल दिया। मैं दो दिन और दो रात वहीं पड़ा रहा । जब निकाला गया, तो फिर टैयाँ-सा मौजूद । सबकी सलाह हुई कि इसको यहाँ से निकाल दो । हुज़ूर, ख़ुदा-ख़ुदा करके बचे, नहीं तो जान ही पर बन आई थी।

गप्पी—हुज़ूर, सुना है, कामरूप में औरतें मर्दों पर माश पढ़कर फूँकती और बकरा, बैल, गधा वग़ैरह बना डालती हैं। दिन-भर बकरे बने में-में किया किए, सानी खाया किए, रात को फिर मर्द-के-मर्द। दुनिया में एक-से-एक जादूगर पड़े हैं।

ख़ुशामदी—हुज़ूर, यह झूठ क्या चीज़ है ? कल रात को हुज़ूर तो यहाँ आराम फ़रमाते थे, मैं दो बजे के वक़्त क़ुरान पढ़कर टहलने लगा, तो हुज़ूर के सिरहाने ऊपर रोशनी-सी हुई। मेरे तो होश उड़ गए।

मुसाहब—होश उड़ने की बात ही है।

ख़ुशामदी—हुज़ूर, मैं रात-भर जागता रहा, और हुज़ूर के पलँग के इर्द-गिर्द पहरा दिया किया।

नवाब—तुम्हें क़ुरान की क़सम ?

ख़ुशामदी—हुज़ूर की बदौलत मेरे बाल-बच्चे पलते हैं; भला आपसे, और झूठ बोलूँ ? नमक की क़सम, बदन का रोआँ-रोआँ खड़ा हो गया । अगर मेरा बाप भी होता, तो मैं पहरा न देता ; मगर हुज़ूर का नमक जोश करता था।

जमामार—हुज़ूर, यहाँ एक जोड़ी बिकाऊ है। हुज़ूर ख़रीदें, तो दिखाऊँ। क्या जोड़ी है कि ओहोहोहो ! डेढ़ हज़ार से कम में न देगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसाहब—ऐ, तो आपने ख़रीद क्यों न ली? इतनी तारीफ़ करते हो, और फिर हाथ से जाने दी! हुज़ूर, इन्हें हुक्म हो कि बस, ख़रीद ही लावें। बादशाही में इनके यहाँ भी कई घोड़े थे; सवार भी खूब होते हैं; और चाबुक-सवारी में तो अपना सानी नहीं रखते।

नवाब—मुनीम से कहो, इन्हें दो हज़ार रुपए दें, और दो साईस इनके साथ जायँ।

जमामार मुनीम के घर पहुँचे, और बोले—लाला जवाहिरमल, सरकार ने दो हज़ार रुपए दिलवाए हैं, जल्द आइए।

जवाहिरमल—तो जल्दी काहे की है? ये रुपए होंगे क्या?

जमामार—एक जोड़ी ली जायगी। उस्ताद, देखो, हमको बदनाम न करना। चार सौ की जोड़ी है। बाक़ी रहे सोलह सौ। उसमें से आठ सौ यार लोग खायँगे, बाक़ी आठ सौ में छः सौ हमारे, दो सौ तुम्हारे। है पक्की बात न?

जवाहिरमल—तुम लो छः सौ, और हम लें दो सौ! मियाँ भाई हो न! अरे यार, तीन सौ हमको दे, पाँच सौ तू उड़ा। यह मामले की बात है।

जमामार—अजी, मियाँ भाई की न कहिए। मियाँ भाई तो नवाब भी हैं, मगर अल्लाह मियाँ की गाय। तुम तो लाखों खा जाओ, मगर गाढ़े की लँगोटी लगाए रहो। खाने को हम भी खायँगे, मगर शरबती के अँगरखे डाटे हुए, नवाब बने हुए, क़ोरमा और पुलाव के बग़ैर खाना न खायँगे। तुम उबाली खिचड़ी ही खाओगे। ख़ैर, नहीं मानते, तो जैसी तुम्हारी मरज़ी।

मियाँ जमामार जोड़ी लेकर पहुँचे, तो दरबार में उसकी तारीफ़ें होने लगीं। कोई उसके थूथन की तारीफ़ करता है, कोई माथे की, कोई छाती की। ख़ुशामदी बोले—वल्लाह, कनौटियाँ तो देखिए, प्यार कर लेने को जी चाहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गप्पी—हुज़ूर, ऐसे जानवर क़िस्मत से मिलते हैं। क़सम ख़ुदा की, ऐसी जोड़ी सारे शहर में न निकलेगी।

मतलबी—हुज़ूर, दो-दो हज़ार की एक-एक घोड़ी है। क्या ख़ूब-सूरत हाथ-पाँव हैं। और मज़ा यह कि कोई ऐब नहीं।

नवाब—कल शाम को फ़िटन में जोतना। देखें, कैसी जाती है।

गप्पी—हुज़ूर, आँधी की तरह जाय, क्या दिल्लगी है कुछ।

रात को मियाँ आज़ाद सराय में पड़ रहे। दूसरे दिन शाम को फिर नवाब साहब के यहाँ पहुँचे। दरबार जमा हुआ था, मुसाहब लोग गप्पें उड़ा रहे थे। इतने में मसाजिद से अज़ान की आवाज़ सुनाई दी। मुसाहबों ने कहा—हुज़ूर, रोज़ा खोलने का वक़्त आ गया।

नवाब—क़सम कुरान की, हमें आज तक मालूम ही न हुआ कि रोज़ा रखने से फ़ायदा क्या होता है? मुफ़्त में भूखों मरना कौन-सा सवाब है? हम तो हाफ़िज़ के चेले हैं, वह भी रोज़ा-नमाज़ कुछ न मानते थे।

आज़ाद—हुज़ूर ने ख़ूब कहा—

दोश अज़ मसाजिद सुए मैख़ाना आमद पीरे मा;
चीस्त याराने तरीक़त बाद अज़ीं तदबीरे मा।

(कल मेरे पीर मसाजिद से शराबख़ाने की तरफ़ आए। दोस्तो, बतलाओ, अब मैं क्या करूँ?)

ख़ुशामदी—वाह-वाह, क्या शेर है। सादी का क्या कहना!

गप्पी—सुना, गाते भी ख़ूब थे। बिहाग की धुन पर सिर धुनते थे।

आज़ाद दिल में ख़ूब हँसे। ये मसख़रे इतना भी नहीं जानते कि यह सादी का शेर है या हाफ़िज़ का! और मज़ा यह कि उनको बिहाग भी पसंद था! कैसे-कैसे गौखे जमा हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसाहब—हुज़ूर, बजा फ़रमाते हैं। भूखों मरने से भला खुदा क्या खुश होगा।

नवाब—भई, यहाँ तो जब से पैदा हुए, क़सम ले लो, जो एक दिन भी फ़ाक़ा किया हो। फिर भूख में नमाज़ की किसे सूझती है?

खुशामदी—हुज़ूर, आप ही के नमक की क़सम, दिन-रात खाने ही की फ़िक्र रहती है। चार बजे और लौंडी की जान खाने लगे—लहसुन ला, प्याज़ ला, कबाब पकें, तौबा!

हिंदू मुसाहब—हुज़ूर, हमारे यहाँ भी बर्त रखते हैं लोग, मगर हमने तो हर बर्त के दिन गोश्त चक्खा।

खुशामदी—शाबाश लाला, शाबाश। वल्लाह, तुम्हारा मज़हब पक्का है।

नवाब—पढ़े-लिखे आदमी हैं, कुछ जाहिल-गँवार थोड़े ही हैं।

ख़ोजी—वाह-वाह, हुज़ूर ने वह बात पैदा की कि तौबा ही भली।

खुशामदी—वाह भई, क्या तारीफ़ की है। कहने लगे, तौबा ही भली! किस जंगल से पकड़के आए हो भई? तुमने तो वह बात कही कि तौबा ही भली। खुदा के लिये ज़री समझ-बूझकर बोला करो।

गप्पी—ऐ हज़रत, बोलें क्या, बोलने के दिन अब गए। बरसात हो चुकी न?

ख़ोजी—मियाँ, एक-एक आओ, या कहो, चौमुखी लड़ें। हम इससे भी नहीं डरते। यहाँ उम्र-भर नवाबों ही की सोहबत में रहे। तुम लोग अभी कुछ दिन सीखो। आप, और हम पर मुँह आवें। एक बार हमारे नवाब साहब के यहाँ एक हज़रत आए, बड़े बुलक्कड़। आते ही मुझ पर फ़िक़रे कसने लगे। बस, मैंने जो आड़े-हाथों लिया, तो झेपकर एकदम भागे। मेरे मुक़ाबले में कोई ठहरे तो भला। ले बस आइए, दो-दो चोंचें हों। पाली से नोक-दम न भागो, तो मूछें मुड़वा डालूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसाहब—आइए, फिर आप भी क्या याद करेंगे। बंदे की ज़बान भी वह है कि कतरनी को मात करे। ज़बान आगे जाती है, बात पीछे रह जाती है।

ख़ोजी—ज़बान क्या चर्ख़ा है राँड का! ख़ुदा झूठ न बुलावे, तो रोटी को हुज़ूर लोती कहते होंगे।

मुसाहब—जब ख़ुदा झूठ न बुलावे, तब तो। आप, और झूठ न बोलें! जब से होश सँभाला, कभी सच बोले ही नहीं। एक दफ़े धोखे से सच्ची बात निकल आई थी, जिसका आज तक अफ़सोस है।

ख़ोजी—और वह उस वक़्त, जब आपसे किसी ने आपके बाप का नाम पूछा था, और आपने जल्दी में साफ़-साफ़ बता दिया था।

इस पर सब-के-सब हँस पड़े, और ख़ोजी मूछों पर ताव देने लगे। अभी ये बातें हो ही रहीं थीं कि एक टुकड़ी आई, और उस पर से एक हसीना उतर पड़ी। वह पतली कमर को लचकाती हुई आई, नवाब का मसनद घसीटा, और बड़े ठाट से बैठ गई।

नवाब—मिज़ाज शरीफ़?

आबादी—आपकी बला से!

मुसाहब—हुज़ूर, ख़ुदा की क़सम, इस वक़्त आप ही का ज़िक्र था।

आबादी—चल झूठे! अली की सँवार तुझ पर, और तेरे नवाब पर।

मुसाहब—ख़ुदा की क़सम।

आबादी—अब हम एक चपत जमावेंगे। देखो नवाब, अपने इन गुर्गों को मना करो, मेरे मुँह न लगा करें।

इतने में एक महरी पाँच-छः बरस के एक लड़के को गोद में लाई।

आबादी—हमारी बहन का लड़का है। लड़का क्या, पहाड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैना है। भैया, नवाब को गालियाँ तो देना। क्यों नवाब, इनको मिठाई दोगे न ?

नवाब—हाँ, अभी-अभी।

लड़का—पहले मिठाई लाओ, फिर हम दाली दे दँदे।

अब चारों तरफ़ से मुसाहिब बुलाते हैं—आओ, हमारे पास आओ। लड़के ने नवाब को इतनी गालियाँ दीं कि तौबा ही भली। नवाब साहब खूब हँसे, और सारी महफ़िल लड़के की तारीफ़ करने लगी। खुदावंद, अब इसको मिठाई मँगवा दीजिए।

नवाब—अच्छा भई, इनको पाँच रुपए की मिठाई ला दो।

आबादी—ऐ हटो भी ! आप अपने रुपए रहने दें। क्या कोई फ़क़ीर है ?

नवाब—अच्छा, एक अशर्फ़ी की ला दो।

आबादी—भैया, नवाब को सलाम कर लो।

नवाब—अच्छा, यह तो हुआ, अब कोई चीज़ सुनाओ। पीलू की कोई चीज़ हो, तुम्हें क़सम है।

आबादी—ऐ हटो भी, आज रोज़े से हूँ। आपको गाने की सूझती है।

फ़र्श पर कई नींबू पड़े हुए थे। बी साहबा ने एक नींबू दाहने हाथ में लिया, और दूसरा नींबू उसी हाथ से उछाला और रोका। कई मिनट तक इसी तरह उछाला और रोका कीं। लोग शोर मचा रहे हैं—क्या तुले हुए हाथ हैं, सुभान-अल्लाह ! वह बोलीं कि भला नवाब, तुम तो उछालो। जब जानें कि नींबू गिरने न पावे। नवाब ने एक नींबू हाथ में लिया, और दूसरा उछाला, तो तड़-से नाक पर गिरा। फिर उछाला, तो खोपड़ी पर तड़-से।

आबादी—बस, जाओ भी। इतना भी शऊर नहीं है।

नवाब—यह उँगली में कपड़ा कैसा बँधा है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आबादी—बूझो, देखें, कितनी अक़्ल है।

नवाब—यह क्या मुशकिल है, छालियाँ कतरती होगी।

आबादी—हाँ, वह खून का तार बँधा कि तोबा। मैंने पानी डाला और कपड़ा बाँध दिया।

मुसाहब—हुज़ूर, आज इस शहर में इनकी जोड़ नहीं है।

नवाब—भला कभी नवाब ख़फ़क़ानहुसैन के यहाँ भी जाती हो? सच-सच कहना।

आबादी—अली की सँवार उस पर! हज कर आया है! उस मनहूस से कोई इतना तो पूछे कि आप कहाँ के ऐसे बड़े मौलवी बन बैठे।

नवाब—जी, बजा है, जो आपको न बुलावे, वह मनहूस हुआ!

आबादी—बुलावेगा कौन? जिसको ग़रज़ होगी, आप दौड़ा आवेगा।

आज़ाद और ख़ोजी यहाँ से चले, तो आज़ाद ने कहा—आप कुछ समझे? यह जोड़ी वही थी, जो रोशनअली ख़रीद लाए थे।

ख़ोजी—यह कौन बड़ी बात है, इसी में तो रईसों का रुपया ख़र्च होता है। इनकी सोहबत में जब बैठिए, खूब गप्प उड़ाइए, और झूठ इस क़दर बोलिए कि ज़मीन और आसमान के कुलाबे मिलाइए। रंग जम जाय, तो दोनों हाथों से लूटिए, और सोने की ईंटें बनवाकर संदूक़ में रख छोड़िए। लेकिन ऐसे माल को रहते न देखा; मालूम ही नहीं होता, किधर आया और किधर गया।

आज़ाद—यह नवाब बिलकुल चोंगा है।

ख़ोजी—और नहीं तो क्या, निरा चोंच!

आज़ाद—ख़ुदा करे, ये रईसज़ादे पढ़-लिखकर भले आदमी हो जायँ।

ख़ोजी—अरे ख़ुदा न करे भाई, ये जाहिल ही रहें तो अच्छा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो कहीं पढ़-लिख जायँ, तो फिर इतने भलेमानसों की परवरिश कौन करे ?

तीसरे दिन दोनों फिर नवाब की कोठी पर पहुँचे।

ख़ोजी—ख़ुदा ऐसे रईस को सलामत रक्खे। आज यहाँ सन्नाटा-सा नज़र आता है ; कुछ चहल-पहल नहीं है।

मुसाहब—चहल-पहल क्या ख़ाक हो ! आज मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा !

आज़ाद—ख़ुदा ख़ैर करे, कुछ तो फ़र्माइए।

नवाब—क्या अर्ज़ करूँ, जब बुरे दिन आते हैं, तो चारों तरफ़ से बुरी-ही-बुरी बातें सुनने में आती हैं। घर में वज़ा-हमल (प्रसव) हो गया।

आज़ाद—यह तो कुछ बुरी बात नहीं। वज़ा-हमल के मानी लड़का पैदा होना। यह तो ख़ुशी का मौक़ा है।

मुसाहब—हमारे हुज़ूर का मंशा इस्क़ात-हमल (गर्भपात) से था।

ख़ुशामदी—अजी, इसे वज़ा-हमल भी कहते हैं—लुग़त देखिए।

नवाब—अजी, इतना ही होता, तो दिल को किसी तरह समझा लेते। यहाँ तो एक और मुसीबत ने आ घेरा।

मुसाहब—(ठंडी साँस लेकर) ख़ुदा दुश्मन को भी यह दिन न दिखावे।

ख़ुशामदी—हज़रत, क्या अर्ज़ करूँ, हुज़ूर का एक मेंढ़ा मर गया, कैसा तैयार था कि क्या कहूँ, गैंडा बना हुआ।

गप्पी—अजी, यों नहीं कहते कि गैंडे को टकरा देता, तो टें करके भागता। एक दफ़े मैं अपने साथ बाग़ ले गया। इत्तिफ़ाक़ से एक राजा साहब पाठे पर सवार बड़े ठाट से आ रहे थे। बंदा मेंढ़े को ऐन सड़क पर लिए हुए डटा खड़ा है। सिपाही ने ललकारा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि हटा बकरी को सड़क पर से। इतना कहना था कि मैं आग ही तो हो गया। पूछा—क्या कहा भाई? फिर तो कहना। सिपाही आँखें नीली-पीली करके बोला—हटा बकरी को सामने से, सवारी आती है। तब तो जनाब, मेरे खून में जोश आ गया। मैंने मेढ़े को ललकारा, तो उसने झपटकर हाथी के मस्तक पर एक टक्कर लगाई। वह आवाज़ आई, जैसे कोई दरख़्त ज़मीन पर आ रहा हो। बंदर डाल-डाल चीख़ने लगे, बँदरियाँ बच्चों को छाती से लगाए दबक रहीं, तो वजह क्या, उनको मेढ़े पर भेड़िए का धोखा हुआ।

ख़ोजी—मेढ़े को भेड़िया समझीं! मगर वल्लाह, आपको तो बेदुम का लंगूर समझा होगा!

गप्पी—बस हज़रत, एक टक्कर लगाकर पीछे हटा, और बदन को तोलकर छलाँग जो मारता है, तो हाथी के मस्तक पर! वहाँ से फिर उचका, तो फ़ीलवान के माथे पर एक टक्कर लगाई, मगर आहिस्ता से। ज़रा इस तमीज़ को देखिएगा, समझा कि इसमें हाथी का-सा ज़ोर कहाँ। मगर राजा का अदब किया। अब मैं लाख-लाख ज़ोर करता हूँ, पर वह किसकी सुनता है। गुस्सा आया, सो आया, जैसे सिर पर भूत सवार हो गया। छुड़ाकर फिर लपका, और एक, दो, तीन, चार—बस, खुदा जाने, इतनी टक्करें लगाईं कि हाथी हवा हो गया, और चिंघाड़कर भागा। आदमी-पर-आदमी गिरता है। आप जानिए, पाठे का बिगड़ना कुछ हँसी-ठट्ठा तो है नहीं। जनाब, वही मेढ़ा आज चल बसा।

आज़ाद—निहायत अफ़सोस हुआ।

ख़ोजी—सिन शरीफ़ क्या था?

नवाब—सिन क्या था, अभी बच्चा था।

मुसाहब—हुजूर, वह आपका दुश्मन था, दोस्त न था।

नवाब—अरे भई, किसका दोस्त, कैसा दुश्मन। उस बेचारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का क्या क़सूर ? वह तो अच्छा गया ; मगर हम सबको जीते-जी मार डाला।

आज़ाद—हज़रत, यह दुनिया सराय-फ़ानी है। यहाँ से जो गया, अच्छा गया। मगर नौजवान के मरने का रंज होता है।

मुसाहब—और फिर जवान कैसा कि होनहार। हाथ मलकर रह गए यार, बस, और क्या करें।

आज़ाद—मरज़ क्या था ?

मुसाहब—जनाब, क्या मरज़ बतावें। बस, क़िस्मत ही फूट गई।

खुशामदी—मगर क्या मौत पाई है, रमज़ान के महीने में, उसकी रूह जन्नत में होगी। तूबा * के तले जो घास है, वह चर रहा होगा।

इतने में एक महरी गुलबदन का लहँगा, जिसमें आठ-आठ अंगुल गोट लगी थी, फड़काती और गुलाबी दुपट्टे को चमकाती आई, और नवाब के कान में झुककर बोली—बेगम साहबा हुज़ूर को बुलाती हैं।

नवाब—यह नादिरी हुक्म ! अच्छा साहब, चलिए। यहाँ तो बेगम और महरी, दोनों से डरते हैं।

नवाब साहब अंदर गए, तो बेगम ने खूब ही आड़े हाथों लिया—ऐ मैं कहती हूँ, यह कैसा रोना-धोना है ? कहाँ की ऐसी मुसीबत पड़ गई कि आँखें खून की बोटी बन गईं ? मेढ़े निगोड़े मरा ही करते हैं। ऐसी अक़्ल पर पत्थर पड़े कि मुए जानवर की जान को रो रहे हैं। तुम्हारी अक़्ल को दिन-दिन दीमक चाटे जाती है क्या ? और इन मुफ़्तख़ोरों ने तो आपको और भी चंग पर चढ़ाया है। अल्लाह की क़सम, अगर आपने रंज-वंज किया, तो हम

* स्वर्ग का एक वृक्ष।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़मीन-आसमान एक कर देंगे। आख़िर वह मेढ़ा कोई आपका... बस, अब क्या कहूँ। भीगी बिल्ली बने गटर-गटर सुन रहे हो।

नवाब—तुम्हारे सिर की क़सम, अब हम उसका ज़िक्र भी न करेंगे। मगर जब आपकी बिल्ली मर गई थी, तो आपने क्यों दिन-भर खाना नहीं खाया था? अब हमारी दफ़े आप गुर्राती हैं?

मुसाहब—(परदे के पास से) वाह हुज़ूर, बिल्ली के लिये गुर्राना भी क्या खूब। वल्लाह, ज़िले से तो कोई फ़िक़रा आपका ख़ाली नहीं होता।

बेगम—देखो, इन मुए मुसंडों को मना कर दो कि ड्योढ़ी पर न आने पावें।

दरबान ने जो इतनी शह पाई, तो एक डाँट बताई। बस जी सुना, चलते-फिरते नज़र आओ। अब ड्योढ़ी पर आने का नाम लिया, तो तुम जानोगे। बेगम साहबा हम पर ख़फ़ा होती हैं। तुम्हारी गिरह से क्या जायगा, हम सिपाही आदमी, हम तो नौकरी से हाथ धो बैठेंगे।

मुसाहब सिपाही से तो कुछ न बोले, मगर बड़बड़ाते हुए चले। लोगों ने पूछा—क्यों भई, इस वक़्त नाक-भौं क्यों चढ़ाए हो? ख़ैर तो है? बोले—अजी, क्या कहें, हमारे नवाब तो बस, बछिया के बाबा ही रहे! बीबी ने डपट लिया। ज़न-मुरीद है जी। आबरू का भी कुछ ख़याल नहीं। औरतज़ात, फिर जोरू, और उल्टे डाँट बतावे, और दाढ़ी-मूछोंवाले होकर चुपचाप सुना करें! वल्लाह, जो कहीं मेरी बीबी कहती, तो गला ही घोट देता। यहाँ नाक पर मक्खी तक तो बैठने नहीं देते।

आज़ाद—भई, गुस्से को थूक दो। गुस्सा हराम होता है। उनकी बीबी हैं, चाहे घुड़कियाँ सुनें, चाहे झिड़कियाँ सहें, आप बीच में बोलनेवाले कौन? और फिर जिसका खाते हो, उसी को कोसते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो ! उस पर दावा यह कि हम नमकहलाल और कट मरनेवाले लोग हैं।

इतने में नवाब साहब बाहर निकले । अमीरों के दरबार में आप जानिए, एक का एक दुश्मन होता है । सैकड़ों चुग़लख़ोर रहते हैं। हरदम यही फ़िक्र रहती है कि दूसरे की चुग़ली खायँ, और सबको दरबार से निकलवाकर हमीं-हम नज़र आवें। दो मुसाहबों ने सलाह की कि आज नवाब निकलें, तो इसकी चुग़ली खायँ, और इसको खड़े-खड़े निकलवा दें । नवाब को जो आते देखा, तो चिल्लाकर कहने लगे—सुना भई, बस, अब जो कोई कलमा कहा, तो हमसे न बनेगी। जिसका खाय, उसी की गावे। यह नहीं कि जिसका खायँ, उसी को गालियाँ सुनावें। नवाब साहब को चाहे आप पीठ-पीछे ज़न-मुरीद बनावें, या भीगी बिल्ली कहें, मगर ख़बरदार, जो आज से बेगम साहबा की शान में कोई गुस्ताख़ी की, खून ही पी लूँगा।

नवाब—(त्योरियाँ बदलकर) क्या ?

हाफ़िज़जी—कुछ नहीं हुज़ूर, ख़ैरियत है।

नवाब—नहीं, कुछ तो है ज़रूर।

रोशनअली—तो छिपाते क्यों हो, सरकार से साफ़-साफ़ क्यों नहीं कह देते ? हुज़ूर, बात यह है कि यह मियाँ साहब जब देखो तब हुज़ूर की हजो किया करते हैं। लाख-लाख समझाया, यह बुरी बात है, मियाँ कहकर, भाई कहकर, बेटा कहकर, बाबा कहकर, हाथ जोड़कर, हर तरह समझाया, मगर यह तो लातों के आदमी हैं, बातों से कब मानते हैं। हम भी चुपके हो रहते थे कि भई चुग़ली कौन खाय ; मगर आप ज़नानी ड्योढ़ी से...हुज़ूर, बस, क्या कहूँ, अब और न कहलाइए।

नवाब—इनको हमने मौक़ूफ़ कर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मियाँ मुसाहब तो खिसके। इतने में मटरगश्त आ पहुँचे, और नवाब को सलाम करके बोले—ख़ुदावंद, आज ख़ूब सैर-सपाटा किया। इतना घूमा कि टाँगों के टट्टू की गामूचियाँ दर्द करने लगीं। कोई इलाज बताइए।

हाफ़िज़जी—घास खाइए, या किसी सालोत्री के पास जाइए।

नवाब—ख़ूब! टट्टू के लिये घास और सालोत्री की अच्छी कही। अब कोई ताज़ा-ताज़ा ख़बर सुनाइए, बासी न हो, गरमागरम।

मटरगश्त—वह ख़बर सुनाऊँ कि महफ़िल-भर को लोटपोट कर दूँ। हुज़ूर, किसी मुल्क से चंद परीज़ाद औरतें आई हैं। तमाशाइयों की भीड़ लगी हुई है। सुना, थिएटर में नाचती हैं, और एक-एक क़दम और एक-एक ठोकर में आशिक़ों के दिल को पामाल करती हैं। उन्हीं में से एक परीज़ाद जो दन-से निकल गई, तो बस, मेरी जान सन-से निकल गई। दरिया किनारे ख़ीमे पड़े हैं। वहीं इंदर का अखाड़ा सजा हुआ है। आज शाम को नौ बजे से तमाशा होगा।

नवाब—भई, तुमने ख़ूब मज़े की ख़बर सुनाई। ईंजानिब ज़रूर जायँगे।

इतने में ख़ुदायारख़ाँ, जिन्हें ज़रा देर पहले नवाब ने मौक़ूफ़ कर दिया था, आ बैठे, और बोले—हुज़ूर, इधर ख़ुदावंद ने मौक़ूफ़ी का हुक्म सुनाया, उधर घर पहुँचा, तो जोरू ने तलाक़ दे दी। कहती है, 'रोटी न कपरा, सेंत-मेत का भतरा।'

आज़ाद—हुज़ूर, इन ग़रीब पर रहम कीजिए। नौकरी की नौकरी गई, और बीबी की बीबी।

नवाब—हाफ़िज़जी, इधर आओ, कुल हाल ठीक-ठीक बताओ।

हाफ़िज़—हुज़ूर, इन्होंने कहा कि नवाब तो निरे बछिया के ताऊ ही हैं, ज़न-मुरीद! और बेगम साहबा को इस नाबकार ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह-वह बातें कहीं कि बस, कुछ न पूछिए। अजीब शैतान आदमी है। आपको यक़ीन न आवे, तो उन्हीं से पूछ लीजिए।

नवाब—क्यों मियाँ आज़ाद, सच कहो, तुमने क्या सुना?

आज़ाद—हुज़ूर, अब जाने दीजिए, क़ुसूर हुआ। मैंने समझा दिया है।

हाफ़िज़—यह बेचारे तो अभी-अभी समझा रहे थे कि ओ गीदी, तू अपने मालिक को ऐसी-ऐसी खोटी-खरी कहता है!

नवाब—(दर्बान से) देखो जी हुसेनअली, आज से अगर खुदायारख़ाँ को आने दिया, तो तुम जानोगे। खड़े-खड़े निकाल दो। इसे फाटक में क़दम रखने का हुक्म नहीं।

ख़ुदायार—हुज़ूर, ग़ुलाम से भी तो सुनिए। आज मियाँ रोशनअली ने मुझे ताड़ी पिला दी, और यही मंसूबा था कि यह नशे में चूर हो, तो इसे किसी लिम में निकलवा दें। सो हुज़ूर, इनकी मुराद बर आई। मगर हुज़ूर, मैं इस दर को छोड़कर और जाऊँ कहाँ! ख़ुदा आपके बाल-बच्चों को सलामत रक्खे, यहाँ तो रोआँ-रोआँ हुज़ूर के लिये दुआ करता है। हुज़ूर तो पोतड़ों के रईस हैं, मगर चग़लख़ोरों ने कान भर दिए—

> ख़ुदा के ग़ज़ब से ज़रा दिल में काँप;
> चुग़लख़ोर के मुँह को डसते हैं साँप।

नवाब—अच्छा, यह बात है। ख़बरदार, आज से ऐसी बेअदबी न करना। जाओ, हमने तुमको बहाल किया।

मुसाहबों ने गुल मचाया—वाह हुज़ूर, कितना रहम है! ऐसे रईस पैदा काहे को होते हैं। मगर ख़ुदायारख़ाँ को तो उनकी जोरू ने बचा लिया। न वह तलाक़ देती, न यह बहाल होते। वल्लाह, जोरू भी क़िस्मत से मिलती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अट्ठाईसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन नौ बजे रात को नवाब साहब और उनके मुसाहब थिएटर देखने चले।

नवाब—भई, आबादीजान को भी साथ ले चलेंगे।

मुसाहब—ज़रूर, ज़रूर। हुज़ूर, उनके बग़ैर मज़ा किरकिरा हो जायगा।

इतने में फ़िटन आ पहुँची, और आबादीजान छम-छम करती हुई आकर मसनद पर बैठ गईं।

नवाब—वल्लाह, अभी आप ही का ज़िक्र था।

आबादी—तुमसे लाख दफ़े कह दिया कि हमसे झूठ न बोला करो। हमें कोई देहाती समझा है!

नवाब—खुदा की क़सम, चलो, तुमको तमाशा दिखा लावें। मगर मरदाने कपड़े पहनकर चलिए, वर्ना हमारी बेइज़्ज़ती होगी।

आबादी बे तिनगकर कहा—जो हमारे चलने में बेआबरूई है, तो सलाम।

यह कहकर वह जाने को उठ खड़ी हुई। नवाब ने दुपट्टा दबा-कर कहा—हमारा ही खून पिए, जो एक क़दम भी आगे बढ़ावे; हमी को रोवे, जो रूठकर जाय! हाफ़िज़जी, ज़रा मरदाने कपड़े तो लाइए।

ग़रज़ आबादीजान ने अमामा सिर पर बाँधा; चुस्त अँगरखा और कसा हुआ घुटन्ना, टाटबाफ़ी बूट फुँदना झलकता हुआ उनके गोरे बदन पर खिल उठा। नवाब साहब उनके साथ फ़िटन पर सवार हुए, और मुसाहबों में कोई बग्घी पर, कोई टमटम पर, कोई पालकी गाड़ी पर लदे हुए तमाशा-घर में दाख़िल हुए। मगर आबादीजान जल्दी में पाज़ेब उतारना भूल गई थीं। वहाँ पहुँचकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब ने अव्वल दर्जे के दो टिकट लिए, और सरकस में दाख़िल हुए। लेकिन पाज़ेब की छम-छम ने वह शोर मचाया कि सभी तमाशाइयों की निगाहें इन दोनों आदमियों की तरफ़ उठ गईं। जो है, इसी तरफ़ देखता है; ताड़नेवाले ताड़ गए, भाँपनेवाले भाँप गए। नवाब साहब अकड़ते हुए एक कुर्सी पर जा डटे, और आबादी-जान भी उनकी बग़ल में बैठ गईं। बहुत बड़ा शामियाना टँगा हुआ था। बिजली की बत्तियों से चकाचौंध का आलम था। बीचो-बीच एक बड़ा मैदान, इर्द-गिर्द कोई दो हज़ार कुर्सियाँ। ख़ीमा-भर जग-मग कर रहा था। थोड़ी देर में दस-बारह जवान घोड़े कड़कड़ाते हुए मैदान में आए, और चक्कर काटने लगे। इसके बाद एक जवान नाज़नीन, आफ़त की परकाला, घोड़े पर सवार, इस शान से आई कि महफ़िल-भर पर आफ़त ढाई। सारी महफ़िल मस्त हो गई। वह घोड़े पर से फुर्ती के साथ उचकी, और फिर पीठ पर आ पहुँची। चारों तरफ़ से वाह-वाह का शोर मच गया। फिर उसने घोड़े को मैदान में चक्कर देना शुरू किया। घोड़ा सरपट जा रहा था, इतना तेज़ कि निगाह न ठहरती थी। यकायक वह लेडी तड़-से ज़मीन पर कूद पड़ी। घोड़ा ज्यों-का-त्यों दौड़ता रहा। एक दम में वह झपटकर फिर पीठ पर सवार हो गई। उस पर इतनी तालियाँ बजीं कि ख़ीमा-भर गूँज उठा। इसके बाद शेरों की लड़ाई, बंदरों की दौड़, और ख़ुदा जाने, कितने और तमाशे हुए। ग्यारह बजते-बजते तमाशा ख़तम हुआ। नवाब साहब घर पहुँचे, तो ठंडी साँसें भरते थे, और मियाँ आज़ाद दोनों हाथों से सिर धुनते थे। दोनों मिस वरजिना (तमाशा करनेवाली औरत) की निगाहों के शिकार हो गए।

हाफ़िज़जी बोले—हुज़ूर, अभी मुशकिल से तेरह-चौदह बरस का सिन होगा, और किस फुर्ती से उचककर घोड़े की पीठ पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो रहती थी कि वाहजी-वाह। मियाँ रोशनअली बड़े शहसवार बनते थे। क़सम ख़ुदा की, जो उनके बाप भी क़ब्र से उठ आवें, तो यह करतब देखकर होश उड़ जायँ।

नवाब—क्या चाँद-सा मुखड़ा है।

आबादीजान—यह कहाँ का दुखड़ा है? हम जाते हैं।

मुसाहब—नहीं हुज़ूर, ऐसा न फ़र्माइए, कुछ देर तो बैठिए।

लेकिन आबादीजान रूठकर चली ही गईं। अब नवाब का यह हाल है कि मुँह फुलाए, ग़म की सूरत बनाए बैठे सर्द आहें खींच रहे हैं। मुसाहब सब बैठे समझा रहे हैं; मगर आपको किसी तरह सब्र ही नहीं आता। अब ज़िंदगी वबाल है, जान जंजाल है। यह भी फ़ख़्र है कि हमारा दिल किसी परीज़ाद पर आया है, शहर-भर में धूम हो जाय कि नवाब साहब को इश्क़ चर्राया है—

ताकि मशहूर हों हज़ारों में;
हम भी हैं पाँचवें सवारों में।

मुसाहबों ने सोचा, हमारे शह देने से यह हाथ से जाते रहेंगे, इसलिये वह चाल चलिए कि 'साँप मरे न लाठी टूटे।' लगे सब उस औरत की हजो करने। एक ने कहा—भाई, जादू का खेल था। दूसरे बोले—जी हाँ, मैंने दिन के वक़्त देखा था, न वह रंग, न वह रोग़न; न वह चमक दमक, न वह जोबन; रात की परी धोखे की टट्टी है। आख़िर मिस्स वरजिना नवाब की नज़रों से गिर गईं। बोले—जाने भी दो, उसका ज़िक्र ही क्या। तब मुसाहबों के जान-में-जान आई। नवाब साहब के यहाँ से रुख़सत हुए, तो आपस में बातें होने लगीं—

हाफ़िज़जी—हमारे नवाब भी कितने भोले-भाले रईस हैं।

रोशनअली—अजी निरे बछिया के ताऊ हैं। ख़ुदायारख़ाँ ने ठीक ही तो कहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ुदायारख़ाँ—और नहीं, तो क्या झूठ बोले थे। हमें लो-लिपटी नहीं आती। चाहे जान जाती रहे, मगर ख़ुशामद न करेंगे।

हाफ़िज़जी—भई, यह आज़ाद ने बड़ा अड़ंगा मारा है। इसको न पछाड़ा, तो हम सब नज़रों से गिर जायँगे।

रोशनअली—अजी, मैं तरकीब बताऊँ, जो पट पड़े, तो नाम न रक्खूँ। नवाब डरपोक तो हैं ही, कोई इतना जाकर कह दे कि मियाँ आज़ाद इश्तिहारी मुजरिम हैं। बस, फिर देखिए, क्या ताथैया मचती है। आप मारे ख़ौफ़ के घर में घुस रहें, और ज़नाने में तो कुहराम ही मच जाय। आज़ाद और उनके साथी अफ़ीमची, दोनों खड़े-खड़े निकाल दिए जायँ।

ख़ुशामदी—वाह उस्ताद, क्या तड़-से सोच लेते हो! वल्लाह, एक ही न्यारिए हो।

रोशनअली—फिर इन झाँसों के बग़ैर काम भी तो नहीं चलता।

हाफ़िज़जी—हाँ, ख़ूब याद आया। परसों तेग़बहादुर दक्खिन से आए हैं। बेचारे बड़ी तकलीफ़ में हैं। हमारे सच्चे दोस्तों में हैं। उनके लिये एक रोटी का सहारा हो जाय, तो अच्छा। आप में से कोई छेड़ दे ज़रा, बस, फिर मैं ले उड़ूँगा। मगर तारीफ़ के पुल बाँध दीजिए। नवाब को झाँसे में लाना कोई बड़ी बात तो है नहीं। थाली के बैंगन हैं।

हाफ़िज़जी—एक काम कीजिए, कल जब सब जमा हो जायँ, तो हम पहले छेड़ें कि इस दरबार में हर फ़न का आदमी मौजूद है, और रियासत कहते इसी को हैं कि गुनियों की परवरिश की जाय, शरीफ़ों की क़दरदानी हुज़ूर ही का हिस्सा है। इस पर कोई बोल उठे कि और तो सब मौजूद हैं, बस, यहाँ एक बिनवटिए की कसर है। फिर कोई कहे कि आजकल दक्खिन से एक साहब आए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, जो बिनवट के फ़न में अपना सानी नहीं रखते। दो-चार आदमी हाँ में हाँ मिलावें कि उन्हें वह-वह पेंच याद हैं कि तलवार छीन लें; ज़रा-से आदमी, मगर सामने आए, और बिजली की तरह तड़प गए। हम कहेंगे—वल्लाह, आप लोग भी कितने अहमक़ हैं कि ऐसे आदमी को हुज़ूर के सामने अब तक पेश नहीं किया। और जो कोई रईस उन्हें नौकर रख ले, तो फिर कैसी हो ? बस, देख लेना, नवाब ख़ुद ही कहेंगे कि अभी-अभी लाओ। मगर तेग़बहादुर से कह देना कि खूब बाँके बनकर आवें, मगर बातचीत नरमी से करें, जिसमें हम लोग कहें कि देखिए ख़ुदावंद, कितनी शराफ़त है। जिन लोगों को कुछ आता-जाता नहीं, वे ही ज़मीन पर क़दम नहीं रखते।

मुसाहब—मगर क्यों मियाँ, यह तेग़बहादुर हिंदू हैं या मुसलमान ? तेग़बहादुर तो हिंदुओं का नाम भी हुआ करता है। किसी हिंदू के घर में मुहर्रम के दिनों में लड़का पैदा हुआ, और इमामबख़्श नाम रख दिया। हिंदू भी कितने बेतुके होते हैं कि तोबा ही भली। पूछिए कि तुम जो ताजिए को सिजदा करते हो, दरगाहों में शरबत पिलाते हो, इमामबाड़े बनवाते हो, तो फिर मुसलमान ही क्यों नहीं हो जाते।

हाफ़िज़जी—मगर तुम लोगों में भी तो ऐसे गौखे हैं जो चेचक में मालिन को बुलाते हैं, चौराहे पर गधे को चने खिलाते हैं, जनमपत्री बनवाते हैं। क्या यह हिंदूपन नहीं है ? इसकी न कहिए।

उधर मियाँ आज़ाद भी मिस क्लारिसा पर लट्टू हो गए। रात तो किसी तरह करवटें बदल-बदलकर काटी, सुबह होते ही मिस क्लारिसा के पास जा पहुँचे। उसने जो मियाँ आज़ाद की सूरत से उनकी हालत ताड़ ली, तो इस तरह चमक-चमककर चलने लगी कि उनकी जान पर आफ़त ढाई। आज़ाद उसके सामने जाकर खड़े हो गए; मगर मुँह से एक लफ़्ज़ भी न निकला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरजिना—मालूम होता है, या तो तुम पागल हो, या अभी पागलख़ाने से रस्सियाँ तुड़ाकर आए हो।

आज़ाद—हाँ, पागल न होता, तो तुम्हारी अदा का दीवाना क्यों होता ?

वरजिना—बेहतर है कि अभी से होश में आ जाओ, मेरे कितने ही दीवाने पागलख़ाने की सैर कर रहे हैं। रूस के तीन जनरल हम पर रीझे, यूनान में एक रईस लट्टू हो गए, इँगलिस्तान के कितने ही बाँके आहें भरते रहे, जरमन के बड़े-बड़े अमीर साए की तरह मेरे साथ घूमा किए, रूम के कई पाशा ज़हर खाने पर तैयार हो गए। मगर दुनिया में दग़ाबाज़ी का बाज़ार गरम है, किसी से दिल न मिलाया, किसी को मुँह न लगाया। हमारे चाहनेवाले को लाज़िम है कि पहले आईने में अपना मुँह तो देखे।

आज़ाद—अब मुझे दीवाना कहिए या पागल, मैं तो मर मिटा—

फिरी चश्मे-बुते-बेपीर देखो :
हमारी गर्दिशे-तक़दीर देखो।
उन्हें है तौक़ मन्नत का गराँ बार ;
हमारे पाँव की ज़ंजीर देखो।

वरजिना—मुझे तुम्हारी जवानी पर रहम आता है। क्यों जान देने पर तुले हुए हो ?

आज़ाद—जीकर ही क्या करूँगा ? ऐसी ज़िंदगी से तो मौत ही अच्छी।

वरजिना—आ गए तुम भी झाँसे में ! अरे मियाँ, मैं औरत नहीं हूँ; जो तुम सो मैं। मगर क़सम खाओ कि किसी से यह बात न कहोगे। कई साल से मैंने यही भेस बना रक्खा है। अमीरों को लूटने के लिये इससे बढ़कर और कोई तदबीर नहीं। एक-एक चित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वन के हज़ारों पौंड लाता हूँ, फिर भी किसी को मुँह नहीं लगाता। आज तुम्हारी बेक़रारी देखकर तुमको साफ़-साफ़ बता दिया।

आज़ाद—अच्छा मर्दाने कपड़े पहनकर मेरे सामने आओ, तो हमें यक़ीन आए।

मिस वरजिना ज़रा देर में कोट और पतलून पहनकर आज़ाद के सामने आई, और बोली—अब तो तुम्हें यक़ीन आया, मेरा नाम टामस हुड है। अगर तुमको वे चिट्ठियाँ दिखाऊँ, जो ढेर-की-ढेर मेरे पास पड़ी हैं, तो हँसते-हँसते तुम्हारे पेट में बल पड़ जाय। देखिए एक साहब लिखते हैं—

जनाज़ा मेरा गली में उनकी जो पहुँचे ठहरा के इतना कहना;
उठानेवाले हुए हैं माँदे सो थक के काँधा बदल रहे हैं।

दूसरे साहब लिखते हैं—

हम भी कुश्ता तेरी नैरंगी के हैं याद रहे;
ओ ज़माने की तरह रंग बदलनेवाले।

एक बार इटली गया, वहाँ अक्सर अमीरों और रईसों ने मेरी दावतें कीं, और अपनी लड़कियों से मेरी मुलाक़ात कराई, हम कई दिन तक उन परियों के साथ हवा खाते रहे। और एक दिल्लगी सुनिए। एक अमीरज़ादी ने मेरे हाथों को चूमकर कहा कि हमारे मियाँ तुमसे शादी करना चाहते हैं। वह कहते हैं कि अगर तुमसे उनकी शादी न हुई, तो वह ज़हर खा लेंगे। यह अमीरज़ादी मुझे अपने घर ले गई। उसका शौहर मुझे देखते ही फूल उठा, और ऐसी-ऐसी बातें कीं कि मैं मुशकिल से अपनी हँसी को ज़ब्त कर सका।

आज़ाद बहुत देर तक टामस हुड से उनकी ज़िंदगी के क़िस्से सुनते रहे। दिल में बहुत शरमिंदा थे कि यहाँ कितने अहमक़ बने। यह बातें दिल में सोचते हुए सराय में पहुँचे, तो फाटक ही के पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से आवाज़ आई, लाना तो मेरी क़रौली, न हुआ तमंचा, नहीं तो दिखा देता तमाशा। आज़ाद ने ललकारा कि क्या है भाई, क्या है, हम आ पहुँचे। देखा तो ख़ोजी एक कुत्ते को दुतकार रहे हैं।

उंतीसवाँ परिच्छेद

आज तो निराला समा है। ग़रीब, अमीर, सब रँगरलियाँ मना रहे हैं। छोटे-बड़े ख़ुशी के शादियाने बजा रहे हैं। कहीं बुलबुल के चहचहे, कहीं कुमरी के क़हक़हे। ये ईद की तैयारियाँ हैं। नवाब साहब की मसजिद का हाल न पूछिए। रोज़े तो आप पहले ही चट कर गए थे; लेकिन ईद के दिन धूमधाम से मजलिस सजी। नूर के तड़के से मुसाहबों ने आना शुरू किया, और मुबारक-मुबारक की आवाज़ ऐसी बुलंद की कि फ़रिश्तों ने आसमान को थाम लिया, नहीं तो ज़मीन और आसमान के कुलाबे मिल जाते।

मुसाहब—ख़ुदा ईद मुबारक करे। मेरे नवाब जुग-जुग जिएँ।

हाफ़िज़जी—बरस दिन का दिन मुबारक करे।

रोशनअली—ख़ुदा हुज़ूर की ईद मुबारक करे।

नवाब—आपको भी मुबारक हो। मगर सुना कि आज तो ईद में फ़र्क़ है। भई, आधा तीतर और आधा बटेर नहीं अच्छा।

मुसाहब—हुज़ूर, फ़िरंगीमहल के उलमा ने तो आज ही ईद का फ़तवा लगाया है।

नवाब—भला चाँद कल किसी ने देखा भी?

मुसाहब—हुज़ूर, पक्के पुल पर चार भिश्तियों ने देखा, राजा की बाज़ार में हाफ़िज़जी ने देखा, और मेरे घर में भी देखा।

नवाब—आपकी बेगम साहबा का सिन क्या है? हैं कोई चौदह-पंद्रह बरस की?

मुसाहब ने शरमाकर गरदन झुका ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब—आप अपनी बेगम साहबा की उम्र तो छिपाते हैं, फिर उनकी शहादत ही क्या ? बाक़ी रहे हाफ़िज़जी, उनकी आँखें पढ़ते-पढ़ते जाती रहीं ; उनको दिन को ऊँट तो सूझता ही नहीं, भला सरेशाम, दोनों वक़्त मिलते, नाखून के बराबर चाँद क्या सूझेगा !

आज़ाद—हज़रत, मैंने और मियाँ ख़ोजी ने कल शाम को अपनी आँखों देखा ।

नवाब—तो तीन गवाहियाँ मोतबर हुईं । हमारी ईद तो हर तरह आज है ।

इतने में फ़िटन पर से आबादीजान मुसकिराती हुई आईं ।

नवाब—आइए-आइए, आपकी ईद किस दिन है ?

आबादीजान—क्या कोई भारी जोड़ा बनवा रक्खा है ? फटे-से मुँह, शर्म नहीं आती ?

नवाब—ईद क़ुरबाँ है यही दिन तो है क़ुरबानी का ;

आज तलवार के मानिंद गले मिल क़ातिल ।

हमको क्या, यहाँ तो तीसों रोज़े चट किए बैठे हैं । दोवक़्त पुलाव उड़ता था । यह फ़िक्र तो उनको होगी, जो दीन का टोकरा सिर पर लादे-लादे फिरते हैं ।

आबादी—इन्हीं लच्छनों तो दोज़ख़ में जाओगे ।

नवाब—ख़ैर, एक तसकीन तो हुई ! आपसे तो वहाँ ज़रूर गले मिलेंगे ।

मुसाहब—सुभान-अल्लाह ! क्या ख़ूब सूझी, वल्लाह ख़ूब सूझी ! क्या गरमागरम लतीफ़ा कहा है ।

इतने में चंपा लौंडी अंदर से घबराई हुई आई । लुट गए, लुट गए ! ऐ हुज़ूर, चोरी हो गई । सब मूस ले गया ।

नवाब—क्या, क्या, चोरी हो गई ! कब ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंपा—रात को, और कब ? इस वक़्त जो बेगम साहबा कोठरी में जाती हैं, तो रोशनी देखते ही आँखों-तले अँधेरा-सा छा गया। जाकर देखती हैं, तो एक बिलूका । कपड़े-लत्ते, सब तितर-बितर पड़े हैं ।

मुसाहब—ऐ ख़ुदावंद, कल तो एक बजे तक यहाँ दरबार गरम रहा । मालूम होता है, कोई पहले ही से घुस बैठा था ।

नवाब—ज़री हमारी तलवार तो लाना भई । एहतियात शर्त है । शायद छिपा बैठा हो ।

तलवार लेकर घर में गए, तो देखते हैं कि बेगम साहबा एक नाज़ुक पलँगड़ी पर सिर पकड़े बैठी हैं, और लौंडियाँ समझा रही हैं कि नवाब की सलामती रहे, एक-से-एक बढ़िया जोड़ा बन जायगा। आप घबराती काहे को हैं ? नवाब ने जाकर कोठरी को देखा, और तलवार हाथ में लिए पैंतरे बदलते हुए घर-भर का मुआयना किया। फिर बेगम से बोले—हमारा लहू पिए, जो रोए । आख़िर, यह रोना काहे का ; माल गया, गया !

लौंडी—हाँ, सच तो फ़रमाते हैं । जान की सलामती रहे, माल भी कोई चीज़ है !

बेगम—आज ईद के दिन ख़ुशियाँ मनाते, डोमनियाँ आतीं, मुबारकबादियाँ गातीं, दिन-भर धमा-चौकड़ी मचती, रात को रत-जगा करते, सो आज यह नया गुल खिला । मगर गहने की संदू-क़ची छोड़ गया, इतना एहसान किया । अभी तक कलेजा धक-धक कर रहा है ।

नवाब—हमारे सिर की क़सम, लो उठो, मुँह धो डालो । ईद मनाओ, हमारा ही जनाज़ा देखे जो चोरी का ग़म करे । दो हज़ार कोई बड़ी चीज़ है !

आख़िर बहुत कहने-सुनने पर बेगम साहबा उठीं । लौंडी ने मुँह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धुलाया। नवाब साहब ने कहा—तुम्हें वल्लाह, हँस तो दो; वह होंठ पर हँसी आई! देखो, मुसकिराती हो। वह नाक पर आई।

बेगम साहबा खिलखिलाकर हँस पड़ीं, और घर-भर में क़हक़हे पड़ने लगे। यों बेगम साहबा को हँसाकर नवाब साहब बाहर निकले, तो मुसाहब, हवाली-मवाली, ख़िदमतगार गुल मचाने लगे—हुज़ूर, कुछ तो बतलाइए, यह मामला क्या है? आख़िर किधर से चोर आया? कोई कहता है—हुज़ूर, बेघर के भेदी के चोरी नहीं होती; हमको उस हबशिन पर शक है। हबशिन अंदर से गालियाँ दे रही है—अल्लाह करे झूठे पर बिजली गिरे, आसमान फट पड़े। किसी ने कहा—खुदावंद चौकीदार की शरारत है। चौकीदार है कि लाखों क़समें खाता है। घर-भर में हरबोंग मचा हुआ है। इतने में एक मसख़रे ने बढ़कर कहा—हुज़ूर, क़सम है कुरान की, हमें मालूम है। भला-बेभला, हम पहचान गए, हमसे उड़कर कोई जायगा कहाँ?

मुसाहब—मालूम है, तो फिर बताते क्यों नहीं?

मसख़रा—अजी, बताने से फ़ायदा क्या? मगर मालूम मुझको बेशक है। इसमें शुबहा नहीं। ग़लत हो, तो हाथ-हाथ बदते हैं।

नवाब—अरे, जिस पर तुझे शक है, उसका नाम बता क्यों नहीं देता।

मुसाहब—बताओ, तुम्हें खुदा की क़सम। किस पर तुमको शक है? आख़िर किसको ताका है? भई, हमको बचा देना उस्ताद।

मसख़रा—(नवाब साहब के कान में) हुज़ूर, यह किसी चोर का काम है।

मुसाहब—क्या कहा हुज़ूर, किसका नाम लिया?

नवाब—(हँसकर) आप चुपके-से फ़रमाते हैं यह किसी चोर का काम है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों के हँसते-हँसते पेट में बल पड़-पड़ गए। जिसे देखो, लोट रहा है। इतने में रेल के एक चपरासी ने आकर तार का लिफ़ाफ़ा दिया। लिफ़ाफ़ा देखते ही नवाब साहब का चेहरा फ़क़ हो गया, हाथ-पाँव फूल गए। बोले—भई, किसी अँगरेज़ीदाँ को बुलाओ, और तार पढ़वाओ। ख़ुदा जाने, कहाँ से गोला आया है।

मुसाहब—क्यों मियाँ जवान, यह तार बड़े साहब के दफ़्तर से आया है न?

चपरासी—नाहीं, रेलघर से आवा है।

मुसाहब—वाह रे अँगरेज़ो, अल्लाह जानता है, अपने फ़न के उस्ताद हैं। और सुनिए, जल्दी के लिये अब तार की ख़बर भी रेल पर आने लगी। वाह रे उस्ताद, अक़्ल काम नहीं करती।

हाफ़िज़जी—ख़ुदा जाने, यह तार बोलता क्योंकर है? आख़िर तार के तो ज़ान नहीं होती!

ख़िदमतगार एक अँगरेज़ीदाँ को ले आया। तार पढ़ा गया, तो मालूम हुआ कि किसी ने मिरज़ापुर से पूछा है कि ईद आज है, या कल होगी?

मुसाहब—यह तो फ़रमाइए, भेजा किसने?

बाबू—नासिरहुसेन ने।

नवाब—समझ गया। मिरज़ापुर में हमारे एक दोस्त हैं निसार-हुसेन। उन्हीं ने तार भेजा होगा। इसका जवाब किसी से लिख-वाइए। जिसमें आज ही पहुँच जाय। एक रुपया, दो रुपया, जो ख़र्च हो, दारोग़ा से दिलवा दो। और, मियाँ नुदरत को तारघर भेजो, और कहो कि अगर बाबू कुछ माँगें, तो दे देना। मगर इतना कह देना कि ख़बर ज़रूर पहुँचे। ऐसा न हो कि कहीं राह में रुक रहे, तो ग़ज़ब ही हो जाय।

मियाँ नुदरत लखनऊ के आदमी, नख़ास के बाहर उम्र-भर क़दम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही नहीं रक्खा। वह क्या जानें कि तारघर किस बला का नाम है। राह में एक-एक से पूछते जाते हैं—क्यों भई, तारघर कहाँ है? आख़िरकार एक चपरासी ने कहा—कलकी बरक़ के सामने है। मियाँ ख़ुदरत घबरा रहे थे, बुरे फँसे यार, तारघर में न-जाने क्या वारदात हो। हम अँगरेज़ी क़ानून-वानून नहीं जानते। देखें, आज क्या मुसीबत पड़ती है? ख़ैर, ख़ुदा मालिक है। चलते-चलते कोई दो घंटे में ऐशबाग़ पहुँचे। यहाँ से पता पूछते-पूछते चले हुसेनगंज। वहाँ एक बाबू सड़क पर खड़े थे। उनसे पूछा—क्यों बाबूजी, तारघर कहाँ है! उन्होंने कहा, सामने चले जाओ। फिर पलटे। बाबूजी एक रुपया लाया हूँ, और लिखवाना यह है कि आज ईद सुन्नियों की है, कल शियों की होगी। भला वहाँ बैठा रहूँ? जब ख़बर पहुँच जाय, तब आऊँ? बाबू ने कहा—ऐसा कुछ ज़रूर नहीं। ख़ैर, तारघर पहुँचे, तो कलेजा धक-धक कर रहा है कि देखिए जान क्योंकर बचती है। थोड़ी देर फाटक पर खड़े रहे, और वहाँ से मारे डर के बैरँग वापस। राह में दोनों रुपए उन्होंने भुनाए, और बीबी के लिये पँचमेल मिठाई चँगेल में ले चले। रास्ते-भर यही सोचते रहे कि नवाब से यों चकमा चलेंगे, यों झाँसा देंगे। चैन करो उस्ताद, अब तुम्हारे पौ-बारह हैं। हलवाई की दूकान और दादाजी का फ़ातिहा, घर में जो ख़ुश-ख़ुश घुसे, तो बीबी देखते ही खिल गई। झपटकर चँगेल उनके हाथ से छीनी। देखा, तो मुँह में पानी भर आया। बरफ़ी पर चाँदी का वरक़ लगा हुआ, इमर्तियाँ ताज़ा, लड्डू गरमागरम। पेड़े वह, जो मथुरा के पेड़ों के दाँत खट्टे कर दें। दो-तीन लड्डू और एक बरफ़ी तो देखते-ही-देखते चट कर गईं। पेड़ा उठाने ही को थीं कि मियाँ ख़ुदरत ने झल्लाकर पहुँचा पकड़ लिया, और बोले—अरे, बस भी तो करोगी? एक लड्डू खाया, मैं कुछ न बोला; दूसरा निकला, मैं चुपचाप देखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया। तीसरे लड्डू पर हाथ बढ़ाया, बरफ़ी खाई, और अब चलीं पेड़े पर हाथ डालने! अब खाने-पीने की चीज़ में टोके कौन, इतनी बड़ी लूमड़ हो गईं, मगर बिल्लड़ ही बनी रहीं। मरभुक्खों की तरह मिठाई पर गिर पड़ने के क्या माने? दो प्यालियाँ लाओ, अफ़ीम घोलो, पियो। जब खूब नशे गंठे, तो मिठाइयाँ चक्खो। खुदा की क़सम, यह अफ़ीम भी नेमत की मा का कलेजा है।

बीबी—(तिनककर) बस नेमत की मा का कलेजा तुम्हीं खाओ। खाओ, चाहे भाड़ में जाओ। वाह, आज इतने बड़े त्योहार के दिन मिठाई क्या लाए कि दिमाग़ ही नहीं मिलता। मोती की-सी आब उतार ली। एक पेड़े के ख़ातिर पहुँचा धरके मरोड़ डाला।

इतने में बाहर से आवाज़ आई—मियाँ नुदरत हैं?

बीबी—सुनते हो, या कानों में ठेंठियाँ हैं? एक आदमी गला फाड़-फाड़कर चिल्ला रहा है, दरवाज़े को चूल से निकाले डालता है। बोलते क्यों नहीं? कहीं चोरी करके तो नहीं आए हो?

नुदरत—ज़री आहिस्ते-आहिस्ते बातें करो।

बीबी—ऐ है, सच कहिएगा। हम तो खूब गुल मचाएँगे। मामा, हम परदे में हुए जाते हैं। जाकर उनसे कह दो—घर में घुसे बैठे हैं।

नुदरत—नहीं, नहीं, यह दिल्लगी अच्छी नहीं। कह दो, नवाब साहब के यहाँ गए हैं।

मामा—(बाहर जाकर) मियाँ, क्या गुल मचा रहे हो? मैं तो समझी, कहीं से दौड़ आई है। वह तो सबेरे नवाब साहब के यहाँ गए थे, अभी आए नहीं। जो मिलें, तो भेज दीजिएगा।

पुकारनेवाला—यह कैसी बात? नवाब साहब के यहाँ से तो हम भी अभी-अभी आ रहे हैं। वहाँ ढुंढस मची हुई है कि चल कहाँ दिए। अच्छा, भाभी साहब से कहो, आज ईद के दिन दरवाज़े पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आए हैं, कुछ सेवइयाँ-वेवइयाँ तो खिलावें। हम तो बेतकल्लुफ़ आदमी हैं। तक़ाज़ा करके दावत लेते हैं।

मामा ने अंदर से ले जाकर बाहर एक बरामदे में मोढ़ा डाल दिया। उधर मियाँ-बीबी में तकरार होने लगी।

मियाँ—अजी, टाल भी दो। ऐसे-ऐसे मुफ़्तख़ोर बहुत आया करते हैं। मामा, तुम भी पागल ही रहीं। मोढ़ा डालने की भला क्या ज़रूरत थी?

बीबी—ऐ वाह! हम तो ज़रूर ख़ातिर करेंगे। यह अच्छा कि नवाब के यहाँ जाकर हमको गँवारिन बनावें? इसमें तुम्हारी नाक न कटेगी!

बीबी ने एक तश्तरी में पाँच-छः डलियाँ मिठाई की क़रीने से लगाकर उस पर रेशमी हरा रूमाल ढक दिया, और मामा से कहा—जाओ दे आओ। मियाँ नुदरत की रूह पर सदमा हुआ कि चार-पाँच डली तो बीबी बातें करते-करते चख गईं, और पाँच-छः अब निकल गईं। ग़ज़ब ही हो गया। मामा मिठाई लेकर चली, तो ड्योढ़ी में दो लड्डू चुपके से निकालकर एक ताक़ में रख दिए। इत्तिफ़ाक़ से एक छोकरा देख रहा था। जैसे मामा बाहर गई, वैसे ही दोनों लड्डू मज़े से खा गया। चलिए, चोर के घर में मोर पैठा। मुसाहब ने रूमाल हटाया, तो कहा—वाह, भाभी साहब तो भाई साहब से भी बढ़कर निकलीं। यह हाथी के मुँह में ज़ीरा। ख़ैर, पानी तो लाओ। हज़रत ने मिठाई खाई और पानी पिया, तो पान की फ़र्माइश की। बीबी ने अपने हाथ से दो गिलौरियाँ बनाईं। मुसाहब ने चक्खीं, तो हुक़्क़ा माँगा। नुदरत ने कहा—देखा न, हाथ देते ही पहुँचा पकड़ लिया। मिठाई लाओ, पान खिलाओ, पानी पिलाओ, हुक़्क़ा भर लाओ; गोया बाबा के घर में बैठे हैं। इन मूज़ियों की तो क़ब्र तक से मैं वाक़िफ़ हूँ। और एक इस पर क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मौक़ूफ़ है। नवाब के यहाँ जितने हैं, सब गुरगे, मुफ़्तख़ोरे, पराया माल ताकनेवाले। मामा, जाकर कह दो, हुक़्क़ा यहाँ कोई नहीं पीता। लेकिन बीवी ने हुक़्क़ा भरवाकर भेज ही दिया। जब पी चुके, तो बाहर से आवाज़ दी कि मामा, चारपाई यहाँ मौजूद है। ज़रा दरी या ग़लीचा दे जाइएगा। अब ठीक दोपहर में कौन इतनी दूर जाय। ज़रा कमर सीधी कर लें। तब तो मियाँ नुदरत ख़ूब ही झल्लाए। आख़िर शैतान का मनसूबा क्या है? देख रहा है कि मालिक घर में नहीं है; फिर यह दरवाज़े पर चारपाई पर सोना क्या माने? और मुझसे-इससे कहाँ का ऐसा याराना है कि आते ही भाभी साहब से फ़रमाइशें होने लगीं।

इधर मामा ड्योढ़ी में गई कि लड्डू चुपके-चुपके खाय। ताक़ पर ढूँढ़ मारा, पर लड्डुओं का कहीं पता नहीं। छोकरे ने पूछा—मामा, वहाँ क्या ढूँढ़ रही हो? वह तो चूहा खा गया। सच कहना, कैसी हुई? चूहे ने तुम्हारे अच्छे कान कतरे!

मुसाहब—मामाजी, ज़री दरी दे जाइए।

मामा—यहाँ दरी-वरी नहीं है।

मुसाहब—हम जानते हैं, बड़े भाई कहीं इस वक़्त ईद मिलने गए हैं। बस, समझ जाइए।

नुदरत ने कहा—ख़ुश हुई? कुछ समझीं भी? अब यह इस फ़िक्र में है कि तुमको-हमको लड़वा दें। और मिठाई भेजो। गिलौरियाँ चखाओ।

जब मियाँ मुसाहब चंपत हुए, तो मियाँ नुदरत भी चँगेल की तरफ़ बढ़े, और अफ़ीम की पीनक में ख़ूब छककर मिठाई चक्खी। फिर चले नवाब के घर। क़दम-क़दम पर फ़िक़रे सोचते जाते हैं। बारे दाख़िल हुए, तो लोगों ने आसमान सिर पर उठाया।

नवाब—शुक्र है, ज़िंदा तो बचे! यह आप अब तक रहे कहाँ आख़िर?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसाहब—हुज़ूर, तारघर तो यह सामने है।

हाफ़िज़—हाँ, और नहीं तो क्या ? बात करते तो आदमी पहुँचता है।

रोशनअली—कौन, मुझसे कहिए, तो इतनी देर में अठारह फेरे करूँ।

नुदरत—हाँ भाई, घर बैठे जो चाहे कह लो, कोई जाय, तो आटे-दाल का भाव मालूम हो। चलते-चलते आँधी-रोग आ जाता है। बकरी मर गई, और खानेवाले को मज़ा ही न आया। आप लोग थान के टर्रे हैं। कहने लगे, दो क़दम पर है। यहाँ से गए सआदतगंज, वहाँ से धनिया महरी के पुल, वहाँ से ऐशबाग़, वहाँ से गनेशगंज, वहाँ से अमीनाबाद होते हुए तारघर पहुँचे। दम टूट गया, शल हो गए, मर मिटे, न खाना, न दाना। आप लोग बैठे-बैठे यहाँ जो चाहे फ़रमावें, कहने और करने में फ़र्क़ है।

नवाब—तो इस ठाँय-ठाँय से क्या वास्ता, यह कहिए ख़बर पहुँची कि नहीं ?

नुदरत—ख़ुदावंद, भला मैं इसका क्या जवाब दूँ ? ख़बर दे आया। बाबू ने मेरे सामने खट-खट किया, साहब ने रुपए लिए, चपरासियों को इनाम दिया। चार रुपए अपनी जेब से देने पड़े। वह तो कहिए, वहाँ मेरे एक जान-पहचान के निकल आए, नहीं बैरंग वापस आना पड़ता।

नवाब—ख़ैर, तसकीन हुई। अब फ़रमाइए, इतनी देर कहाँ हुई ?

नुदरत—ख़ुदावंद, जल्दी के मारे बग्घी किराए करके गया था; लौटती बार उसने वह पलटा खाया कि मैं तो समझा, बस, कुचल ही गया। मगर ख़ुदा कारसाज़ है, गिरा तो, लेकिन बच गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई दो घंटे तक कोचवान बम ही दुरुस्त किया किया। इससे देर हुई, हुज़ूर ! अब घर जाता हूँ।

नवाब—अरे भई, खाना तो खाते जाओ। अच्छा, चार रुपए वे हुए, और बग्घी के किराए के भी कोई तीन रुपए हुए होंगे? सात रुपए दारोग़ा से ले लो।

क़ुदरत—नहीं ख़ुदावंद, झूठ नहीं बोलूँगा। चाहे फ़ाक़ा करूँ, मगर कहूँगा सच ही। यही तो गुलाम में जौहर है। दो रुपए और पाँच पैसे दिए। देखिए, ख़ुदा को मुँह दिखाना है।

नवाब—दारोग़ा, इनको दस रुपए दे दो। सच बोलने का कुछ इनाम भी तो दूँ।

तीसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सुबह को नवाब साहब ज़नानख़ाने से निकले, तो मुसाहबों ने झुक-झुककर सलाम किया। ख़िदमतगार ने चाय की साफ़-सुथरी प्यालियाँ और चमचे लाकर रक्खे। नवाब ने एक-एक प्याली अपने हाथ से मुसाहबों को दी, और सबने गरम-गरम दूधिया चाय उड़ानी शुरू की। एक-एक घूँट पीते जाते हैं, और गप भी उड़ाते जाते हैं।

मुसाहब—हुज़ूर, कश्मीरी खूब चाय तैयार करते हैं।

हाफ़िज़—हमारी सरकार में जो चाय तैयार होती है, सारी ख़ुदाई में तो बनती न होगी। ज़रा रंग तो देखिए। हिंदू भी देखें, तो मुँह में पानी भर आवे।

रोशनअली—क़ुरबान जाऊँ हुज़ूर, ऐसी चाय तो बादशाह के यहाँ भी नहीं बनती थी। ख़ुदा जाने, मियाँ रहीम कहाँ से नुस्ख़ा पा गए। मगर ज़रा तलख़ी बाक़ी रह जाती है।

रहीम—सुभान-अल्लाह ! आप तो बादशाहों के यहाँ चाय पी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुके हैं, और इतना भी नहीं जानते कि चाय में तलखी न हो, तो वह चाय ही नहीं।

ख़िदमतगार—खुदावंद, शिवदीन हलवाई हाज़िर है।

नवाब—दारोग़ाजी, इस हलवाई का हिसाब कर दो, और समझा दो कि अगर ख़राब या सड़ी हुई बासी मिठाई भेजी, तो इस सरकार से निकाल दिया जायगा। परसों बरफ़ी ख़राब भेजी थी। घर में शिकायत करती थीं।

दारोग़ा—सुनते हो शिवदीन? देखो, सरकार क्या फ़रमाते हैं? ख़बरदार, जो सड़ी-गली मिठाई भेजी। अब तुमने नमकहरामी पर कमर बाँधी है! खड़े-खड़े निकाल दिए जाओगे।

हलवाई—नहीं खुदावंद, अव्वल माल दूँ, अव्वल। चाशनी ज़रा बहुत आ गई, तो दाना कम पड़ा। कड़ी हो गई। चाशनी की गोली देर में देखी, नहीं तो इस दूकान की बरफ़ी तो शहर-भर में माशूर है। वह लज्जती होती है कि ओंठ बँधने लगते हैं।

दारोग़ा—चलो, तुम्हारा हिसाब कर दें। ले बतलाओ, कितने दिन से ख़र्च नहीं पाया, और तुम्हारा क्या आता है?

हलवाई—अगले महीने में २५) और कुछ आने की आई थी। और अब की १० तारीख़ अँगरेज़ी तक कोई सत्तर या अस्सी की।

दारोग़ा—अजी, तुम तो गद्देबाज़ियाँ करते हो! सत्तर या अस्सी, सौ या पाँच सौ; उस महीने में उतनी, इस महीने में इतनी। यह बखेड़ा तुमसे पूछता कौन है। हमें तो बस, गठरी बता दो, कितना हुआ?

हलवाई—अच्छा, हिसाब तो कर लूँ, (थोड़ी देर के बाद) बस, १४२ रुपए और दस आने दीजिए। चाहे हिसाब कर लीजिए, बोलता जाऊँ।

दारोग़ा—अजी, तुम कोई नए तो हो नहीं। बताओ, इसमें यारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का कितना है ? सच बोलना, लाला ! (पीठ ठोंककर) आओ, वारे-न्यारे हों । क्यों है न ?

हलवाई—बस, सौ हमको दे दो, बयालीस तुम ले लो । सीधा-सीधा मैं तो यह जानता हूँ ।

दारोग़ा—अच्छा, मंजूर । मगर बयालीस के बावन करो । एक सौ तुम्हारे, बावन हमारे । सच कहना, दोनों महीनों में चालीस की मिठाई आई होगी या कम ?

हलवाई—अजी हुज़ूर, अब इस भेद से आपको क्या वास्ता ? आपको आम खाने से ग़रज़ है, या पेड़ गिनने से । सच-सच यह है कि सब मिलाकर अड़तीस रुपए की आई होगी । मुल वजन में मार देता हूँ । सेर-भर लड्डू माँग भेजे, हमने पाव सेर कम कर दिए ।

दारोग़ा—ओह, इसकी न कहिए, यहाँ अंधेर-नगरी चौपट-राज है । यह दिमाग़ किसे कि तौलने बैठे । मियाँ लखलुट, बीबी उनसे बढ़कर । दस के पचास लो, और सेर के तीन पाव भेजो । मज़े हैं । अच्छा, ये सौ रुपए गिन लो, और एक सौ बावन की रसीद हमें दो ।

हलवाई—यह मोल-तोल है । सौ और पाँच हम लें, और बाक़ी हुज़ूर को मुबारक रहें ।

अब सुनिए, मियाँ ख़ोजी ने ये सारी बातें सुन लीं । जब शिवदीन चला गया, तो बढ़कर बोले—अजी, हज़रत, आदाबरज़ है । कहिए, इसमें कुछ यारों का भी हिस्सा है ? या बावन-के-बावन खुद ही हज़म कर जाओगे, और डकार तक न लोगे ? अब हमारा और आपका साझा न होगा, तो बुरी ठहरेगी ।

दारोग़ा—क्या ? किससे कहते हैं आप ! यह साझा कैसा ! भंग तो नहीं पी गए हो कहीं ? यह क्या वाही-तबाही बक रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो ? यहाँ बेहूदा बकनेवालों की ज़बान खींच ली जाती है। तुम टुकड़गदों को इन बातों से क्या वास्ता ?

ख़ोजी—(कमर कसकर) ओ गीदी, क़सम ख़ुदा की, इतनी क़ौलियाँ भोंकी हों कि याद करो। मुझे भी कोई ऐसा-वैसा समझे हो ? मैं आदमी को दम-के-दम में सीधा बना देता हूँ। किसी और भरोसे न भूलिएगा। क्या ख़ूब अड़तीस के डेढ़ सौ दिलवाए, पचास ख़ुद उड़ाए, और ऊपर से गुर्राता है मर्दक। अभी तो नवाब साहब से सारा कच्चा चिट्ठा जड़ता हूँ। खड़े-खड़े न निकाल दिए जाओ, तो सही। हम भी तमाम उम्र रईसों की ही सोहबत में रहे हैं, घास नहीं छीला किए हैं। बाएँ हाथ से बीस रुपए इधर रख दीजिए। बस, इसी में ख़ैर है ; वर्ना उलटी आँतें गले पड़ेंगी। अब सोचते क्या हो ? ज़रा चीं-चपड़ करोगे, तो क़लई खोल दूँगा। बोलो, अब क्या राय है ? बीस रुपए से गम खाओगे, या ज़िल्लत उठाओगे ? अभी तो कोई कानोकान नहीं सुनेगा, पीछे अलबत्ता बड़ी टेढ़ी खीर है।

दारोग़ा—वाह री फूटी क़िस्मत ! आज सुबह-सुबह बोहनी तो अच्छी हुई थी, अच्छे का मुँह देखकर उठे थे ; मगर हज़रत ने अपनी मनहूस सूरत दिखाई। अब बावन में से आपको बीस रुपए, रक़म-की-रक़म, निकाल दें, तो हमारे पास क्या ख़ाक रहे। और हाँ, ख़ूब याद आया, बावन किस मरदूद को मिले। सैंतालीस ही तो हमारे हत्थे चढ़े। दस तुम भी लो भई। (गर्दन में हाथ डालकर) मान जाओ उस्ताद। हमें ज़रूरत थी इससे कहा, वरना क्या बात थी। और फिर हम-तुम ज़िंदा हैं, तो सैकड़ों लूटेंगे मियाँ, ये हाथ दोनों लूटने ही के लिये हैं, या कुछ और ?

ख़ोजी—दस में तो हमारा पेट न भरेगा। अच्छा भई, पंद्रह दो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आख़िर दारोग़ा ने मजबूर होकर पंद्रह रुपए मियाँ ख़ोजी को नज़र किए, और दोनों आदमी जाकर महफ़िल में शरीक हुए। थोड़ी ही देर बैठे होंगे कि चोबदार ने आकर कहा—हुज़ूर, वह बज़ाज़ आया है, जो विलायती कपड़ा बेचता है। कल भी हाज़िर हुआ था ; मगर उस वक़्त मौक़ा न था, मैंने अर्ज़ न किया।

नवाब—दारोग़ा से कहो, मुझसे क्या घड़ी-घड़ी आके परचा जड़ते हो। (दारोग़ा से) जाओ भई, उसको भी लगे-हाथों भुगता ही दो। झंझट क्यों बाक़ी रह जाय। कुछ और कपड़ा आया है विलायत से ? आया हो, तो दिखाओ : मगर बाबामोल की सनद नहीं।

बज़ाज़—अब कोई दूज तक सब कपड़ा आ जायगा। और, हुज़ूर ऐसी बातें कहते हैं ! भला, इस ड्योढ़ी पर हमने कभी मोल-तोल की बात की है आज तक ? और यों तो आप अमीर हैं, जो चाहे कहें, मालिक हैं हमारे।

दारोग़ा और बज़ाज़ चले। जब दारोग़ा साहब की खपरैल में दोनों जाकर बैठे, तो मियाँ ख़ोजी भी रेंगते हुए चले, और दन-से मौजूद। दारोग़ा ने जो इनको देखा, तो काटो, तो बदन में लहू नहीं; मुर्दनी-सी चेहरे पर छा गई। चुप ! हवाइयाँ उड़ी हुई। समझे कि यह ख़ोजी एक ही काइयाँ है, इससे ख़ुदा पनाह में रक्खे। सुबह को तो मरदूद ने हत्थे ही पर टोक दिया, और पंद्रह पटीले। अब जो देखा कि बज़ाज़ आया, तो फिर मौजूद। आज रात को इस-की टाँग न तोड़ी हो, तो सही। मगर फिर सोचे कि गुड़ से जो मरे, तो ज़हर क्यों दें। आओ, इस वक़्त चुनीं-चुनाँ करें, फिर समझा जायगा। बोले—आओ भाईजान, इधर मोढ़े पर बैठो। अच्छी तरह भई ! हुक़्क़ा लाओ, आपके लिये।

बज़ाज़ सदर-बाज़ार का रहनेवाला एक ही उस्ताद था। ताड़ गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि इसके बैठने से मेरा और दारोग़ा का मतलब ख़ब्त हो जायगा। किसी तदबीर से इसको यहाँ से निकालना चाहिए। पहले तो कुछ देर दारोग़ा से इशारों में बातें हुआ कीं। फिर थोड़ी देर के बाद बज़ाज़ ने कहा—मियाँ साहब, आपको यहाँ कुछ काम है?

ख़ोजी—तुम अपनी कहो लालाजी, हमसे क्या वास्ता?

बज़ाज़—तुम यहाँ से उठ जाओ। उठते हो कि मैं दूँ एक लात ऊपर से!

ख़ोजी—ओ गीदी, ज़बान सँभाल; नहीं तो इतनी क़रौलियाँ भोंकूँगा कि खून-ख़राबा हो जायगा।

बज़ाज़—उठूँ फिर मैं?

ख़ोजी—उठके तमाशा भी देख ले!

बज़ाज़—बेधा है क्या?

ख़ोजी—वल्लाह, जो बे-ते किया, तो इतनी क़रौलियाँ......

ख़ोजी कुछ और कहने ही को थे कि बज़ाज़ ने बैठे-बैठे मुँह दबा दिया, और एक चपत जमाई। चलिए, दोनों गुँथ गए। अब दारोग़ाजी को देखिए बीच-बचाव किस मज़े से करते हैं कि ख़ोजी के दोनों हाथ पकड़ लिए और कमर दबाए हुए हैं, और बज़ाज़ ऊपर से इनको ठोक रहा है। दारोग़ा साहब गला फाड़-फाड़कर गुल मचाए जाते हैं कि मियाँ क्यों लड़ मरते हो? भई, धौल-धप्पे की सनद नहीं। ख़ोजी अपने दिल में अल्ला रहे हैं कि अच्छे मीरफ़ैसली बने। इतने में किसी ने नवाब साहब से जाकर कह दिया कि मियाँ ख़ोजी, दारोग़ा और बज़ाज़, तीनों गुँथे पड़े हैं। उसी वक़्त बज़ाज़ भी दौड़ा हुआ आया, और फ़रियाद की कि हुज़ूर, हम आपके यहाँ तो सस्ता माल देते हैं, मगर यह ख़ोजी हिसाब-किताब के वक़्त सर पर सवार हो गए। लाख-लाख कहा किए कि भई, हम अपने माल का भाव तुम्हारे सामने न बतावेंगे;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुल इन्होंने हारी मानी न जीती, और उलटे पंजे झाड़के चित-पट की ठहराई। कमज़ोर, मार खाने की निशानी। मैंने वह गुद्दा दिया कि छठी का दूध याद करते होंगे। दारोग़ा भी रोते-पीटते आए कि दोहाई है, चारपाई की पट्टी तोड़ डाली, ख़ासदान तोड़ डाला, और सैकड़ों ही गालियाँ दीं।

मियाँ ख़ोजी ऐसे धपियाए गए और इतनी बेभाव की पड़ीं कि बस, कुछ पूछिए नहीं। नवाब ने पूछा—आख़िर झगड़ा क्या था!

दारोग़ा—हुज़ूर, यह ख़ोजी बड़े ही तीखे आदमी हैं। बात-बात पर क़रौली भोंकते हैं, और गीदी तो तकिया-कलाम है। इस वक़्त लाला बलदेव ही से भिड़ पड़े। वह तो कहिए, मैंने बीच-बचाव कर दिया। वर्ना एकआध का सिर ही फूट जाता।

बज़ाज़—बड़े झल्ले आदमी हैं। दारोग़ाजी बेचारे न आ जावें तो कपड़े-वपड़े फाड़ डालें।

ख़ोजी—तो अब रोते काहे को हो? अब यह दुखड़ा लेके क्या बैठे हो?

नवाब—लप्पा-डग्गी तो नहीं हुई।

ख़ोजी—नहीं हुज़ूर, शरीफ़ों में कहीं हाथा-पाई होती है भला! हमने इनको ललकारा, इन्होंने हमको डाँटा; मगर कुंदे तौल-तौल कर दोनों रह गए। भलेमानस पर हाथ उठाना कोई दिल्लगी है!

ख़ैर मियाँ ख़ोजी तो महफ़िल में जाकर बैठे, और उधर लाला बलदेव और दारोग़ा साहब हिसाब करने गए।

दारोग़ा—हाँ भई, बताओ।

लाला—अजी बतावें क्या, जो चाहे दिलवा दो।

दारोग़ा—पहले यह बताओ, तुम्हारा आता क्या है? सौ, दो सौ, दस, बीस, पचास, जो हो, कह दो।

लाला—दारोग़ाजी, आजकल कपड़ा बड़ा महँगा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दारोग़ा—लाला, तुम निरे गावदी ही रहे। हमको महँगे-सस्ते से क्या वास्ता? हमको तो अपने हक़ से मतलब। तुम तो इस तरह कहते हो, जैसे हमारी गिरह से जाता है।

लाला—फिर तो ७५३) निकालिए।

दारोग़ा—बस, अरे मियाँ, अब की इतने दिनों में सात-साढ़े सात सौ ही की नौबत आई।

लाला—जी हाँ, आपसे कुछ परदा थोड़े ही है। दो सौ और पचपन रुपए का कपड़ा आया है; अंदर-बाहर, सब मिलाकर। मगर परसों नवाब साहब कहने लगे कि अब की तो तुम्हारा कोई पाँच-छः सौ का माल आया होगा। मैंने कहा कि ऐसे मौक़े पर चूकना गधापन है। वह तो पाँच-छः सौ बताते थे, मेरे मुँह से निकल गया कि हिसाब किए से मालूम हो। मुल कोई आठ-सात सौ का आया होगा। तो अब ७५३) ही रखिए। इसमें हमारा और आपका समझौता हो जायगा।

दारोग़ा—अजी, समझौता कैसा, हम-तुम कुछ दो तो हैं नहीं; और हमारे-तुम्हारे तो बाप-दादा के वक़्त से दोस्ताना है। बोलो, कितने पर फ़ैसला होता है?

लाला—बस, दो सौ छब्बीस तो हमको एक दीजिए, और तीन सौ और दीजिए। इसके बाद बढ़े, सो आपका।

दारोग़ा—(हँसकर) अच्छा भई, मंजूर। हाथ-पर-हाथ मारो। मगर ७५३।=) की रसीद लिखो, जिसमें मालूम हो कि आने-पाई से हिसाब लेस है।

लाला—बड़े काइयाँ हो दारोग़ाजी। अजी २२७।=) कुल आपका?

ख़ोजी—बल्कि आपके बाप का।

यह आवाज़ सुनकर दोनों चौंके। इधर-उधर देखते हैं, कोई नज़र ही नहीं आता। दारोग़ा के हवास ग़ायब। बज़ाज़ के बदन

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ख़ून का नाम नहीं। इतने में फिर आवाज़ आई—कहो, कुछ यारों का भी हिस्सा है? तब तो दोनों के रहे-सहे होश और भी उड़ गए।

अब सुनिए, मियाँ ख़ोजी खपरैल के पिछवाड़े एक मोखे की राह से सब सुन रहे थे। जब कुल काररवाई ख़तम हो गई, तो आवाज़ लगाई। ख़ैर, दारोग़ा और लाला बलदेव ने उनको ढूँढ़ निकाला और लल्लो-पत्तो करने लगे।

बज़्ज़ाज़—हमारा क़सूर फिर माफ़ कीजिए।

दारोग़ा—अजी, ये ऐसे आदमी नहीं हैं। ये बेचारे किसी से लड़ने-भिड़नेवाले नहीं। बाक़ी लड़ाई-झगड़ा तो हुआ ही करता है। दिल में कुदूरत आई और साफ़ हो गए।

ख़ोजी—ये बातें तो उम्र-भर हुआ करेंगी। मतलब की बात फ़रमाइए। लाओ कुछ इधर भी।

दारोग़ा—जो कहो।

ख़ोजी—सौ दिलवाइए पूरे। एक सौ लिए बग़ैर न टलूँगा। आज तुम दोनों ने मिलकर हमारी ख़ूब मरम्मत की है।

दारोग़ा—यह तीस रुपए तो एक लीजिए, और यह दस का नोट। बस। और जो अलसेठ कीजिए, तो इससे भी हाथ धोइए।

ख़ोजी—ख़ैर लाइए, चालीस ही क्या कम हैं।

दारोग़ा—हम समझे थे कि बस, हमी-हम हैं; मगर आप हमारे भी गुरू पैदा हुए।

मियाँ ख़ोजी और दारोग़ा साहब हाथ-में-हाथ दिए आकर महफ़िल में बैठे, गोया दोनों में दाँत-काटी रोटी थी। मगर दारोग़ा का बस चलता, तो ख़ोजी को कालेपानी ही भेज देते, या ज़िंदा चुनवा देते। महफ़िल में लतीफ़े उड़ रहे थे।

नुदरत—हुज़ूर, आज एक आदमी ने हमसे पूछा कि अगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दरिया में नहाएँ, तो मुँह किस तरफ़ रक्खें। हमने कहा कि भाई, अगर अक़्लमंद हो, तो अपने कपड़ों की तरफ़ रुख़ रक्खो, वर्ना चोर उठा ले जायगा, और आप ग़ोते ही खाते रह जायँगे।

हाफ़िज़—पुराना लतीफ़ा है।

आज़ाद—एक हकीम ने कहा है कि जब तक मैं बिन ब्याहा था, तो बीबीवाले गूँगे हो गए थे। और अब जो शादी कर ली, तो एक-एक मुँह में सौ-सौ ज़बानें हैं।

इतने में गंधी ने आकर सलाम किया।

नवाब—दारोग़ाजी, इनको भी भुगता दो।

दारोग़ा और गंधी खपरैल में पहुँचे, तो दारोग़ा ने पूछा—कितना इत्र आया?

गंधी—देखिए, आपके यहाँ तो लिखा होगा।

दारोग़ा—हाँ, लिखा तो है। मगर ख़ुदा जाने वह काग़ज़ कहाँ पड़ा है। तुम अपनी याद से जो जी में आवे, बता दो।

गंधी—३५) तो कल के हुए, और ८०) उधर के। बेगम साहबा ने अब की इत्र की भरमार ही कर दी। क़राबे-के-क़राबे ख़ाली कर दिए।

दारोग़ा—अच्छा भई, फिर इसमें किसी के बाप का क्या इजारा। शौक़ीन हैं, रईसज़ादी हैं, अमीर हैं। इत्र उन्हीं के लिये है, या हमारे-आपके लिये? अच्छा, तो कुल ११५) हुए न! तुम भी क्या याद करोगे लो सौ ये हैं, और तीन नोट दस-दस के।

गंधी—अच्छा लीजिए, यह इत्र की शीशी आपके लिये लाया हूँ।

दारोग़ा—किस चीज़ का है?

गंधी—सूँघिए, तो मालूम हो। ख़ुदा जानता है, १०) तोले में झड़ाझड़ उड़ा जा रहा है।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मियाँ गंधी उधर रवाना हुए, इधर दारोग़ाजी खुश-खुश चले, तो आवाज़ आई कि उस्ताद, इस शीशी में यारों का भी हिस्सा है। पीछे फिरके देखते हैं, तो मियाँ ख़ोजी घूमते हुए चले आते हैं।

दारोग़ा—यार, तुमने तो बेतरह पीछा किया।

ख़ोजी—अब की तो तुमको कुछ न मिला। मगर इस इत्र में से आधी शीशी लेंगे।

दारोग़ा—अच्छा भई, ले लेना। तुमसे तो कोर ही दबी है। दोनों आदमी जाकर महफ़िल में फिर शरीक हो गए।

इकतीसवाँ परिच्छेद

एक दिन पिछले पहर से खटमलों ने मियाँ ख़ोजी के नाक में दम कर दिया। दिन-भर का खून जोंक की तरह पी गए। हज़रत बहुत ही झल्लाए; चीख़ उठे, लाना क़रौली, अभी सबका खून चूस लूँ। यह हाँक जो औरों ने सुनी, तो नींद हराम हो गई। चोर का शक हुआ। लेना-लेना, जाने न पावे। सराय-भर में हुल्लड़ मच गया। कोई आँखें मलता हुआ अँधेरे में टटोलता है, कोई आँखें फाड़-फाड़कर अपनी गठरी को देखता है, कोई मारे डर के आँखें बंद किए पड़ा है। मियाँ ख़ोजी ने जो चोर-चोर की आवाज़ सुनी, तो खुद भी गुल मचाना शुरू किया—लाना मेरी क़रौली। ठहर! मैं भी आ पहुँचा। पीनक में सूझ गई कि चोर आगे भागा जाता है, दौड़ते-दौड़ते ठोकर खाते हैं तो अररर-धों! गिरे भी तो कहाँ, जहाँ कुम्हार के हुंडे रक्खे थे। गिरना था कि कई हुंडे चकनाचूर हो गए। कुम्हार ने ललकारा कि चोर-चोर। यह उठने ही को थे कि उसने आकर दबोच लिया, और पुकारने लगा—दौड़ो-दौड़ो, चोर पकड़ लिया। मुसाफ़िर और भठियारे, सब-के-सब दौड़ पड़े। कोई डंडा लिए है, कोई लट्ठ बाँधे। किसी को क्या मालूम कि यह चोर है, या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मियाँ ख़ोजी। ख़ूब बेभाव की पड़ीं। यार लोगों ने ताक-ताककर ज़न्नाटे के हाथ लगाए। ख़ोजी की सिट्टी-पिट्टी भूल गई; न क़रौली याद रही, न तमंचा। जब ख़ूब पिट-पिटा चुके, तो एक मुसाफ़िर ने कहा—भई, यह तो ख़ोजी मालूम होते हैं। जब चिराग़ जलाया गया, तो आप दबके हुए नज़र आए। मियाँ आज़ाद से किसी ने जाकर कह दिया कि तुम्हारे साथी ख़ोजी चोरी की इल्लत में फँसे हैं; किसी मुसाफ़िर की टोपी चुराई थी। दूसरे ने कहा—नहीं-नहीं, यह नहीं हुआ। हुआ यह कि एक कुम्हार की हाँडियाँ चुराने गए थे। मुल जाग हो गई।

मियाँ आज़ाद को यह बात कुछ जँची नहीं। सोचे, ख़ोजी बेचारे चोरी-चकारी क्या जानें। फिर चोरी भी करते तो हाँडियों की? दिल में ठान ली कि चलें, और ख़ोजी को बचा लावें। चारपाई से उतरे ही थे कि देखा, ख़ोजी साहब झूमते चले आते हैं, और बड़बड़ाते जाते हैं—हत् तेरे गीदी की, बड़ा आज़ाद बना है। चारपाई पर पड़ा ख़र्र-ख़र्र किया किया, और हमारी ख़बर ही नहीं।

आज़ाद—ख़ैर, हमको तो पीछे गालियाँ देना, पहले यह बताओ कि हाथ-पाँव तो नहीं टूटे?

ख़ोजी—हाथ-पाँव! अजी, आप उस वक़्त होते, तो देखते कि बंदे ने क्या-क्या जौहर दिखाए। पचास आदमी घेरे हुए थे, पूरे पचास, एक कम न एक ज़्यादा, और मैं फुलझड़ी बना हुआ था। बस, यह कैफ़ियत थी कि किसी को अंटी दी धम-से ज़मीन पर, किसी को कूले पर लादकर मारा। दो-चार मेरे रोब में आकर थरथराके गिर ही तो पड़े। दस-पाँच की हड्डी-पसली चकनाचूर कर दी। जो सामने आया, उसे नीचा दिखाया।

आज़ाद—सच?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—ख़ुदाई-भर में कोई ऐसा जीवटदार आदमी दिखा तो दीजिए!

आज़ाद—भई, ख़ुदाई-भर का हाल तो ख़ुदा ही को ख़ूब मालूम है। मगर इतनी गवाही तो हम भी देंगे कि आप-सा बेहया दुनिया-भर में न होगा।

दोनों आदमी इस वक़्त सो रहे, दूसरे दिन सवेरे नवाब साहब के यहाँ पहुँचे।

आज़ाद—जनाब, रुख़सत होने आया हूँ। ज़िंदगी है, तो फिर मिलूँगा।

नवाब—क्या कूच की तैयारी कर दी? भई, वापस आना, तो मुलाक़ात ज़रूर करना।

आज़ाद और ख़ोजी रुख़सत हुए, तो ख़ोजी पहुँचे ज़नानी ड्योढ़ी पर, और दरबान से बोले—यार, ज़रा बुआ ज़ाफ़रान को नहीं बुला देते। दरबान ने आवाज़ दी—बुआ ज़ाफ़रान, तुम्हारे मियाँ आए हैं।

बुआ ज़ाफ़रान के मियाँ ख़ोजी से बिलकुल मिलते-जुलते थे, ज़रा फ़र्क़ नहीं। वही सवा बालिश्त का क़द, वही दुबले-पतले हाथ-पाँव। ज़ाफ़रान उनसे रोज़ कहा करती थी—तुम अफ़ीम खाना छोड़ दो। वह कब छोड़नेवाले थे भला। इसी सबब से दोनों में दम-भर नहीं बनती थी। ज़ाफ़रान ने जो बाहर आकर देखा, तो हज़रत पीनक ले रहे हैं। जल-भुनकर ख़ाक ही तो हो गई। जाते ही मियाँ ख़ोजी के पट्टे पकड़कर एक, दो, तीन, चार, पाँच चाँटे लगा ही तो दिए। ख़ोजी का नशा हिरन हो गया। चौंककर बोले—लाना तो क़रौली, खोपड़ी पिलपिली हो गई। हाथ छुड़ाकर भागना चाहा; मगर वह देवनी नवाब का माल खा-खाकर हथनी बनी फिरती थी। इनको चुरमुर कर डाला। इधर गुल-गपाड़े की आवाज़ हुई, तो बेगम साहबा, मामा, लौंडियाँ, सब परदे के पास दौड़ीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेगम—ज़ाफ़रान, आख़िर यह है क्या ? रुई की तरह इस बेचारे को तूमके धर दिया ।

मामा—हुज़ूर, ज़ाफ़रान का क़सूर नहीं, यह उस मरदुए का क़सूर है जो जोरू के हाथ बिक गया है । (ख़ोजी के कान पकड़कर) जोरू के हाथ से जूतियाँ खाते हो, और ज़रा चूँ नहीं करते ?

ख़ोजी—हाय अफ़सोस ! अजी यह जोरू किस मरदूद की है । ख़ुदा-ख़ुदा करो ! भला मैं इस हुड़दंगा, काली-कलूटी डाइन के साथ ब्याह करता ! मार-मारके भुरकस निकाल लिया ।

बुआ ज़ाफ़रान ने जो ये बातें सुनीं, तो वह आवाज़ ही नहीं । ग़ौर करके देखती हैं, तो यह कोई और ही है । दाँतों के तले उँगली दबाकर ख़ामोश हो रहीं ।

लौंडी—ऐ वाह बुआ ज़ाफ़रान ! इतना भी नहीं पहचानतीं । यह बेचारे तो नवाब साहब के यहाँ बने रहते थे । आख़िर तुमको सूझी क्या ?

बेगम साहबा ने भी ज़ाफ़रान को ख़ूब आड़े-हाथों लिया । इतने में किसी ने नवाब साहब से सारा क़िस्सा कह दिया । महफ़िल-भर में क़हक़हा पड़ गया ।

नवाब—ज़ाफ़रान की सज़ा यही है कि ख़ोजी को दे दी जायँ ।

ख़ोजी—बस, गुलाम के हाल पर रहम कीजिए । ग़ज़ब ख़ुदा का ! मियाँ के धोखे-धोखे में तो इसने हमारे हाथ-पाँव ढीले कर दिए, और जो कहीं सचमुच मियाँ ही होते, तो चटनी ही कर डालती । क्या कहें, कुछ बस नहीं चलता, नहीं नवाबी होती, तो इतनी क़ौलियाँ भोंकी होतीं कि उम्र-भर याद करती । यहाँ कोई ऐसे-वैसे नहीं । घास नहीं खोदा किए हैं ।

बड़ी देर तक अंदर-बाहर क़हक़हे पड़े, तब दोनों आदमी फिर से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुख़सत होकर चले। रास्ते में मियाँ आज़ाद मारे हँसी के लोट-लोट गए।

ख़ोजी—जनाब, आप हँसते क्या हैं? मैंने भी ऐसी-ऐसी चुटकियाँ ली हैं कि ज़ाफ़रान भी याद ही करती होगी।

आज़ाद—मियाँ, डूब मरो जाकर। एक औरत से हाथापाईं में जीत न पाए!

ख़ोजी—जी, वह औरत सौ मर्द के बराबर है। चिमट पड़े, तो आपके भी हवास उड़ जायँ।

दोनों आदमी सराय पहुँचकर चलने की तैयारी करने लगे। खाना खाकर बोरिया-बकचा सँभाल स्टेशन को चले।

ख़ोजी—हज़रत, चलने को तो हम चलते हैं, मगर इतनी शर्तें आपको क़बूल करनी होंगी—

(१) क़रौली हमको ज़रूर ले दीजिए।

(२) बरस-भर के लिये अफ़ीम ले लीजिए। मैं अपने लादे-लादे फिरूँगा। वर्ना जँभाइयों-पर-जँभाइयाँ आवेंगी, और बेमौत मर जाऊँगा। आप तो औरतों की तरह नशे के आदी नहीं; मगर मैं बग़ैर अफ़ीम पिए एक क़दम न चलूँगा। परदेस में अफ़ीम मिले या न मिले, कहाँ ढूँढ़ता फिरूँगा?

(३) इतना बता दीजिए कि वहाँ बुआ ज़ाफ़रान की-सी डंड-पेल देवनियाँ तो नज़र न आवेंगी? वल्लाह, क्या कस-कसके लातें लगाई हैं, और क्या तान-तानके मुक्केबाज़ी की है कि पलेथन ही निकाल डाला।

(४) सराय में हम अब तमाम उम्र न उतरेंगे, और जो जहाज़ पर कुम्हार हुए, तो हम डूब ही मरेंगे। हम ठहरे आदमी भारी-भरकम, कहीं पाँव फिसल गया, और एकआध हुंडा टूट गया, तो कुम्हार से ठाँय-ठाँय हो जायगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) जिस रईस की सोहबत में बज़ाज़ आते होंगे, वहाँ हम न जायँगे।

(६) जहाँ आप चलते हैं, वहाँ काँजीहौस तो नहीं है कि गधे के धोखे में कोई हमको कान पकड़के काँजीहौस पहुँचा दे।

(७) टट्टू पर हम सवार न होंगे, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय।

(८) मीठे पुलाव रोज़ पकें।

(९) हमको मियाँ ख़ोजी न कहना। जनाब ख़्वाजा साहब कहा कीजिए। यह ख़ोजी क्या माने?

(१०) मोरचे पर हम न जायँगे। लूट-मार में जो कुछ हाथ आवे, वह हमारे पास रक्खा जाय।

(११) गोली खाने के तीन घंटे पहले और मरने के दो घड़ी पहले हमें बतला देना।

(१२) अगर हम मर जायँ, तो पता लगाकर हमारे वालिद के पास ही हमारी लाश दफ़न करना। अगर पता न लगे, तो किसी क़ब्रिस्तान में जाकर सबसे अच्छी क़बर के पास हमको दफ़न करना। और लिख देना कि यह इनके वालिद की क़बर है।

(१३) पीनक के वक़्त हमको हरगिज़ न छेड़ना।

आज़ाद—तुम्हारी सब शर्तें मंजूर। अब तो चलिएगा।

ख़ोजी—एक बात और बाक़ी रह गई।

आज़ाद—लगे-हाथों वह भी कह डालिए।

ख़ोजी—मैं अपनी दादीजान से तो पूछ लूँ।

आज़ाद—क्या वह अभी ज़िंदा हैं? ख़ुदा झूठ न बुलावे, तो आप कोई पचास के पेटे में होंगे। और वह इस हिसाब से कम-से-कम क्या डेढ़ सौ बरस की भी न होंगी?

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—अजी, मैं दिल्लगी करता था। उनकी तो हड्डियों तक का पता न होगा।

स्टेशन पर पहुँचे। गुल-गपाड़ा मचा हुआ था। दोनों आदमी भीड़ काटकर अंदर दाख़िल हुए, तो देखा, एक आदमी गेरुए कपड़े पहने खड़ा है। फ़क़ीरों की-सी दाढ़ी, बाल कमर तक, मूछें मुड़ी हुईं, कोई पचास के पेटे में। मगर चेहरा सुर्ख़, जैसे लाल अंगारा; आँखें आग-भभूका।

आज़ाद—(एक सिपाही से) क्यों भई, क्या यह कोई फ़क़ीर हैं?

सिपाही—फ़क़ीर नहीं, चंडाल हैं। कोई चार महीने हुए, यहाँ आया, और एक आदमी को सब्ज़ बाग़ दिखाकर अपना चेला बनाया। रफ़्ता-रफ़्ता और लोग भी शागिर्द हुए। फिर तो हज़ारों पुजने लगे। अब कोई तो कहता है कि बाबाजी ने दस सेर मिठाई दरिया में डाल दी, और दूसरे दिन जाकर कहा—गंगाजी, हमारी अमानत हमको वापस कर दो। दरिया लहरें मारता हुआ बाबाजी के पास आया, और दस सेर गरमागरम मिठाई किसी ने आप-ही-आप उनके दामन में बाँध दी। कोई क़समें खा-खाकर कहता है कि कई मुर्दे इन्होंने ज़िंदा कर दिए। एक साहब ने यहाँ तक बढ़ाया कि एक दिन मूसलाधार मेंह बरस रहा था, और इन पर बूँद ने असर न किया। कोई फ़रिश्ता इन पर छतरी लगाए रहा।

आज़ाद—चिकने घड़े बन गए।

सिपाही—कुछ पूछिए नहीं। उन लोगों ने कहना शुरू कर दिया था कि यह क़ैदख़ाने से निकल जायँगे; मगर तीन दिन से हवालात में हैं, और अब सिट्टी-पिट्टी भूली हुई है। मैं जो उधर से आऊँ-जाऊँ, तो रोज़ देखूँ कि भीड़ लगी हुई है; मगर औरतें ज़्यादा और मर्द कम। जो आता है, वह सिजदा करता है। आपकी देखादेखी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं गया, मेरी देखादेखी आप गए। बाबाजी के यहाँ रोज़ दरबार लगने लगा।

एक दिन का ज़िक्र है कि बाबाजी ने अपनी कोठरी में टाट के नीचे दस-पाँच रुपए रख दिए, और चुपके-से बाहर निकल आए जब दरबार जम गया, तो एक आदमी ने कहा—बाबाजी, हमको कुछ दिखाइए। बिना कुछ देखे हम एक न मानेंगे। बाबाजी ने आँखें नीली-पीली कीं, और शेर की तरह गरजे—लोगों के होश उड़ गए। दो-चार डरपोक आदमियों ने तो मारे डर के आँखें बंद कर लीं। एक आदमी ने कहा—बाबा, अनजान है। इस पर रहम कीजिए। दूसरा बोला—नादान है, जाने दीजिए।

फ़क़ीर—नहीं, इससे पूछो, क्या देखेगा?

आदमी—बाबा, मैं तो रुपए का भूखा हूँ।

फ़क़ीर—बच्चा, फ़क़ीरों को दौलत से क्या काम? मगर तेरी ख़ातिर करना भी ज़रूरी है। चल, चल, चल। बरसो, बरसो, बरसो। खन, खन, खन। अच्छा बच्चा, कुटी में देख; टाट का कोना उठा। ख़ुदा ने तेरे लिये कुछ भेजा ही होगा। मगर दाहना सुर चलता हो, तभी जाना; नहीं तो धोखा खायगा। वहाँ कोई डरावनी सूरत दिखाई दे, तो डर मत जाना; नहीं तो मर जायगा।

बाबाजी ने कुटी के एक कोने में परदा डाल दिया था; और उस परदे में एक आदमी का मुँह काला करके बिठा दिया था। अब तो आदमी डरा कि न-जाने कैसी भयानक सूरत नज़र आवेगी। कहीं डर जाऊँ, तो जान ही जाती रहे। बाबाजी एक-एक से कहते हैं, मगर किसी की हिम्मत नहीं पड़ती। तब एक नौजवान ने उठकर कहा—लीजिए, मैं जाता हूँ।

फ़क़ीर—बच्चा, जाता तो है, मगर ज़रा सँभलकर जाना।

नौजवान बेधड़क कोठरी में घुस गया। टाट के नीचे से रुपए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकालकर जेब में रख लिए, और चलने ही को था कि परदे में से वह काला आदमी निकल पड़ा, और जवान की तरफ़ मुँह खोलकर झपटा। जवान ने आव देखा न ताव, लकड़ी उसकी हलक़ में डाल दी, और इतनी चोटें लगाईं कि बौखला दिया। जब वह रुपए लिए अकड़ता हुआ बाहर निकला, तो हवाली-मवाली सब दंग कि यह तो खुश-खुश आते हैं, और हम समझे थे कि अब इनकी लाश देखेंगे।

नौजवान—(फ़क़ीर से) कहिए हज़रत, और कोई करामात दिखाइएगा ?

फ़क़ीर—बच्चा, तुम्हारी जवानी पर हमें तरस आ गया।

नौजवान—पहले जाकर अंदर देखिए तो कि आपके देव साहब की क्या हालत है ? ज़रा मरहम-पट्टी कीजिए।

अगर वहाँ समझदार लोग होते, तो समझ जाते कि बाबाजी पूरे ठग हैं ; मगर वहाँ तो सभी जाहिल थे। वे समझे, बेशक बाबाजी ने नौजवान पर रहम किया। ख़ैर, बाबाजी ने खूब हाथ-पाँव फैलाए। एक दिन किसी महाजन के यहाँ गए। वहाँ महल्ले-भर के मर्द और औरतें जमा हो गईं। रात को जब सब लोग चले गए, तो इन्होंने महाजन के लड़के से कहा—हम तुमसे बहुत खुश हैं। जो चाहे माँग ले। लड़का इनके क़दमों पर गिर पड़ा। आपने फ़रमाया कि एक कोरी हाँडी लाओ, चूल्हा गरम करो ; मगर लकड़ी न हों, कंडे हों। कुम्हार ने सब सामान चुटकियों में लैस कर दिया। तब आपने लोहे का एक पत्तर मँगवाया। उसे हाँडी में पानी भरकर डाल दिया। पानी को लेकर कुछ पढ़ा। थोड़ी देर के बाद एक पुड़िया दी, और कहा—यह सफ़ेद दवा उसमें डाल दे। थोड़ी देर के बाद जब महाजन का लड़का अंदर गया, तो बाबाजी ने लोहे का पत्तर निकाल लिया, और अपने पास से सोने का पत्तर हाँडी में डाल दिया, और चल दिए। महाजन का लड़का बाहर आया, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबाजी का पता नहीं। हाँडी को जो देखा, तो लोहे का पत्तर ग़ायब, सोने का थक्का मौजूद। महल्ले-भर में शोर मच गया। लोग बाबाजी को ढूँढ़ने लगे। आख़िर यहाँ तक नौबत पहुँची कि एक मालदार की बीबी ने चकमे में आकर अपना पाँच-छः हज़ार का ज़ेवर उतार दिया। बाबाजी ज़ेवर लेकर उड़ गए। साल-भर तक कहीं पता न चला। परसों पकड़े गए हैं।

थोड़ी देर के बाद गाड़ी आई। दोनों आदमी जा बैठे।

बत्तीसवाँ परिच्छेद

सुबह को गाड़ी एक बड़े स्टेशन पर रुकी। नए मुसाफ़िर आ-आकर बैठने लगे। मियाँ ख़ोजी अपने कमरे के दरवाज़े पर खड़े घुड़कियाँ जमा रहे थे—आगे जाओ, यहाँ जगह नहीं है; क्या मेरे सिर पर बैठोगे? इतने में एक नौजवान दूल्हा बराती कपड़े पहने आकर गाड़ी में बैठ गया। बरात के और आदमी असबाब लदवाने में मसरूफ़ थे। दुलहिन और उसकी लौंडी ज़नाने कमरे में बैठाई गई थीं। गाड़ी चलनेवाली ही थी कि एक बदमाश ने गाड़ी में घुसकर दूल्हे की गरदन पर तलवार का ऐसा हाथ लगाया कि सिर कटकर धड़ से अलग हो गया। उस बेगुनाह की लाश फड़कने लगी। स्टेशन पर कुहराम मच गया। सैकड़ों आदमी दौड़ पड़े, और क़ातिल को गिरफ़्तार कर लिया। यहाँ तो यह आफ़त थी, उधर दुलहिन और महरी में और ही बातें हो रही थीं।

दुलहिन—दिलबहार, देखो यह गुल कैसा है? ज़री झाँककर देखना तो!

दिलबहार—है-है! किसी ने एक आदमी को मार डाला है। चबूतरा सारा लहू-लुहान है।

दुलहिन—अरे ग़ज़ब! क्या जाने, कौन था बेचारा!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिलबहार—अरे ! बात क्या है ! लाश के सिरहाने खड़े तुम्हारे देवर रो रहे हैं।

एक दफ़े लाश की तरफ़ से आवाज़ आई—हाय, भाई, तू किधर गया ! दुलहिन का कलेजा धक-धक करने लगा ! भाई, भाई करके कौन रोता है। अरे ग़ज़ब ! वह घबराकर रेल से उतरी और छाती पीटती हुई चली। लाश के पास पहुँचकर बोली—हाय लुट गई ! अरे लोगो, यह हुआ क्या ?

दिलबहार—है-है दुलहिन, तुम्हारा नसीब फूट गया।

इतने में स्टेशन की दो-चार औरतें—तार-बाबू की बीबी, गार्ड की लड़की, ड्राइवर की भतीजी वग़ैरह—ने आकर समझाना शुरू किया। स्टेशन मातमसरा बन गया। लोग लाश के इर्द-गिर्द खड़े अफ़सोस कर रहे थे। बड़े-बड़े संगदिल आठ-आठ आँसू रो रहे थे। सीना फटा जाता था। एकाएक दुलहिन ने एक ठंडी साँस ली, ज़ोर से हाय करके चिल्लाई, और अपने शौहर की लाश पर धम-से गिर पड़ी। चंद मिनट में उसकी लाश भी तड़पकर सर्द हो गई। लोग दोनों लाशों को देखते थे, और हैरत से दाँतों उँगली दबाते थे। तक़दीर के क्या खेल हैं, दुलहिन के हाथ-पाँव में मेंहदी लगी हुई, सिर से पाँव तक ज़ेवरों से लदी हुई; मगर दम-के-दम में कफ़न की नौबत आ गई। अभी स्टेशन से एक पालकी पर चढ़कर आई थी, अब ताबूत में जायगी। अभी कपड़ों से इत्र की महक आ रही थी कि काफ़ूर की तदबीरें होने लगीं। सुबह को दरवाज़े पर रोशनचौकी और शहनाई बज रही थीं, अब मातम की सदा है। थोड़ी ही देर हुई कि शहर के लोग छतों और दूकानों से बरात देख रहे थे, अब जनाज़ा देखेंगे। दिलबहार दोनों लाशों के पास बैठी थी; मगर आँसुओं का तार बँधा हुआ था। वह दुलहिन के साथ खेली थी। दुनिया उसकी नज़रों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अँधेरी हो गई थी। दूल्हा के ख़िदमतगार क़ातिल को ज़ोर-ज़ोर से जूते और थप्पड़ लगा रहे थे, और मरनेवाले को याद करके ढाढ़ें मार-मारके रोते थे। ख़ैर, स्टेशनमास्टर ने लाशों के उठवाने का इंतज़ाम किया। गाड़ी तो चली गई, मगर बहुत-से मुसाफ़िर रेल पर से उतर आए। बला से टिकट के दाम गए। उस क़ातिल को देखकर सबकी आँखों से ख़ून टपकता था। यही जी चाहता था कि इसको इसी दम पीस डालें। इतने में लाल कुर्ती का एक गोरा, जो बड़ी देर से चिल्ला-चिल्लाकर रो रहा था, गुस्से को रोक न सका, जोश में आके झपटा, और क़ातिल की गरदन पकड़कर उसे ख़ूब पीटा।

आज़ाद और मियाँ ख़ोजी भी रेल से उतर पड़े थे। दोनों लाशों के साथ उनके घर गए। राह में हज़ारों आदमियों की भीड़ साथ हो गई। जिन लोगों ने उन दोनों की सूरत ख़्वाब में भी न देखी थी, जानते भी न थे कि कौन हैं, और कहाँ रहते हैं, वे भी ज़ार-ज़ार रोते थे। औरतें बाज़ारों, झरोखों और छतों पर से छाती पीटती थीं कि ख़ुदा ऐसी घड़ी सातवें दुश्मन को भी न दिखाए। दूकानदारों ने जनाज़े को देखा, और दूकान बढ़ाके साथ हुए। रईसज़ादे सवारियों पर से उतर-उतर पड़े, और जनाज़े के साथ चले। जब दोनों लाशें घर पर पहुँचीं, तो सारा शहर उस जगह मौजूद था। दुलहिन का बाप हाय-हाय कर रहा था, और दूल्हे का बाप सब्र की सिल छाती पर रक्खे उसे समझाता था—भाई सुनो, हमारी और तुम्हारी उम्र एक है, हमारे मरने के दिन नज़दीक हैं। और दो-चार बरस बेहयाई से जिए तो जिए, वर्ना अब चल-चलाव है। किसी को हम क्या रोवें। जिस तरह तुम आज अपनी प्यारी बेटी को रो रहे हो, इसी तरह हज़ारों आदमियों को अपनी औलाद का ग़म करते देख चुके हो। इसका अफ़सोस ही क्या? वह ख़ुदा की अमानत थी, ख़ुदा के सिपुर्द कर दी गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उधर क़ातिल पर मुक़दमा पेश हुआ, और फाँसी का हुक्म हो गया। सुबह के वक़्त क़ातिल को फाँसी के पास लाए। फाँसी देखते ही बदन के रोएँ खड़े हो गए। बड़ी हसरत के साथ बोला—सब भाइयों को सलाम। यह कहकर फाँसी की तरफ़ नज़र की और ये शेर पढ़े—

कोई दम कीजिए किस तौर से आराम कहीं;
चैन देती ही नहीं गरदिशे अय्याम कहीं।
सैद लाग़र हूँ, मेरी जल्द ख़बर ले सैयाद;
दम निकल जाय तड़पकर न तहे दाम कहीं।

ख़ोजी—क्यों मियाँ, शेर उसने तो कुछ बेतुके-से पढ़े। भला इस वक़्त शेर का क्या ज़िक्र था।

आज़ाद—चुप भी रहो। उस बेचारे की जान पर बन आई है, और तुमको मज़ाक़ सूझता है—

उन्हें कुछ रहम भी आता है या रब, वक़्ते-ख़ूँ-रेज़ी;
छुरी जब हल्क़े-आजिज़ पर रवाँ जल्लाद करते हैं।

क़ातिल फाँसी पर चढ़ा दिया गया, और लाश फड़कने लगी। इतने में लोगों ने देखा कि एक आदमी घोड़ा कड़कड़ाता सामने से आ रहा है। वह सीधा जेलख़ाने में दाख़िल हुआ, और चिल्लाकर बोला—ख़ुदा के वास्ते एक मिनिट की मुहलत दो। मगर वहाँ तो लाश फड़क रही थी। यह देखते ही सवार धम-से घोड़े से गिर पड़ा, और रोकर बोला—यह तीसरा था। जेल के दारोग़ा ने पूछा—तुम कौन हो? उसने फिर आहिस्ता से कहा—यह तीसरा था। अब एक-एक आदमी उससे पूछता है कि मियाँ, तुम कौन हो और रोक लो, रोक लो की आवाज़ क्यों दी थी? वह सबको यही जवाब देता है—यह तीसरा था।

आज़ाद—आपकी हालत पर अफ़सोस आता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवार—भई, यह तीसरा था।

इंसान का भी अजब हाल है। अभी दो ही दिन हुए कि शहर-भर इस क़ातिल के खून का प्यासा था। सब दुआ कर रहे थे कि इसके बदन को चील्ह-कौए खायँ। वे भी इस बूढ़े की हालत देखकर रोने लगे। क़ातिल की बेरहमी याद न रही। सब लोग उस बूढ़े सवार से हमदर्दी करने लगे। आख़िर, जब बूढ़े के होश-हवास दुरुस्त हुए, तो यों अपना क़िस्सा कहने लगा—

मैं क़ौम का पठान हूँ। तीन ऊपर सत्तर बरस का सिन हुआ। खुदा ने तीन बेटे दिए। तीनों जवान हुए, और तीनों ने फाँसी पाई। एक ने एक क़ाफ़िले पर छापा मारा। उस तरफ़ लोग बहुत थे। क़ाफ़िलेवालों ने उसे पकड़ लिया, और अपनेआप एक फाँसी बनाकर लटका दिया। जिस वक़्त उसकी लाश को फाँसी पर से उतारा, मैं भी वहाँ जा पहुँचा। लड़के की लाश देखकर ग़श की नौबत आई, मगर चुप। अगर ज़रा उन लोगों को मालूम हो जाय कि यह उसका बाप है, तो मुझे भी जीता न छोड़ें। एकाएक किसी ने उनसे कह दिया कि यह उसका बाप है। यह सुनते ही दस-पंद्रह आदमी चिमट गए, और आग जलाकर मुझसे कहा कि अपने लड़के की लाश को इसमें जला। भाई, जान बड़ी प्यारी होती है। इन्हीं हाथों से, जिनसे लड़के को पाला था, उसे आग में जला दिया।

अब दूसरे लड़के का हाल सुनिए—वह रावलपिंडी में राह-राह चला जाता था कि एक आदमी ने, जो घोड़े पर सवार था, उसको चाबुक से हटाया। उसने झल्लाकर तलवार म्यान से खींची, और उसके दो टुकड़े कर डाले। हाकिम ने फाँसी का हुक्म दिया, और आज का हाल तो आप लोगों ने खुद ही देखा। इस लड़की के बाप ने क़रार किया था कि मेरे बेटे के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकाह पढ़वावेगा। लड़के ने जब देखा कि यह दूसरे की बीबी बनी, तो आपे से बाहर हो गया।

मियाँ आज़ाद और ख़ोजी बड़ी हसरत के साथ वहाँ से चले।

ख़ोजी—चलिए, अब किसी दूकान पर अफ़ीम ख़रीद लें।

आज़ाद—अजी, भाड़ में गई आपकी अफ़ीम। आपको अफ़ीम की पड़ी है, यहाँ मारे ग़म के खाना-पीना भूल गए।

ख़ोजी—भई, रंज घड़ी-दो घड़ी का है। यह मरना-जीना तो लगा ही रहता है।

दोनों आदमी बातें करते हुए जा रहे थे, तो क्या देखते हैं कि एक दूकान पर अफ़ीम झड़ाझड़ बिक रही है। ख़ोजी की बाँछें खिल गईं, मुरादें मिल गईं। जाते ही एक चवन्नी दूकान पर फेंकी, अफ़ीम ली, लेते ही घोली, और घोलते ही गट-गट पी गए।

ख़ोजी—अब आँखें खुलीं।

आज़ाद—यों नहीं कहते कि अब आँखें बंद हुईं।

ख़ोजी—क्यों उस्ताद, जो हम हाकिम हो जायँ, तो बड़ा मज़ा आवे। मेरा कोई अफ़ीमची भाई किसी को क़त्ल भी कर आवे, तो बेदाग़ छोड़ दूँ।

आज़ाद—तो फिर निकाले भी जल्द जाइए।

दोनों आदमी यही बातें करते हुए एक सराय में जा पहुँचे। देखा, एक बूढ़ा हिंदू ज़मीन पर बैठा चिलम पी रहा है।

आज़ाद—राम-राम भाई, राम-राम!

बूढ़ा—सलाम साहब, सलाम। सुथना पहने हो, और राम-राम कहत हो?

आज़ाद—अरे भाई, राम और ख़ुदा एक ही तो हैं। समझ का फेर है। कहाँ जाओगे?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूढ़ा—गाँव यहाँ से पाँच चौकी है। पहर रात का घर से चलेन, नहावा, पूजन कीन, चबेना बाँधा और ठंडे-ठंडे चले आयन। आज कचहरी माँ एक तारीख हती। साँझ लै फिर चले जाब। जमींदारी माँ अब कचहरी धावे के सेवाय और का रहि गा?

आज़ाद—तो ज़मींदार हो? कितने गाँव हैं तुम्हारे?

बूढ़ा—ऐ हजूर, अब यो समझो, कोई दुइ हजार खरच-वरच करके बच रहत हैं।

आज़ाद ने दिल में सोचा कि दो हज़ार साल की आमदनी और बदन पर ढंग के कपड़े तक नहीं! गाढ़े की मिरजई पहने हुए है; इसकी कंजूसी का भी ठिकाना है? यह सोचते हुए दूसरी तरफ़ चले, तो देखा, एक क़ालीन बड़े तकल्लुफ़ से बिछा है, और एक साहब बड़े ठाट से बैठे हुए हैं। जामदानी का कुरता, अद्धी का अँगरखा, तीन रुपए की सफ़ेद टोपी, दो-ढाई सौ की जेब-घड़ी, उसकी सोने की ज़ंजीर गले में पड़ी हुई। क़रीब ही चार-पाँच भले आदमी और बैठे हुए हैं, और दोसेरा तंबाकू उड़ा रहे हैं। आज़ाद ने पूछा, तो मालूम हुआ, आप भी एक ज़मींदार हैं। पाँच-छः कोस पर एक क़सबे में मकान है। कुछ 'सीर' भी होती है। ज़मींदारी से सौ रुपए माहवार की बचत होती है।

आज़ाद—यहाँ किस ग़रज़ से आना हुआ?

रईस—कुछ रुपए क़र्ज़ लेना था; मगर महाजन दो रुपए सैकड़ा सूद माँगता है।

मियाँ आज़ाद ने ज़मींदार साहब के मुंशी को इशारे से बुलाया, और अलग ले जाकर यों बातें करने लगे—

आज़ाद—हज़रत, हमारे ज़रिए से रुपया लीजिए। दस हज़ार, बीस हज़ार, जितना कहिए; मगर जागीर कुर्क़ करा लेंगे, और चार रुपए सैकड़ा सूद लेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुंशी—वाह ! नेकी और पूछ-पूछ ! अगर आप चौदह हज़ार दिलवा दें, तो बड़ा एहसान हो। और, सूद चाहे पाँच रुपए सै लीजिए, तो कोई परवा नहीं। सूद देने में तो हम आँधी हैं।

आज़ाद—बस, मिल चुका। यह सूद की क्या बातचीत है भला हम कहीं सूद लिया करते हैं ? मुनाफ़ा नहीं कहते ?

मुंशी—अच्छा हुजूर, मुनाफ़ा सही।

आज़ाद—अच्छा, यह बताओ कि जब सौ रुपए महीना त रहता है, तो फिर चौदह हज़ार क़र्ज़ क्यों लेते हैं ?

मुंशी – जनाब, आपसे तो कोई परदा नहीं। सौ पाते हैं और पाँच सौ उड़ाते हैं। अच्छा खाना खाते हैं, बारीक और क़ीमती कपड़े पहनते हैं, यह सब आवे कहाँ से? बंक से लिया, महाजन से लिया; सब चौदह हज़ार के पेटे में आ गए। अब कोई ऊ नहीं देता।

आज़ाद दिल में उस बूढ़े ठाकुर का इन रईस साहब से मुक़ाबिला करने लगे। वह भी ज़मींदार, यह भी ज़मींदार; उनकी आमदनी डेढ़ सौ से ज़्यादा, इनकी मुशकिल से सौ; वह गाढ़े की धोती और गाढ़े की मिरजई पर खुश हैं, और यह शरबती और जामदानी फड़काते हैं। वह ढाई तल्ले का चमरौधा जूता पहनते हैं, यह पाँच रुपए की सलीमशाही जूतियाँ। वह पालक और चने की रोटियाँ खाते हैं और यह दोवक़्ता शीरमाल और मुर्ग़-पुलाव पर हाथ लगाते हैं। वह गज़ की चाल चलते हैं, यह हवा के घोड़ों पर सवार। दोनों पर धिक्कार ! वह कंजूस और यह फ़ज़ूलख़र्च। वह रुपए को दफ़न किए हुए, यह रुपए लुटाते फिरते हैं। वह खा नहीं सकते, तो यह बचा नहीं सकते।

शाम को दोनों आदमी रेल पर सवार होकर पूना जा पहुँचे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैंतीसवाँ परिच्छेद

रेल से उतरकर दोनों आदमियों ने एक सराय में डेरा जमाया, और शहर की सैर को निकले। यों तो यहाँ की सभी चीज़ें भली मालूम होती थीं, लेकिन सबसे ज़्यादा जो बात उन्हें पसंद आई, वह यह थी कि औरतें बिला चादर और घूँघट के सड़कों पर चलती-फिरती थीं। शरीफ़ज़ादियाँ बेहिजाब नक़ाब उठाए; मगर आँखों में हया और शर्म छिपी हुई।

ख़ोजी—क्यों मियाँ, यह तो कुछ अजब रस्म है? ये औरतें मुँह खोले फिरती हैं। शर्म और हया सब भून खाई। वल्लाह, क्या आज़ादी है।

आज़ाद—आप ख़ासे अहमक़ हैं। अरब में, अजम में, अफ़ग़ानिस्तान में, मिस्र में, तुर्किस्तान में; कहीं भी परदा है? परदा तो आँख का होता है। कहीं चादर हया सिखाती है? जहाँ घूँघट काढ़ा, और नज़र पड़ने लगी।

ख़ोजी—अजी, मैं दुनियाँ की बात नहीं चलाता। हमारे यहाँ तो कहारियाँ और मालिनें तक परदा करती हैं, न कि शरीफ़ज़ादियाँ! एक क़दम तो बेपरदे के जातीं नहीं।

आज़ाद—अरे मियाँ, नक़ाब को शर्म से क्या सरोकार? आँख की हया से बढ़कर कोई परदा ही नहीं। हमारे मुल्क में तो परदे का नाम नहीं; मगर हिंदोस्तान का तो बाबा आदम ही निराला है।

ख़ोजी—आपका मुल्क कौन? ज़रा आपके मुल्क का नाम तो सुनूँ!

आज़ाद—कशमीर। वही कशमीर जिसे शायरों ने दुनिया का फ़िरदौस माना है। वहाँ हिंदू-मुसलमान-औरतें बुरक़ा ओढ़कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकलती हैं; मगर यह नहीं कि औरतें घर के बाहर क़दम ही न रक्खें। यह रोग तो हिंदुस्तान ही में फैला है। हम तो जब तुर्की से आवेंगे, तो यहीं बिस्तर जमावेंगे, और हुस्नआरा को साथ लेकर आज़ादी के साथ हवा खायँगे।

ख़ोजी—यार, बात तो अच्छी है, मगर मेरी बीबी तो इस लायक़ ही नहीं कि हवा खिलाने ले जाऊँ। कौन अपने ऊपर तालियाँ बजवावे? फिर अब तो बूढ़ी हुई, और रंग भी ऐसा साफ़ नहीं।

आज़ाद—तो इसमें शरम की कौन-सी बात है? आप उनके काले मुँह से झेंपते क्यों हैं?

ख़ोजी—जब हब्श जाऊँगा, तो वहाँ हवा खिलाऊँगा। आप नई रोशनी के लोग हैं। आपकी हुस्नआरा आपसे भी बढ़ी हुई, जो देखे फड़क जाय कि क्या चाँद-सूरज की जोड़ी है। ऐसी शक्ल-सूरत हो, तो हवा खिलाने में कोई मुज़ायक़ा नहीं। हम अब क्या जोड़ दिखावें; न वह उमंग है, न वह तरंग।

आज़ाद—हम कहते हैं, बुआ ज़ाफ़रान को ब्याह लो, और एक टट्टू ले दो। बस, इसी तरह वह भी बाज़ारों में हवा खायँ।

ख़ोजी—(कान पकड़कर) या ख़ुदा, बचाइयो। पीच पी, हज़ार निआमत खाई। मारे चपतों के खोपड़ी गंजी कर दी थी। क्या वह भूल गया?

आज़ाद—यहाँ से बंबई भी तो क़रीब है।

ख़ोजी—अरे ग़ज़ब! क्या जहाज़ पर बैठना होगा? तो भई, मेरे लिये अफ़ीम ले दो।

पूने से बंबई तक दिन में कई गाड़ियाँ जाती थीं। दोनों आदमियों ने सराय में पहुँचकर खाना खाया, और बंबई रवाना हुए। शाम हो गई थी। एक होटल में जाकर ठहरे। आज़ाद तो दिन-भर के थके हुए थे, लेटते ही ख़र्राटे लेने लगे। ख़ोजी अफ़ीमची आदमी, नींद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहाँ ? इसी फ़िक्र में बैठे हुए थे कि नींद को क्योंकर बुलाऊँ। इतने में क्या देखते हैं कि एक लंबी-तड़ंगी, पँचहत्थी औरत चमकती-दमकती चली आती है। पूरे सात फ़ीट का क़द, न जौ-भर कम न जौ-भर ज़्यादा। धानी चादर ओढ़े, इठला-इठलाकर चलती हुई मियाँ ख़ोजी के पास आकर खड़ी हो गई। ख़ोजी ने उसकी तरफ़ नज़र डाली, तो उसने एक तीखी चितवन से उनको देखा, और आगे चली। आपको शरारत जो सूझी, तो सीटी बजाने लगे। सीटी की आवाज़ सुनते ही वह इनकी तरफ़ झुक पड़ी, और छमाछम करती हुई कमरे में चली आई। अब मियाँ ख़ोजी के हवास पैतरे हुए कि अगर आज़ाद की आँख खुल गई, तो ले ही डालेंगे; और जो कहीं रीझ गए, तो हमारी ख़ैरियत नहीं। हम बस, नींबू और नोन चाटकर रह जायँगे। इशारे से कहा—ज़री आहिस्ता-आहिस्ता बोलो।

औरत—अरे वाह मियाँ ! अच्छे मिले।

ख़ोजी—मियाँ आज़ाद सोए हुए हैं।

औरत—इनका बड़ा लिहाज़ करते हो ; क्या बाप हैं तुम्हारे ?

ख़ोजी – ख़ुदा के वास्ते चुप भी रहो।

औरत—चलो, हम-तुम दूसरी कोठरी में चलकर बैठें।

दोनों पास की एक कोठरी में जा बैठे। औरत ने अपना नाम केसर बतलाया, और बोली—अल्लाह जानता है, तुम पर मेरी जान जाती है। ख़ुदा की क़सम, क्या हाथ-पाँव पाए हैं कि जी चाहता है, चूम लूँ। मगर दाढ़ी मुड़वा डालो।

ख़ोजी—(अकड़कर) अभी क्या, जवानी में देखना हमको !

क्या ख़ूब, अभी जवानी शायद फिर आनेवाली है। कुछ ऊपर पचास का सिन हुआ, और आप अभी लड़के ही बने हुए हैं। उस औरत ने आपको उँगलियों पर नचाना शुरू किया; लेकिन आप समझे कि सचमुच रीझ ही गई। और भी बफलने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औरत—डील-डौल कितना प्यारा पाया है कि जी ख़ुश हो गया। मगर दाढ़ी मुड़वा डालो।

ख़ोजी—अगर मैं कसरत करूँ, तो अच्छे-अच्छे पहलवानों को लड़ा दूँ।

औरत—ज़रा कान तो फटफटा लो; शाबाश!

ख़ोजी—एक बात कहूँ, बुरा तो न मानोगी?

औरत—बुरा मानूँगी, तो ज़रा खोपड़ी सहला दूँगी।

ख़ोजी—जाँबख़्शी करो, तो कहूँ।

औरत—(चपत लगाकर) क्या कहता है, कह।

ख़ोजी—भई, यह धौल-धप्पा शरीफ़ों में जायज़ नहीं।

औरत—तुझ मुए को कौन निगोड़ी शरीफ़ समझती है।

एक चपत और पड़ी। ख़ोजी ने त्योरियाँ बदलकर कहा—भई, यह आदत मुझे पसंद नहीं। मुझे भी गुस्सा आ जायगा।

औरत—आँखें क्या नीली-पीली करता है? फोड़ दूँ दोनों आँखें?

ख़ोजी—अब हमारा मतलब तो इस झंझट में ख़ब्त हुआ जाता है। अब तो बताओ, कुछ माँगें, तो दोगी?

औरत—हाँ, क्यों नहीं, एक लप्पड़ इधर और दूसरा उधर। क्या माँगते हो?

ख़ोजी—कहना यह है कि...मगर कहते हुए दिल काँपता है।

औरत—अब मैं तुमको ठीक न बनाऊँ कहीं?

ख़ोजी—तुम्हारे साथ ब्याह करने को जी चाहता है।

औरत—ऐ, अभी तुम बच्चे हो। दूध के दाँत तक तो टूटे नहीं। ब्याह क्या करोगे भला?

ख़ोजी—वाह-वाह! मेरे दो बच्चे खेलते हैं। अभी तक इनके नज़दीक लौंडे ही हैं हम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औरत—अच्छा, कुछ कमाई-वमाई तो निकाल, और दाढ़ी मुड़वा।

ख़ोजी—(दस रुपए देकर) लो, यह हाज़िर है।

औरत—देखूँ। ऊँह, हाथी के मुँह में ज़ीरा।

ख़ोजी—लो, यह पाँच और लो। अजी, मैं तुमको बेगम बनाकर रक्खूँगा।

औरत—अच्छा, एक शर्त से शादी करूँगी। तड़के उठके मुझे सात बार सलाम करना, और मैं सात चपतें लगाऊँगी।

ख़ोजी—अजी, बल्कि और दस।

औरत—अच्छा, इसी बात पर कुछ और निकालो।

ख़ोजी—लो, यह पाँच और लो। तुम्हारे दम के लिये सब कुछ हाज़िर है।

औरत ने झट-से मियाँ ख़ोजी को गोद में उठा लिया, और बग़ल में दबाकर ले चली, तो ख़ोजी बहुत चकराए। लाख हाथ-पाँव मारे, मगर उसने जो दबाया, तो इस तरह ले चली, जैसे कोई चिड़ीमार जानवरों को फड़फड़ाते हुए ले चले। अब सारा ज़माना देख रहा है कि ख़ोजी फड़कते हुए जाते हैं, और वह औरत छम-छम करती चली जाती है।

ख़ोजी—अब छोड़ती है, या नहीं?

औरत—अब उम्र-भर तो छोड़ने का नाम न लूँगी। हम भलेमानसों की बहू-बेटियाँ छोड़ देना क्या जानें। बस, एक के सिर हो रहीं। भागे कहाँ जाते हो मियाँ?

ख़ोजी—मैं कुछ क़ैदी हूँ?

औरत—(चपत लगाकर) और नहीं, कौन है तू? अब मैं कहीं जाने भी दूँगी?

ख़ोजी पीछे हटने लगे, तो उसने पट्टे पकड़कर ख़ूब बेभाव की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाईं। अब यह झल्लाए, और गुल मचाया कि कोई है? लाना क्रौलो! बहुत-से तमाशाई खड़े हँस रहे थे।

१—क्या है मियाँ? यह धर-पकड़ कैसी!

औरत—आप कोई क़ाज़ी हैं? यह हमारे मियाँ हैं; हम चाहे चपतियाएँ, चाहे पीटें! किसी को क्या?

२—मेहरारू गर्दन दाबे उठाए लिए जात है, वह क्रौलो निकारत है।

ख़ोजी—बुरे फँसे! यारो, ज़रा मियाँ आज़ाद को सराय से बुलाना।

औरत ने फिर ख़ोजी को गोद में उठाया, और मशक की तरह पीठ पर रखकर "मशक दरियाव, ठंडा पानी" कहती हुई ले चली।

एक आदमी—कैसे मर्द हो जी! औरत से जीत नहीं पाते! सब इज़्ज़त डुबो दी बिलकुल।

ख़ोजी—अजी, इस औरत पर शैतान की फटकार। वह तो मरदों के कान काटती है।

इतने में मियाँ आज़ाद की नींद खुली, तो ख़ोजी ग़ायब। बाहर निकले, तो देखा, ख़ोजी को एक औरत दबाए खड़ी है। ललकार कर कहा—तू कौन है! उन्हें छोड़ती क्यों नहीं?

औरत ने ख़ोजी को छोड़ दिया, और सलाम करके आज़ाद से बोली—हुज़ूर, मेरा इनाम हुआ। मैं बहुरूपिया हूँ।

दूसरे दिन ख़ोजी मियाँ आज़ाद के साथ शहर की सैर करने चले, तो शहर-भर के लौंडे-लहाड़िए साथ, पीछे-पीछे तालियाँ बजाते जाते हैं। एक बोला—कहो चड्डा, बीबी ने चाँद गंजी कर दी न! हत् तेरे की! दूसरा बोला—कहो उस्ताद, खोपड़ी का क्या रंग है!

बेचारे ख़ोजी को रास्ता चलना मुशकिल हो गया। दो-चार आद-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मियाँ ने बहुरूपिए की तारीफ़ की, तो ख़ोजी जल-भुनकर ख़ाक हो गए। अब किसी से न बोलते हैं न चालते। दुम दबाए, डग बढ़ाए, गर्दन झुकाए पत्ता-तोड़ भाग रहे हैं। बारे ख़ुदा-ख़ुदा करके दोपहर को फिर सराय में आए। नीम की ठंडी-ठंडी छाँह में लेट गए, तो एक भठियारी ने मुसकिराके कहा—गाज पड़े ऐसी औरत पर, जो मियाँ को गोद में उठावे और बाज़ार-भर में नचावे। ग़रज़ सराय की भठियारियों ने ख़ोजी को ऐसा उँगलियों पर नचाया कि ख़ुदा की पनाह! ऐसे झेंपे कि क़रौली तक भूल गए।

इतने में क्या देखते हैं कि एक लंबे डील-डौल का ख़ूबसूरत जवान तमंचा कमर से लगाए, ऊदी पगड़ी सिर पर जमाए, बाँकी-तिरछी छवि दिखाता हुआ अकड़ता चला आता है। भठियारियाँ छिप-छिपके झाँकने लगीं। समझीं कि मुसाफ़िर है, बोलीं—मियाँ, इधर आओ, यहाँ बिस्तर जमाओ। मियाँ मुसाफ़िर, देखो, कैसा साफ़-सुथरा मकान है। पकरिया की ठंडी-ठंडी छाँह है, ज़रा तो तकलीफ़ होगी नहीं। सिपाही बोला—हमें बाज़ार से कुछ सौदा ख़रीदना है। कोई हमारे साथ चले, तो सौदा ख़रीदकर हम आ जायँ। एक भठियारी बोली—चलिए, हम चलते हैं। दूसरी बोली—लौंडी हाज़िर है। सिपाही ने कहा—मैं किसी पराई औरत को नहीं ले जाना चाहता। कोई पढ़ा-लिखा मर्द चले, तो पाँच रुपए दें। मियाँ ख़ोजी के कान में जो भनक पड़ी, तो कुलबुलाकर उठ बैठे, और कहा—मैं चलता हूँ, मगर पाँचों नक़द गिनवा दीजिए। मैं अलसेठ से डरता हूँ। सिपाही ने झट-से पाँचों गिन दिए। रुपए तो ख़ोजी ने टेंट में रक्खे, और सिपाही के साथ चले। रास्ते में जो इन्हें देखता है, क़हक़हा लगाता है—बचा की खोपड़ी जानती होगी, छठी का दूध याद आ गया होगा! जब चारों ओर से बौछारें पड़ने लगीं, तो ख़ोजी बहुत ही झल्लाए, और ग़ुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मचाकर एक-एक को डाँटने लगे। चलते-चलते एक अफ़ीम की दूकान पर पहुँचे।

सिपाही—कहो भई जवान, है शौक़? पिलवाऊँ?

ख़ोजी—अजी, मैं तो इस पर आशिक़ हूँ।

सिपाही ने मियाँ ख़ोजी को ख़ूब अफ़ीम पिलाई। जब ख़ूब सरूर गँठे, तो सिपाही ने उनको साथ लिया, और चला। बातें होने लगीं। ख़ोजी बोले—भई, अफ़ीम पिलाई है, तो मिठाई भी खिलवाओ। एहसान करे, तो पूरा।

सिपाही—अजी, अभी लो। ये चार गंडे की पँचमेल मिठाई हलवाई की दूकान से लाओ।

हलवाई की दूकान से ख़ोजी ने लड़-लड़के ख़ूब मिठाई ली, और झूमते हुए चले। भूख के मारे रास्ते ही में डलियाँ निकालकर चखनी शुरू कर दीं। सिपाही कनखियों से देखता जाता था; मगर आँख चुरा लेता था। आख़िर दोनों आदमी एक बज़ाज़ की दूकान पर पहुँचे। सिपाही ने ख़ोजी की तरफ़ इशारा करके कहा—इनके अँगरखे के बराबर जामदानी निकाल दीजिए।

बज़ाज़—हुज़ूर, अपने अँगरखे के लिये लें, तो कुछ हमें भी मिल रहे। इनका तो अँगरखा और पाजामा सब गज़-भर में तैयार है।

ख़ोजी—निकालो जामदानी, निकालो। बहुत बातें न बनाओ। अभी एक धक्का दूँ, तो पचास लुढ़कनियाँ खाओ।

बज़ाज़—लीजिए, क्या जामदानी है! बहुत बढ़िया! मोल-तोल दस रुपए गज़। मगर सात रुपए गज़ से कौड़ी कम न होगी।

सिपाही—भई, हम तो पाँच रुपए के दाम देंगे।

बज़ाज़—अब तकरार कौन करे। आप छः के दाम दे दें।

सिपाही—अच्छा, दो गज़ उतार दो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिपाही ने बज़ाज़ से सब मिलाकर कोई पचीस रुपए का कपड़ा लिया, और गट्ठा बाँधकर उठ खड़ा हुआ।

बज़ाज़—रुपए ?

सिपाही—अभी घर से आकर देंगे ? ज़रा कपड़े पसंद तो करा लावें। यह हमारा साला बैठा है, हम अभी आए।

वह तो ले-देकर चल दिया। ख़ोजी अकेले रह गए। जब बहुत देर हो गई, तो बज़ाज़ ने गर्दन नापी—कहाँ चले आप! कहाँ, चले कहाँ ?

ख़ोजी—हम क्या किसी के गुलाम हैं ?

बज़ाज़—गुलाम नहीं हो और हो कौन ? तुम्हारे बहनोई तुमको बिठाकर कपड़ा ले गए हैं।

ख़ोजी पीनक से चौंके थे। सिपाही और बज़ाज़ में जब बातें हो रही थीं तब वह पीनक में थे। झल्लाकर बोले—अबे, किसका बहनोई ? और कौन साला ? कुछ वाही हुआ है ?

इतने में एक आदमी ने आकर ख़ोजी से कहा—तुम्हारे बहनोई तुम्हें यह ख़त दे गए हैं। ख़ोजी ने खोलकर पढ़ा तो लिखा था—

हत् तेरे की, क्यों खा गया न झाँसा। देख, अब की फिर फाँसा। तब की बीवी बनके चपतियाया, अब की बहनोई बनके झाँसा दिया। और अफ़ीम खाओगे ?

ख़ोजी 'अरे !' करके रह गए। वाह रे बहुरूपिए, अच्छा घनचक्कर बनाया। ख़ैर, और तो जो हुआ, वह हुआ, अब यहाँ से छुटकारा कैसे हो। बज़ाज़ इस दम टुटरूँ-टूँ, और क़रौली पास नहीं। मगर एक दफ़े रोब जमाने की ठानी। दूकान के नीचे उतरकर बोले—इस फेर में भी न रहना! मैंने बड़े-बड़ों की गर्दनें ढीली कर दी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बज़ाज़—यह रोब किसी और पर जमाइएगा। जब तक आपके बहनोई न आवेंगे, दूकान से हिलने न दूँगा।

बारे थोड़ी ही देर में एक आदमी ने आकर बज़ाज़ को पचीस रुपए दिए, और कहा—अब इनको छोड़ दीजिए।

चौंतीसवाँ परिच्छेद

इधर तो ये बातें हो रही थीं, उधर आज़ाद से एक आदमी ने आकर कहा—जनाब, आज मेला देखने न चलिएगा? वह-वह सूरतें देखने में आती हैं कि देखता ही रह जाय।

नाज़ से पायँचे उठाए हुए, शर्म से जिस्म को चुराए हुए।
नशए-बादए-शबाब से चूर, चाल मस्ताना हुस्न पर मगरूर।
सैकड़ों बल कमर को देती हुई, जाने ताऊस कब्क लेती हुई

चलिए, और मियाँ ख़ोजी को साथ लीजिए। आज़ाद रँगीले थे ही, चट तैयार हो गए। सज-धजकर अकड़ते हुए चले। कोई पचास क़दम चले होंगे कि एक झरोखे से आवाज़ आई—

ख़ुदा जाने यह आराइश करेगी क़त्ल किस-किसको;
तलब होता है शानः आइने को याद करते हैं।

मियाँ आज़ाद ने जो ऊपर नज़र की, तो झरोखे का दरवाज़ा ख़ोजी की आँख की तरफ़ बंद हो गया। आज़ाद हैरान कि ख़ुदा यह माजरा क्या है! यह जादू था, छलावा था, आख़िर था क्या! आज़ाद के साथी ने यह रंग देखा, तो आहिस्ते से कहा—हज़रत, इस फेर में न पड़िएगा।

इतने में देखा कि वही नाज़नीन फिर नक़ाब उठाए झरोखे पर आ खड़ी हुई, और अपनी महरी से बोली—फ़ीनस तैयार कराओ, हम मेले जायँगे।

आज़ाद कुछ कहनेवाले ही थे कि ऊपर से एक काग़ज़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीचे आया। आज़ाद ने दौड़कर उठाया, तो मोटे क़लम से लिखा था—

"दिल्लगी करती हैं परियाँ मेरे दीवाने मे"

आज़ाद पढ़ते ही उछल पड़े। यह शेर पढ़ा—

"हम ऐसे हो गए अल्लाहो-अकबर! ऐ तेरी कुदरत;
हमारे नाम से अब हाथ वह कानों पै धरते हैं।"

इतने में एक महरी अंदर से आई, और मुसकिराकर मियाँ आज़ाद को इशारे से बुलाया। आज़ाद ख़ुश-ख़ुश महताबी पर पहुँचे, तो दिल बाग़-बाग़ हो गया। देखा, एक हसीना बड़े ठाट-बाट से एक कुर्सी पर बैठी है। मियाँ आज़ाद को कुर्सी पर बैठने का इशारा किया, और बोली—मालूम होता है, आप चोट खाए हुए हैं; किसी के ज़ुल्फ़ में दिल फँसा है—

खुलते हैं कुछ इश्तियाक़ के तौर;
रुख़ मेरी तरफ़, नज़र कहीं और।

आज़ाद ने देखा तो इस नाज़नीन की शक्ल व सूरत हुस्नआरा से मिलती थी। वही सूरत, वही गुलाब-सा चेहरा! वही नशीली आँखें! बाल-बराबर भी फ़र्क़ नहीं। बोले—बरसों इस कूचे की सैर की, मगर अब तो दिल फँसा चुके।

हसीना—तो बिसमिल्लाह, जाइए।

आज़ाद—जैसी हुज़ूर की मरज़ी।

हसीना—वाह री, बददिमाग़ी! कहिए, तो आपका कच्चा चिट्ठा कह चलूँ? मियाँ आज़ाद आप ही का नाम है न? हुस्नआरा से आप ही की शादी होनेवाली है न?

आज़ाद—ये बातें आपको कैसे मालूम हुईं?

हसीना—क्यों, क्या पते की कही। अब बता ही दूँ? हुस्नआरा मेरी छोटी चचाज़ाद बहन है। कभी-कभी ख़त आ जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने आपकी तसवीर भेजी है, और लिखा है कि उन्हें बंबई में रोक लेना। अब आप हमारे यहाँ ठहरें। मैं आपको आज़माती थी कि देखूँ कितने हैं। अब मुझे यक़ीन आ गया कि हुस्नआरा से आपको सच्ची मुहब्बत है।

आज़ाद—तो फिर मैं यहीं उठ आऊँ ?

हसीना—ज़रूर।

आज़ाद—शायद आपके घर में किसी को नागवार गुज़रे।

हसीना—वाह, आप ख़ूब जानते हैं कि कोई शरीफ़ज़ादी किसी अजनबी आदमी को इस तरह बेधड़क अपने यहाँ न बुलवावेगी। क्या मैं नहीं जानती कि तुम्हारे भाई साहब किसी ग़ैर आदमी को बैठे देखेंगे, तो उनकी आँखों से ख़ून टपकने लगेगा। मगर वह तो ख़ुद इस वक़्त तुम्हारी तलाश में निकले हैं। बहुत देर से गए हुए हैं, आते ही होंगे। अब आप मेरे आदमी को भेज दीजिए। आपका असबाब ले आवे।

आज़ाद ने ख़ोजी के नाम यह रुक़्क़ा लिखा—

"ख़्वाजा साहब,

असबाब लेकर इस आदमी के साथ चले आइए। यहाँ इत्तिफ़ाक़ से हुस्नआरा की बहन मिल गई। यार, हम-तुम दोनों हैं क़िस्मत के धनी। यहाँ अफ़ीम की दूकान भी क़रीब ही है।

तुम्हारा

आज़ाद।"

पैंतीसवाँ परिच्छेद

ख़ोजी ने दिल में ठान ली कि अब जो आवेगा, उसको ख़ूब ग़ौर से देखूँगा। अब की चकमा चल जाय, तो टाँग की राह निकल जाऊँ। दो दफ़े क्या जानें, क्या बात हो गई कि वह चकमा दे गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहाँ उड़ती चिड़िया पकड़नेवाले हैं। हम भी अगर यहाँ रहते होते, तो उस मरदूद बहुरूपिए को चचा ही बनाकर छोड़ते।

इतने में सामने एकाएक एक घसियारा घास का गट्ठा सिर पर लादे पसीने में तर आ खड़ा हुआ, और ख़ोजी से बोला—हजूर, घास तो नहीं चाहिए?

ख़ोजी—(खूब गौर से देखकर) चल, अपना काम कर। हमें घास-वास कुछ नहीं चाहिए। घास कोई और खाते होंगे।

घसियारा—ले लीजिए हजूर, हरी-हरी दूब है।

ख़ोजी—चल बे चल, हम पहचान गए। हमसे बहुत चकमेबाज़ी न करना बचा! अब की पलेथन ही निकाल डालूँगा। तेरे बहुरूपिए की दुम में रस्सा।

इत्तिफ़ाक़ से घसियारा बहरा था। वह समझा, बुलाते हैं। इनकी तरफ़ आने लगा। तब तो मियाँ ख़ोजी गुस्सा ज़ब्त न कर सके, और चिल्ला उठे—ओ गीदी, बस, आगे न बढ़ना; नहीं तो सिर धड़ से जुदा होगा। यह कहकर लपके, और गट्ठा पकड़कर चाहा कि घसियारे को चपत लगावें। उसने जो छुड़ाने के लिये ज़ोर किया, तो मियाँ ख़ोजी मुँह के बल ज़मीन पर आ रहे, और गट्ठा उनके ऊपर गिर पड़ा। तब आप गट्ठे के नीचे से गुर्राने लगे—अबे ओ गीदी, इतनी क़रौलियाँ भोंकूँगा कि छठी का दूध याद आ जायगा। बदमाश ने नाकों दम कर दिया। बारे बड़ी मुशकिल से आप गट्ठे के नीचे से निकले; और मुँह फुलाए बैठे थे कि आज़ाद का आदमी आकर बोला—चलिए, आपको मियाँ आज़ाद ने बुलाया है।

ख़ोजी—किससे कहता है? कम्बख़्त अब की सँदेसिया बनकर आया! तब की घसियारा बना था। पहले औरत का भेस बदला! फिर सिपाही बना। चल, भाग!

आदमी—रुक्का तो पढ़ लीजिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—मैं जलती-बलती लकड़ी से दाग़ दूँगा, समझे। मुझे कोई लौंडा मुक़र्रर किया है? तेरे-जैसे बहुरूपिए यहाँ जेब में पड़े रहते हैं।

आदमी ने जाकर आज़ाद से सारा हाल कहा—हुजूर, वह तो कुछ झल्लाए-से मालूम होते हैं। मैं लाख-लाख कहा किया, उन्होंने एक तो सुनी नहीं? बस, दूर-ही-दूर से गुर्राते रहे।

आज़ाद—ख़त का जवाब लाए?

आदमी—ग़रीबपरवर, कहता जाता हूँ कि क़रीब फटकने तो दिया नहीं, जवाब किससे लाता?

ये बातें हो ही रही थीं कि उस हसीना के शौहर आ पहुँचे, और कहने लगे—शहर-भर घूम आया, सैकड़ों चक्कर लगाए, मगर मियाँ आज़ाद का कहीं पता न चला। सराय में गया, तो वहाँ ख़बर मिली कि आए हैं। एक साहब बैठे हुए थे, उनसे पूछा, तो बड़ी दिल्लगी हुई। ज्यों ही मैं क़रीब गया, तो वह कुलबुलाकर उठ खड़े हुए—कौन? आप कौन? मैंने कहा—यहाँ मियाँ आज़ाद नामी कोई साहब तशरीफ़ लाए हैं? बोले—फिर आपसे वास्ता! मैंने कहा—साहब, आप तो काटे खाते हैं! तो मुझे ग़ौर से देखकर बोले—इस बहुरूपिए ने तो मेरे नाक में दम कर दिया। आज भलेमानस की सूरत बनाकर आए हैं।

बेगम—ज़री ऊपर आओ। देखो हमने मियाँ आज़ाद को घर बैठे बुलवा लिया। न कहोगे।

आज़ाद—आदाब बजा लाता हूँ।

मिरज़ा—हज़रत, आपको देखने के लिये आँखें तरसती थीं।

आज़ाद—मेरी वजह से आपको बड़ी तकलीफ़ हुई।

मिरज़ा—जनाब, इसका ज़िक्र न कीजिए। आपसे मिलने की मुद्दत से तमन्ना थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उधर मियाँ ख़ोजी अपने दिल में सोचे कि बहुरूपिए को कोई ऐसा चकमा देना चाहिए कि वह भी उम्र-भर याद करे। कई घंटे तक इसी फ़िक्र में ग़ोते खाते रहे। इतने में मिरज़ा साहब का आदमी फिर आया। ख़ोजी ने उससे ख़त लेकर पढ़ा, तो लिखा था—आप इस आदमी के साथ चले आइए, वर्ना बहुरूपिया आपको फिर धोखा देगा। भाई, कहा मानो, जल्द आओ। ख़ोजी ने आज़ाद की लिखावट पहचानी, तो असबाब वग़ैरह समेटकर ख़िदमतगार के सिपुर्द किया, और कहा—तू जा, हम थोड़ी देर में आते हैं। ख़िदमतगार तो असबाब लेकर उधर चला, इधर आप बहुरूपिए के मकान का पता पूछते हुए जा पहुँचे। इत्तिफ़ाक़ से बहुरूपिया घर में न था, और उसकी बीबी अपने मैके भेजने के लिये कपड़ों का एक पार्सल बना रही थी। तीस रुपए की एक गड्डी भी उसमें रख दी थी। पार्सल तैयार हो चुका, तो लौंडी से बोली—देख, कोई पढ़ा-लिखा आदमी इधर से निकले, तो इस पार्सल पर पता लिखवा लेना। लौंडी राह देख रही थी कि मियाँ ख़ोजी जा निकले।

ख़ोजी—क्यों नेकबख़्त, ज़रा पानी पिला दोगी?

लौंडी यह सुनते ही फूल गई। ख़ोजी की बड़ी ख़ातिरदारी की, पान खिलाया, हुक़्क़ा पिलाया और अंदर से पार्सल लाकर बोली—मियाँ, इस पर पता तो लिख दो।

ख़ोजी—अच्छा, लिख दूँगा। कहाँ जायगा? किसके नाम है? कौन भेजता है?

लौंडी—मैं बीबी से सब हाल पूछ आऊँ, तो बतलाऊँ।

ख़ोजी—अच्छी बात है, जल्द आना।

लौंडी दौड़कर पार्सल लाई, और पता-ठिकाना बताने लगी। ख़ोजी चकमा देने तो गए ही थे, झट पार्सल पर अपना लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का पता लिख दिया, और अपनी राह ली। लौंडी ने फ़ौरन् डाक-ख़ाने में पार्सल दिया, और रजिस्ट्री कराके चलती हुई। थोड़ी देर के बाद बहुरूपिया जो घर में घुसा, तो बीबी ने कहा—तुम भी बड़े भुलक्कड़ हो। पार्सल पर पता तो लिखा ही न था। हमने लिखवाकर भेज दिया।

बहुरूपिया—देखूँ, रसीद कहाँ है। (रसीद पढ़कर) ओफ़! मार डाला। बस ग़ज़ब ही हो गया।

बीबी—ख़ैर तो है!

बहुरूपिया—तुमसे क्या बताऊँ? यह वही मर्द है, जिससे मैंने कई रुपए ऐंठे थे। बड़ा चकमा दिया।

पैंतीसवाँ परिच्छेद

मियाँ आज़ाद मिरज़ा साहब के साथ जहाज़ की फ़िक्र में गए। इधर ख़ोजी ने अफ़ीम की चुस्की लगाई, और पलँग पर दराज़ हुए। ज़बन लौंडी जो बाहर आई, तो हज़रत को पीनक में देखकर ख़ूब खिलखिलाई, और बेगम से जाकर बोली—बीबी, ज़री परदे के पास आइए, तो लोट-लोट जाइए। मुआ ख़ोजी अफ़ीम खाए औंधे मुँह पड़ा हुआ है। ज़री आइए तो सही। बेगम ने परदे के पास से झाँका, तो उनको एक दिल्लगी सूझी। झप-से एक बत्ती बनाई और ज़बन से कहा कि तू चुपके-से इसकी नाक में बत्ती कर। ज़ैबन एक ही शरीर; विष की गाँठ। वह जाकर बत्ती में तीता मिर्च लगा लाई, और ख़ोजी की खटिया के नीचे घुसकर मियाँ ख़ोजी के नाक में आधी बत्ती दाख़िल ही तो कर दी। उफ़! इस वक़्त मारे हँसी के लिखा नहीं जाता। ख़ोजी जो कुलबुलाकर उठे, तो आःछी, छीं-छीं ओ गेंद-आँःछीः। ओ गीदी कहने को थे कि छींक आ गई, और बिगड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ ना—आछी। ओ नामाकूल कहने को थे कि छींक ने ज़बान बंद कर दी। इत्तिफ़ाक़ से पड़ोस में एक पुराने फ़ैशन के भले आदमी नौकरी की तलाश में एक हाकिम के पास जानेवाले थे। वह जैसे ही सामने आए, वैसे ही ख़ोजी ने छींका। बेचारे अंदर चले गए। पान खाया, ज़रा देर इधर-उधर टहले। फिर ड्योढ़ी तक पहुँचे थे कि छींक पड़ी। फिर अंदर गए। चिकनी डली खाई। रवाना होने ही को थे कि इधर आःछीं की आवाज़ आई, और उधर बीबी ने लौंडी दौड़ाई कि चलिए, अंदर बुलाती हैं। अंदर जाके उन्होंने जूते बदले, पानी पिया, और रुख़सत हुए। बाहर आकर इक्के पर बैठने ही को थे कि ख़ोजी ने नाक की दुनाली बंदूक़ से एक और फ़ैर दाग़ दी। तब तो वह बहुत ही झल्लाए। हत् तेरी नाक काटूँ और पाऊँ तो कान भी साफ़ कतर लूँ। मर्दक ने मिर्चों की नास ली है क्या? नाक क्या नकछींकनी की झाड़ी है। मनहूस ने घर से निकलना मुशकिल कर दिया। बीबी अंदर से बोलीं कि नाक ही कटे मुए की। ज़री ज़ैबन को बुलाकर पूछो तो कि यह किस नकटे को बसाया है? अल्लाह करे, गधे की सवारी नसीब हो।

मियाँ-बीबी पानी पी-पीकर बेचारे को कोस रहे थे। उधर ख़ोजी का छींकते-छींकते हुलिया बिगड़ रहा था। बेगम साहबा घर के अंदर हँसी के मारे लोटी पड़ती थीं। मगर वाह री ज़ैबन, वह दम साधे अब तक चारपाई के नीचे दबकी पड़ी थी। मगर मारे हँसी के बुरा हाल था। जब छींकों का ज़ोर ज़रा कम हुआ, तो उन्होंने ग़ुल मचाया—ओ गीदी, भला बे बहुरूपिए, निकाली न कसर तूने! अच्छा बचा, चचा ही बनाकर छोड़ूँ तो सही। चारपाई से उठे, मुँह-हाथ धोया। ठंडे-ठंडे पानी से ख़ूब तरेड़े दिए; खोपड़ी पर ख़ूब पानी डाला, तब ज़रा तसकीन हुई। बैठकर बहुरूपिए को कोसने लगे—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ुदा करे, साँप काटे मरदूद को। न-जाने मेरे साथ क्या ग़ि पड़ गई है। कल तेरे छप्पर पर चिनगारी न रख दी, तो कहना।

यों कोसते हुए उन्होंने सब दरवाज़े बंद कर लिए कि बहुरूपिय फिर न आ जाय। अब तो ज़ैबन चकराई। कलेजा धक-धक करने लगा, और क़रीब था कि चीख़कर निकल भागे, मगर जब मियाँ ख़ोजी चारपाई पर दराज़ हो गए, और नाक पर हाथ रख लिया, तो ज़ैबन की जान में जान आई। चुपके-से खिसकती हुई निकलीं, और अंदर भागी।

बेगम—जाओ, फिर नाक में बत्ती करो।

ज़ैबन—ना बीबी, अब मैं नहीं जाने की। सिड़ी-सौदाई आदमी के मुँह कौन लगे।

ज़ैबन का देवर दस बरस का छोकड़ा बड़ा ही शरीर था। नस-नस में शरारत भरी हुई थी। कमरे में जाके झाँका, तो देखा, हज़रत पीनक ले रहे हैं। कुत्ता घर में बँधा था। झट उसको ज़ंजीर से खोल ज़ंजीर में रस्सी बाँधी, और बाहर ले जाकर चारपाई के पाए में कुत्ते को बाँध दिया। ख़ोजी की टाँग में भी वही रस्सी बाँध दी, और चंपत हो गया। कुत्ते ने जो भूँकना शुरू किया, तो ख़ोजी चौंककर उठे। देखते हैं तो टाँग में रस्सी और रस्सी में कुत्ता। अब इधर ख़ोजी चिल्लाते हैं, उधर कुत्ता चिल्ल-पों मचाता है। ज़ैबन दौड़ी हुई घर में से आई। ख़ैर तो है! क्या हुआ? अरे, तुम्हारी टाँग में कुत्ता कौन बाँध गया?

ख़ोजी—यह उसी बहुरूपिए मर्दक का काम है, किसी और को क्या पड़ी थी?

ज़ैबन—मगर मुआ आया किधर से? किवाड़े तो सब बंद पड़े हुए हैं।

ख़ोजी—यही तो मुझे भी हैरत है। मगर अब की मैंने भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाक पर इस ज़ोर से हाथ रक्खा कि बहुरूपिया भी मेरा लोहा मान गया होगा। यह तो सोचो कि आया किस तरफ़ से?

ज़ैबन—मियाँ, कहते डर मालूम होता है। इस जगह एक शैतान रहता है।

ख़ोजी—शैतान! अर्जी नहीं, यह उस बहुरूपिए ही का काम है।

ज़ैबन—अब तुम यों थोड़े ही मानोगे। एक दिन शैतान चारपाई उलट देगा, तो मालूम होगा।

ख़ोजी—यह बात थी, तो अब तक हमसे क्यों न कहा भला! जान लोगी किसी की?

ज़ैबन—मैं भी कहूँ कि बंद दरवाज़े से कुत्ता आया कैसे? मेरा माथा ठनका था, मुदा बोली नहीं।

ख़ोजी—अब आज़ाद आवें, तो उनको आड़े-हाथों लूँ। वह भूत-चुड़ैल एक के भी क़ायल नहीं। सोएँ तो मालूम हो।

ख़ोजी तो इसी फ़िक्र में बैठे-बैठे पीनक लेने लगे। आज़ाद और मिरज़ा साहब आए, तो उन्हें ऊँघते देखकर दोनों हँस पड़े।

आज़ाद—(ख़ोजी के कान में) क्या पहुँच गए?

ख़ोजी ने हाँक लगाई—"बहुरूपिया, बहुरूपिया", और इस ज़ोर से आज़ाद का हाथ पकड़ लिया कि अपने हिसाब चोर को गिरफ़्तार किया था। आँखें तो हज़रत की बंद हैं, मगर बहुरूपिया-बहुरूपिया गुल मचाते जाते हैं। मियाँ आज़ाद ने इस ज़ोर से झटका दिया कि हाथ छूट गया, और ख़ोजी फट-से मुँह के बल ज़मीन पर आ रहे। आज़ाद ने गुल मचाया कि भागा, भागा, वह बहुरूपिया भागा जाता है। ख़ोजी भी 'लेना-लेना' कहते हुए लपके। दस ही-पाँच क़दम चलकर आप हाँप गए, और बोले—"निकल गया, निकल गया।" मैंने तो गर्दन नापी थी, मगर नाली बीच में आ गई, इससे बच गया, वर्ना पकड़ ही लेता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—अजी, मैं तो देख ही रहा था कि आप बहुरूपिए के कल्ले तक पहुँच गए थे।

इतने में एक क़ाज़ी साहब मियाँ आज़ाद से मिलने आए। आज़ाद ने नाम पूछा, तो बोले—मुहम्मद अब्दुल क़ुद्दूस।

ख़ोजी—क्या! उस्तु खुद्दूस! यह नई गढ़त का नाम है।

आज़ाद—निहायत गुस्ताख़ आदमी हो तुम। बस, चोंच सँभालो।

ख़ोजी की आँखें बंद थीं। जब आज़ाद ने डाँट बताई, तो आप ने आँखें खोल दीं। क़ाज़ी साहब पर नज़र पड़ी। देखते ही आग हो गए, और बकने लगे—और देखिएगा ज़रा, मरदूद आज मौलाना बनकर आया है। भई गिरगिट के-से रंग बदलता है। उस दिन घसियारा बना था; आज मौलवी बन बैठा।

क़ाज़ी साहब बहुत झेंपे। मगर आज़ाद ने कहा कि जनाब, यह दीवाना है। यों ही ऊल-जलूल बका करता है।

जब क़ाज़ी साहब चले गए, तब आज़ाद ने ख़ोजी को खूब ललकारा—नामाक़ूल! बिना देखे-भाले बेसमझे-बूझे, जो चाहता है, बक देता है। कुछ पढ़े-लिखे होते, तो आदमियों की क़द्र करते। लिखे न पढ़े, नाम मुहम्मद फ़ाज़िल।

ख़ोजी—जी हाँ, बस, अब एक आप ही तो बड़े लुक़मान बने हैं। हमको यह समझते हैं कि कोई गधा है। और यहाँ अरबी चाटे बैठे हैं। अफ़आल, फ़ालुआ, मा फ़ालअत। और सुनिए—ग़ल्लम, ग़ल्लमा, ग़ल्लमू।

मिरज़ा—यह कौन सीग़ा है भाई?

ख़ोजी—जी, यह सीग़ा अल्लम-ग़ल्लम है। यहाँ दीवान के दीवान ज़बान पर हैं। मगर मुफ़्त की शेख़ी जताने से क्या फ़ायदा!

मिरज़ा साहब के घर के सामने एक तालाब था। ख़ोजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी अपने कमाल की डींग मार ही रहे थे कि शोर मचा—एक लड़का डूब गया। दौड़ो, दौड़ो। पैराक अपने करतब दिखाने लगे। कोई पुल पर से कूदा धम। कोई चबूतरे से आया तड़। कोई मल्लाही पीरता है, कोई खड़ी लगा रहा है। नौसिखिए अपने किनारे ही पर हाथ-पाँव मारते हैं, और डरपोक आदमी तो दूर ही से सैर देख रहे हैं। भई, पानी और आग से ज़ोर नहीं चलता। इनसे दूर ही रहना चाहिए।

आज़ाद ने जो शोर सुना तो दौड़े हुए पुल पर आए, और धम-से कूद पड़े। ग़ोता लगाते ही उस लड़के का हाथ मिल गया। निकाल-कर किनारे लाए, तो देखा, जान बाक़ी है। लोगों ने मिलकर उसको उलटा लटकाया। जब पानी निकल गया, तो लड़के को होश आया।

अब सुनिए कि वह लड़का बंबई के एक पारसी रईस रुस्तम-जी का एकलौता लड़का था। अभी आज़ाद लड़के को होश में लाने की फ़िक्र ही कर रहे थे कि किसी ने जाकर रुस्तमजी को यह ख़बर सुनाई। बेचारे दौड़े हुए आए, और आज़ाद को गले से लगा लिया।

रुस्तम—आपने अपने लड़के को डूबने से बचाया। हम आप-का बहुत शुक्रगुज़ार है।

आज़ाद—अगर आपस में इतनी हमदर्दी भी न हो, तो आदमी ही क्या?

ख़ोजी—सच है, सच है। हम-ऐसे शेरों के तुम-ऐसे शेर ही होते हैं। मैं भी अगर यहाँ होता, तो ज़रूर कूद पड़ता। मगर यार, अब दुआ माँगनी पड़ी कि यह मोटी तोंदवाला भी किसी दिन ग़ोता खाय, तो फिर यारों के गहरे हैं।

आज़ाद—(पारसी से) मैं बड़े मौक़े से पहुँच गया।

रुस्तम—अपने को बड़ा ख़ुशी का बातचीत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—कुछ उल्लू का पट्ठा मालूम होता है।

रुस्तम—काल आप आवे, तो हमारा लेडी लोग आपको गाना सुनावे।

ख़ोजी—अजी, क्या बेवक़्त की शहनाई बजाते हो। अजी, कुछ अफ़ीम घोलो, चुस्की लगाओ, मिठाई मँगवाओ। रईस को दुम बने हैं।

आज़ाद—कल मैं ज़रूर आऊँगा।

रईस—आप तो अपना का बाप है।

ख़ोजी—बल्कि दादा। ख़ूब पहचाना, वाह पट्ठे।

रुस्तमजी आज़ाद से यह वादा लेकर चले गए, तो ख़ोजी और आज़ाद भी घर आए। शाम को रुस्तमजी ने पाँच हज़ार रुपयों की एक थैली आज़ाद के पास भेजी, और ख़त में लिखा कि आप इसे ज़रूर क़बूल करें। मगर आज़ाद ने शुक्रिए के साथ लौटा दिया।

छत्तीसवाँ परिच्छेद

ज़रा ख़्वाजा साहब की क़िता देखिएगा। वल्लाह, इस वक़्त फ़ोटो उतारने के क़ाबिल हैं। न हुआ फ़ोटो। सुबह का वक़्त है। आप खारुए की एक लुंगी बाँधे पीपल के दरख़्त के साए में खटिया बिछाए ऊँघ रहे हैं, मगर गुड़गुड़ी भी एक हाथ से थामे हैं। चाहे पिएँ न; मगर चिलम पर कोयले दहकते रहें। इत्तिफ़ाक़ से एक चील ने दरख़्त पर से बीट कर दी। तब आप चौंके, और चौंकते ही आग हो गए। बहुत उछले-कूदे, और इतना गुल मचाया कि मुहल्ला-भर सिर पर उठा लिया। हत् तेरे गीदी की, हमें भी कोई वह समझ लिया है। आज चील बनकर आया है। क़रौली तो वहाँ तक पहुँचेगी न; तोड़ेदार बंदूक़ होती, तो वह ताकके निशाना लगाता कि याद ही करता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—यह किस पर गर्म हो रहे हो ख़्वाजा साहब ?

ख़ोजी—और ऊपर से पूछते हो, किस पर गर्म हो रहे हो ? गर्म किस पर होंगे ! वही बहुरूपिया है, जो मौलवी बनकर आया था।

मिरज़ा—तो फिर अब उसे कुछ सज़ा दीजिए।

ख़ोजी—सज़ा क्या ख़ाक दूँ ! मैं ज़मीन पर, वह आसमान पर। कहता तो हूँ कि तोड़ेदार बंदूक़ मँगवा दीजिए, तो फिर देखिए, कैसा निशाना लगाता हूँ। मगर आपको क्या पड़ी है ? जायगी तो ग़रीब ख़्वाजा के माथे ही।

मिरज़ा—हम बतावें, एक ज़ीना मँगवा दें, और आप पेड़ पर चढ़ जायँ; भागकर जायगा कहाँ ?

ख़ोजी—(उछलकर) लाना हाथ।

मिरज़ा साहब ने आदमी से कहा कि बड़ा ज़ीना अंदर से ले आओ; मगर जल्द लाना। ऐसा न हो कि बैठ रहो।

ख़ोजी—हाँ, मियाँ, इसी साल आना। मेरे यार, देखो, ऐसा न हो कि गीदी भाग निकले।

आदमी जब अंदर सीढ़ी लेने गया, तो बेगम ने पूछा—सीढ़ी क्या होगी ?

आदमी—हुज़ूर, वही जो सिड़ी हैं ख़फ़क़ान, उन पर कहीं चील ने बीट कर दी ; सो अब सीढ़ी लगाकर पेड़ पर चढ़ेंगे।

बेगम हँसोड़ औरत, ख़ूब ही खिलखिलाईं, और फ़ौरन् छत पर जा पहुँचीं। आबी दुपट्टा खिसका जाता है, जूड़ा खुला पड़ता है और ज़ैबन को ललकार रही हैं कि उससे कहो, जल्द सीढ़ी ले जाय। मियाँ ख़ोजी ने सीढ़ी देखी, तो कमर कसी, और काँपते हुए ज़ीने पर चढ़ने लगे। जब आख़िरी ज़ीने पर पहुँचकर दरख़्त की टहनी पर बैठे, तो चील की तरफ़ मुँह करके बोले—गाँस लिया, गाँस लिया; फाँस लिया, फाँस लिया, हत् तेरे गीदी की, अब जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहाँ है ? ले, अब मैं भी कल्ले पर आ पहुँचा। बचा, आज ही तो फँसे हो। रोज़ झाँसे देकर उड़ंछू हो जाया करते थे। अब सोचो तो, जाओगे किधर से ? ले, आइए, बस, अब चोट के सामने। मैंने भी क़रौली तेज़ कर रक्खी है।

इतने में पीछे फिरकर जो देखते हैं, तो ज़ीना ग़ायब। लगे सिर पीटने। इधर चील भी फुर-से उड़ गई। इधर के रहे न उधर के। बेगम साहबा ने जो यह कैफ़ियत देखी, तो तालियाँ बजा-बजाकर हँसने लगीं।

ख़ोजी—यह मिरज़ा साहब कहाँ गए ? ज़री चार आँखें तो कीजिए हमसे। आख़िर हमको आसमान पर चढ़ाकर ग़ायब कहाँ हो गए ? अरे यारो, कोई साँस-डकार ही नहीं लेता। अरे मियाँ आज़ाद ! मिरज़ा साहब ! कोई है, या सब मर गए ? आख़िर हम कब तक कहाँ टँगे रहें ?

बेगम—अल्लाह करे पीनक आवे।

ख़ोजी—यह कौन बोला ? (बेगम को देखकर) वाह हुज़ूर, आपको तो ऐसी दुआ न देनी चाहिए।

मियाँ आज़ाद सोचे कि ख़ोजी अफ़ीमी आदमी, ऐसा न हो, पाँव डगमगा जायँ, तो मुफ़्त का ख़ून हमारी गर्दन पर हो। आदमी से कहा—ज़ीना लगा दो। बेगम ने जो सुना, तो हज़ारों क़समें दीं — ख़बरदार, सीढ़ी न लगाना। बारे सीढ़ी लगा दी गई, और ख़ोजी नीचे उतरे। अब सबसे नाराज़ हैं। सबको आँखें दिखा रहे हैं— आप लोगों ने क्या मुझे मसख़रा समझ लिया है ! आप लोगों-जैसे मेरे लड़के होंगे।

इतने में एक आदमी ने आकर मिरज़ा साहब को सलाम किया।

मिरज़ा—बंदगी। कहाँ रहे सलारी, आज तो बहुत दिन के बाद दिखाई दिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सलारी—कुछ न पूछिए खुदावंद, बड़ी मुसीबत में फँसा हूँ।

मिरज़ा—क्या है क्या ? कुछ बताओ तो ?

सलारी—क्या बताऊँ, कहते शर्म आती है। परसों मेरा दामाद मेरी लड़की को लिए गाँव जा रहा था। जब थाने के क़रीब पहुँचा, तो थानेदार साहब घोड़े पर सवार होकर कहीं जा रहे थे। इनको देखते ही बाग रोक ली, और मेरे दामाद से पूछा—तुम कौन हो ? उसने अपना नाम बताया। अब थानेदार साहब इस फ़िक्र में हुए कि मेरी लड़की को बहलाकर रख लें, और दामाद को धता बता दें। बोले—बदमाश, यह तेरी बीबी नहीं हो सकती। सच बता, यह कौन है ? और तू इसे कहाँ से भगा लाया है ?

दामाद—यह मेरी जोरू है।

थानेदार—सुअर, हम तेरा चालान कर देंगे। तेरी ऐसी क़िस्मत कहाँ कि यह हसीना तुझको मिले ! अगर तू हमारी नौकरी कर ले तो अच्छा; नहीं तो हम चालान करते हैं। (औरत से) तुम कौन हो, बोलो।

दामाद—दारोग़ाजी, आप मुझसे बातें कीजिए। उससे न बोलिए।

मेरी लड़की मारे शर्म के गड़ी जाती थी गर्दन झुकाकर थर-थर काँपती थी। अपने दिल में सोचती थी कि अगर ज़मीन में गढ़ा हो जाता, तो मैं धँस जाती। सिपाही अलग ललकार रहा है, और थानेदार अलग कल्ले पर सवार।

दामाद—मेरे साथ किसी सिपाही को भेज दीजिए। मालूम हो जाय कि यह मेरी ब्याहता बीबी है या नहीं।

थानेदार—चुप बदमाश, मैं बदमाशों की आँख पहचान जाता हूँ। तुम कहाँ के ऐसे खुशनसीब हो कि ऐसी परी तुम्हारे हाथ आई। यह सब बनावट की बातें हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिपाही—हाँ दारोग़ाजी, यही बात है।

आख़िर थानेदार साहब मेरी लड़की को एक दरख़्त की आड़ में ले गए, और सिपाही ने मेरे दामाद को दूसरी तरफ़ ले जाके खड़ा किया। थानेदार बोला—बीबी, ज़रा गर्दन तो उठाओ। भला तुम इस परकटे के क़ाबिल हो! ख़ुदा ने चेहरा तो नूर-सा दिया है, लेकिन शौहर लंगूर-सा।

लड़की—मुझे वह लंगूर ही पसंद है।

इधर तो थानेदार साहब यह इज़हार ले रहे थे, उधर सिपाही मेरे दामाद को और ही पट्टी पढ़ा रहे थे। भाई, सुनो, सूबेदार साहब के सामने तो मैं उनकी-सी कह रहा था। न कहूँ, तो जाऊँ कहाँ? मगर इनकी नीयत बहुत ख़राब है। छटा हुआ गुरगा है।

दामाद—और कुछ नहीं, बस, मैं समझ गया कि फाँसी ज़रूर पाऊँगा। अब तो मुझे चाहे जाने दे या न जाने दे, मैं इसे बेमारे न रहूँगा। अब बेइज़्ज़ती में बाक़ी क्या रह गया।

थानेदार—सिपाही, सिपाही, यह कहती हैं कि यह आदमी इन्हें भगा लाया है।

लड़की—जिसने यह कहा हो, उस पर आसमान फट पड़े।

दामाद—अब आपकी मरज़ी क्या है? जो हो, साफ़-साफ़ कहिए।

ख़ैर, थानेदार साहब एक कुर्सी पर डट गए, और मेरी लड़की से कहा कि तुम इस सामनेवाली कुर्सी पर बैठो। अब ख़याल कीजिए कि गृहस्थ औरत बिना घूँघट निकाले कुएँ तक पानी भरने भी नहीं जाती, वह इतने आदमियों के सामने कुर्सी पर कैसे बैठती। सिपाही झुक-झुककर देख रहे थे, और वह बेचारी गर्दन झुकाए बुत की तरह खड़ी थी। तब थानेदार ने धमकाकर कहा—तुम दस बरस के लिये भेज जाओगे। पूरे दस बरस के लिये!

दामाद—जब कोई जुर्म साबित हो जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थानेदार—हाँ, आप क़ानून भी जानते हैं ? तो हम अब ज़ाब्ते की काररवाई करें।

दामाद—यह कुल काररवाई ज़ाब्ते ही की तो है। ख़ैर, इस वक़्त तो आपके बस में हूँ, जो चाहे कीजिए। मगर मेरा ख़ुदा सब देख रहा है।

थानेदार—तुम हमारा कहा क्यों नहीं मान लेते ? हम बस, इतना चाहते हैं कि तुम नौकरी कर लो, और अपनी जोरू को लेकर यहीं रहा करो।

दामाद—आपसे मैं अब भी मिन्नत से कहता हूँ कि इस बात को दिल से निकाल डालिए। नहीं तो बात बढ़ जायगी।

इतने में किसी ने पीछे से आकर मेरे दामाद की मुश्कें कस लीं, और ले चले, और एक सिपाही मेरी लड़की को थानेदार साहब के घर की तरफ़ ले चला। अब रात का वक़्त है। एक कमरे में थानेदार लड़की के पैरों पर गिर पड़ा। उसने एक ठोकर दी, और झपटकर इस तेज़ी से भागी कि थानेदार के होश उड़ गए। अब ग़ौर कीजिए कि कमसिन औरत, परदेस का वास्ता, अँधेरी रात, रास्ता गुम, मियाँ नदारद। सोची, या ख़ुदा, कहाँ जाऊँ और क्या करूँ ? कभी मियाँ की मुसीबत पर रोती, कभी अपनी हालत पर। इस तरह गिरती-पड़ती चली जाती थी कि एक तिलंगे से भेंट हो गई। बोला—कौन जाता है ? कौन जाता है छिपा हुआ ? लड़की थर-थर काँपने लगी। डरते-डरते बोली—ग़रीब औरत हूँ। रास्ता भूलकर इधर निकल आई। आख़िर बड़ी मुशकिल से कानों का करनफूल देकर अपना गला छुड़ाया। आगे बढ़ी, तो उसका शौहर मिल गया। सिपाहियों ने उसे एक मकान में बंद कर दिया था, मगर वह दीवार फाँदकर निकल भागा आ रहा था। दोनों ने ख़ुदा का शुक्र किया, और एक सराय में रात काटी। सुबह को मेरे दामाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने थानेदार को घोड़े पर से खींचकर इतनी लकड़ियाँ मारीं कि बेदम हो गया। गाँववाले तो थानेदार के दुश्मन थे ही, एक ने भी न बचाया; बल्कि जब देखा कि अधमरा हो गया, तो दो-चार ने लातें भी जमाईं। अब मेरा दामाद मेरे घर में छिपा बैठा है। बतलाइए, क्या करूँ?

ख़ोजी—मुझे तो मालूम होता है कि यह भी उसी बहुरूपिए की शरारत थी।

सलारी—कौन बहुरूपिया?

मिरज़ा—तुम्हारी समझ में न आवेगा। यह क़िस्सा-तलब बात है।

सलारी—तो फिर मुझे क्या हुक्म होता है? हम तो ग़रीब टके के आदमी हैं। मगर आबरूदार हैं।

आज़ाद—बस, जाकर चैन करो। जब शोर-गुल मचे, तो आना। सलाह की जायगी।

सलारी ने सलाम किया, और चला गया।

सैंतीसवाँ परिच्छेद

ख़ोजी ने एक दिन कहा—अरे यारो, क्या अंधेर है। तुम स्म चलते-चलते बुड्ढे हो जाओगे। स्पीचें सुनीं, दावतें चखीं, अब बक़ूचा सँभालो, और चलो। अब चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, हम एक न मानेंगे। चलिए, उठिए। कूच बोलिए।

आज़ाद—मिरज़ा साहब, इतने दिनों में ख़ोजी ने एक यही तो बात पक्की कही। अब जहाज़ का जल्द इंतिज़ाम कीजिए।

ख़ोजी—पहले यह बताइए कि कितने दिनों का सफ़र है?

आज़ाद—इससे क्या वास्ता? हम कभी जहाज़ पर सवार हुए हों तो बतावें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—जहाज़ ! हाय ग़ज़ब ! क्या तरी-तरी जाना होगा ? मेरी तो रूह काँपने लगी। भैया, मैं नहीं जाने का।

आज़ाद—अजी चलो भी, वहाँ तुरकी औरत के साथ तुम्हारा ब्याह कर देंगे।

ख़ोजी—ख़ुश्की-ख़ुश्की चलो तो भई, मैं चलूँगा। समुद्र में जाते पाँव डगमगाता है।

मिरज़ा—जनाब, आपको शर्म नहीं आती। इतनी दूर तक साथ आए, अब साथ छोड़े देते हो। डूब मरने की बात है।

ख़ोजी—क्या ख़ूब ! यों भी डूबूँ, और वों भी डूबूँ। ख़ुश्की-ही-ख़ुश्की क्यों नहीं चलते ?

मिरज़ा—आप भी वल्लाह, निरे चोंच ही रहे। ख़ुश्की की राह से कितने दिनों में पहुँचोगे भला ? ख़ुश्की की एक ही कही।

ख़ोजी—अब आपसे हुज्जत कौन करे। जहाज़ का कौन एत-बार। ज़रा किसी सूराख़ की राह से पानी आया, और बस, पहुँचे जहन्नुम सीधे।

आज़ाद—तो न चलोगे ? साफ़-साफ़ बता दो। अभी सबेरा है।

ख़ोजी—चलें तो बीच खेत, मगर पानी का नाम सुना, और कलेजा दहल उठा। भला क्यों साहब, यह तो बताइए कि समुद्र का पाट गंगा के पाट से कोई दूना होगा या कुछ कम-बेश।

मिरज़ा—जी, बस, और क्या। चलिए, आपको समुंदर दिखलावें न; थोड़े ही फ़ासले पर है।

ख़ोजी—क्यों नहीं। हमको ले चलिए, और झप-से चपरगट्टू करके जहाज़ पर बिठा दीजिए। एक शर्त से चलते हैं। बेगम साहबा ज़मानत करें। हमारे सिर की क़सम खायँ कि ज़बरदस्ती न करेंगे।

आज़ाद—इसमें क्या दिक़्क़त है। चलिए, हम बेगम साहबा से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहलाए देते हैं। आप और आपके बाप, दोनों के सिर की क़सम खा लें तो सही।

मिरज़ा—हाँ-हाँ, वह ज़मानत कर देंगी। आइए, उठिए।

मियाँ आज़ाद और मिरज़ा, दोनों मिलकर गए, और बेगम से कहा—इस सिड़ी से इतना कह देना कि तू जहाज़ देखने जा। ये लोग ज़बरदस्ती सवार न करेंगे। बेगम साहबा ने जो सारी दास्तान सुनी, तो तिनककर बोलीं कि हम न कहेंगे। आप लोगों ने ज़रा-सी बात न मानी, और सीढ़ी हटा ली। अच्छा, ख़ैर, परदे के पास बुला लो।

ख़ोजी ने परदे के पास आकर सलाम किया; मगर जवाब कौन दे। बेगम साहबा तो मारे हँसी के लोटी जाती हैं। मियाँ आज़ाद के ख़याल से अपनी चुलबुलाहट पर लजाती भी हैं, और खिलखिलाती भी। शर्म और हँसी, दोनों ने मिलकर रुख़सारों को और भी सुर्ख़ कर दिया। इतने में ख़ोजी ने फिर हाँक लगाई कि हुज़ूर ने गुलाम को क्यों याद फ़रमाया है?

मिरज़ा—कहती हैं कि हम ज़मानत किए लेते हैं।

ख़ोजी—आप रहने दीजिए, उन्हीं को कहने दीजिए।

बेगम—ख़्वाजा साहब, बंदगी। आप क्या पूछते हैं?

ख़ोजी—ये लोग मुझे जहाज़ दिखाने लिए जाते हैं। जाऊँ या न जाऊँ? जो हुक्म हो, वह करूँ।

बेगम—कभी भूले से न जाना। नहीं, फिरके न आओगे।

ख़ोजी—आप इनकी ज़मानत करती हैं।

बेगम—मैं किसी की ज़ामिन-वामिन नहीं होती। "ज़र दीजिए, ज़ामिन न हूजिए" ये डुबो ही देंगे। मुई क़रौली रक्खी ही रहेगी।

ख़ोजी—चलिए, बस, हद हो गई। अब हम नहीं जाने के।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—भई, तुम ज़रा साथ चलकर सैर तो देख आओ।

ख़ोजी—वाह! अच्छी सैर है। किसी की जान जाय, आपके नज़दीक सैर है। उस जानेवाले पर तीन हरफ़।

ख़ैर, समझा-बुझाकर दोनों आदमी ख़ोजी को ले चले। जब समुद्र के किनारे पहुँचे, तो ख़ोजी उसे देखते ही कई क़दम पीछे हटे, और चीख़ पड़े। फिर दस-पाँच क़दम पीछे खिसके, और रोने लगे। या खुदा, बचाइयो! लहरें देखते ही किसी ने कलेजे को मसोस लिया।

मिरज़ा—क्या लुत्फ़ है। ख़ुदा की क़सम, जी चाहता है, फाँद ही पड़ूँ।

ख़ोजी—कहीं भूल से फाँदने-वाँदने का इरादा न करना। हयादार के लिये एक चुल्लू काफ़ी है।

आज़ाद—अजब मसख़रा है भई! एक आँख से रोता है, एक आँख से हँसता है।

इतने में दो-चार मल्लाह सामने से आए। ख़ोजी ने जो उन्हें ग़ौर से देखा, तो मिरज़ा साहब से बोले—ये कौन हैं भई? इनकी तो कुछ वज़ा ही निराली है। भला, ये हमारी बोली समझ लेंगे?

मिरज़ा—हाँ-हाँ, ख़ूब। उर्दू ख़ूब समझते हैं।

ख़ोजी—(एक मलाह से) क्यों भई माँझी, जहाज़ पर कोई जगह ऐसी भी है, जहाँ से समुंदर नज़र ही न आवे, और हम आराम से बैठे रहें? सच बताना उस्ताद। अजी, हम पानी से बहुत डरते हैं भई।

माँझी—हम आपको ऐसी जगह बैठा देंगे, जहाँ पानी क्या, आसमान तो सूझ ही न पड़े।

ख़ोजी—अरे, तेरे क़ुरबान। एक बात और बता दो। गन्ने मिलते जायँगे राह में? या उनका अकाल है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माँझी—गन्ने वहाँ कहाँ ? क्या कुछ मंडी है ! अपने साथ चाहे जितने ले चलिए ।

ख़ोजी—हाय गँडेरियाँ ताज़ी-ताज़ी खाने में न आवेंगी । भला हलवाई की दूकान तो होगी ? आख़िर ये इतने शौक़ीन अफ़ीमची जो जाते हैं, तो खाते क्या हैं ?

माँझी—अजी, जो चाहो, साथ रख लो ।

ख़ोजी—और, जो मुँह-हाथ धोने को पानी की ज़रूरत हो, तो कहाँ से आवे ?

आज़ाद—पागल है पूरा ! इतना नहीं समझता कि समुंदर में जाता है, और पूछता है कि पानी कहाँ से आवेगा ।

ख़ोजी—तो आप क्यों उलझ पड़े ? आपसे पूछता कौन है ! क्यों यार माँझी, भला हम गन्ने यहाँ से बाँध ले चलें, और जहाज़ पर चूसें, मगर छिलके फेकेंगे कहाँ । आख़िर हम दिन-भर में चार-छः पौंडे खाया ही चाहें ।

आज़ाद—यह बड़ी टेढ़ी खीर है, गन्नों के छिलके खाने पड़ेंगे।

ख़ोजी—आपसे कौन बोलता है ? क्यों भई, जो क़रौली बाँधें, तो हर्ज तो नहीं है कुछ ?

माँझी—लैसन्स ले लीजिएगा, और क्या हर्ज है ?

ख़ोजी—देखिए एक बात मालूम हुई न ! अच्छा, यह बताओ कि बहुरूपिए तो जहाज़ पर नहीं चढ़ने पाते ?

माँझी—चाहे जो सवार हो । दाम दे, सवार हो ले ।

ख़ोजी—यह तो तुमने बेढब सुनाई। जहाज़ पर कुम्हार तो नहीं होते?

माँझी—आज तलक कोई कुम्हार नहीं गया ।

ख़ोजी—ऐ मैं तेरी ज़बान के क़ुरबान । बड़ी ढारस हुई । ख़ैर, कुम्हार से तो बचे । बाक़ी रहा बहुरूपिया । उस गीदी को समझ लूँगा । इतनी क़रौलियाँ भोंकूँ कि याद ही करे । हाँ, बस एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और बात भी बता देना। यह क़ैद तो नहीं है कि आदमी सुबह-शाम ज़रूर ही नहाय ?

माँझी—मालूम देता है, अफ़ीम बहुत खाते हो ?

ख़ोजी—हाँ, ख़ूब पहचान गए। यह क्योंकर बूझ गए भाई? शौक़ हो, तो निकालूँ।

माँझी—राम-राम ! हम अफ़ीम छूते तक नहीं।

ख़ोजी—ओ गीदी ! टके का आदमी और झख मारता है। निकालूँ क़रौली ?

मिरज़ा—हाँ, हाँ, ख़्वाजा साहब। देखिए, ज़री क़रौली म्यान ही में रहे।

ख़ोजी—ख़ैर, आप लोगों की ख़ातिर है। वर्ना उधेड़कर धर देता पाजी को। आप लोग बीच में न पड़ें, तो भुरकुस ही निकाल दिया होता।

इतने में घोड़े पर सवार एक अँगरेज़ आकर आज़ाद से बोला—इस दरख़्त का क्या नाम है ?

आज़ाद—इसका नाम तो मुझे मालूम नहीं। हम लोग ज़रा इन बातों की तरफ़ कम ध्यान देते हैं।

अँगरेज़—हम अपने मुल्क की सब घास-फूस पहचानता है।

ख़ोजी—विलायत का एक घसियारा मालूम होता है।

अँगरेज़—चिड़िया का इल्म जानता है आप ?

आज़ाद—जी नहीं, यह इल्म यहाँ नहीं सिखाया जाता।

अँगरेज़—चिड़िया का इल्म हम ख़ूब जानता है।

ख़ोजी—चिड़ीमार है लंदन का। बस, क़लई खुल गई।

अँगरेज़ घोड़ा बढ़ाकर निकल गया। इधर आज़ाद और मिरज़ा साहब के पेट में हँसते-हँसते बल पड़ गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अड़तीसवाँ परिच्छेद

शाम के वक़्त मिरज़ा साहब की बेगम ने परदे के पास आकर कहा—आज इस वक़्त कुछ चहल-पहल नहीं है; क्या ख़ोजी दुनिया से सिधार गए ?

मिरज़ा—देखो ख़ोजी, बेगम साहबा क्या कह रही हैं।

ख़ोजी—कोई अफ़ीम तो पिलवाता नहीं, चहल-पहल कहाँ से हो ? लतीफ़े सुनाऊँ, तो अफ़ीम पिलवाइएगा ?

बेगम—हाँ, हाँ, कहो तो। मरो भी, तो पोस्ते ही के खेत में दफ़नाए जाओ। काफ़ूर की जगह अफ़ीम हो, तो सही।

ख़ोजी—एक ख़ुशनवीस थे। उनके क़लम से ऐसे हरूफ़ निकलते थे, जैसे साँचे के ढले हुए। मगर इन हज़रत में एक सख़्त ऐब यह था कि ग़लत न लिखते थे।

आज़ाद—कुछ जाँगलू हो क्या ?

ख़ोजी—ख़ुदा इन लोगों से बचावे। अई, मेरे तो नाकों दम हो गया ! बात पूरी सुनी नहीं और एतराज़ करने को मौजूद। बात काटने पर उधार खाए हुए हो। मेरा मतलब यह है कि वह ग़लत न लिखते थे; मगर ऐब यह था कि अपनी तरफ़ से कुछ मिला देते थे। एक दफ़े एक आदमी को क़ुरान लिखाने की ज़रूरत हुई। सोचे कि इनसे बढ़कर कोई ख़ुशनवीस नहीं, अगर दस-पाँच रुपए ज़्यादा भी ख़र्च हों, तो बला से, लिखवावेंगे इन्हीं से।

बेगम—ऐ वाह री अक़्ल ! कोई आप ही के-से जाँगलू होंगे। गली-गली तो छापेख़ाने हैं। कोई छपा हुआ क़ुरान क्यों न मोल ले लिया ?

ख़ोजी—हुज़ूर, वह सीधे-सादे मुसलमान थे। मंतिक़ (न्याय) नहीं पढ़े थे। ख़ैर साहब, ख़ुशनवीस के पास पहुँचे, और कहा—हज़रत,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो उजरत माँगिए, दूँगा; मगर अर्ज़ यह है, कहिए कहूँ कहिए न कहूँ। खुशनवीस ने कहा—ज़रूर कहिए। खुदा की क़सम, ऐसा लिखूँ कि जो देखे, फड़क जाय। वह बोले—हज़रत, यह तो सही है, लेकिन अपनी तरफ़ से कुछ न बढ़ा दीजिएगा। खुशनवीस ने कहा—क्या मजाल! आप इतमीनान रखिए, ऐसा न होने पावेगा। ख़ैर, वह हज़रत तो घर गए, इधर मियाँ खुशनवीस लिखने बैठे। जब ख़तम कर चुके, तो किताब लेकर चले। लीजिए हुज़ूर, कुरान मौजूद है। उन्होंने पूछा—एक बात साफ़ फ़रमा दीजिए। कहीं अपनी तरफ़ से तो कुछ नहीं मिला दिया? खुशनवीस ने कहा—जनाब, बदलते या बढ़ाते हुए हाथ काँपते थे। मगर इसमें जगह-जगह शैतान का नाम था। मैंने सोचा, खुदा के कलाम में शैतान का क्या ज़िक्र? इसलिये कहीं आपके बाप का नाम लिख दिया, कहीं अपने बाप का।

बेगम—बस, यही लतीफ़ा है? यह तो सुन चुकी हूँ।

ख़ोजी—इस धाँधली की सनद नहीं। जब अफ़ीम पिलाने का वक़्त आया, तो धाँधली करने लगीं?

मिरज़ा साहब बोले—अजी, यह पिलवावें या न पिलवावें, मैं पिलवाए देता हूँ। यह कहकर उन्होंने एक थाली में थोड़ा-सा कत्था घोलकर ख़ोजी को पिला दिया। ख़ोजी को दिन को तो ऊँट सूझता न था, रात को कत्थे और अफ़ीम के रंग में क्या तमीज़ करते। पूरा प्याला चढ़ा लिया, और अफ़ीम पीने के ख़याल से पीनक लेने लगे। मगर जब रात ज़्यादा गई, तो आपको अँगड़ाइयाँ आने लगीं; जम्हाइयों की डाक बैठ गई; आँखों से पानी जारी हो गया। डिबिया जेब से निकाली कि शायद कुछ खुरचन-उरचन पड़ी-पड़ाई हो, तो इस दम जी जायँ। मगर देखा, तो सफ़ाचट! बस, सन-से जान निकल गई। आधीरात का वक़्त,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब अफ़ीम आवे तो कहाँ से ? सोचे, भई, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, अफ़ीम कहीं-न-कहीं से ढूँढ़ ही लावेंगे। दन-से चल ही खड़े हुए। गली में सिपाही से मुठभेड़ हुई।

सिपाही—कौन ?

ख़ोजी—हम हैं ख़्वाजा साहब।

सिपाही—किस दफ़्तर में काम करते हो ?

ख़ोजी—पुलीस के दफ़्तर में। मानिकजी, भाईजी की जगह पर आज से काम करते हैं। यार, इस वक़्त कहीं से ज़रा-सी अफ़ीम लाओ, तो बड़ा एहसान हो। आख़िर उस्ताद, पाला हमीं से पड़ेगा। तुम्हारे ही दफ़्तर में हैं।

सिपाही—हाँ, हाँ, लीजिए, इसी दम। मैं तो ख़ुद अफ़ीम खाता हूँ। अफ़ीम तो लो यह है, मगर इस वक़्त घोलिएगा काहेमें?

ख़ोजी—वाह ! सिपाही हो कि बातें। घर का हुकूमत है ! सरकारी सिपाही को सभी मानते हैं।

सिपाही—अच्छा, चलो, पिला दे।

ख़ोजी—वाह ! सूबेदार साहब ! बड़े बुरे वक़्त काम आए। हम, आप जानिए, अफ़ीमची आदमी. शाम को अफ़ीम खाना भूल गए, आधीरात को याद आया। डिबिया खोली, तो सन्नाटा। ले, कहीं से पानी और प्याली दिलवाओ, तो जी उठें।

ख़ैर, सिपाही ने ख़ोजी को ख़ूब अफ़ीम पिलवाई। यहाँ तक कि घर को लौटे, तो रास्ता भूल गए। एक भलेमानस के दरवाज़े पर पहुँचे, तो पीनक में सूझी कि यही मिरज़ा साहब का मकान है। लगे ज़ंजीर खड़खड़ाने—खोलो, खोलो। भई, अब तो खड़ा नहीं रहा जाता। दरवाज़ा खोल देना।

ख़्वाजा साहब तो बाहर खड़े गला फाड़-फाड़कर चिल्लाते हैं, और अंदर उस मकान में मियाँ का दम निकला जाता है। कोई एक ऊपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस बरस का सिन, खेल-कूद के दिन, ख़ोजी के भी चचा, दुबले-पतले हाथ-पाँव, क़द तीन कम सवा दो इंच का। सिवा हड्डी और चमड़े के गोश्त का कहीं नाम नहीं। और, उनकी बीबी ख़ासी देवनी, हट्टी-कट्टी मुसंडी, बड़े डील-डौल की औरत, उठती जवानी, मगर एक आँख की कानी। एक घूँसा तानके लगावे, तो शीदी लंधौर का भुरकस निकल जाय। कोई दो-तीन कम बीस बरस की उम्र। दोनों मीठी नींद सो रहे थे कि ख़ोजी ने धमधमाना शुरू किया।

मियाँ—या ख़ुदा, बचाइयो। इस अँधेरी रात में कौन आया? मारे डर के रूह काँपती है: मगर जो बीबी को जगाऊँ और मर्दाने कपड़े पहनाकर ले जाऊँ, तो यह हज़रत भी काँपने लगें।

ख़ोजी—खोलो, मीठी नींद सोनेवालो, खोलो। यहाँ जाते देर नहीं हुई, और किवाड़े झप-से बंद कर लिए? खटिया-वटिया सब ग़ायब कर दी?

मियाँ—बेगम, बेगम, क्या सो गईं?

वहाँ सुनता कौन है, जवानी की नींद है कि दिल्लगी। कोई चारपाई भी उलट दे, तो कानोकान ख़बर न हो। सिर पर चक्की चले, तो भी आँख न खुले। आँखों को मारे डर के एक हाथ से बंद किए बीबी के सिरहाने खड़े हैं, मगर थर-थर काँप रहे हैं। आख़िर एक बार किचकिचाके खूब ज़ोर से कंधा हिलाया, और बोले—ओ बेगम, सुनती हो कि नहीं? जगी हैं, मगर दम साधे पड़ी हैं।

बेगम—(हाथ झटककर) ऐ हटो, लेके कंधा उखाड़ डाला। अल्लाह करे, ये हाथ टूटें। हमारी मीठी-मीठी नींद ख़राब कर दी। ख़ुदा जानता है, मैं तो समझी हाला-डोला आ गया। ख़ुदा-ख़ुदा करके ज़री आँख लगी, तो यह आफ़त आई। अब की जगाया, तो तुम जानोगे। फिर अपने दाँव को तो बैठकर रोते हैं। बेहया, चल, दूर हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मियाँ—अरे, क्या फिर सो गईं ? जैसे नींद के हाथों बिक गई हों। बेगम, सुनती हो कि नहीं ?

बेगम—क्या है क्या ? कुछ मुँह से बोलोगे भी ? बेगम-बेगम की अच्छी रट लगाई है। डर लगता हो, तो मुँह ढाँपकर सो रहो। एक तो आप न सोवें, दूसरे हमारी नींद भी हराम करें।

ख़ोजी—अरे भई, खोलो। मर गया पुकारते-पुकारते।

मियाँ—बेगम खुदा करे बहरी हो जायँ। देखो तो यहाँ किवाड़ कौन तोड़े डालता है ? बंदा तो इस अँधियारी में हुमसनेवाला नहीं। ज़री तुम्हीं दरवाज़े तक जाकर देख लो।

बेगम—जी ! मेरी पैजार उठती है। तुम्हारी तो वही मसल हुई कि "रोटी खाय दस-बारह, दूध पिए मटका सारा, काम करने को नन्हा बेचारा"। पहले तो मैं औरतज़ात, और जो डर गईं, तो फिर कैसी हो ? चोर-चकार से बीबी को भिड़वाते हैं। मर्द बने हैं! जोरुआ से कहते हैं कि बाहर जाकर चोर से लड़ो।

ख़ोजी—अजी, बेगम साहब, खुदा की क़सम, अफ़ीम लाने गया था। ज़रा दरवाज़ा खुलवा दीजिए। यह मिरज़ा साहब और मौलाना आज़ाद तो मेरी जान के दुश्मन हैं।

बेगम ने जो अफ़ीम का नाम सुना, तो आग-भभूका हो गईं। उठकर मियाँ के एक लात लगाई, और ऊपर से कोसने लगीं—इस अफ़ीम को आग लगे, पीनेवालों का सत्यानास हो जाय। एक तो मेरे मा-बाप ने इस निखट्टू के खूँटे में बाँधा, दूसरे इसके मा-बाप ने अफ़ीम इसकी घुट्टी में डाल दी। क्यों जी, तुमने तो क़सम खाई थी कि आज से अफ़ीम न पिऊँगा ? न तुम्हारी क़सम का एतबार, न ज़बान का। क़सम भी क्या मूली-गाजर है कि कर-कर करके चबा गए!

मियाँ—(गर्द झाड़-पोंछकर) क्यों जी, और जो मैं भी एक लात कसके जमाने के लायक़ होता, तो फिर कैसी ठहरती!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीवी—मैं तो पहले बातों से समझाती हूँ, और कोई न समझे, तो फिर लातों से ख़बर लेती हूँ। मैं तो इस फ़िक्र में हूँ कि तुमको खिला-पिलाकर हट्टा-कट्टा बना दूँ, परोसी ताने तो न दें। और तुम पियो अफ़ीम, तो जी जले या न जले?

मियाँ साहब दिल-ही-दिल में अपने मा-बाप को गालियाँ दे रहे थे। यहाँ धान-पान आदमी, बीबी लाके बिठा दी देवनी। वे तो ब्याह करके छुट्टी पा गए, लातें हमें खाना पड़ती हैं। मैं तो समझा कि अपना काम ही तमाम हो गया; मगर बेहया ज्यों-का-त्यों मौजूद। बोले—तुम्हारी जान की क़सम, कौन मरदूद चंडू के क़रीब भी गया हो। आज तक या कभी अफ़ीम की सूरत भी देखी हो। और यों ख़ाम-ख़्वाह बदगुमानी का कौन-सा इलाज है। ज़री चलके देखो तो! आख़िर है कौन। आव देखा न ताव, कसकर एक लात जमा दी, बस। और जो कहीं कमर टूट जाती?

ख़ोजी पीनक में ज़ंजीर पकड़े खड़े थे। इधर मियाँ-बीबी चले, तो इस तरह कि बीबी आगे-आगे चिमटा हाथ में लिए हुए, और मियाँ पीछे-पीछे मारे डर के आँखें बंद किए हुए। दरवाज़ा खुला, तो ख़ोजी धम-से गिरे सिर के बल, और मियाँ मारे ख़ौफ़ के ख़ोजी पर अर-र-र करके आ रहे। बीबी ने ऊपर से दोनों को दबोचा। ख़ोजी का नशा हिरन हो गया। निकलकर भागे, तो नाक की सीध पर चलते हुए मिरज़ा साहब के मकान पर दाख़िल। वहाँ देखा, ख़िदमतगार पड़ा ख़र्राटे ले रहा है। चुपके-से अपनी खटिया पर दराज़ हुए; मगर मारे हँसी के बुरा हाल था। सोचे, हम तो थे ही, यह मियाँ हमारे भी चचा निकले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उंतालीसवाँ परिच्छेद

सुबह का वक़्त था, मियाँ आज़ाद पलँग से उठे तो देखा, बेगम साहबा मुँह खोले बेतकल्लुफ़ी से खड़ी उनकी ओर कनखियों से ताक रही हैं। मिरज़ा साहब को आते देखा, तो बदन को चुरा लिया, और एक छलाँग मारी, तो ज़ेबन की ओट में थीं।

मिरज़ा—कहिए, आज क्या इरादे हैं ?

आज़ाद—इस वक़्त हमको किसी ऐसे आदमी के पास ले चलिए, जो तुरकी के मामलों से ख़ूब वाक़िफ़ हो। हमें वहाँ का कुछ हाल मालूम ही नहीं। कुछ सुन तो लें। वहाँ के रंग-ढंग तो मालूम हों।

मिरज़ा—बहुत ख़ूब, चालिए, मेरे एक दोस्त हेडमास्टर हैं। बहुत ही ज़हीन और यारबाश आदमी हैं।

आज़ाद तैयार हुए तो बेगम ने कहा—ऐ, तो कुछ खा लें तो जाओ। ऐसी अभी क्या जल्दी है।

आज़ाद—जी, नहीं। देर होगी।

बेगम—अच्छा, चाय तो पी लीजिए।

थोड़ी देर में दोनों आदमियों ने चाय पी, पान खाए, और चले। हेडमास्टर का मकान थोड़ी ही दूर था, खट-से दाख़िल। सलाम-चलाम के बाद आज़ाद ने रूम और रूस की लड़ाई का ताज़ा हाल पूछा।

हेडमास्टर—तुरकी की हालत बहुत नाज़ुक हो गई है।

ख़ोजी—यह बताइए कि वहाँ तोप दग रही है या नहीं ? दनादन की आवाज़ कान में आती है या नहीं ?

हेडमास्टर—दनादन की आवाज़ तो यहाँ तक आ चुकी, मगर लड़ाई छिड़ गई है, और ख़ूब ज़ोरों से हो रही है।

ख़ोजी—उफ़्, मेरे अल्लाह ! यहाँ तो जान ही निकल गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—मियाँ, हिम्मत न हारो! ख़ुदा ने चाहा, तो फ़तह है।

ख़ोजी—अजी, हिम्मत गई भाड़ में, यहाँ तो क़ाफ़िया तंग हुआ जाता है।

आज़ाद—लड़ाई रूस से हो रही है, या आपस में?

हेडमास्टर—आपस ही में समझिए। अक्सर सूबे बिगड़ गए, और लड़ाई हो रही है।

आज़ाद—यह तो बुरी हुई।

ख़ोजी—बुरी हुई, तो फिर जाते क्यों हो? क्या तबाही आई है?

हेडमास्टर—सर्विया की फ़ौज सरहद को पार कर गई। तुरकों से एक लड़ाई भी हुई। सुना है कि सर्विया हार गया। मगर उसका कहना है कि यह सब ग़लत है। हम डटे हुए हैं, और तुर्कों को बासिनिया की सरहद पर ज़क दी।

ख़ोजी—अब मेरे गए बग़ैर बेड़ा न पार होगा। क़सम ख़ुदा की, इतनी क़रौलियाँ भोंकी हों कि परे-के-परे साफ़ हो जायँ। दिल्लगी है कुछ।

हेडमास्टर—दूसरी ख़बर यह है कि सर्विया और तुरकी में सख़्त लड़ाई हुई, मगर न कोई हारा न जीता। सर्वियावाले कहते हैं कि हमने तुर्कों को भगा दिया।

ख़ोजी—भई आज़ाद, सुनते हो? वापस चलो। अजी शर्त तो यही है न कि तमग़े लटकाकर आओ? आप वापस चलिए, मैं एक तमग़ा बनवा दूँगा।

कुछ देर तक मियाँ आज़ाद और हेडमास्टर साहब में यही बातें होती रहीं। दस बजते-बजते यहाँ से रुख़सत होकर घर आए। जब खाना खाकर बैठे, तो बेगम साहबा ने आज़ाद से कहा—हज़रत, ज़रा इस मिसरे पर कोई मिसरा लगाइए—

इसलिये तसवीर जानाँ हमने खिंचवाई नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—हाँ, हाँ, सुनिए।

शेर देखे उनकी सूरत इसकी ताब आई नहीं;
इसलिये तसवीर जानाँ ... ... नहीं।
उसकी फ़ुरक़त ज़ेहन में अपने कभी आई नहीं;
इसलिये तसवीर जानाँ ... ... नहीं।

बेगम—कहिए आपकी ख़ातिर से तारीफ़ कर दें। मगर मिसरे ज़रा फीके हैं।

आज़ाद—अच्छा, लो आप ही कोई चटपटा मिसरा कहिए।

बेगम—ऐ, हम औरतज़ात, भला शेर-शायरी क्या जानें? और जो आपकी यही मरज़ी है, तो लीजिए—

लोहे-दिल ढूँढ़ा किए पर हाथ ही आई नहीं;
इसलिये ... ... नहीं।

ख़ोजी—वाह, बेगम साहबा! आपने तो सुलेमान सावजी के भी कान काटे। पर अब ज़रा मेरी उपज भी सुनिएगा।

पीनके-अफ़यूँ से टुक फ़ुरसत कभी पाई नहीं;
इसलिये... ... ... नहीं।

इस मिसरे का सुनना था कि मिरज़ा साहब, उनकी हँसोड़ बीबी और मियाँ आज़ाद हँसते-हँसते लोट गए। अभी यही चर्चा हो रही थी कि इतने में एक आदमी ने बाहर से आवाज़ दी। मिरज़ा ने ज़ैबन से कहा कि जाओ, देखो तो कौन है? मियाँ ख़लीफ़ा हों तो कहना, इस वक़्त हम बाल न बनवावेंगे। तीसरे पहर को आ जाइए। ज़ैबन आटा गूँध रही थी। "अच्छा" कहकर चुप हो रही। आदमी ने फिर बाहर से आवाज़ दी। तब तो ज़ैबन को मजबूर होकर उठना ही पड़ा। नाक-भौं चढ़ाती, नौकर को जली-कटी सुनाती चली। जो है, मेरी ही जान का गाहक है। जिसे देखो, मेरा ही दुश्मन। वाह, एक काम छोड़ दूसरे पर लपको। अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की चाँद हो, तो मैं तनख़्वाह लेके अपने घर बैठ रहूँ। क्यों, निगोड़ी नौकरी का भी कुछ अकाल है? ज़ैबन का क़ायदा था कि काम सब करती थी, मगर बड़बड़ाकर। बात-बात पर तिनक जाना तो गोया उसकी घूँटी में पड़ा था। मगर अपने काम में चुस्त थी। इसलिये उसकी ख़ातिर होती थी। मुँह फुलाकर बाहर गई। पहले तो जाते ही ख़िदमतगार को ख़ूब आड़े-हाथों लिया—क्या घर-भर में मैं ही अकेली हूँ? जो पुकारता है मुझी को पुकारता है। मुए हब्बू के मुँह में नाम पड़ गया है। ख़िदमतगार ने कहा—मुझसे क्यों बिगड़ती हो? यह मियाँ आए हैं; हुज़ूर से जाकर इनका पैग़ाम कह दो। मगर ज़रा समझ-बूझकर कहना। सब बातें सुन लो अच्छी तरह।

ज़ैबन—(उस आदमी से) कौन हो जी? क्या कहते हो? तुम्हें भी इसी वक़्त आना था?

आदमी—मल्लाह हूँ, और कौन हूँ? जाकर अपने मियाँ से कह दो, आज जहाज़ रवाना होगा। अभी दस घंटे की देर है। तैयार हो जाइए।

ज़ैबन ने अंदर जाकर यह ख़बर दी। बेगम साहबा ने जहाज़ का नाम सुना, तो धक-से रह गईं। चेहरे का रंग फीका पड़ गया। कलेजा धड़-धड़ करने लगा। अगर ज़ब्त न करतीं, तो आँसू जारी हो जाते।

मिरज़ा—लीजिए हज़रत, अब कूच की तैयारी कीजिए।

आज़ाद—तैयार बैठा हूँ। यहाँ कोई बड़ा लंबा-चौड़ा सामान तो करना नहीं। एक बैग, एक दरी, एक लोटा, एक लकड़ी। चलिए, अल्लाह-अल्लाह, ख़ैरसल्लाह। वक़्त पर दन-से उठ खड़ा हूँगा।

ख़ोजी—यहाँ भी वही हाल है। एक डिबिया, एक प्याली, चंडू पीने की एक निगाली, एक कतारा, एक दोना मिठाई का, एक चाकू, एक क़रौली, बस, अल्लाह-अल्लाह, ख़ैरसल्लाह। बंदा भी कील-काँटे से दुरुस्त है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सुनकर मियाँ आज़ाद और मिरज़ा साहब, दोनों हँस पड़े; मगर बेगम साहबा के होठों पर हँसी न आई। मिरज़ा साहब तो उसी वक़्त मल्लाह से बातें करने के लिये बाहर चले गए, और यहाँ मियाँ आज़ाद और बेगम साहबा, दोनों अकेले रह गए। कुछ देर तक तो बेगम ने मारे रंज के सिर तक न उठाया। फिर बहुत सँभलकर बोलीं—मेरा तो दिल बैठा जाता है।

आज़ाद—आप घबराइए नहीं, मैं जल्द वापस आऊँगा।

बेगम—हाय, अगर इतनी ही उम्मेद होती, तो रोना काहे का था ?

आज़ाद—सब्र को हाथ से न जाने दीजिए। ख़ुदा बड़ा कारसाज़ है।

बेगम—आँखों में अँधेरा-सा छा गया। क्या आज ही जाओगे! आज ही ! तुम्हारे जाने के बाद मेरी न-जाने क्या हालत होगी!

आज़ाद—ख़ुदा ने चाहा, तो हँसी-ख़ुशी फिर मिलेंगे।

इतने में मिरज़ा साहब ने बाहर से आकर कहा कि सुबह को तड़के जहाज़ रवाना होगा।

बेगम—यों जाने को सभी जाते हैं, लाखों मर्द-औरत हर साल हज कर आते हैं; मगर लड़ाई में शरीक होना ! बस, यही ख़याल तो मारे डालता है।

आज़ाद—ये लाखों आदमी जो लड़ने जाते हैं, क्या सब-के-सब मर ही जाते हैं ? फिर क़ज़ा का वक़्त कौन टाल सकता है ? जैसे यहाँ, वैसे वहाँ।

मिरज़ा—भई, मेरा तो दिल गवाही देता है कि आप सुर्ख़रू होकर आवेंगे। और यों तो ज़िंदगी और मौत ख़ुदा के हाथ है।

बेगम—ये सब बातें तो मैं भी जानती हूँ ! मगर समझाऊँ किसे ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, H

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिरज़ा—जब जानती हो, तब रोना-धोना बेकार है। हाथ-मुँह धो डालो। ज़ैबन, पानी लाओ। यही तो तुममें ऐब है कि सुबह का काम शाम को और शाम का काम सुबह को करती हो। लाओ पानी झटपट।

ज़ैबन—या अल्लाह! अब आलू छिलूँ या पानी लाऊँ।

आख़िर ज़ैबन दिल-ही-दिल में बुरा-भला कहती पानी लाई। बेगम ने मुँह धोया और बोलीं—अब मैं कोई ऐसी बात न कहूँगी, जिससे मियाँ आज़ाद को रंज हो।

ख़ोजी—अजी मियाँ आज़ाद! चलने का वक़्त क़रीब आया। कुछ मेरी भी फ़िक्र है? वह क़रौली लेते-ही-लेते रह गए। अफ़ीम का क्या बंदोबस्त किया? यार, कहीं ऐसा न हो कि अफ़ीम राह में न मिले, और हम जीते-जी मर मिटें। ज़री ज़ैबन को बाज़ार तक भेजकर कोई साठ-सत्तर कतारें तो नर्म-नर्म मँगवा दीजिए। नहीं तो मैं जीता न फिरूँगा।

ज़ैबन—हाँ, ज़ैबन ही तो घर-भर में फ़ालतू है। लपककर बाज़ार से ले क्यों नहीं आते? क्या चूड़ियाँ टूट जायँगी? और मैं औरतज़ात अफ़ीम लेने कहाँ जाऊँगी भला?

बेगम—रास्ते में इस पगले के सबब से ख़ूब चहल-पहल रहेगी।

आज़ाद—हाँ, इसीलिये तो लिए जाता हूँ। मगर देखिए, क्या-क्या बेहूदगियाँ करते हैं?

ख़ोजी—अजी, आपसे सौ क़दम आगे रहूँ, तो सही।

मिरज़ा—इसमें क्या शक है? लेकिन उस तरफ़ कोई बहुरूपिया हुआ, तो कैसी ठहरेगी?

ख़ोजी—सच कहता हूँ इतनी क़रौलियाँ भोंकूँ कि याद करे। मैं दगानेवाली पलटन में रिसालेदार था। अवध में ख़ुदा जाने कितनी गादियाँ जीत लीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेगम—ऐ रिसालदार साहब, आपकी क़रौली क्या हुई! मोरचा खा गई हो तो साफ़ कर लीजिए। ऐसा न हो, मौरचे पर म्यान ही में रहे।

ज़ैबन—रिसालदार साहब, हमारे लिये वहाँ से क्या लाइएगा?

ख़ोजी—अजी, जीते आवें, तो यही बड़ी बात है। यहाँ तो बदन काँप रहा है।

इन्हीं बातों में चलने का वक़्त आ गया। आज़ाद ने अपना और ख़ोजी का सामान बाँधा। बग्घी तैयार हुई। जब मियाँ आज़ाद ने चलने के लिये लकड़ी उठाई, तो बेगम बेचारी बेअख़्तियार रो दीं। काँपते हुए हाथों से इमामज़ामिन की अशरफ़ी बाँधी, और कहा—जिस तरह पीठ दिखाते हो, उसी तरह मुँह भी दिखाना।

मियाँ आज़ाद, मिरज़ा और ख़ोजी जाकर बग्घी पर बैठे। जब गाड़ी चली, तो ख़ोजी बोले—हमसे कोई नहाने को कहेगा, तो हम क़रौली ही भोंक देंगे।

मिरज़ा—तो जब कोई कहे न?

ख़ोजी—हाँ, बस, इतना याद रखिएगा ज़रा। और, हम यह भी जताए देते हैं कि गन्ना चूस-चूसकर समुंदर के बाप में फेकेंगे, और जो कोई बोलेगा, तो दबोच बैठेंगे। हाँ, ऐसे-वैसे नहीं हैं यहाँ!

सामने समुद्र नज़र आने लगा।

चालीसवाँ परिच्छेद

हुस्नआरा मीठी नींद सो रही थी। ख़्वाब में क्या देखती है कि एक बूढ़े मियाँ सब्ज़ कपड़े पहने उसके क़रीब आकर खड़े हुए, और एक किताब देकर फ़रमाया कि इसे लो, और इसमें फ़ाल देखो। हुस्नआरा ने किताब ली, और फ़ाल देखा, तो यह शेर था—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमें क्या ख़ौफ़ है, तूफ़ान आवे, या बला टूटे।

आँख खुल गई, तो न बूढ़े मियाँ थे न किताब। हुस्नआरा फ़ाल-वाल की क़ायल न थीं; मगर फिर भी दिल को कुछ तसकीन हुई। सुबह को वह अपनी बहन सिपहआरा से इस ख़्वाब का ज़िक्र कर रही थी कि लौंडी ने आज़ाद का ख़त लाकर उसे दिया।

हुस्नआरा—हम पढ़ेंगे।

सिपहआरा—वाह, हम पढ़ेंगे।

हुस्नआरा—(प्यार से झिड़ककर) बस, यही बातें तो हमें भातीं नहीं।

सिपहआरा—न भावें, धमकाती क्या हो?

हुस्नआरा—मेरी प्यारी बहन, देखो, बड़ी बहन का इतना कहना मान जाओ। लाओ ख़त ख़ुदा के लिये।

सिपहआरा—हम तो न देंगे।

हुस्नआरा—तुम तो ख़्वाहमख़्वाह ज़िद करती हो, बच्चों की तरह मचली जाती हो।

सिपहआरा—रहने दीजिए, वाह-वाह! हम अपने आज़ाद का ख़त न पढ़ें।

यह कहकर सिपहआरा ने आज़ाद का ख़त पढ़ सुनाया—

"अब तो जाते हैं हिंद से आज़ाद, फिर मिलेंगे अगर ख़ुदा लाया।

आज जहाज़ पर सवार होता हूँ। दो घंटे और हिंदोस्तान में हूँ। उसके बाद सफ़र, सफ़र, सफ़र। मैं ख़ुश हूँ। मगर इस ख़याल से जी बेचैन है कि तुम बेक़रार होगी। अगर यह मालूम हो जाता कि तुम भी ख़ुश हो, तो जी जाता। अब तो यही धुन है कि कब हम पहुँचूँ। बस रुख़सत।

—तुम्हारा आज़ाद।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाँ, प्यारी सिपह्आरा को ख़ूब समझाना। उनका दि
बहुत नर्म है। इस वक़्त ख़ोजी पानी की सूरत देखकर मच
रहे हैं।

हुस्नआरा—यह मुआ ख़ोजी अभी जीता ही है?

सिपह्आरा—उसे तो पानी का नाम सुनकर जूड़ी च
आती थी।

हुस्नआरा—आख़िर बेचारे जहाज़ पर सवार हो गए। अ
देखें, रूम से कब ख़त आता है?

सिपह्आरा—अब तो फ़ाल पर ईमान लाईं? देखा, मैं क्या कह
थी? अब मिठाई खिलवाइए। ज़री, कोई यहाँ आना। पाँच रु
की पँचमेल मिठाई लाओ।

हुस्नआरा—यह क्या ख़ब्त है?

सिपह्आरा—आपकी बला से। एक डली तुम भी खा लेना।

हुस्नआरा—ख़ूब! पाँच रुपए की मिठाई, और उसमें हमको
एक डली मिले? आते-ही-आते आधी न चख जाऊँ, तो
कहना।

सिपह्आरा—वाह, दे चुकी मैं! ऐसी कच्ची नहीं हूँ।

हुस्नआरा—भला, किताब से आगे का हाल क्या मालूम होगा?
मुझे बड़ी हँसी आती है, जब कोई फ़ाल देखता है। आँखें बंद कि
हुए थोड़ी देर बड़बड़ाए, और किताब खोली। फिर अपने-अ
तौर पर मतलब निकालने लगे। यह सब ढकोसला है। हमको
बड़े उस्ताद ने सबक़ पढ़ाया है।

थोड़ी देर में सिपाही ने बाहर से आवाज़ दी कि मामा, मिठाई
ले जाओ। सिपह्आरा दौड़ी—मुझे देना। हुस्नआरा अलग दू
से झपटी कि हमें-हमें। अब मामा बेचारी किसको दे, एक चीज़
दो गाहक। उसने हुस्नआरा को चंगेल दे दी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा—अब बतलाइए, खाने में लग्गा लगाऊँ ? बरफ़ी पर चाँदी के चमकते हुए वर्क़ कितनी बहार देते हैं।

सिपहआरा—मामा, तुम दिवानी हो गई हो कुछ ? रुपए हमने दिए थे या इन्होंने ? पराया माल क्या झप-से उठा दिया ! वाह, वाह ! हाँ-हाँ—कहती जाती हूँ, सुनती ही नहीं।

मामा—वह आपकी बड़ी × × ×

सिपहआरा—चलो, बस रहने भी दो। ऊपर से बातें बनाती हो।

सिपहआरा ने मिठाई बाँटी, तो मामा हुस्नआरा की बूढ़ी दादी को भी उसमें से दस-पाँच डलियाँ दे आई।

बूढ़ी—यह मिठाई कैसी !

मामा—हुज़ूर, हुस्नआरा ने फ़ाल देखी थी।

बूढ़ी—फ़ाल कैसी ?

मामा—चिट्ठी आई थी कहीं से।

बूढ़ी—चिट्ठी कैसी ?

मामा—बीबी, वही जो हैं, देखिए क्या नाम है उनका जदाई।

बूढ़ी—जदाई कैसी ? ला, मेरी छड़ी तो दे।

बूढ़ी बेगम कमर झुकाए, लठिया टेकते हुए चलीं। आकर देखा, दोनों बहनें मिठाई चख रही हैं।

बूढ़ी—यह मिठाई कैसी आई है ?

सिपहआरा—अम्माजान, हुस्नआरा हमसे शर्त हारी हैं। कहती थीं, हमारे दीवान-हाफ़िज़ में चार सौ सफ़े हैं, मैंने कहा, नहीं, चार सौ चालीस हैं।

बूढ़ी—यह बात थी ! मामा सठिया गई है क्या ? जाने क्या-क्या बकती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाम के वक़्त दोनों बहनें सहेलियों के साथ हाथ-में-हाथ दिए छत पर अठखेलियाँ कर रही थीं। एक ने दूसरे के चुटकी ली, किसी ने किसी को गुदगुदाया, ज़रा ख़याल नहीं कि तिमंज़िले पर खड़ी हैं, ज़रा पाँव डगमगाय तो ग़ज़ब ही हो जाय। हवा सन-सन चल रही थी। एकाएक एक पतंग आकर गिरा। सिपह्आरा ने लपककर लूट लिया। अहाहा, इस पर तो किसी ने कुछ लिखा है—माहीजालवाला पतंग, सब-की-सब दौड़ पड़ीं। हुस्नआरा ने ये शेर पढ़कर सुनाए—

बहुत तेज़ है आजकल तीरे मिज़गाँ;
कोई दिल निशाना हुआ चाहता है।
मेरे क़त्ल करने को आता है क़ातिल;
तमाम आज क़िस्सा हुआ चाहता है।

हुस्नआरा का माथा ठनका कि कुछ दाल में काला है। ताड़ गई कि कोई नए आशिक़ पैदा हुए, मुझ पर या सिपह्आरा पर शैदा हुए। मालूम नहीं, कौन है। कहीं मुझे बाहर देख तो नहीं लिया। दिमाग़ फिर गया है मुए का। जब सब सहेलियाँ अपने-अपने घर चली गईं, तो हुस्नआरा ने बहन से कहा—तुम कुछ समझीं! यह पतंग पर क्या लिखा था। तुम तो खेल रही थीं, मैं उस वक़्त से इसी फ़िक्र में हूँ कि माजरा क्या है।

सिपह्आरा—कुछ-कुछ तो मैं भी समझती हूँ; मगर अब किसी से कहो-सुनो नहीं।

हुस्नआरा—लच्छन बुरे हैं। इस पतंग को फाड़-फूड़कर फेंक दो। कोई देखने न पावे।

इतने में ख़िदमतगार ने मामा को आवाज़ दी, और मामा बाहर से एक लिफ़ाफ़ा ले आई। हुस्नआरा ने जो लिफ़ाफ़ा लिया, तो मारे ख़ुशबू के दिमाग़ तर हो गया। फिर माथा ठनका। ख़ुशबू कैसी! मामा से बोली—किसने दिया है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मामा—एक आदमी ख़िदमतगार को दे गया है। नाम नहीं बताया। दिया और लंबा हुआ।

सिपहआरा—खोलो तो, देखो, है क्या ?

लिफ़ाफ़ा खोला, तो एक ख़त निकला। लिखा था—"एक ग़रीब मुसाफ़िर हूँ, कुछ दिनों के लिये आपके पड़ोस में आकर ठहरा हूँ। इसलिये कोई ग़ैर न समझिएगा। सुना है कि आप दोनों बहनें शतरंज खेलने में बर्क़ हैं। यह नक़्शा भेजता हूँ। मेरी ख़ातिर से इसे हल कर दो, तो बड़ा एहसान हो। मैंने तो बहुत दिमाग़ लड़ाया, पर नक़्शा समझ में न आया।

—मिरज़ा हुमायूँ फ़र।"

इस ख़त के नीचे शतरंज का एक नक़्शा दिया हुआ था।

सिपहआरा—बाजी, सच कहना, यह तो कोई बड़े उस्ताद मालूम होते हैं। मगर तुम ज़रा ग़ौर करो, तो चुटकियों में हल कर लो। तुम तो बड़े-बड़े नक़्शे हल कर लेती हो। भला इसकी क्या हक़ीक़त है।

हुस्नआरा—बहन, यह नक़्शा इतना आसान नहीं है। इसको देखो तो अच्छी तरह। मगर यह तो सोचो कि भेजा किसने है ?

सिपहआरा—हुमायूँ फ़र तो किसी शहज़ादे ही का नाम होगा। मामा को बुलाओ, और कहो, सिपाही से पूछे, कौन लाया था ? क्या कहता था ? आदमी का पता मिल जाय, तो भेजनेवाले का पता मिला दाख़िल है।

मामा ने बाहर जाकर इशारे से सिपाही को बुलाया।

सिपाही—कहो क्या कहती हो ?

मामा—ज़री, इधर तो आ।

सिपाही—वहाँ कोने में क्या करूँ आनके। कोई वहाँ होले-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होले बातें करते देखेगा, तो क्या कहेगा। यहाँ से निकलवा दोगी क्या ?

मामा—ऐ चल छोकरे ! कल का लौंडा कैसी बातें करता है! छोटी बेगम पूछती हैं कि जो आदमी लिफ़ाफ़ा लाया था, वह किधर गया। कुछ मालूम है ?

सिपाही—वह तो बस लाया, और देके चंपत हुआ; मगर मुझे मालूम है, वह सामनेवाले बाग़ में एक शहज़ादे आनके टिके हैं, उन्हीं का चोबदार था।

हुस्नआरा ने यह सुना, तो बोली—शहज़ादे तो हैं, मगर बदतमीज़।

सिपहआरा—यह क्यों ?

हुस्नआरा—अव्वल तो किसी कुँआरी शरीफ़ज़ादी के नाम ख़त भेजना बुरा, दूसरे पतंग गिराया। ख़त भेजा, वह भी इत्र में बसा हुआ।

सिपहआरा—बाजी, यह तो बदगुमानी है कि ख़त को इत्र से बसाया। शहज़ादे हैं, हाथ की ख़ुशबू ख़त में भी आ गई। मगर ख़त कितने अदब से लिखा है।

हुस्नआरा—उनको ख़त भेजने की जुर्रत क्योंकर हुई। अब ख़त आवे, तो न लेना, ख़बरदार। वह शहज़ादे, हमारा-उनका मुक़ाबला क्या ? और फिर बदनामी का डर।

सिपहआरा—अच्छा, नक़्शा तो सोचिए। इसमें तो कोई बुराई नहीं ?

हुस्नआरा ने बीस मिनट तक ग़ौर किया, और तब हँसकर बोली—लो, हल कर दिया। न कहोगी। अल्लाह जानता है, बड़ी टेढ़ी खीर है। लाओ, फिर अब जवाब तो लिख भेजें। मगर डर मालूम होता है कि कहीं उँगली देते ही पहुँचा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न पकड़ लें। जाने भी दो ! मुफ़्त की बदनामी उठाना भला कौन-सी दानाई है।

सिपहआरा—नहीं-नहीं बहन, ज़रूर लिख भेजो। फिर चाहे कुछ न लिखना।

हुस्नआरा—अच्छा, लाओ लिखें, जो होना होगा, सो होगा।

सिपहआरा—हम बतावें। ख़त-वत तो लिखो नहीं, बस, इस नक़्शे को हल करके डाक में भेज दो।

एकतालीसवाँ परिच्छेद

शहर से कोई दो कोस के फ़ासले पर एक बाग़ है, जिसमें एक आलीशान इमारत बनी हुई है। इसी में शहज़ादा हुमायूँ फ़र आकर ठहरे हैं। एक दिन शाम के वक़्त शहज़ादा साहब बाग़ में सैर कर रहे थे, और दिल-ही-दिल में सोचते जाते थे कि शाम भी हो गई, मगर ख़त का जवाब न आया। कहीं हमारा ख़त भेजना उन्हें बुरा तो नहीं मालूम हुआ। अफ़सोस, मैंने जल्दी की। जल्दी का काम शैतान का। अपने ख़त और उसकी इबारत को सोचने लगे कि कोई बात अदब के ख़िलाफ़ ज़बान से निकल गई हो, तो ग़ज़ब ही हो जाय। इतने में क्या देखते हैं कि एक आदमी साँड़नी पर सवार दूर से चला आ रहा है। समझे, शायद मेरे ख़त का जवाब लाता होगा। ख़िदमतगारों से कहा कि देखो यह कौन आदमी है ? ख़त लाया है या ख़ाली हाथ आया है ? आदमी लोग दौड़े ही थे कि साँड़नी-सवार हवा हो गया।

थोड़ी देर में एक चपरासी नज़र आया। समझे, बस, यह क़ासिद है। चपरासी ने दरबान को ख़त दिया, और शहज़ादा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहब की बाछें खिल गईं। दिल ने गवाही दी कि सारी मुरादें मिल गईं। ख़त खोला, तो एक लेक्चर का नोटिस था। मायूस होकर ख़त को रख दिया, और सोचा कि अब ख़त का जवाब आना मुशकिल है। ग़म ग़लत करने को एक ग़ज़ल गाने लगे। इतने ही में डाक का हरकारा लाल पगिया जमाए, धानी दुपट्टा फड़काए, लहबर तोते की सूरत बनाए आ पहुँचा, और ख़त देकर रवाना हुआ। शहज़ादे ने ख़त खोला, और इबारत पढ़ी, तो फड़क गए। हाय, क्या प्यारी ज़बान है, क्या बोलचाल है। ज़बान और बयान में भी निगाह की तरह जादू कूट-कूटकर भरा है। उस नाज़ुक हाथ के सदक़े, जिसने ये सतरें लिखी हैं। लिखते वक़्त कलाई लचकी जाती होगी। एक-एक लफ़्ज़ से शोख़ी टपकती है, एक-एक हरफ़ से रंगीनी झलकती है। और नक़्शा तो ऐसा हल किया कि क़लम तोड़ दिए। आख़ीर में लिखा था—

इश्क़ का हाल बेसवा जानें,
हम बहू-बेटियाँ ये क्या जानें।

ख़ुद ही शेर पढ़ते थे, और ख़ुद ही जवाब देते थे।

एकाएक उनके एक दोस्त आए, और बोले—कहिए, कुछ जवाब आया? या धता बता दिया?

शहज़ादा—वाह, धता तुम-जैसों को बताती होंगी। लो, यह जवाब है।

दोस्त—(लिफ़ाफ़ा पढ़कर) वाह, बड़े अदब से ख़त लिखा है।

शहज़ादा—जनाब, कुछ बाज़ारी औरतें थोड़े हैं। एक-एक लफ़्ज़ से शराफ़त बरसती है।

दोस्त—फिर पूछते क्या हो! गहरे हैं। हमें न भूलिएगा।

अब शहज़ादे को फ़िक्र हुई कि किसी तरह मुलाक़ात की ठहरे। बने या बिगड़े। जब आमने-सामने बात हो, तब दिल को चैन आवे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोचते-सोचते आपको एक हिकमत सूझ ही गई। मूछों का सफ़ाया कर दिया, नक़ली बाल लगा लिए, ज़नाने कपड़े पहने, और पालकी पर सवार होकर हुस्नआरा के दरवाज़े पर जा पहुँचे। अपनी महरी को साथ ले लिया था। महरी ने पुकारा—अरे, कोई है, ज़रा अंदर ख़बर कर दो कि मिरज़ा हुमायूँ फ़र की बहन मिलने आई हैं।

बड़ी बेगम ने जो सुना, तो आकर हुस्नआरा से बोलीं—ज़रा क़रीने से बैठाना। तमीज़ से बातें करना। कोई भारी-सा जोड़ा पहन लो, समझीं!

हुस्नआरा—अम्माजान, कपड़े तो बदल लिए हैं।

बड़ी बेगम—देखूँ! यह क्या सफ़ेद दुपट्टा है?

हुस्नआरा—नहीं, अम्माजान, गुलाबी है। वही जामदानी का दुपट्टा, जिसमें कामदानी की आड़ी बेल है।

बड़ी बेगम—बेटा, कोई और भारी जोड़ा निकालो।

हुस्नआरा—हमें तो यही पसंद है।

इतने में आशिक़ बेगम पालकी से उतरीं, और जाकर बोलीं—आदाब बजा लाती हूँ।

हुस्नआरा—तसलीम, आइए।

आशिक़—आओ बहन, गले तो मिलें।

दोनों बहनें बेझिझक आशिक़ बेगम से गले मिलीं।

सिपहआरा—आमद हमारे घर में किसी महलक़ा की है;
यह शाने किर्दगार यह क़ुदरत ख़ुदा की है।

हुस्नआरा—यह कौन आया है रखकर फूल, मुए अंबर अफ़शाँ में;
सबा इतराई फिरती है जो इन रोज़ों गुलिस्ताँ में।

आशिक़—'सफ़दर' ज़बाँ से राज़-मुहब्बत अयाँ न हो;
दिल आशनाए-दर्द हो लब पर फ़ुग़ाँ न हो।

सिपहआरा—आपने आज ग़रीबों पर करम किया। हमारे बड़े नसीब।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आशिक़--बहन, हमारी तो कई दिन से ख़्वाहिश थी कि आप से मिलें, मगर फिर हम सोचे कि शायद आपको नागवार हो। हम तो ग़रीब हैं। अमीरों से मिलते हुए ज़रा वह मालूम होता है।

हुस्नआरा—बजा है। आप तो ख़ुदा के फ़ज़्ल से शहज़ादी हैं, हम तो आपकी रिआया हैं।

आशिक़—आप दोनों बहनें एक दिन कोठे पर टहल रही थीं, तो हुमायूँ फ़र ने मुझे बुलाकर दिखाया था।

हुस्नआरा ने गिलौरी बनाकर दी, और आशिक़ बेगम ने उन्हीं के हाथों से खाई। कत्था केवड़े में बसा हुआ, चाँदी-सोने का वर्क़ लगा हुआ, चिकनी डली और इलायची। ग़रज़ कि बड़े तकल्लुफ़ की गिलौरियाँ थीं। थोड़ी देर के बाद तरह-तरह के खाने दस्तरख़्वान पर चुने गए, और तीनों ने मिलकर खाना खाया। खाना खाकर आशिक़ बेगम ने बेतकल्लुफ़ी से हुस्नआरा की रानों पर सिर रख दिया और लेट रहीं। सिपहआरा ने उठकर कश्मीर का एक दुशाला उढ़ा दिया और क़रीब आकर बैठ गई।

आशिक़—बहन, अल्लाह जानता है तुम दोनों बहनें चाँद को भी शरमाती हो।

हुस्नआरा—और आप ?

अपने जोबन से नहीं यार ख़बरदार हनोज़ ;
नाज़ो-अंदाज़ से वाक़िफ़ नहीं ज़िनहार हनोज़।

तीनों में बहुत देर तक बातें होती रहीं। दस बजे के क़रीब आशिक़ बेगम उठ बैठीं, और फ़रमाया कि बहन, अब हम रुख़सत होंगे। ज़िंदगी है तो फिर मिलेंगे।

सिपहआरा— बेचैन कर रहा है क्या-क्या दिलाज़िगर को ;
हरदम किसी का कहना जाते हैं हम तो घर को।

इस तरह मुहब्बत की बातें करके आशिक़ बेगम रुख़सत हुईं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जाते वक़्त कह गईं कि एक दिन आपको हमारे यहाँ आना पड़ेगा। पालकी पर सवार होकर आशिक़ बेगम ने मामाओं, ख़िद-मतगारों और दरबानों को दो-दो अशर्फ़ियाँ इनाम की दीं, और चुपके-से मामा को एक तसवीर देकर कहा कि यह दे देना।

कहारों ने तो पालकी उठाई, और मामा ने अंदर जाकर तसवीर दी। हुस्नआरा ने देखा, तो धक-से रह गई। तसवीर के नीचे लिखा था—

"प्यारी,

मैं आशिक़ बेगम नहीं हूँ, हुमायूँ फ़र हूँ। अब अगर तुमने बेवफ़ाई की तो ज़हर खाकर जान दे दूँगा।"

हुस्नआरा—बहन, ग़ज़ब हो गया।

सिपहआरा—क्या, हुआ क्या! बोलो तो?

हुस्नआरा—लो, यह तसवीर देखो।

सिपहआरा—(तसवीर देखकर) अरे, ग़ज़ब हो गया! इसने तो बड़ा जुल दिया।

हुस्नआरा—(हीरे की कील नाक से निकालकर) बहन, मैं तो यह खाकर सो रहती हूँ।

सिपहआरा—(कील छीनकर) उफ़, ज़ालिम ने बड़ा धोखा दिया।

हुस्नआरा—हम गले मिल चुकीं। ज़ालिम ज़ानू पर सिर रख-कर सोया।

सिपहआरा—मगर बाजी, इतना तो सोचो कि बहन कह-कह-कर बात करते थे। बहन बना गए हैं।

हुस्नआरा—यह सब बातें हैं। किसकी बहन और कैसा भाई!

वह यों मुझे देखकर गया है;
खाल उसकी जो खींचिए सज़ा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिपह्आरा—वाह ! किसी की मजाल पड़ी है जो हमसे शरारत करे।

हुस्नआरा—ख़बरदार, अब उससे कुछ वास्ता न रखना। आदमियों को ताकीद कर दो कि किसी का ख़त बेसमझे-बूझे न लें, वर्ना निकाल दिए जायँगे।

सिपह्आरा—ज़रा सोच लो। लोग अपने दिल में क्या कहेंगे कि अभी तो इतने जोश से मिलीं, और अभी यह नादिरी हुक्म।

हुस्नआरा—हाँ, सच तो है। अभी तक तो हमीं-तुम जानते हैं।

सिपह्आरा—कहीं ऐसा न हो कि वह किसी से ज़िक्र कर दें।

हुस्नआरा—इससे इतमीनान रक्खो। वह शोहदे तो हैं नहीं।

सिपह्आरा—वाह, शोहदे नहीं, तो और हैं कौन! शोहदों के सिर पर क्या सींग होते हैं?

हुस्नआरा—अब आज से छत पर न चढ़ना।

सिपह्आरा—वाह बहन, बीच खेत चढ़ें। किसी ने देख ही लिया तो क्या! अपना दिल साफ़ रहना चाहिए।

हुस्नआरा—मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि शहज़ादे साहब तुम्हारी फ़िक्र में हैं।

सिपह्आरा—चलिए, बस, अब छेड़ख़ानी रहने दीजिए।

हुस्नआरा—अरे वाह! दिल में तो ख़ुश हुई होगी, चाहे ज़बान से न कहो।

सिपह्आरा—आप भी क्या वाही-तबाही बकती हैं।

हुस्नआरा—आख़िर बुरा क्या है? शहज़ादे हैं कि नहीं। और सूरत तो तुम देख ही चुकी हो। लो, आज के दूसरे ही महीने दरवाज़े पर शहनाई बजती होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिपहआरा—हम उठकर चले जायँगे हाँ ! यह हँसी हमको गवारा नहीं।

हुस्नआरा—खुदा की क़सम, मैं दिल्लगी से नहीं कहती। आख़िर उस बेचारे में क्या बुराई है ! हसीन, मालदार, कमसिन, शौक़ीन, नेकबख़्त।

सिपहआरा—बस ! और दस-पाँच बातें कहिए न ?

सिपहआरा के दिल पर इन बातों का बहुत बड़ा असर हुआ। आदमी की तबीयत भी क्या जल्द पलटा खाती है। अभी तो हुमायूँ फ़र को बुरा-भला कह रही थीं, और अब दिल-ही-दिल में खिची जाती हैं कि हाँ है तो सच। आख़िर उनमें ऐब ही क्या है ?

दोनों बहनों में तो ये बातें हो रही थीं, और वह महरी, जो आशिक़ बेगम के साथ आई थी, दरवाज़े पर चुपकी खड़ी सुन रही थी। जब हुस्नआरा चुप हुई, तो उसने अंदर पहुँचकर सलाम किया।

हुस्नआरा—कौन हो ?

महरी—हुज़ूर, मैं हूँ अच्छन।

हुस्नआरा—कहाँ से आई हो ?

महरी—आप मुझे इतनी जल्द भूल गईं। बेगम साहबा ने भेजा है।

हुस्नआरा—बेगम साहबा कौन ?

महरी—वही आशिक़ बेगम जो आपसे मिल गई हैं।

हुस्नआरा—कहो, क्या पैग़ाम भेजा है !

महरी—(मुसकिराकर) हुज़ूर को ज़रा वहाँ तक तकलीफ़ दी है।

महरी का मुसकिराना दोनों बहनों को बहुत बुरा लगा। मगर करतीं क्या। महरी उन्हें चुप देखकर फिर बोली—बेगम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहबा ने फ़रमाया है कि अगर कुछ हर्ज न हो, तो इस वक़्त हमारे यहाँ आइए।

सिपहआरा—कह देना, हमें फ़ुरसत नहीं।

महरी—उन्होंने कहा है कि अगर आपको फ़ुरसत न हो, तो मैं ख़ुद ही आ जाऊँ।

सिपहआरा—जी, कुछ ज़रूरत नहीं है। बस, अब दूर ही से सलाम है। और अब आज से तुम न आना यहाँ। सुना कि नहीं!

महरी—बहुत अच्छा। लौंडी हुक्म बजा लावेगी। बेगम साहबा की जैसी नौकर, वैसी ही हुज़ूर की।

सिपहआरा—चलो, बस। बहुत बातें न बनाओ। कह देना, ख़ैर इसी में है कि अब कोई ख़त-वत न आवे। शहज़ादे हैं इससे छोड़ दिया, कोई दूसरा होता तो ख़ून हो जाता। इतने बड़े शहज़ादे और ग़रीब शरीफ़ज़ादियों पर नज़र डालते हैं। बस चले, तो वह सज़ा दूँ कि उम्र-भर याद करें। वाह! अच्छा जाल फैलाया है।

हुस्नआरा—बस, अब ख़ामोश भी रहो। कोई सुन लेगा। अब कुछ कहो न सुनो। (महरी से) चलो, सामने से हटो।

महरी—हुज़ूर, जानबख़्शी हो तो अर्ज़ करूँ?

हुस्नआरा—अब तुम जाओ, हमने कई दफ़े कह दिया। नहीं पछताओगी।

महरी रवाना हुई। क़सम खाई कि अब नहीं आने की। सिपहआरा का चेहरा मारे ग़ुस्से के लाल-भभूका हो गया। हुस्नआरा समझाती थीं कि बहन, अब और बातों का ख़याल करो। लेकिन सिपहआरा ठंडी न होती थी। बहुत देर के बाद बोली—बस, मालूम हुआ कि कोई शोहदा है; अगर सच्ची मुहब्बत है, तो हया और शर्म के साथ ज़ाहिर करना चाहिए या इस बेतुकेपन से!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बयालीसवाँ परिच्छेद

शहज़ादा हुमायूँ फ़र महरी को भेजकर टहलने लगे, मगर सोचते जाते थे कि कहीं दोनों बहनें ख़फ़ा न हो गई हों, तो फिर बेढब ठहरे। बात की बात जाय, और शायद जान के भी लाले पड़ जायँ। देखें, महरी क्या ख़बर लाती है। ख़ुदा करे, दोनों महरी को साथ लेकर छत पर चली आवें। इतने में महरी आई, और मुँह फुलाकर खड़ी हो गई।

शहज़ादा—कहो, साफ़-साफ़।

महरी—हुज़ूर, क्या अर्ज़ करूँ ?

शहज़ादा—वह तो हम तुम्हारी चाल ही से समझ गए थे कि बेढब हुई। कह चलो, बस।

महरी—अब लौंडी वहाँ नहीं जाने की।

शहज़ादा—पहले मतलब की बात तो बताओ कि हुआ क्या ?

महरी—मैंने जाकर परदे के पास से सुना कि आप ही की बातें चुपके-चुपके कर रही हैं। मैं जो गई, तो बड़ी बहन ने रुखाई के साथ बातें कीं, और छोटी बहन तो बस, बरस ही पड़ीं। मैं खड़ी काँप रही थी कि किस मुसीबत में पड़ी। बहुत तेज़ होके बोलीं—अब न आना, नहीं तो तुम जानोगी। और उनसे भी कान खोलके कह देना कि बहुत चल न निकलें। बहुत ही बिगड़ीं। मैं चोर की तरह चुपके-चुपके सुनती रही।

हुमायूँ—अफ़सोस, तो बहुत ही बिगड़ीं ?

महरी—क्या कहूँ हुज़ूर, अपने आपे ही में नहीं थीं।

हुमायूँ—हमने बड़ी ग़लती की। पहले तो हमें जाना न था, और गए, तो पहचनवाना न था।

महरी—अब जाने-वाने का इरादा न कीजिएगा !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे दिन हुमायूँ फ़र छत पर निकले, तो क्या देखते हैं कि हुस्नआरा बेगम अपने कोठे पर चढ़ी हैं और मुँह पर नक़ाब डाले खड़ी हैं। इतने में सिपहआरा भी ऊपर आईं और शहज़ादे को देखते ही उचककर आड़ में हो रहीं। दम-के-दम में हुस्नआरा भी आँखों से ओझल हो गईं। बेचारे नज़र भरकर देखने भी न पाए थे कि दोनों नज़र से ग़ायब हो गईं। सोचे, ऐसी ही हया फट पड़ी थी, तो कोठे पर क्यों आईं!

अब उधर की कैफ़ियत सुनिए। हुस्नआरा को मालूम ही न था कि हज़रत इस वक़्त कोठे पर टहल रहे हैं। जब सिपहआरा ने कोठे पर आकर शहज़ादे को देख लिया, तो चुपके से कहा—बहन, यहीं बैठ जाओ। वह ताक-झाँक से बाज़ न आवेंगे। हुस्नआरा ने छलाँग भरी, तो खट-से नीचे। सिपहआरा भी उचककर ज़ीने पर जा पहुँची।

हुस्नआरा—पटकी पड़े। ऐ वाह, अच्छा घर परख लिया है।

सिपहआरा—मेरा बस चले, तो उसका घर उजड़वा दूँ।

हुस्नआरा—यह क्या सितम करती हो? घर आबाद करते हैं या उजड़वाते हैं?

सिपहआरा—बाजी, अल्लाह ख़ैर करे। यह मुआ जब देखो, कोठे पर खड़ा रहता है।

हुस्नआरा—तो तुम काहेको अपनी ज़बान ख़राब करती हो! आदमी ही तो वह भी है।

सिपहआरा—बाजी, तुम चाहे मानो, चाहे न मानो; यह मुआ बहुरूपिया है कोई।

इतने में एक लौंडी ने आकर कहा—लीजिए, बड़ी बेगम साहबा ने यह मिठाई दी है। वह जो उस दिन आई नहीं थीं, उन्होंने मिठाइयों के दो ख़्वान भेजे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौंडी की लड़की का नाम प्यारी था। उसने मिठाई जो देखी, तो तोतलाकर बोली—जला-सी हमें दीजिए।

सिपह्आरा—अरे वाह, इनको दीजिए। बड़ी वह बनके आई हैं! अच्छा, इतना बता दे कि कै ब्याह करेगी?

प्यारी—पहले मिठाई दीजिए, तो बताऊँ।

सिपह्आरा—तो मिल चुकी। गढ़ैया में मुँह धो आ।

प्यारी—मैं एक खसम करूँगी, और फिल छोड़के दूसला। और फिल तीसला। फिल चौथा। उन सबको लातें माल-मालके निकाल दूँगी। ले, अब दीजिए!

सिपह्आरा—जा अब न दूँगी।

हुस्नआरा—दे दो, दे दो, रो रही है।

सिपह्आरा—अच्छा ले, मगर पानी न पीने दूँगी।

प्यारी—हाँ, न पीऊँगी। लाओ तो जला।

इस पर क़हक़हा पड़ा। ज़रा-सी लड़की और कैसी बातें बनाती है! इतने में बड़ी बेगम आकर बोलीं—अरे, तुम्हारी वही गोइयाँ जो उस दिन आई थीं, उन्हीं के यहाँ से मिठाई के दो ख़्वान आए हैं। एक औरत साथ थी। कह गई है कि दोनों बहनों को कल बुलाया है। सो कल किसी वक़्त चली जाना, घड़ी-दो घड़ी दिल बहला के चली आना। नहीं तो मुफ़्त की शिकायत होगी।

हुस्नआरा—कल की कल के हाथ है अम्माजान।

बेगम साहब तो चली गईं। इधर हुस्नआरा का रंग उड़ गया। बोलीं—बहन, यह टेढ़ी खीर है।

सिपह्आरा—एक काम कीजिए। अब बे खुशामद के काम न चलेगा। उनके नाम एक ख़त लिखिए, और साफ़-साफ़ मतलब समझा दीजिए। मुए को अच्छे-अच्छे लटके याद हैं। जब इधर दाल न गली, तो अम्माजान से लासा लगाया। और वह भी कितनी भोली हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाएक दरवाज़े पर एक नया गुल खिला। दस-बारह आदमियों ने मिलकर गाना शुरू किया।

मान करे नँदलाल सों, सोहागिन जचा मान करे नँदलाल सों।

दूध-पूत और अन्न-धन-लच्छमी गोद खिलाए नँदलाल। मान०।

दस-पाँच आदमी गाते हैं। दो-चार ताल देते जाते हैं। दो-एक मजीरा बजाते हैं। एक हज़रत ढोलकी थपथपाते हैं।

घर-भर में खलभली मच गई कि यह माजरा क्या है। लड़का किसके हुआ है। बड़ी बेगम बेवा, दोनों बहनें कुँआरी। यह क्या अंधेर है भई!

मामा—अरे तुम कौन लोग हो?

कई आदमी—ऐ हुज़ूर, ख़ुदा सलामत रक्खे। भाँड़ हैं।

एक साहब हिनहिनाकर बोले—मेरे बछेड़े की कुछ न पूछो। यह मा के पेट ही से हिनहिनाता निकला था। दूसरे साहब ने उचककर फ़रमाया—हें-हें-हें, दो बागे हैं, और उधर तालियाँ बज रही हैं। "मान करे नँदलाल..."

बड़ी बेगम—अरे लोगो, यह है क्या? यह दिन-दहाड़े क्या अंधेर है? इन निगोड़े भाँड़ों से पूछो—आए किसके यहाँ हैं?

दरबान—चुप रहो जी। आख़िर कहाँ आए हो?

एक भाँड़—वाह शेरा, क्यों न हो। क्या दुम हिलाके भूँके हो।

दरबान—आख़िर तुम लोगों से किसने क्या कहा? कुछ घास तो नहीं खा गए हो?

मामा—यह क्या ग़ज़ब करते हो!

भाँड़—ग़ज़ब पड़े बुरे की जान पर, और आँख लड़े हमसे।

सिपाही—मियाँ, क़सम खाकर कहते हैं कि यहाँ लड़का-वड़का नहीं हुआ। तुम मानते ही नहीं हो।

भाँड़—वाह जवान! क्यों न हो, खड़ी मूँछें और चढ़ी दाढ़ी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिपाही—(आहिस्ता से) भला लड़का होगा किसके ? दो लड़कियाँ, वे कुँआरी हैंगी ; एक बड़ी बेगम, वह बूढ़ी खप्पट। और तो कोई औरत ही नहीं ; तुम यह बक क्या रहे हो !

भाँड़—यह अच्छी दिल्लगी है भई, फिर उस मर्दक ने कहा ही क्यों था ?

सिपाही—यह काँटे किसके बोए हुए हैं ?

भाँड़—अरे साहब, कुछ न पूछिए। बड़ा चकमा हो गया।

दरबान—ले, अब मजीरा-वजीरा हटाओ ; नहीं तो यहाँ ठीक किए जाओगे।

भाँड़—वल्लाह, हो बड़े नमकहलाल।

उधर दोनों बहनों में यों बातें होने लगीं—

सिपहआरा—यह उसी की शरारत है।

हुस्नआरा—किनकी ? नहीं ; तोबा।

सिपहआरा—आप चाहे न मानें, हम तो यही कहेंगे।

हुस्नआरा—बहन, वह शहज़ादा है, उससे यह हरकत नहीं हो सकती।

सिपहआरा—अच्छा, फिर ये भाँड़ क्यों आए ? अगर किसी ने बहकाकर भेजा नहीं, तो आए कैसे ?

हुस्नआरा—हाँ, कहती तो सच हो ; मगर अल्लाह जानता है, उससे ऐसी हरकत नहीं हो सकती।

सिपहआरा—आप मेरे कहने से उन्हें एक ख़त लिख भेजिए कि फिर ऐसी हरकत की, तो हम ज़हर ही खा लेंगे।

हुस्नआरा ख़त लिखने पर राज़ी हो गई और यों ख़त लिखा—

हया से मुँह न मोड़ेंगे, सताए जिसका जी चाहे ;
वफ़ादारी में हमको आज़माए जिसका जी चाहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी मानिंदे गौहर आबरू 'सफ़दर' न जाएगी ;
बज़ाहिर ख़ाक में हमको मिलाए जिसका जी चाहे।

अरे ज़ालिम, कुछ ख़ुदा का डर भी है? क्यों जी, शरीफ़ों की ये ही हरकतें होती हैं? शर्म नहीं आती! बहन बनाकर अब ये शरारतें करते हो। ये ही मरदों के काम हैं! अगर अब की किसी को भेजा तो हम हीरे की कनी खा लेंगी। ख़ून तुम्हारी गर्दन पर होगा। आख़िर तुम अपने दिल में हमको समझते क्या हो! अगर भूत सिर पर सवार है, तो कहीं और मुँह काला कीजिए। हम घरगिरस्त शरीफ़ज़ादियाँ, इन बातों से हमें क्या वास्ता? दिल लेना जानें न दिल देना।

काँटों में न हो अगर उलझना, थोड़ा लिखा बहुत समझना।

हुमायूँ फ़र के पास जब यह ख़त पहुँचा तो बहुत शरमाए। समझ गए कि यहाँ हमारी दाल न गलेगी। दिल में इरादा कर लिया कि अब भूलकर भी ऐसी चालें न चलेंगे।

तेंतालीसवाँ परिच्छेद

हुस्नआरा और सिपहआरा, दोनों रात को सो रही थीं कि दरबान ने आवाज़ दी—मामाजी, दरवाज़ा खोलो।

मामा—दिलबहार, देखो कौन पुकारता है?

दिलबहार—ऐ वाह, फिर खोल क्यों नहीं देतीं?

मामा—मेरी उठती है जूती; दिन-भर की थकी माँदी हूँ।

दिलबहार—और यहाँ कौन चंदन-चौकी पर बैठा है।

दरबान—अजी, लड़ लेना पीछे, पहले किवाँड़े खोल जाओ।

मामा—इतनी रात गए क्यों आफ़त मचा रक्खी है?

दरबान—अजी, खोलो तो, सवारियाँ आई हैं।

हुस्नआरा—कहाँ से? अरे दिलबहार, मामा, क्या सब-की-सब मर गईं? अब हम जायँ दरवाज़ा खोलने?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा की आवाज़ सुनकर सब-की-सब एकदम उठ खड़ी हुईं। मामा ने परदा कराकर सवारियाँ उतरवाईं।

सिपहआरा—अख़्हा ! रूहअफ़ज़ा बहन हैं, और बहारबेगम। आइए, बंदगी।

ये दोनों हुस्नआरा की चचेरी बहनें थीं। दोनों की शादी हो चुकी थी। ससुराल से दोनों बहनों से मुलाक़ात करने आई थीं। चारों बहनें गले मिलीं। ख़ैर-आफ़ियत के बाद हुस्नआरा ने कहा—दो बरस के बाद आप लोगों से मुलाक़ात हुई।

बहारबेगम—हाँ, और क्या !

सब-की-सब बातें करते-करते सो गईं। सुबह को हुस्नआरा ने बड़ी बेगम से दोनों बहनों के आने की ख़बर सुनाई।

बड़ी बेगम—जभी मेरी बाईं आँख फड़कती थी। मैं भी कहूँ कि अल्लाह क्या ख़ुशख़बरी सुनूँगी। कहाँ हैं कहाँ, ज़रा बुलाओ तो।

हुस्नआरा—अभी सो रही हैं।

बड़ी बेगम—ऐ, तो जगा दे बेटा ! अच्छी तो हैं ?

हुस्नआरा ने आकर देखा, तो दोनों ग़ाफ़िल सो रही हैं। रूह-अफ़ज़ा की लटें काली नागिन की तरह बल खाकर तकिए पर से पलँग के नीचे लहरा रही हैं। बहारबेगम का दुपट्टा कहीं है, दुलाई कहीं। हाथ सीने पर रक्खे हुए ख़र्राटे ले रही हैं।

हुस्नआरा—अजी, सोते ही रहिएगा ! अम्माजान बुलाती हैं।

रूहअफ़ज़ा—बहन, अब तक आँखों में नींद भरी है। नमाज़ पढ़ लूँ, तो चलूँ।

हुस्नआरा—(बहारबेगम का हाथ हिलाकर) ऐ बहन, अब उठो।

बहारबेगम— अल्लाह, इतना दिन चढ़ आया ! सारे में धूप फैल गई ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा—उठिए, अम्माजान बुला रही हैं।

बहार बेगम—रूहअफ़ज़ा को तो जगाओ।

सिपहआरा—वह क्या बैठी हैं सामने।

दोनों ने उठकर नमाज़ पढ़ी, और बड़ी बेगम के पास चलीं। रूहअफ़ज़ा जाते ही बड़ी बेगम से चिमट गईं। बहार भी उनसे गले मिलीं, और अदब के साथ फ़र्श पर बैठीं।

बड़ी बेगम—क्यों रूहअफ़ज़ा, अब तो उस बीमारी ने पीछा छोड़ा? क्या कहते हैं, तोबा, मुझे तो उसका नाम भी नहीं आता।

सिपहआरा—(मुसकिराकर) डेंगू बुख़ार। आप तो रोज़-रोज़ भूल जाती हैं।

बड़ी बेगम—हाँ, वही डंकू।

सिपहआरा—डंकू नहीं, डेंगू।

रूहअफ़ज़ा—अब एक महीने से पीछा छुटा है कहीं। मेरी तो जान पर बन आई थी।

बड़ी बेगम—चेहरा कैसा ज़र्द पड़ गया है!

बहारबेगम—अब तो आप इन्हें अच्छी देखती हैं। यह तो घुल-कर काँटा हो गई थीं।

बड़ी बेगम—हकीम मुहम्मदहुसेन ने इलाज किया था न वहाँ?

रूहअफ़ज़ा—जी नहीं, एक डॉक्टर था।

बड़ी बेगम—ऐंहै, भूले से इलाज न करना डागडर-वागडर का।

रूहअफ़ज़ा—मैं तो उसकी बोली ही न समझूँ। कहे, ज़बान दिखाओ। जब मुँह दिखावें तब तो ज़बान दिखावें? मैंने कहा—यह तो हश्र तक नहीं होने का। फिर नब्ज़ देखी, तो हाथ परदे से निकाल लिया, और कहा चूड़ियाँ उतार डालो। मैंने सोने की चूड़ियाँ तो उतार डालीं, मगर शीशे की एक चूड़ी पहने रही। तब कहने लगा, हमसे बातें करो। तब तो मैंने दूल्हा भाई को बुलाया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कहा—वाह साहब, आप तो अच्छे डॉक्टर को लाए! मुँह क्या, हम तो एँड़ी भी न दिखावें, और कहता है, हमसे बातें करो। यहाँ निगोड़ी गिटपिट किसे आती है! बस, मैं दरगुज़री ऐसे इलाज से। आप इन्हें धता बताइए। इतने में उसने बड़ी जेब से निकाला, और कहने लगा—गिनती गिनो। सुनिए, जैसे लड़कियों के मदरसे में इम्तिहान ले रहे हों। आख़िर मैंने एक-दो-पाँच-बीस-ग्यारह—अनाप-शनाप बका। बड़ी कड़वी दवाइयाँ दीं, बारे बच गई।

बड़ी बेगम—बहार, यह तुम महीनों ख़त क्यों नहीं भेजती हो?

बहारबेगम—अम्माजान, ख़तों का मैं तो तार बाँध दूँ, मगर जब कोई लिखनेवाला भी हो।

रूहअफ़ज़ा—यह तो गिरस्थी के धंधे में ऐसी पड़ गई कि पढ़ा-लिखा सब चौपट कर दिया।

हुस्नआरा—और दूल्हा भाई ने तो ख़त लिखने की क़सम खाई है।

रूहअफ़ज़ा—दिन-भर बैठे शेर कहा करते हैं।

बड़ी बेगम—कहो, तुम्हारी सास तो अच्छी हैं?

बहारबेगम—हाँ, न मुझे मौत आती है, न उन्हें।

हुस्नआरा—कल-परसों तक दूल्हा भाई यहाँ आवेंगे, तो मैं उनको ख़ूब झाड़ूँगी।

बड़ी बेगम—बहार, सच्ची बात तो यह है कि तुम भी ज़रा तेज़-मिज़ाज हो।

सिपहआरा—जो एक गर्म और एक नर्म हो, तो बात बने। और जो दोनों तेज़ हुए, तो कैसे बने।

बहारबेगम—अब तुम अपनी सास से न लड़ना। तुम नर्म ही रहना। मेरे तो नाक में दम आ गया।

बड़ी बेगम—अब की मिरज़ा यहाँ आवें, तो समझाऊँ।

बहारबेगम—अम्माजान, मुझसे उनसे हश्र तक न बनेगी। जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई लौंडी-बाँदी भी मुझसे अच्छी तरह बातें करे, तो जल मरती हैं। और, मैं जान-बूझकर और जलाती हूँ।

हुस्नआरा—बहन, मिल-जुलकर रहना चाहिए।

बहारबेगम—जब तुम ससुराल जाओगी, ऐसी ही सास पाओगी, और फिर मिल-जुलकर रहोगी, तो सात बार सलाम करूँगी।

रूहअफ़ज़ा—झगड़ा सारा यह है कि दूल्हा भाई इनकी ख़ातिर बहुत करते हैं। बस, इनकी सास जली मरती हैं कि यह जोरू की ख़ातिर क्यों करता है?

बहारबेगम—अल्लाह जानता है, हज़ारों दफ़े तरह दे जाती हूँ; मगर जब नहीं रहा जाता, तो मैं भी बकने लगती हूँ। मुझे तो उन्होंने बेहया कर दिया। अब वह एक कहती हैं, तो मैं दस सुनाती हूँ।

बड़ी बेगम—(पीठ ठोककर) शाबाश!

हुस्नआरा—मेरी तरफ़ से भी पीठ ठोक दीजिएगा।

बहारबेगम—बहन, अभी किसी से पाला नहीं पड़ा। हमको तो ऐसा दिक़ कर रक्खा है कि अल्लाह करे, अब वह मर जाय, या हम।

चारों बहनें यहाँ से उठकर अपने कमरे में गईं, और बनाव-सिंगार करने लगीं। हुस्नआरा, सिपहआरा और रूहअफ़ज़ा तो बन-ठनकर मौजूद हो गईं, मगर बहारबेगम अभी बाल ही सँवार रही थीं।

रूहअफ़ज़ा—इन्हें जब देखो, बाल ही सँवारा करती हैं।

बहारबेगम—तुम आए-दिन यही ताने दिया करती हो।

रूहअफ़ज़ा—ऐसी तो सूरत भी नहीं अल्लाह ने बनाई है!

बहारबेगम ने कोई दो घंटे में कंघी-चोटी से फ़राग़त पाई। फिर चारों निकलकर बातें करने लगीं। सिपहआरा डली कतरती थीं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा गिलौरियाँ बनाती थीं, रूहअफ़ज़ा एक तसवीर की तरफ़ ग़ौर से देखती थीं; मगर बहारबेगम की निगाह आईने ही पर थी।

सिपहआरा—अरे, अब तो आईना देख चुकीं ? या घंटों सूरत ही देखा कीजिएगा ?

बहारबेगम—तुम कहती जाओ, हम जवाब ही न देंगे।

रूहअफ़ज़ा—अल्लाह जानता है, इन्हें यह मरज़ है।

सिपहआरा—हाँ, मालूम तो होता है।

बहारबेगम—तुम सब बहनें एक हो गईं। अपनी ही ज़बान थकाओगी।

हुस्नआरा—रूहअफ़ज़ा, तुम उठकर आईने पर कपड़ा गिरा दो।

रूहअफ़ज़ा—चिढ़ जायँगी।

हुस्नआरा—हाँ बहन, बताओ तो यह बात क्या है ? सास से बनती क्यों नहीं तुमसे ?

बहारबेगम—ऐसी सास को तो बस, चुपके से ज़हर दे दे। कुछ कम सत्तर की होने आई, अभी ख़ासी कठौता-सी बनी है। मेरा हाथ पकड़ ले, तो छुड़ाना मुशकिल हो जाय। मुई देवनी है।

हुस्नआरा—क्या यह भी कोई ऐब है ?

बहारबेगम—एक दिन का ज़िक्र सुनो, किसी के यहाँ से महरी आई। कुछ मेवे लाई थी। वह उस वक़्त झूठ-मूठ कुरान-शरीफ़ पढ़ रही थीं। महरी ने आके मुझको सलाम किया, और मेवे की तश्तरी सामने रख दी। बस, दिन-भर मुँह फुलाए रहीं।

हुस्नआरा—मगर बातें तो बड़ी मीठी-मीठी करती हैं।

बहारबेगम—एक दिन किसी ने उनको दो चकोतरे दिए। उन्होंने एक चकोतरा मुझको भेजा, और एक मेरी ननँद को। वह उनसे भी बढ़कर बिस की गाँठ। जाकर मा से जड़ दिया कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाई ने हमको आधा सड़ा हुआ चकोतरा दिया, और भाभी को बड़ा-सा ! बस, इस पर सुबह से शाम तक चरख़ा कातती रहीं।

हुस्नआरा—मैं एक बात पूछूँ ? सच-सच कहना। दूल्हा भाई तो प्यार करते हैं ?

बहारबेगम—यही तो ख़ैर है।

हुस्नआरा—दिल से ?

बहारबेगम—दिल और जान से।

हुस्नआरा—भला, मा से बनती है ?

बहारबेगम—वह ख़ुद जानते हैं कि बुढ़िया चिड़चिड़ी औरत है।

हुस्नआरा—बहन, वह तो बड़ी हैं ही, मगर तुम भी तेज़ी के मारे उनको और भी जलाती हो। जो मिलके चलो, तो वह तुम्हारा पानी भरने लगें।

बहारबेगम—अच्छा, तुम्हीं बताओ, कैसे मिलके चलूँ ?

हुस्नआरा—अब की जब जाओ, तो अदब के साथ झुककर सलाम करो।

बहारबेगम—किसको ?

हुस्नआरा—अपनी सास को, और किसको ?

बहारबेगम—वाह ! मर जाऊँ, मगर सलाम न करूँ मुरदार को।

हुस्नआरा—बस, यही तो बुरी बात है।

बहारबेगम—रहने दीजिए बस। वह तो हमको देखकर जल मरें, और हम उनको झुकके सलाम करें। एक दिन मामा से बोलीं कि हमारा पानदान उसको क्यों दे आई ? मेरे मुँह से बस, इतनी-सी बात निकल गई कि मेरी सास काहे को हैं, यह तो मेरी सौत हैं। बस, इस पर इतना बिगड़ीं कि तोबा ही भली।

हुस्नआरा—बहन, तुमने भी तो ग़ज़ब किया। तुम्हारे नज़दीक यह इतनी ही-सी बात थी ? सास को सौत बनाया, और उसको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतनी ही-सी बात कहती हो ! अगर तुम्हारी बहू आवे, और तुम्हें सौत बनावे, तब देखूँगी, उछलती-कूदती हो कि नहीं ?

सिपह्आरा—उफ़ ! बड़ी बुरी बात कही।

रूहअफ़ज़ा—तो अब बन चुकी बस।

बहारबेगम—तुम सबको उसने कुछ रिशवत ज़रूर दी है। जब कहती हो उसी की-सी।

सिपह्आरा—हमारी बहन, और ऐसी मुँहफट ! सास को सौत बनावे !

हुस्नआरा—और फिर शरमाए, न शरमाने दे।

बहारबेगम—अच्छा बताइए, तो पहले झुकके सलाम करूँ, ख़ूब ज़मीन पर सोकर। फिर ?

हुस्नआरा—मेरे तो बहन, रोंगटे खड़े हो गए कि तुमसे यह कहा क्योंकर गया !

बहारबेगम—बताओ-बताओ। हमारी क़सम, बताओ।

हुस्नआरा—तुम हँसोगी, और हमें होगा रंज।

बहारबेगम—नहीं, हँसेंगे नहीं। बोलो।

हुस्नआरा—जाकर सलाम करो।

बहारबेगम—जो वह जवाब न दें, तो अपना-सा मुँह लेकर रह जाऊँ ?

सिपह्आरा—वाह ! ऐसा हो नहीं सकता।

हुस्नआरा—न जवाब दें, तो क़दमों पर गिर पड़ो।

बहारबेगम—मेरी पैज़ार गिरती है क़दमों पर। वह जैसा मेरे साथ करती हैं, वैसा उनकी आँखों, घुटनों के आगे आवे।

हुस्नआरा—ख़र्च तो उजला है, या कंजूस है।

बहारबेगम—तीन सौ वसीक़े के हैं, ढाई सौ गाँव से आते हैं। नक़द कोई डेढ़ लाख से ज़्यादा-ही-ज़्यादा होगी। मकान, बाग़,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूकानें अलग हैं। वकालत में कोई छः-सात सौ का महीना मिलता है।

हुस्नआरा—तुमको क्या देते हैं ?

बहारबेगम—बुढ़िया से चुराकर मेरे ऊपर के ख़र्च के लिये सौ रुपए मुक़र्रर हैं।

सिपहआरा—रूहअफ़ज़ा बहन, तुम्हारे मियाँ क्या तनख़्वाह पाते हैं ?

रूहअफ़ज़ा—चार सौ हुए हैं। चार-पाँच सौ ज़मीन से मिल जाते हैं।

हुस्नआरा—तुम्हारी सास तो अच्छी हैं ?

रूहअफ़ज़ा—हाँ, बेचारी बड़ी सीधी हैं। हाँ, उनकी लड़की ने अलबत्ता मेरी नाक में दम कर दिया है। जब आती है, रोज़ माको भरा करती है।

सिपहआरा—बहारबेगम जो वहाँ होतीं, तो उनसे भी न बनती।

बहारबेगम—अच्छा, चुप ही रहिएगा, नहीं तो काट खाऊँगी। बड़ी वह बनके आई हैं।

इतने में काली-काली घटा छा गई। ठंडी-ठंडी हवा चलने लगी। बहार ने कहा—जी चाहता है, छत पर से दरिया की सैर करें। सबने कहा—हाँ-हाँ, चलिए। मगर हुस्नआरा को याद आ गई कि हुमायूँ फ़र ज़रूर ख़बर पावेंगे और कोठे पर आके सतावेंगे। लेकिन मजबूर थी। चारों चौकड़ियाँ भरती हुई छत पर जा पहुँचीं। हवा इस ज़ोर से चलती थी कि दुपट्टा खिसका जाता था। गोरा-गोरा बदन साफ़ नज़र आता था। किसी ने जाकर हुमायूँ फ़र से कह दिया कि इस वक़्त तो सामनेवाला कोठा इंदर का अखाड़ा हो रहा है। उनको ताब कहाँ ? चट-से कोठे पर आ पहुँचे। सिपहआरा ऊपर के कमरे में हो रही। रूहअफ़ज़ा वहीं बैठ गई। हुस्नआरा ने एक छलाँग भरी, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रावटी में। मगर बहारबेगम ने बेढब आँखें लड़ाईं। हुमायूँ फ़र ने बहुत झुककर सलाम किया।

बहारबेगम—आँखें ही फूटें, जो इधर देखे।

हुमायूँ—(हाथ के इशारे से) अपना गला आप काट डालूँगा।

बहारबेगम—शौक़ से।

नन्हीं-नन्हीं बूँदें पड़ने लगीं और चारों परियाँ नीचे चल दीं। मिरज़ा हुमायूँ फ़र मुँह ताकते रह गए।

हुस्नआरा—(बहार से) आप तो खूब डटके खड़ी हो गईं।

बहारबेगम—क्यों, क्या कोई घोलकर पी जायगा? मैं इन्हें जानती हूँ, हुमायूँ फ़र तो हैं।

सिपहआरा—तुम क्योंकर जानती हो बहन!

बहारबेगम—ऐ वाह, और सुनिएगा, लड़कपन में हम खेला किए हैं इनके साथ! खूब चपतें लगाया किए हैं इनको! इनकी मा और दादी में खूब झोटमझोटा हुआ करता था।

इतने में मामा ने आकर कहा—बड़ी बेगम साहबा ने ये मेवे भेजे हैं।

सिपहआरा—देखूँ? ये चिलग़ोज़े लेती जाओ।

प्यारी—हमको दीजिए।

सिपहआरा—इनको दीजिए 'पीर न शहीद, नकटों को छापा' सबके बदले इनको दीजिए।

हुस्नआरा—अच्छा, पहले सलाम कर।

चारों बहनों ने मज़े से मेवे चक्खे। एक दूसरी के हाथ से छीन-छीनकर खाती थीं। जवानी की उमंग का क्या कहना!

उधर मिरज़ा हुमायूँ फ़र अपनी छत पर खड़े यह शेर पढ़ रहे थे।

न मुड़कर भी बेदर्द क़ातिल ने देखा;
तड़पते रहे नीम जाँ कैसे-कैसे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब बड़ी देर तक छत पर किसी को न देखा, तो यह शेर ज़बान पर लाए—

कल बदामोज़ (रक़ीब) ने क्या तुमको सिखाया है हाय!
आज वह आँख, वह चश्मक, वह इशारा ही नहीं।

चवालीसवाँ परिच्छेद

एक दिन हुस्नआरा को सूझी कि आओ, अब की अपनी बहनों को जमा करके एक लेक्चर दूँ। बहारबेगम बोलीं—क्या? क्या दोगी!

हुस्नआरा—लेक्चर—लेक्चर। लेक्चर नहीं सुना कभी?

बहारबेगम—लेक्चर क्या बला है?

हुस्नआरा—वही, जो दूल्हा भाई जलसों में आए-दिन पढ़ा करते हैं।

बहारबेगम—तो हम क्या तुम्हारे दूल्हा भाई के साथ-साथ घूमा करते हैं? जाने कहाँ-कहाँ जाते हैं, क्या पढ़-पढ़के सुनाते हैं। इतना हमको मालूम है कि शेर बहुत कहते हैं। एक दिन हमसे कहने लगे—चलो, तुमको सैर करा लावें। फ़िटन पर बैठ लो। रात का वक़्त है, तुम दुशाले से खूब मुँह और जिस्म छुपा लेना। मैंने कानों पर हाथ धरे कि न साहब, बंदी ऐसी सैर से दरगुज़री। वहाँ जाने, कौन-कौन हो, हम नहीं जाने के।

सिपहआरा—अब की आवें, तो उनके साथ हम ज़रूर जायँ।

बहारबेगम—चलो, बैठो, लड़कियाँ बहनोइयों के साथ यों नहीं जाया करतीं।

रूहअफ़ज़ा—मगर सुनेगा कौन? दस-पाँच लड़कियाँ और भी तो हों कि हमी-तुम टुटरूँ-टूँ?

सिपहआरा—देखिए, मैं बुलवाती हूँ। अभी मामा को भेजे देती हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा—मगर नज़ीर को न बुलवाओ। उनके साथ जानीबेगम भी आवेंगी। वह बात-बात में शाख़ें निकालती हैं। उन्हें ख़ब्त है कि हमसे बढ़कर कोई हसीन ही नहीं। 'शक्ल चुड़ैलों की, नाज़ परियों का;' दिन-रात बनाव-सँवार ही में लगी रहती हैं।

सिपहआरा—फिर अच्छा तो है! बहारबेगम से भिड़ा देना।

थोड़ी देर में डोलियों-पर-डोलियाँ और बग्घियों-पर-बग्घियाँ आने लगीं। दरबान बार-बार आवाज़ देता था कि सवारियाँ आई हैं। लौंडियाँ जा-जाकर मेहमानों को सवारियों पर से उतरवाती थीं और वे चमक-चमककर अंदर आती थीं। आख़िर में जानीबेगम और नज़ीरबेगम भी आईं। जानीबेगम की बोटी-बोटी फड़कती थी; आँखें नाचती रहती थीं। नज़ीरबेगम भोली-भाली शरमीली लड़की थी। शरम से आँखें झुकी पड़ती थीं। जब सब आ चुकीं, तो हुस्नआरा ने अपना लेक्चर सुनाना शुरू किया—

"मेरी प्यारी बहनो, सास-बहुओं के झगड़े, ननँद-भावजों के बखेड़े, बात-बात पर तकरार, मियाँ-बीबी की जूती-पैज़ार से ख़ुदा की पनाह। इन बुरी बातों से ख़ुदा बचावे। भलेमानसों की बहू-बेटियों में ऐसी बात न आने पावे। इस फूट की हमारे ही देस में इतनी गर्मबाज़ारी है कि सास की ज़बान पर कोसना जारी है, बहू मसरूफ़ गिरिया व ज़ारी है और मियाँ की अक़्ल आरी है। ननँद भावज से मुँह फुलाए हुए, भावज ननँद से त्योरियाँ चढ़ाए हुए। बहू हिचकियाँ ले-लेकर रोती है, सास ज़हर खाकर सोती है। और, जो सास गुस्सेवर हुई, और बहू ज़बान की तेज़, तो मार-पीट की नौबत पहुँचती है। मियाँ अगर बीबी की-सी कहें, तो अम्मा की घुड़कियाँ सहें; अम्मा की-सी कहें, तो बीबी की बातें सुनें। मा उधर, बीबी इधर कान भरती है, वह इनके और यह उनके नाम से कानों पर हाथ धरती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मगर ताली एक हाथ से नहीं बजती । सास भली हो, तो बहू को मना ले; और बहू आदमी हो, तो सास को आदमी बना ले। एक शरीफ़ज़ादी ने अपनी मामा से कहा कि हमारी सास तो हमारी सौत हैं । ख़ुदा जाने, उनकी ज़बान से यह बात कैसे निकली ! इस पर भी उन्हें दावा है कि हम शरीफ़ज़ादी हैं। अगर वह हमारी राय पर चलें, तो उनकी सास उन्हें अपने सिर पर बिठावें । वह सीधी जाकर सास के क़दमों पर गिर पड़ें, और आज से उनकी किसी बात का जवाब न दें । क्या उनकी सास का सिर फिर गया है, या उन्हें बावले कुत्ते ने काटा है ? बहू अगर सास की ख़िदमत करे, तो दुनिया-भर की सासों में कोई ऐसी न मिले, जो छेड़कर बहू से लड़े ।

अब सोचो तो ज़रा दिल में, इस तकरार और जूती-पैज़ार का अंजाम क्या है ? घर में फूट, एक दूसरे की सूरत से बेज़ार, लौंडियों-बाँदियों में ज़लील, सारी दुनिया में बदनाम, घर तबाह। एक चुप हज़ार बला को टालती है, फ़साद को जहन्नुम में डालती है । हाँ, जो यह ख़याल हो कि सास एक कहे, तो दस सुनावें, वह दो बातें कहें, तो बीस मरतबे उनको उल्लू बनावें, तो बस, मेल हो चुका । सास न हुई, भूनी मूँग हुई । आख़िर उसका भी कोई दरजा है या नहीं ? या बस, बहू ससुराल में जाते ही मालकिन बन बैठे, सास को ताक़ पर रख दे, और मियाँ पर हुकूमत चलाने लगे ? अब मैं आप लोगों से इतना चाहती हूँ कि सच-सच अपनी-अपनी सासों का हाल बयान कीजिए ।"

१—अल्लाह करे, हमारी सास को आज रात ही को हैज़ा हो।

२—अल्लाह करे, हमारी सास को हैज़ा हो गया हो ।

३—अल्लाह करे, हमारी सास ऐसी जगह मरे, जहाँ एक बूँद पानी न मिले ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहारबेगम—या ख़ुदा, मेरी सास के पाँव में बावला कुत्ता काटे, और वह भूँक-भूँककर मरे।

४—हम तो अपनी सास को पहले ही चट कर गए। जहन्नुम चली गई।

५—सास तो सास, हमारी ननँद ने नाक में दम कर दिया।

जानीबेगम—मेरी सास तो मेरे आगे चूँ नहीं कर सकतीं। बोलीं, और मैंने गला घोंटा।

इस लेक्चर का और किसी पर तो ज़्यादा नहीं, मगर नज़ीर-बेगम पर बहुत असर हुआ। हुस्नआरा से बोली—बहन, हम कल से आया करेंगे, हमें कुछ पढ़ाओगी?

हुस्नआरा—हाँ, हाँ, ज़रूर आओ।

जानीबेगम—ऐ वाह, यह क्या पढ़ावेंगी भला! हमारे पास आओ, तो हम रोज़ पढ़ा दिया करें।

नज़ीरबेगम—आपके तो पड़ोस ही में रहते हैं हम, मगर बहन, तुम तो हुड़दंगा सिखाती हो। दिन-भर कोठे पर घोड़े की तरह दौड़ा करती हो, कभी नीचे, कभी ऊपर।

जानीबेगम—(नज़ीरबेगम का हाथ पकड़कर) मरोड़ डालूँ हाथ!

नज़ीर—देखा, देखा, बस, कभी हाथ मरोड़ा, कभी ढकेल दिया।

जानीबेगम—(नज़ीर का गाल काटकर) अब ख़ुश हुई?

सिपहआरा—ऐ वाह, लेके गाल काट लिया।

जानीबेगम—फिर औरत हैं, या मर्द हैं कोई?

नज़ीरबेगम—अब आप अपनी मुहब्बत रहने दें।

जब सब मेहमान बिदा हुए, तो चारों बहनें मिलकर गईं, और बड़ी बेगम के साथ एक ही दस्तरख़्वान पर खाना खाया। खाते वक़्त यों गुफ़्तगू हुई।

बहारबेगम—हुस्नआरा की शादी कहीं तजवीज़ी?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी बेगम—हाँ, फ़िक्र में तो हूँ।

बहारबेगम—फ़िक्र नहीं अम्माजान, अब दिन-दिन चढ़ता है

बड़ी बेगम—अपने जान तो जल्दी ही कर रही हूँ।

बहारबेगम—जल्दी क्या दो-चार बरस में?

रूहअफ़ज़ा—बहन, अल्लाह-अल्लाह करो।

बहारबेगम—बेचारी सिपह्आरा भी ताक रही हैं कि हम इनका भी ज़िक्र करें।

सिपह्आरा—देखिए, यह छेड़खानी अच्छी नहीं, हाँ!

बड़ी बेगम—(मुसकिराकर) तुम जानो, यह जानें।

बहारबेगम—अभी कल शाम ही को तो तुमने कहा था कि अम्माजान से हमारे ब्याह की सिफ़ारिश करो। आज मुकरती हो? भला खाओ तो क़सम कि तुमने नहीं कहा?

सिपह्आरा—वाह, ज़रा-ज़रा-सी बात पर कोई क़सम खाया करता है।

रूहअफ़ज़ा—पानी मरता है कुछ।

सिपह्आरा—जी हाँ, आप भी बोलीं?

रूहअफ़ज़ा—अच्छा, क़सम खा जाओ न!

सिपह्आरा—काहेको खायँ?

बड़ी बेगम—ऐ, तो चिढ़ती क्यों हो बेटी!

सिपह्आरा—अम्माजान, झूठ-मूठ लगाती हैं। चिढ़ें नहीं?

रूहअफ़ज़ा—क्या! झूठ-मूठ?

सिपह्आरा—और नहीं तो क्या?

रूहअफ़ज़ा—अच्छा, हमारे सिर की क़सम खाओ।

सिपह्आरा—अल्लाह करे, मैं मर जाऊँ।

रूहअफ़ज़ा—चलो बस, रो दीं। अब कुछ न कहो।

बहारबेगम—अम्माजान, एक रईस हैं। उनका लड़का कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्नीस-बीस बरस का होगा ! खुदा जानता है, बड़ा हसीन है। आजकल सिकंदरनामा पढ़ता है।

बड़ी बेगम—खाने-पीने से खुश हैं ?

रूहअफ़ज़ा—खुश ! आठ तो घोड़े हैं उनके यहाँ !

बहारबेगम—अम्माजान, वह लड़का हुस्नआरा के ही लायक़ है। दो लड़के हैं। दोनों लायक़, होशियार, नेकचलन। हमारे यहाँ दूसरे-तीसरे आया करते हैं।

रूहअफ़ज़ा—ज़रूर मंज़ूर कीजिए।

बड़ी बेगम—अच्छा, अच्छा, सोच लूँ।

हुस्नआरा ने यह बातचीत सुनी, तो होश उड़ गए। खुदा ही ख़ैर करे! ये दोनों बहनें अम्माजान को पक्का कर रही हैं। कहीं मंज़ूर कर लें, तो ग़ज़ब ही हो जाय। बेचारे आज़ाद वहाँ मुसीबतें झेल रहे हैं, और यहाँ जश्न हो। इस फ़िक्र में उससे अच्छी तरह खाना भी न खाया गया। अपने कमरे में आकर लेट रही, और मुँह ढाँपकर खूब रोई। खाना खाने के बाद वे तीनों भी आईं, और हुस्नआरा को लेटे देखकर झल्लाईं।

बहारबेगम—मकर करती होंगी। सोवेंगी क्या अभी।

सिपहआरा—नहीं बहन, यह तकिए पर सिर रखते ही सो जाती हैं।

बहारबेगम—जी हाँ, सुन चुकी हूँ। एक तुमको तकिए पर सिर रखते ही नींद आ जाती है, दूसरे इनको।

रूहअफ़ज़ा—(गुदगुदाकर) उठो बहन, हमारा ही खून पिए, जो न उठे। मेरी बहन न, उठ बैठो। शाबाश !

सिपहआरा—सोने दीजिए। आँखें मारे नींद के मतवाली हो रही हैं।

बहारबेगम—रसीली मतवालियों ने जादू डाला। हमारे यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ोस में रोज़ तालीम होती है। मगर हमारे मियाँ को इससे बड़ी चिढ़ है कि औरतें नाच देखें या गाना सुनें। मर्दों की क्या हालत है! घर की जोरू से बातें न करें, बाहर शेर। अल्लाह जानता है, हम तो उन सब मुई बेसवाओं को एँड़ी-चोटी पर कुरबान कर दें। एक ने मिस्सी की धड़ी जमाई थी, जैसे बत्तख़ ने कीचड़ खाई हो।

रूहअफ़ज़ा—(हुस्नआरा को चूमकर) उठो बहन ?

हुस्नआरा—(आँखें खोलकर) सिर में दर्द है।

बहारबेगम—संदली-रंगों से माना दिल मिला;
दर्द सर की किसके माथे जायगी।

हुस्नआरा—यहाँ इन झगड़ों में नहीं पड़ते।

बहारबेगम—दुरुस्त।

रूहअफ़ज़ा—ज़रूर किसी से आँख लड़ाई है, इसी से नींद आई है। अच्छा, अब सच-सच कह दो, किससे दिल मिला है?

दिल दीजिए तो यार तरहदार देखकर।

सिपहआरा—और क्या!

माशूक़ कीजिए तो परीज़ाद कीजिए।

हुस्नआरा—किसी से मिलने का अब हौसला नहीं है जाँ;
बहुत उठाए मज़े उनसे आशना होकर।

रूहअफ़ज़ा—बस, बहुत बातें न बनाइए। हम सब सुन चुकी हैं। भला किसी पर दिल नहीं आया, तो आँखों से आँसू क्यों निकले! ज़री, आईने में सूरत देखिए।

सिपहआरा—ऐ बहन, यह धान-पान आदमी, ज़री सिर में दर्द हुआ, और लेट रहीं।

बहारबेगम—लड़की बातें बनाती है। हमको चुटकियों पर उड़ाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा—अब आप जो चाहे कहें। यहाँ न कोई आशिक़ है, न कोई माशूक़।

रूहअफ़ज़ा—उड़ो न। कह चलूँ सब?

हुस्नआरा—हाँ, हाँ, कहिए। सौ काम छोड़के। आपको ख़ुदा की क़सम।

रूहअफ़ज़ा—अच्छा, इस वक़्त दिल क्यों भर आया?

हुस्नआरा—दिल ही तो है न संग व ख़िश्त दर्द से भर न आए क्यों,
रोएँगे हम हज़ार बार, कोई हमें रुलाए क्यों?

बहारबेगम—(तालियाँ बजाकर) खुल गई न बात?

रूहअफ़ज़ा—जादू वह, जो सिर पर चढ़के बोले।

हुस्नआरा—मुँह में ज़बान है, जो चाहो बको।

बहारबेगम—अच्छा, बड़ी सच्ची हो, तो एक बात करो। हम एक हाथ में कोई चीज़ लें, और दूसरा हाथ ख़ाली रक्खें। फिर मुट्ठी बाँधके आवें, और तुम एक हाथ पर हाथ मारो। जो ख़ाली हाथ पर पड़े, तो तुम झूठी। दूसरे हाथ पर पड़े, तो हम झूठे।

हुस्नआरा—ऐ वाह, छोकड़ियों का खेल।

रूहअफ़ज़ा—अल्लाह, और आप हैं क्या?

सिपहआरा—अच्छा, आप आइए। मगर हम दोनों हाथ देख लेंगे।

बहारबेगम—हाँ-हाँ, देख लेना।

बहारबेगम ने दूसरे कमरे में जाकर एक छोटी-सी शीशे की गोली दाहने हाथ में रक्खी, और बायाँ हाथ ख़ाली। दोनों मुट्ठियाँ ख़ूब ज़ोर से बंद कर लीं, और आकर बोलीं—अच्छा, मारो हाथ पर हाथ।

हुस्नआरा—ये वाहियात बातें हैं।

रूहअफ़ज़ा—तो काँपी क्यों जाती हो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिपहआरा—बाजी, बोलो किस हाथ में है?

हुस्नआरा—उधरवाले में।

सिपहआरा—नहीं बाजी, धोखा खाती हो। हम तो बाएँ हाथ पर मारते हैं।

बहारबेगम—(बायाँ हाथ खोलकर) सलाम।

सिपहआरा—अरे, वह हाथ तो दिखाओ।

बहारबेगम—देखो। है शीशे की गोली कि नहीं?

हुस्नआरा—देखा! कहा था कि उस हाथ में है। कहा न माना।

रूहअफ़ज़ा—कहिए, अब तो सच है?

हुस्नआरा—ये सब ढकोसले हैं।

बहारबेगम—अच्छा बहन, अब इतना बता दो कि मियाँ आज़ाद कौन हैं?

हुस्नआरा—क्या जानें, क्या वाही-तबाही बकती हो।

बहारबेगम—अब छिपाने से क्या होता है भला! सुन तो चुके ही हैं हम।

हुस्नआरा—बतावें क्या, जब कुछ बात भी हो।

सिपहआरा—इन दोनों बहनों ने ख़्वाब देखा था कल, मालूम होता है।

हुस्नआरा—हाँ, सच कहा। ख़्वाब देखा होगा।

रूहअफ़ज़ा—ख़्वाब तो नहीं देखा; मगर सुना है कि सूरत-शक्ल में करोड़ों में एक हैं।

बहारबेगम—हुस्नआरा ने तो अपना जोड़ छाँट लिया, अब सिपहआरा का निकाह हुमायूँ फ़र के साथ हो जाय, तो हम समझें कि यह बड़ी ख़ुशनसीब हैं।

सिपहआरा—मेरे तो तलवों को भी न पहुँचें।

हुस्नआरा—तूती का कौए से जोड़ लगाती हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहारबेगम—वाह, चेहरे से नूर बरसता है। जी चाहता है कि घंटों देखा करें। अम्मा से आज ही तो कहूँगी मैं।

हुस्नआरा—कह दीजिएगा, धमकाती क्या हो!

सिपहआरा—आपके कहने से होता क्या है? यहाँ कोई पसंद भी करे।

रूहअफ़ज़ा—इनकार करोगी, तो पछताओगी।

पैंतालीसवाँ परिच्छेद

सवेरे हुस्नआरा तो कुछ पढ़ने लगी, और बहारबेगम ने सिंगारदान मँगाकर निखरना शुरू किया।

हुस्नआरा—बस, सुबह तो सिंगार, शाम तो सिंगार। कंघी-चोटी, तेल-फुलेल। इसके सिवा तुम्हें और किसी चीज़ से वास्ता नहीं। रूहअफ़ज़ा सच कहती है कि तुम्हें इसका रोग है।

बहारबेगम—चलो, फिर तुम्हें क्या? तुम्हारी बातों में ख़याल बँट गया, माँग टेढ़ी हो गई।

हुस्नआरा—है-है! ग़ज़ब हो गया। यहाँ तो दूल्हा भाई भी नहीं हैं? आख़िर यह निखार दिखाओगी किसे?

बहारबेगम—हम उठकर चले जायँगे। तुम छेड़ती जाती हो, और यह मुआ छपका सीधा नहीं रहता।

हुस्नआरा—अब तक माँग का ख़याल था, अब छपके का ख़याल है।

बहारबेगम—अच्छा, एक दिन हम तुम्हारा सिंगार कर दें, ख़ुदा की क़सम, वह जोबन आ जाय कि जिसका हक़ है।

हुस्नआरा—फिर अब साफ़-साफ़ कहलाती हो। तुम लाख बनो-ठनो, हमारा जोबन ख़ुदादाद होता है। हमें बनाव-चुनाव की क्या ज़रूरत भला!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहारबेगम—अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बन लो।

हुस्नआरा—अच्छा, सिपह्आरा से पूछो। जो यह कहें वह ठीक।

सिपह्आरा—जिस तरह बहार बहन निखरती हैं, उस तरह अगर तुम भी निखरो, तो चाँद का टुकड़ा बन जाओ। तुम्हारे चेहरे पर सुर्ख़ी और सफ़ेदी के सिवा नमक भी बहुत है। मगर वह गोरी-चट्टी हैं बस, नमक नहीं।

रूहअफ़ज़ा—सच्ची बात तो यह है कि हुस्नआरा हम सबमें बढ़-चढ़कर हैं।

इतने में एक फ़िटन खड़खड़ाती हुई आई, मुश्की जोड़ी जुती हुई। नवाब खुरशेदअली उतरकर बड़ी बेगम के पास पहुँचे, और सलाम किया।

बड़ी बेगम—आओ बेटा, बाईं आँख जब फड़कती है, तब कोई-न-कोई आता ज़रूर है। उस दिन आँख फड़की, तो लड़कियाँ आईं। यह रूहअफ़ज़ा की क्या हालत हो गई है?

नवाब साहब—अब तो बहुत अच्छी हैं। मगर परहेज़ नहीं करतीं। तीता मिर्च न हो, तो खाना न खायँ। फिर भला अच्छी क्योंकर हों!

यहाँ से बातें करके नवाब साहब उस कमरे में पहुँचे, जिसमें चारों बहनें बैठी थीं। नवाब साहब का लिबास देखिए, जुराब ख़ाकी रंग का, घुटन्ना चुस्त, कुर्ता सफ़ेद फ़लालैन का। उस पर स्याह बनात का दगला और हरी गिरंट की गोट। बाँकी नुक्केदार टोपी। पाँव में स्याह वारनिश का बूट, एक सफ़ेद दुलाई ओढ़े हुए। हुस्नआरा और सिपह्आरा ने नीची गरदन करके बंदगी की। रूहअफ़ज़ा ने कहा—आप बेइत्तिला किए हमारे कमरे में क्यों चले आए साहब?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब साहब—हुक्म हो, तो लौट जाऊँ !

बहारबेगम—शौक़ से । बिन बुलाए कोई नहीं आता । लो सिपह्आरा, अब इनके साथ बग्घी पर हवा खाने जाओ ।

सिपह्आरा—वाह, क्या झूठ-मूठ लगाती हो । भला मैंने कब कहा था ?

रूहअफ़ज़ा—हम गवाह हैं ।

नवाब साहब—अच्छा, फिर उसमें ऐब ही क्या है ?

इतने में रूहअफ़ज़ा एक शीशे की तश्तरी में चिकनी डलियाँ रखकर लाई । नवाब साहब ने दो उठाकर खा लीं, और आख़ थू, आख़ थू ! करते-करते बोले—पानी मँगाओ ख़ुदा के वास्ते ।

वह चिकनी डली असल में मिट्टी की थी । चारों बहनों ने क़हक़हा लगाया, और हज़रत बहुत झेंपे । जब मुँह धो चुके, तो सिपह्आरा ने एक गिलौरी दी ।

नवाब साहब—(गिलौरी खोलकर) अब बेदेखे-भाले खानेवाले की ऐसी-तैसी । कहीं इसमें मिरचें न झोंक दी हों । इस वक़्त तो भूक लगी हुई है । आँतें कुल-हु-अल्लाह पढ़ रही हैं ।

हुस्नआरा—बासी खीर खाइए, तो लाऊँ ।

नवाब साहब—नेकी और पूछ-पूछ ?

हुस्नआरा जाकर एक कुफ़ुली उठा लाई । नवाब साहब ने बड़ी ख़ुशी से ली, मगर खोलते हैं तो मेंढकी उचककर निकल पड़ी ।

नवाब साहब—ख़ूब ! यह रूहअफ़ज़ा से भी बढ़कर निकलीं । "बड़ी बी तो बड़ी बी, छोटी बी सुभान-अल्लाह ।"

रात को नवाब साहब आराम करने गए, तो बहारबेगम ने पूछा—कहो, तुम्हारी अम्माजान तो जीती हैं ! या ढुलक गईं ?

नवाब साहब—क्या बेतुकी उड़ाती हो, ख़्वाहमख़्वाह दिल दुखाती हो ! ऐसी बातें करती हो कि सारा शौक़ ठंडा पड़ जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहारबेगम—हाँ, उनकी तो मुहब्बत फट पड़ी है तुमको, बत्तीसधार का दूध पिलाया है कि नहीं।

नवाब साहब—इसी से आने को जी नहीं चाहता था।

बहारबेगम—तो क्यों आए? क्या चकला निगोड़ा उजड़ गया है? या बाज़ार में किसी ने आग लगा दी?

नवाब साहब—अच्छा, इस वक़्त तो ख़ुदा के लिये ये बातें न करो। कोई छः दिन के बाद मुलाक़ात हुई है।

बहारबेगम—क्या कहीं आज और ठिकाना न लगा?

नवाब साहब—तुम तो जैसे लड़ने पर तैयार होकर आई हो।

बहारबेगम—क्यों? आज प्राटन साहब न बनोगे? कोट-पतलून पहनके न जाओगे? मुझसे उड़ते हो।

नवाब साहब रंगीन-मिज़ाज आदमी थे। बहारबेगम को उनके सैर-सपाटे बुरे मालूम होते थे। इसी सबब से कभी-कभी मियाँ-बीबी में चख़ चल जाती थी। मगर अब की मरतबा बहारबेगम ने एक ऐसी बात सुनी थी कि आँखों से ख़ून बरसने लगा था। एक दिन नवाब साहब कोट-पतलून डाटकर एक बँगले पर जा पहुँचे, और दरवाज़ा खटखटाया। अंदर से आदमी ने आकर पूछा—आप कहाँ से आते हैं? आपने कहा—हमारा नाम प्राटन साहब है। मेम साहब को बुलाओ। अब सुनिए, एक कुँजड़िन जो पड़ोस में रहती थी, वहाँ तरकारी बेचने गई हुई थी। वह इन हज़रत को पहचान गई, और घर में आकर बहारबेगम से कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। बेगम सुनते ही आग-भभूका हो गईं, और सोचीं कि आज आने तो दो, कैसा आड़े-हाथों लेती हूँ कि छठी का दूध याद आ जाय। मगर उसी दिन यहाँ चली आईं, और बात ज्यों-की-त्यों रह गई। भरी तो बैठी ही थीं, इस वक़्त मौक़ा मिला, तो उबल पड़ीं। नवाब ने जो पते-पते की सुनीं, तो सन्नाटे में आ गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहारबेगम—कहिए प्राटन साहब, मिज़ाज तो अच्छे हैं ?

नवाब साहब—तुम क्या कहती हो। मेरी समझ ही में नहीं आता कुछ।

बहारबेगम—हाँ, हाँ, आप क्या समझेंगे। हम हिंदोस्तानी, और आप ख़ास विलायत के प्राटन साहब ! हमारी बोली आप क्या समझेंगे।

नवाब साहब—कहीं भंग तो नहीं पी गई हो ?

बहारबेगम—अब भी नहीं शरमाते ?

नवाब साहब—ख़ुदा गवाह है, जो कुछ समझ में भी आया हो।

बहारबेगम—जलाए जाओ, और फिर कहो कि धुआँ न निकले। मैं क्या जानती थी कि तुम प्राटन साहब बन जाओगे।

इधर तो मियाँ-बीवी में नोक-झोंक हो रही थी, उधर उनकी सालियाँ दरवाज़े के पास खड़ी चुपके-चुपके झाँकती और सारी दास्तान सुन रही थीं। मारे हँसी के रहा न जाता था। आख़िर जब एक मरतबा बहार ने ज़ोर से नवाब का हाथ झटककर कहा—आप तो प्राटन साहब हैं, मैं आपको अपने घर में न घुसने दूँगी, तो सिपहआरा खिलखिलाकर हँस पड़ी। बहार ने हँसी की आवाज़ सुनी, तो धक-से रह गई। नवाब भी हक्का-बक्का हो गए।

नवाब साहब—तुम्हारी बहनें बड़ी शोख़ हैं।

रूहअफ़ज़ा—बहन, सलाम !

सिपहआरा—दूल्हा भाई, बंदगीअर्ज़।

हुस्नआरा—मैं भी प्राटन साहब को आदाबअर्ज़ करती हूँ।

नवाब साहब—समझा दो, यह बुरी बात है।

सिपहआरा—बिगड़ते क्यों हो प्राटन साहब !

बहारबेगम—(कमरे से निकलकर) ऐ, तो अब भागी कहाँ जाती हो ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूहअफ़ज़ा—बहन, अब जाइए। प्राटन साहब से बातें कीजिए।

बहारबेगम—आओ-आओ, तुम्हें ख़ुदा की क़सम।

सिपहआरा—कोई भाई बंद अपना हो, तो आवें। भला, प्राटन साहब को क्या मुँह दिखावें ?

नवाब साहब—इस प्राटन के नाम ने तो हमें खूब झंडे पर चढ़ाया। कैसे रुसवा हुए !

बहारबेगम—अपनी करतूतों से।

सिपहआरा—अब तो क़लई खुल गई ?

तीनों बहनों ने नवाब साहब को खूब आड़े-हाथों लिया। बेचारे बहुत झेंपे। जब वे चली गईं, तो बहारबेगम ने भी प्राटन साहब का क़सूर माफ़ कर दिया—

> दिलों में कहने-सुनने से अदावत आ ही जाती है ;
> जब आँखें चार होती हैं, मुहब्बत आ ही जाती है।

छियालीसवाँ परिच्छेद

आज हम उन नवाब साहब के दरबार की तरफ़ चलते हैं, जहाँ ख़ोजी और आज़ाद ने महीनों मुसाहबत की थी, और आज़ाद बटेर की तलाश में महीनों सैर-सपाटे करते रहे थे। शाम का वक़्त था। नवाब साहब एक मसनद पर शान से बैठे हुए थे। इर्द-गिर्द मुसाहब लोग बैठे हुक़्क़े गुड़गुड़ाते थे। बी अलारक्खी भी आकर मसनद का कोना दबाकर बैठीं।

नवाब साहब—यों आइए, बी साहब !

अलारक्खी—(खिसककर) बहुत खूब !

मुसाहब—(दूसरे मुसाहब के कान में) क्या ज़माना है वाह ! हम शरीफ़ और शरीफ़ के लड़के और यह इज़्ज़त कि जूतियों पर बैठे हैं। कोई टके को नहीं पूछता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुदरत—यार, क्या कहें, अब्बाजान चकलेदार थे, जिसको चाहा, भुट्टा-सा सिर उड़ा दिया। डंका सामने बजता था। इन्हीं आँखों के सामने दोनों तरफ़ आदमी झुक-झुककर सलाम करते थे, और इन्हीं आँखों यह भी देख रहे हैं कि बेसवा आकर मसनद पर बैठ गई, और हम नीचे बैठे हैं। वाह री क़िस्मत! फूट गई।

नवाब साहब—आपका नाम क्या है बी साहब?

अलारक्खी—हुज़ूर, मुझे अलारक्खी कहते हैं।

नवाब—क्या प्यारा नाम है!

तुदरत—हुज़ूर, चाहे आप बुरा मानें या भला, हम तो बीच खेत कहेंगे कि आपके यहाँ शरीफ़ों की क़दर नहीं। ग़ज़ब ख़ुदा का, यह टके की बाज़ारी औरत मसनद पर आके बैठ जाय, और हम शरीफ़ लोग ठोकरें खायँ! आसमान नहीं फट पड़ता! कैसे-कैसे गौखे रईस जमा हैं दुनिया में।

इतना कहना था कि हाफ़िज़जी बिगड़ खड़े हुए, और लपकके तुदरत के मुँह पर एक लप्पड़ जमाया। वह आदमी थे करारे, लप्पड़ खाते ही आग हो गए। झपटके हाफ़िज़जी को दे पटका। इस पर कुल मुसाहब और हवाली-मवाली उठ खड़े हुए।

१—छोड़ दे बे!

२—इतनी लातें लगाऊँगा कि भुरकस निकल जायगा।

३—मर्दक, जिसका नमक खाता है, उसी को गालियाँ सुनाता है?

नवाब साहब—निकाल दो इसे बाहर।

हाफ़िज़—देखिए तो नमकहराम की बातें।

नवाब साहब—आज से दरबार में न आने पावे।

तीन-चार आदमियों ने मिलकर हाफ़िज़जी को छुड़ाया। दरबार में हुल्लड़ मचा हुआ था। अलारक्खी खड़े-खड़े थरथराती थीं, और नवाब साहब उनको दिलासा देते जाते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ मुसाहब—(अलारक्खी से) ऐ हुज़ूर, आप न घबरायँ।

२ मुसाहब—वल्लाह बी साहबा, जो आप पर ज़रा भी आँच आने पावे।

नवाब—तुम तो मेरी पनाह में हो जी।

अलारक्खी—जी हाँ, मगर ख़ौफ़ मालूम होता है।

नवाब—अभी उस मूज़ी को यहाँ से निकलवाए देता हूँ।

हाफ़िज़—हुज़ूर, वह बाहर खड़े सबको गालियाँ दे रहे हैं।

सबने मिलकर मियाँ नुदरत को बाहर तो निकाल दिया, पर वह टर्रा आदमी था, बाहर जाकर एँड़ी-बेंड़ी सुनाने लगा—ऐसे रईस पर आसमान फट पड़े, जो इन टके-टके की औरतों को शरीफ़ों से अच्छा समझे। किसी ज़माने में हम भी हाथीनशीन थे। चौदह-चौदह हाथी हमारे दरवाज़े पर झूमते थे। आज इस नव-बढ़ रईस ने हमको फ़र्श पर बिठाया, और उस मालज़ादी को मस-नद पर जगह दी। ख़ुदा इस मर्दक से समझे!

नवाब साहब—यह कौन ग़ुल मचा रहा है?

१ मुसाहब—वही है हुज़ूर।

२ मुसाहब—नहीं हुज़ूर, वह कहाँ! वह भागा पत्तातोड़। यह कोई फ़क़ीर है। भूखों मरता है।

नवाब—कुछ दिलवा दो भई।

एक मुसाहब ने दारोग़ाजी को बुलाया, और उनसे दस रुपए लेकर बाहर चला। जब उसके लौट आने पर भी बाहर का शोर न बंद हुआ, तो नवाब ने ख़िदमतगार को भेजा कि देख, अब कौन चिल्ला रहा है? ख़िदमतगार ने बाहर जाकर जो देखा, तो मियाँ नुदरत खड़े गालियाँ सुना रहे हैं। जब वह नवाब साहब के पास जाने लगा, तो दारोग़ाजी ने उसे रोककर समझाया—अगर तुमने ठीक-ठीक बतला दिया, तो हम तुमको मार ही डालेंगे। ख़बरदार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह न कहना कि मियाँ खुदरत गालियाँ दे रहे हैं। बल्कि यों बयान करना कि वह फ़क़ीर तो दस रुपए लेकर चल दिया, मगर और कई फ़क़ीर, जो उस वक़्त वहाँ मौजूद थे, आपको दुआएँ दे रहे हैं। उनका सवाल है कि हुज़ूर के दरबार से कुछ उन्हें भी मिले।

नवाब साहब ने यह सुना, तो उन्हें यक़ीन आ गया। बेचारे भोले-भाले आदमी थे, हुक्म दिया कि इसी वक़्त सब फ़क़ीरों को इनाम मिले, कोई दरबार से नामुराद न लौटे; वर्ना मैं ज़हर खाकर मर जाऊँगा।

हाफ़िज़—दारोग़ाजी, इन फ़क़ीरों को चालीस रुपए दे दीजिए।

नवाब—क्या, चालीस! भला सौ रुपए तो तक़सीम करो।

मुसाहब—ऐ, खुदा सलामत रक्खे।

हाफ़िज़—वाह-वाह, क्यों न हो मेरे नवाब!

दारोग़ा ने सौ रुपए लिए, और बाहर निकले। कई मुसाहब भी उनके साथ-साथ बाहर आ पहुँचे।

१—ऐसे गौखे रईस कहाँ मिलेंगे?

२—क्या पागल है वल्लाह।

हाफ़िज़—बेवकूफ़, काठ का उल्लू।

दारोग़ा—कह देंगे कि दे आए।

हाफ़िज़—लेकिन जो फिर गुल मचावे।

दारोग़ा—अजी, उसको निकाल बाहर कर दो। दो धक्के।

सबने मियाँ खुदरत को घेर लिया, और कोसों तक रगेदते हुए ले गए। वह गालियाँ देते हुए चले। अलारक्खी को भी खूब कोसा।

नवाब ने लाखों क़समें दीं कि अलारक्खी खाना खायँ, और कुछ दिन उसी बाग़ीचे में आराम से रहें; मगर अलारक्खी ने एक न मानी। मियाँ खुदरत का उसे बार-बार ताने देना, उसे टके की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औरत और बेसवा कहना उसके दिल में काँटे की तरह खटक रहा था। उसकी आँखों में आँसू भर आए।

नवाब—सच कहिए बी साहबा, आख़िर आप क्यों इस क़दर रंजीदा हैं। अगर मुझसे कोई ख़ता हुई हो, तो माफ़ करो।

अल्लारक्खी—जाने हमें इस वक़्त क्या याद आया। आपसे क्या बतावें। दिल ही तो है।

नवाब—मुझसे तो कोई क़सूर नहीं हुआ ?

अल्लारक्खी—हुज़ूर, ये सब क़िस्मत के खेल हैं। हमारी-सी बेहया ज़िंदगी किसी की न हो! मा-बाप ने अंधे कुएँ में ढकेल दिया; आप तो चैन उड़ाया किए, हमें भाड़ में झोंक गए। हमारे बूढ़े मियाँ शादी करते ही दूसरे शहर में जा बसे। हम उनके नाम को रो बैठे। जब वह अंटागफ़ील हो गए, तो हमारी मा ने बड़ा जश्न किया, और एक दूसरे लड़के से शादी ठहराई। मगर अम्मा से किसी ने कह दिया—ख़बरदार, लड़की को अब न ब्याहना। भलेमानसों में बेवा का निकाह नहीं होता। बस, अम्मा चट से बदल गईं। आख़िर मैं एक रात को घर से निकल भागी। लेकिन उस दिन से आज तक जैसी पाक पैदा हुई थी, वैसी ही हूँ। आज उस आदमी ने जो मुझे टके की औरत और बेसवा बनाया, तो मेरा दिल भर आया। क़सम ले लीजिए, जो मियाँ आज़ाद के सिवा किसी से कभी आँख लड़ी हो।

नवाब—कौन, कौन ? किसका नाम तुमने लिया ?

हाफ़िज़—अच्छा पता लगा। वह तो नवाब साहब के दोस्त हैं।

नवाब—हमको उनकी ख़बर मिले, तो फ़ौरन् बुलवा लें।

अल्लारक्खी—वह तो कहीं बाहर गए हैं। कुछ दिनों हमारी सराय में ठहरे थे। अच्छे ख़ूबसूरत जवान हैं। उनको एक भोले-भाले नवाब मिल गए थे। नवाब ने एक बटेर पाला था। कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद ने उसे काबुक से निकालकर छिपा लिया। नवाब के मुसाहबों ने बटेर की ख़ूब तारीफ़ें कीं। किसी ने कहा, क़ुरान पढ़ता था; किसी ने कहा, रोज़े रखता था। सबने मिलकर नवाब को उल्लू बना लिया। मियाँ आज़ाद को उँटनी दी गई कि जाकर बटेर ढूँढ़ लाओ। आज़ाद उँटनी लेकर हमारे यहाँ बहुत दिन तक रहे।

नवाब साहब मारे शर्म के गड़े जाते थे। उम्र-भर में आज ही तो उन्हें ख़याल आया कि ऐसे मुसाहबों से नफ़रत करना लाज़िम है। मुसाहबों ने लाख-लाख चाहा कि रंग जमावें, मगर नवाब और भी बददिमाग़ हो गए।

नवाब—वह भोला-भाला नवाब मैं ही हूँ। आपने इस वक़्त मेरी आँखें खोल दीं।

मुसाहब—ग़रीबपरवर, ख़ुदा जानता है, हम लोग कट मरनेवाले हैं।

नवाब—बस, हम समझ गए।

हाफ़िज़—हुज़ूर, तोप-दम कर दीजिए, जो ज़रा ख़ता हो। हम लोग जान देनेवाले आदमी हैं।

नवाब—बस, चिढ़ाओ नहीं। अब क़लई खुल गई।

मुसाहब—ख़ुदा जानता है।

नवाब—अब क़समें खाने की कुछ ज़रूरत नहीं। जो हुआ, सो हुआ, आगे समझा जायगा।

अलारक्खी—जो मुझको मालूम होता, तो यह ज़िक्र ही कभी न करती।

नवाब—ख़ुदा की क़सम, तुमने मुझ पर और मेरे बाप पर, दोनों पर इस वक़्त एहसान किया। तुम ज़िक्र न करतीं, तो मैं हमेशा अंधा बना रहता! तुमने तो इस वक़्त मुझे जिला लिया।

मुसाहब—जिसने जो कह दिया, वही हुज़ूर ने मान लिया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस, यही तो ख़राबी है। ज़रा हमारी ख़िदमतों को देखें, तो हमको मोतियों में तोलें—क़सम खुदा की—मोतियों में तोलें।

नवाब—मेरा बस चले, तो तुम सबको कालेपानी भेज दूँ और ऊपर से बातें बनाते हो। बटेर भी रोज़ा रखते हैं?

हाफ़िज़—खुदावंद, खुदा की खुदाई से क्या कुछ बईद है।

नवाब—चलो बस, खुदाई में दख़ल न दो। मालूम हुआ, बड़े दीनदार हो। मेरा बस चले, तो तुमको ऐसी जगह क़ैद करूँ, जहाँ पानी तक न मिले।

हाफ़िज़—अगर कोई क़सूर साबित हो, तो क़त्ल कर डालिए।

मुसाहब—खुदावंद, वह आज़ाद एक ही गुर्गा है, बड़ा दग़ाबाज़।

अलारक्खी—बस, बस, उनको न कुछ कहिएगा। उनका-सा आदमी कोई हो तो ले।

नवाब—क्या शक है। ख़ैर, अब भी सबेरा है, सस्ते छूटे।

अलारक्खी—छूटे तो सस्ते, ऐ हाँ, यह कहाँ की नमकहलाली है कि बटेर को रोज़ादार और नमाज़ी बना दिया? जो सुनेगा, क्या कहेगा?

नवाब—नमकहलाल के बच्चे बने हैं!

मुसाहब—खुदावंद, जो चाहे कह लीजिए हम लोग हुज्जत और तकरार थोड़े ही कर सकते हैं।

नवाब—अजी, तुम तो ज़हर दे दो, संखिया खिला दो! खूब देख चुका।

अलारक्खी—ऐसे बेईमानों से खुदा बचावे।

मुसाहब—हाँ, मसनद पर बैठकर जो चाहे कह लो। बाज़ार में झोटमझोट करती फिरती हो, और यहाँ आके बातें बनाती हो।

नवाब—बस, ज़बान बंद करो। मेरा दिल खट्टा हो गया।

मुसाहब—जो हम ख़तावार हों, तो हमारा खुदा हमसे समझे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रा भी किसी बात में नमकहरामी की हो, तो हम पर आसमान फट पड़े। हुज़ूर चाहे न मानें, मगर दुनिया कहती है कि जैसे मुसाहब हुज़ूर को मिले हैं, वैसे बड़े खुशक़िस्मतों को मिलते हैं।

नवाब—यों कहो कि जिसकी क़िस्मत फूट जाती है, उसको तुम-जैसे गुर्गे मिलते हैं। बस, आप लोग बोरिया-बधना उठाइए, और चलते-फिरते नज़र आइए।

मुसाहब—हुज़ूर, मरते दम तक साथ न छोड़ेंगे, न छोड़ेंगे।

हाफ़िज़—यह दामन छोड़कर कहाँ जायँ?

मिरज़ा—कहीं ठिकाना भी है?

हाफ़िज़—ठिकाना तो सब कुछ हो जाय, मगर छोड़कर जाने को भी जब जी चाहे। जिसका इतने दिन तक नमक खाया, उससे भला अलग होना कैसे गवारा हो? मार डालिए, मगर हम तो इस ड्योढ़ी से नहीं जाने के। यह दर और यह सर। मरें भी, तो हुज़ूर ही की चौखट पर, और जनाज़ा भी निकले, तो इसी दरवाज़े से।

नवाब—बातें न बनाओ। जहाँ सींग समाय, चले जाओ।

हाफ़िज़—हुज़ूर को खुदा सलामत रक्खे। जहाँ हुज़ूर का पसीना गिरे, वहाँ हमारा खून ज़रूर गिरेगा।

मगर नवाब साहब इन चकमों में न आए। ख़िदमतगारों को हुक्म दिया कि इन सबोंको पकड़कर बाहर निकाल दो। अगर न जायँ, तो ठोकर मारकर निकाल दो। अब बी अलारक्खी का भी हाल सुनिए। उनको मियाँ नुदरत की बातों का ऐसा क़लक़ हुआ, दिल पर ऐसी चोट लगी कि अपने कुल ज़ेवर और असबाब बेचकर बस्ती के बाहर एक टीले पर फ़क़ीरों की तरह रहने लगीं। क़सम खा ली कि जब तक आज़ाद रूम से न लौटेंगे, इसी तरह रहूँगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैंतालिसवाँ परिच्छेद

जिस जहाज़ पर मियाँ आज़ाद और ख़ोजी सवार थे, उसी पर एक नौजवान अँगरेज़ अफ़सर और उसकी मेम भी थी। अँगरेज़ का नाम चार्ल्स अपिल्टन था, और मेम का वेनेशिया। आज़ाद को उदास देखकर वेनेशिया ने अपने शौहर से पूछा—इस जेंटिलमैन से क्योंकर पूछूँ कि यह बार-बार लंबी साँसें क्यों ले रहा है?

साहब—तुम ऐसे-वैसे आदमियों को जेंटिलमैन क्यों कहती हो? यह तो निगर (काला आदमी) है।

मेम—निगर तो हम हबशी को कहते हैं। यह तो गोरा-चिट्टा, ख़ूबसूरत आदमी है।

साहब—तो क्या ख़ूबसूरत होने से कोई जेंटिलमैन हो जाता है? इँगलैंड के सब सिपाही गोरे होते हैं, तो क्या इससे वे सब-के-सब जेंटिलमैन हो गए?

मेम—तुम तो अपनी दलील से आप क़ायल हो गए। जब गोरे चमड़े से कोई जेंटिलमैन नहीं होता, तो फिर तुम सब क्यों जेंटिलमैन कहलाओ? और इन लोगों को निगर क्यों कहो? वाह, अच्छा इंसाफ़ है!

इतने में जहाज़ के एक कोने से आवाज़ आई कि ओ गीदी! न हुई क़रौली, नहीं तो लाश फड़कती होती। मियाँ आज़ाद डरे कि ऐसा न हो, मियाँ ख़ोजी किसी अँगरेज़ से लड़ पड़ें। अफ़ीम की लहर में किसी से बेवजह झगड़ पड़ें। क़रीब जाकर पूछा—यह क्यों बिगड़े जी? किस पर गुल मचाया?

ख़ोजी—अजी, जाओ भी, यहाँ शिकार हाथ से जाता रहा। वल्लाह, गिरफ़्तार ही कर लिया था। गीदी को पाता, तो इतनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क़रौलियाँ लगाता कि छठी का दूध याद आ जाता ! मगर मेरा पाँव फिसल गया, और वह निकल गया।

आज़ाद—तुम्हें एक आँच की हमेशा कसर रह जाती है। यह था कौन ?

ख़ोजी—था कौन, वही बहुरूपिया ! और किसको पड़ी थी भला !

आज़ाद—बहुरूपिया !

ख़ोजी—जी हाँ, बहुरूपिया ! बड़ा ताज्जुब हुआ आपको ?

आज़ाद—भई हाँ, ताज्जुब कहीं लेने जाना है। क्या बहुरूपिया भी जहाज़ पर सवार हो लिया है ? बड़ा लागू है भई ?

ख़ोजी—सवार नहीं हुआ, तो आया कहाँ से ?

आज़ाद—क्या सोते हो ख़ोजी, या पीनक में हो ?

ख़ोजी—ख़ोजी की ऐसी-तैसी। फिर तुमने ख़ोजी कहा हमको !

आज़ाद—माफ़ करना भई, क़सूर हुआ।

ख़ोजी—वाह, अच्छा क़सूर हुआ ! किसी के जूते लगाइए, और कहिए क़सूर हुआ। जब देखो, ख़ोजी-ख़ोजी !

आज़ाद—अच्छा जनाब ख़्वाजा साहब ; अब तो राज़ी हुए ! यह बहुरूपिया कहाँ से आ गया ?

ख़ोजी—अरे साहब अब तो ख़्वाब में भी आने लगा। अभी मैं सोता था, आप आ पहुँचे। मेरे हाथ में उस वक़्त अफ़ीम की डिबिया थी। फेकके डिबिया और लेके कतारा जो पीछे झपटा, तो दो कोस निकल गया। मगर शामत यह आई कि एक जगह ज़रा-सा पानी पड़ा था। मेरी तो जान ही निकल गई। फिसला, तो अरा-रा-रा-धों !

आज़ाद—क्या गिर पड़े ? जाओ भी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—बस, कुछ न पूछिए। मेरा गिरना ऐसा मालूम हुआ जैसे हाथी पहाड़ से गिरा। धड़ाम-धड़ाम !

आज़ाद—इसमें क्या शक है ! आपके हाथ-पाँव ही ऐसे हैं। वह तो कहिए, बड़ी ख़ैरियत गुज़री !

ख़ोजी—और क्या ! मगर जाता कहाँ है गीदी ! रगेदके मारे। यहाँ पलटन में सूबेदारी कर चुके हैं।

मेम और साहब, दोनों मियाँ आज़ाद और ख़ोजी की बातें सुन रहे थे। साहब तो उर्दू ख़ूब समझते थे, मगर मेम साहब कोरी थीं। साहब ने तर्जुमा करके बताया, तो वेनेशिया भी मारे हँसी के लोट गई। यह इंच-भर का आदमी, एक-एक माशे के हाथ-पाँव और आपके गिरने से इतनी बड़ी आवाज़ हुई कि जैसे हाथी गिरे।

साहब—सिड़ी है कोई। जाने क्या वाही-तबाही बकता है !

मेम—तुम चुप रहो। हम इस जेंटिलमैन से पूछते हैं, यह क्यों पागल है।

साहब—अच्छा, मगर हिंदोस्तानी बदतमीज़ होते हैं। तुम इससे बातें न करो।

मेम—अच्छा, तुम्हीं पूछो !

इस पर साहब ने उँगली के इशारे से आज़ाद को बुलाया। आज़ाद भला कब सुननेवाले थे। बोले ही नहीं। साहब पलटनी आदमी, चेहरा मारे गुस्से के लाल हो गया, ख़याल हुआ कि वेनेशिया तालियाँ बजावेगी कि एक निगर तक मुख़ातिब न हुआ, बात का जवाब तक न दिया। वेनेशिया ने जब यह हालत देखी, तो इठलाती और मुसकिराती हुई मियाँ आज़ाद की तरफ़ गई। आज़ाद लेडियों से बोलने-चालने के आदी तो थे ही, एक ख़ूबसूरत लेडी को आते देखा, तो टोपी उतारकर सलाम किया, और पूछा—आप कहाँ तशरीफ़ ले जायँगी ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेम—घर जा रही हूँ। यह ठिंगना आदमी कौन है? खूब बातें करता है। हँसते-हँसते पेट में बल पड़-पड़ गए।

आज़ाद—जी हाँ, बड़ा मसख़रा है।

मेम—चार्ली, यह तो कहते हैं कि वह बौना मसख़रा है।

साहब—इसकी बातें बड़े मज़े की होती हैं।

साहब का गुस्सा ठंडा हो गया। आज़ाद का डील-डौल देखकर डर गए। इधर-उधर की बातें होने लगीं। इतने में जहाज़ पर एक दिल्लगीबाज़ को सूझी कि आओ ख़ोजी को बनावें। दो-चार और शोहदे उससे मिल गए। जब देखा कि मियाँ ख़ोजी पीनक में सो गए, तो एक आदमी ने दो लाल मिरचें उनकी नाक में डाल दीं। ख़ोजी ने जो आँख खोली, तो मारे छींकों के बौखला गए। बावले कुत्ते की तरह इधर-उधर दौड़ने लगे। मेम और साहब तालियाँ बजा-बजाकर हँसने लगे।

आज़ाद—जनाब ख़्वाजा साहब!

ख़ोजी—बस, अलग रहिएगा, आक् छीं!

आज़ाद—आख़िर यह हुआ क्या! कुछ बताओ तो।

ख़ोजी—चलिए, आपको क्या; चाहे जो कुछ हुआ! आ...छीं!

आज़ाद—यार, यह उसी बहुरूपिए की शरारत है।

ख़ोजी—देखिए तो, कितनी क़रौलियाँ भोंकी हों कि आ...छीं। याद ही तो करे—छीं।

आज़ाद—मगर तुम तो गिर-गिर पड़ते हो मियाँ। एक दफ़े जी कड़ा करके पकड़ क्यों नहीं लेते?

ख़ोजी—नाक में मिरचें डाल दीं गीदी ने।

आज़ाद—अब की आप ताक में बैठे रहिए। बस, आते ही पकड़ लीजिए। मगर है बड़ा शरीर, सचमुच नाक में दम कर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—कुछ ठिकाना है। नाक में मिरचें झोंकने की कौन-सी दिल्लगी है?

आज़ाद—और क्या साहब, यह बेजा बात है।

ख़ोजी—बेजा-वेजा के भरोसे न रहिएगा, मैं किसी दिन हाथ-पाँव ढीले कर दूँगा। कहाँ के बड़े कड़ेख़ाँ हैं आप! मैंने भी सूबेदारी की है।

आज़ाद—तो आप मेरे हाथ-पाँव क्यों ढीले करते हैं? मैंने तो आपका कुछ बिगाड़ा नहीं।

ख़ोजी—(आँखें खोलकर) अरे! यह आप थे! भई, माफ़ करना। बस, देखते जाओ, अब गिरफ़्तार ही किया चाहता हूँ गीदी को।

आज़ाद—लेकिन, ज़रा होशियार रहिएगा। बहुरूपिया गया जहन्नुम में, ऐसा न हो, कोई हज़रत रुपए-पैसे ग़ायब कर दें, बेवकूफ़ कहीं का। अबे गधे, यहाँ बहुरूपिया कहाँ?

ख़ोजी—बस, चोंच सँभालिए, बंदा चलता है। दोस्ती हो चुकी। कुछ आपके गुलाम नहीं हैं। और सुनिए, हम गधे हैं। क्या जाने कितने गधे हमने बना डाले।

आज़ाद—ख़ैर, यही सही। लेकिन जाइएगा कहाँ? यहाँ भी कुछ खुश्की है?

ख़ोजी—अरे ओ जहाज़ के कप्तान! जहाज़ रोक ले—अभी रोक ले।

साहब—वह यों न सुनेगा। दो-चार हाथ क़रौली के लगाइए, तो फिर सुने।

इतने में हाज़री खाने का वक़्त आया। आज़ाद ने बेतकल्लुफ़ी के साथ उन दोनों के साथ खाना खाया। फिर तीनों टहलने लगे। आज़ाद को वेनेशिया की एक-एक छवि भाती थी, और वह हसीना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी शोख़ी से इठलाती थी, कभी नाज़ के साथ मुसकिराती थी। इतने में ख़ोजी ने यह शेर पढ़ा—

गर तुम नहीं तो और बुते महजबीं सही,
हमको तो दिल्लगी से ग़रज़ है कहीं सही।

आज़ाद ने जो यह शेर सुना, तो ख़ोजी के पास आकर बोले—यह क्या ग़ज़ब करते हो जी? इसका शौहर शेर ख़ूब समझ लेता है।

ख़ोजी—वह गीदी इन इशारों को क्या जाने।

आज़ाद—तुम बड़े शरीर हो।

ख़ोजी—क्यों उस्ताद, हमी से यह उड़नघाइयाँ बताते हो, क्यों? सच कहना, हुस्नआरा के लगभग हैं कि नहीं? बंबईवाली बेगम भी ऐसी ही शोख़ थी।

वेनेशिया ने ख़ोजी को मुसकिराते देखा, तो उँगली के इशारे से बुलाया। ख़ोजी तो रेशाख़तमी हो गए। बहुत ऐंठते और अकड़ते हुए चले। गोया लंधौर पहलवान के भी चचा हैं। वाह, क्यों न हो। इस वक़्त ज़रा पाँव फिसले, तो दिल्लगी हो। मेम साहब के पास पहुँचे।

आज़ाद—टोपी उतारकर सलाम करो ख़ोजी।

ख़ोजी का लफ़्ज़ सुनना था कि ख़्वाजा साहब का गुस्सा एक सौ बीस दरजे पर जा पहुँचा। बस, पलट पड़े, और पलटते ही उलटे-पाँव भागने लगे।

आज़ाद—ओ गीदी, जो पलट गया, तो इतनी क़रौलियाँ भोंकी होंगी कि छठी का दूध याद आ गया होगा।

मेम—क्यों ख़ोजी, क्या मुझसे ख़फ़ा हो गए?

आज़ाद—क्यों भई, क्या शैतान ने फिर उँगली दिखा दी? मियाँ ख़ोजी?

ख़ोजी—ख़ोजी पर ख़ुदा की मार! ख़ोजी पर शैतान की फट-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार ! एक दफ़ा ख़ोजी कहा, मैं ख़ून पीकर रह गया, अब फिर दोहराया। ख़ुदा जाने, कब का दिया इस गाढ़े वक़्त काम आया। नहीं तो मारे क़रौलियों के भुट्टा-सा सिर उड़ा देता। लाख गया-गुज़रा हूँ, तो क्या हुआ; उम्र-भर रिसालदारी की है, घास नहीं खोदी।

मेम—अच्छा, यह ख़ोजी के नाम पर बिगड़े! हम समझे इससे रूठ गए।

ख़ोजी—नहीं, मेम साहब। ऐसी बात आप फ़रमाती हैं!

आज़ाद—ज़रा इनसे इनकी बीबीजान का हाल पूछिए। उसका नाम बुआ ज़ाफ़रान है। देवनी है देवनी।

ख़ोजी ने बुआ ज़ाफ़रान का नाम सुना, तो रंग फ़क़ हो गया, और सहमकर आँखें बंद कर लीं। आज़ाद ने जब वेनेशिया से सारा क़िस्सा कहा, तो मारे हँसी के लोट-लोट गईं।

अड़तालीसवाँ परिच्छेद

एक आलीशान महल की छत पर हुस्नआरा और उनकी तीनों बहनें मीठी नींद सो रही हैं। बहारबेगम की ज़ुल्फ़ से अंबर की लपटें आती थीं; रूहअफ़ज़ा के घूँघरवाले बाल नौजवानों के मिज़ाज की तरह बल खाते थे; सिपहआरा की मेंहदी अजब लुत्फ़ दिखाती थी; और हुस्नआरा बेगम के गोरे-गोरे मुखड़े के गिर्द काली-काली ज़ुल्फ़ों को देखकर धोखा होता था कि चाँद गहन से निकला है।

इधर तो ये चारों परियाँ बेख़बर आराम में हैं, उधर शहज़ादा हुमायूँ फ़र अपने दोस्त मीर साहब से इधर-उधर की बातें कर रहे हैं।

मीर—कुछ अड़ोसी-पड़ोसियों का तो हाल कहिए। दोनों हसीनें नज़र आती हैं या नहीं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहज़ादा—अरे मियाँ, अब तो चौकड़ी है। एक-से-एक बढ़-चढ़कर। सब मस्त हैं। मगर बला की हयादार।

मीर—यह कहिए, गहरे हैं उस्ताद।

शहज़ादा—अजी, अभी ख़्वाब देख रहा था कि एक महरी हुस्नआरा का ख़त लाई है। ख़त पढ़ ही रहा था कि आप बला की तरह आ पहुँचे। जी चाहता है, गोली मार दूँ।

मीर—क्यों साहब, आपने तो कान पकड़े थे!

शहज़ादा—दिल पर क़ाबू भी तो हो।

मीर—कलंक का टीका लगाओगे? ख़ुदा के लिये फिर तोबा करो। आख़िर चारों छोकड़ियों में से आप रीझे किस पर! या चारों पर दिल आया है?

शहज़ादा—चार निकाह तो जायज़ हैं!

मीर—तो यह कहिए, चारों पर दाँत है।

शहज़ादा—नहीं मियाँ, हँसता हूँ। दो ही तो कुँआरी हैं।

ये बातें हो ही रही थीं कि एकाएक महल्ले में चोर-चोर का गुल मचा। कोई चिराग़ जलाता है, कोई बीबी के ज़ेवर टटोलता है। चारों तरफ़ खलबली मच गई। पूछने से मालूम हुआ कि बड़ी बेगम साहबा के घर में चोर घुसा था। शहज़ादे ने जो यह बात सुनी, तो मीर साहब से बोले—भई, मौक़ा तो अच्छा है। चलो, इस वक़्त ज़रा हो आवें। इसी बहाने एहसान जताएँ।

मीर—सोच लो, ऐसा न हो, पीछे मेरे माथे जाय। तुम तो शहज़ादे बनकर छूट जाओगे, उल्लू मैं बनूँगा। आख़िर वहाँ चलकर क्या कहोगे?

शहज़ादा—अजी, कहेंगे क्या! बस, अफ़सोस करेंगे। शायद इसी फेर में एक झलक मिल जाय। और नहीं, तो आवाज़ ही सुन लेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों आदमी बेगम साहबा के मकान पर पहुँचे, तो क्या देखते हैं, चालीस-पचास आदमी एक चोर को घेरे खड़े हैं, और चारों तरफ़ से उस पर बेभाव की पड़ रही हैं। एक ने तड़-से चपत जमाई, दूसरे ने खोपड़ी पर धौल लगाई। चोर पर इतनी पड़ीं कि बिलबिला गया। झल्ला-झल्लाकर रह जाता था। दो-तीन भले आदमी लोगों को समझा रहे थे, बस करो, अब तो खोपड़ी पिल-पिली कर दी। क्या जमाते ही जाओगे?

१—भई, खूब हाथ गरमाए।

२—हम तो पोले हाथ से लगाते थे। जिसमें चोट तो कम आवे, मगर आवाज़ खूब हो।

चोर—छूटूँगा तो एक-एक से समझूँगा। क्या करूँ, बेबस हूँ; वर्ना सबको पीसकर धर देता।

बहारबेगम के मियाँ भी खड़े थे। बोले—एक ही शैतान है।

शहज़ादा—आख़िर, यह आया किधर से?

नवाब साहब—मैं घूमकर कोई दस बजे के लगभग आया। खाना खाकर लेटा ही था कि नींद आ गई। यह गुल मचा, तो तलवार लेकर दौड़ पड़ा। अब सुनिए, मैं तो ऊपर से आ रहा हूँ, और चोर नीचे से ऊपर जाता है। रास्ते में मुठभेड़ हुई। इसने छुरी निकाली, मगर मैंने भी तलवार का वह हाथ चलाया कि ज़रा हाथ ओछा न पड़े, तो भंडारा खुल जाय। फिर तो ऐसा सहमा कि होश उड़ गए। भागते राह न मिली। अब छत पर पहुँचा, और चाहता था कि झपटकर नीचे कूद पड़े; मगर मेरी छोटी साली ने इस फुरती से रस्सी का फंदा बनाकर फेंका कि उलझकर गिरा। उठकर भागने को ही था कि मैं गले पर पहुँच गया, और जाते ही छाप बैठा। औरतों ने दोहाई देना शुरू की; लेकिन मैंने न छोड़ा। आपने इस वक़्त कहाँ तकलीफ़ फ़रमाई?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहज़ादा—मैंने कहा, चलकर देखूँ, क्या बात हुई। बारे शुक्र है कि ख़ैरियत हुई। मगर आपकी साली बड़ी दिलेर हैं। दूसरी औरत हो, तो डर जाय।

यहाँ तो यह बातें हो रही थीं, उधर अंदर चारों बहनों में भी यही ज़िक्र था। चारों हँस-हँसकर यों बातें कर रही थीं—

सिपह्आरा—है-है बाजी, मैंने जब उस काले-काले संडे को देखा, तो सन-से जान निकल गई।

रूहअफ़ज़ा—मुआ तंबाकू का पिंडा।

हुस्नआरा—वह तो ख़ैर गुज़री कि संदूक़ हाथ से गिर पड़ा, नहीं तो सब मूस ले जाता।

सिपह्आरा—बहारबेगम की चिड़चिड़ी सास लाखों ही सुनाती कि मेरी बहू के गहने सब बेच खाए।

बहारबेगम—चोर-चोर की भनक कान में पड़ी, तो मैं कुल-बुलाकर चौंक पड़ी। भागी, तो जूड़ा भी खुल गया। अल्लाह जानता है, बड़ी मिहनत से बाँधा था। चलो ख़ैर।

रूहअफ़ज़ा—बस, हमारी बाजी को चोटी-कंघी की फ़िक्र रहती है।

हुस्नआरा—जितना इनको इस बात का ख़याल है, उतना हमारे ख़ानदान-भर में किसी को नहीं है। जभी तो दूलहा भाई इतने दीवाने रहते हैं।

बहारबेगम—चलो, बैठी रहो; छोटे मुँह बड़ी बात!

हुस्नआरा—दूलहा भाई को इनके साथ इश्क़ है।

बहारबेगम—क्या टर-टर लगाई है नाहक़!

अब दिल्लगी सुनिए कि मिरज़ा हुमायूँ फ़र बाहर बैठे चुपके-चुपके सारी बातें सुन रहे थे। नवाब बेचारे कट-कट गए, मगर चुप। अंदर जाकर समझावें, तो अदब के ख़िलाफ़; चुपके बैठे रहें, तो भी रहा नहीं जाता। जान अज़ाब में थी। ख़ैर, हुक़्क़ा पीकर शहज़ादा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुख़सत हुए। उनके चले जाने के बाद नवाब साहब अंदर आए, और बोले - तुम लोगों की भी अजब आदत है। जब देखोगी कि कोई ग़ैर आदमी आके बैठा है, बस, तभी गुल मचाओगी। इस वक़्त एक भलेमानस बैठे थे, और यहाँ चुहल हो रही थी।

बहारबेगम—वह भलामानस निगोड़ा कौन था, जो इतने वक़्त पंचायत करने आ बैठा ?

रूहअफ़ज़ा—तो अब कोई उनके मारे अपने घर में बात न करे ? घोंटकर मार न डालिए।

हुस्नआरा—हम भी तो सुनें, वह भलेमानस कौन थे ?

नवाब—अजी, यही, जो सामने रहते हैं, शहज़ादे।

हुस्नआरा—तो आपने आकर हमसे कह क्यों न दिया ? फिर हम काहेको बोलते ?

बहारबेगम—अपनी ख़ता न कहेंगे, दूसरों को ललकारेंगे।

नवाब—उस वक़्त वहाँ से आने का मौक़ा न था। मुझसे पूछा कि चोर को किसने पकड़ा। मैंने कहा, मेरी छोटी साली ने। तो बहुत ही हँसे।

नवाब साहब बाहर चले गए, तो फिर बातें होने लगीं—

सिपहआरा—ज़रा उसकी ढिठाई तो देखो कि चोर का नाम सुनते ही आ डटा। भला क्या वजह थी इसकी ? ऐसा कहाँ का बड़ा रुस्तम था ?

हुस्नआरा—तीन बजे के वक़्त आप जो आए, तो क्यों आए !

रूहअफ़ज़ा—मैं बताऊँ ! उसको यह ख़बर न होगी कि दूल्हा भाई घर पर हैं। यह न होते, तो घर में घुस पड़ता।

बहारबेगम—नहीं, वाह; शहज़ादा है, कोई ऐसा-वैसा है !

सिपहआरा—काम तो शोहदों के-जैसे हैं।

अब एक और दिल्लगी सुनिए। चोर आया, गुल-गपाड़ा हुआ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पकड़ा गया; ज़माने-भर में हुल्लड़ मचा, महल्ला-भर जाग उठा; चोर थाने पर पहुँचा; मगर बड़ी बेगम साहबा अभी तक ख़र्राटे ही ले रही हैं। जब जागीं, तो मामा से बोलीं—कुछ गुल-सा मचा था अभी?

मामा—हाँ, कुछ आवाज़ तो आई थी!

बेगम—ज़री, किसी से पूछो तो?

मामा—ऐ बीवी, पूछना इसमें क्या है? भेड़िया-वेड़िया आया होगा।

बेगम—मैंने आज हाथी को ख़्वाब में देखा है; अल्लाह बचावे!

इतने में चोर के आने की ख़बर मिली। तब तो बेगम साहबा के होश उड़ गए। मामा को भेजा कि जा पूछ, कुछ ले तो नहीं गया।

हुस्नआरा—अम्माजान, बहुत जल्द जागीं! क्या तू भी घोड़े बेचकर सोई थी? अल्लाह री नींद!

मामा—ज़री आँख लग गई थी। मगर कुछ गुल की आवाज़ ज़रूर आई थी।

हुस्नआरा—महल्ला-भर जाग उठा, तुम्हारे नज़दीक कुछ-ही-कुछ गुल था। ठीक! जाके अम्मा से कह दे कि चोर आया था, मगर जाग हो गई।

सिपह्आरा—ऐ, काहे के वास्ते बहकाती हो। मामा, तू जाके सो रह; शोर-गुल कहीं कुछ न था, कोई सोते में बर्रा उठा होगा।

हुस्नआरा—नहीं मामा, यह दिल्लगी करती हैं। चोर आया था।

मामा—ऐ, गया चूल्हे में निगोड़ा चोर! इधर आने का रुख़ करे, तो आँखें ही फूट जायँ। क्या हँसी-ठट्ठा है!

सिपह्आरा—देखो तो सही भला!

मामा—अभी बेगम साहबा सुन लें, तो दुनिया सिर पर उठा लें। मामा ने जाकर बेगम से कहा—ऐ हुज़ूर, कुछ है न वै,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेकार को जगाया। न भेड़िया, न चोर, कोई सोते-सोते बर्रा उठा था।

बेगम—ज़रा बाहर जाकर तो पूछ कि यह गुल कैसा था।

महरी—बीबी, मैं अभी बाहर से आई हूँ, कोठे पर कलमुँहा आया था। कोठरी का कुलुफ तोड़कर जब संदूक उठाया, तो जाग हो गई। इतने में नवाब साहब कोठे पर से नंगी तलवार लिए दौड़ आए।

बेगम—नवाब साहब के दुश्मनों को तो कहीं चोट-ओट नहीं आई?

महरी—ना बीबी, एक फाँस तक तो चुभी नहीं।

बेगम—चोर कुछ ले तो नहीं गया?

महरी—एक झंझो तक नहीं।

बेगम—चोर अब कहाँ है?

महरी—ख़ादिमहुसेन थाने पर ले गया।

मामा—अब चक्की पीसनी पड़ेगी।

बेगम—तू तो कहती थी कि कोई सोते-सोते बर्रा उठा था। झूठी ज़माने-भर की! चल, जा, हट!

अब थाने का हाल सुनिए। थानेदार नदारद; जमादार शराब पिए मस्त; कांस्टेबिल अपनी-अपनी ड्यूटी पर। एक कांस्टेबिल पहरे पर पड़ा सो रहा था। ख़ादिमहुसेन ने बहुत गुल मचाया, तब जाके हज़रत की नींद खुली। बिगड़े कि मुझे जगाया क्यों! चोर को छोड़ दो।

ख़ादिमहुसेन—वाह, छोड़ देने की एक ही कही। मैं भी थाने में मुहर्रिर रह चुका हूँ।

कांस्टेबिल—न छोड़ोगे तुम?

ख़ादिमहुसेन—होश की दवा करो मियाँ! इसके साथ तुमको भी फँसाऊँ तो सही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कांस्टेबिल—(चोर से) तुझे इन्होंने अपने यहाँ कै घंटे रक्खा था ?

चोर—पकड़ के बस यहाँ ले आए ?

कांस्टेबिल—दुत गौखे ! अबे, तू कहना कि मैं राह-राह चला जाता था, इनसे मुझसे लागडाँट थी । इन्होंने घात पाकर मुझे पकड़ लिया, खूब पीटा, और चार घंटे तक अस्तबल की कोठरी में बंद रक्खा ।

चोर—लागडाँट क्या बताऊँ ?

कांस्टेबिल—कह देना कि मेरी जोरू पर यह बुरी निगाह डालते थे। बस, लागडाँट हो गई ।

चोर—मगर मेरी जोरू तो चार बरस हुए, एक के साथ निकल गई ।

कांस्टेबिल—बस, तो बात बन गई ! कह देना, इन्हीं की साज़िश से निकली थी । तो इन पर दो जुर्म क़ायम होंगे। एक यह कि तुझको झूठ-मूठ फाँस लिया, दूसरे ज़बरदस्ती क़ैद रक्खा ।

ख़ादिमहुसेन—तुम्हारी बातों पर कुछ हँसी आती है, कुछ गुस्सा ।

कांस्टेबिल—जब बड़ा घर देखोगे, तब हँसी का हाल खुल जायगा ।

ख़ादिमहुसेन—हमारे घर में चोरी हो, और हमीं फँसें ?

ख़ैर, कांस्टेबिल साहब रोज़नामचा लिखने बैठे । ख़ादिमहुसेन ने सारी दास्तान बयान की । जब उसने यह कहा कि नवाब साहब तलवार लेकर दौड़े, तो कांस्टेबिल ने क़लम रोक दिया; और कहा—ज़रा ठहरो, तलवार का लैसंस उनके पास है ?

ख़ादिमहुसेन—उनके साथ तो बीस सिपाही तलवार बाँधे निकलते हैं । तुम एक लैसंस लिए फिरते हो !

आख़िर रिपोर्ट ख़तम हुई, और ख़ादिम अपने घर आया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उंचासवाँ परिच्छेद

एक दिन मियाँ आज़ाद मिस्टर और मिसेज़ अपिल्टन के साथ खाना खा रहे थे कि एक हँसोड़ आ बैठे, और लतीफ़े कहने लगे। बोले—अजी, एक दिन बड़ी दिल्लगी हुई। हम एक दोस्त के यहाँ ठहरे हुए थे। रात को उसके ख़िदमतगार की बीबी दस अंडे खा कर गई। जब दोस्त ने पूछा, तो ख़िदमतगार ने बिगड़ी बात बना कर कहा कि बिल्ली खा गई। मगर मैंने देख लिया था। जब बिल्ली आई, तो वह औरत उसे मारने दौड़ी। मैंने कहा—बिल्ली को मार न डालना, नहीं तो फिर अंडे हज़म न होंगे।

आज़ाद—बात तो यही है। खाय कोई, बिल्ली का नाम बद।

अपिल्टन—आप शादी क्यों नहीं करते?

हँसोड़—शादी करना तो आसान है, मगर बीबी का सँभालना मुशकिल। हाँ, एक शर्त पर हम शादी करेंगे। बीबी दस बच्चों की मा हो।

मेम—बच्चों की क़ैद क्यों की?

हँसोड़—आप नहीं समझीं। अगर जवान आई, तो उसके नख़रे उठाते-उठाते नाक में दम आ जायगा; अधेड़ बीबी हुई तो नख़रे न करेगी, और बच्चे बड़े काम आवेंगे।

आज़ाद—वह क्या?

हँसोड़—क़हत के दिनों में बेच लेंगे।

इतने में क्या देखते हैं कि मियाँ ख़ोजी लुढ़कते हुए चले आते हैं। एक सूखा कतारा हाथ में है।

आज़ाद—आइए। बस, आप ही की कसर थी।

ख़ोजी—मुझे बैठे-बैठे ख़याल आया कि किसी से पूछूँ तो यह समुंदर है क्या चीज़, और किसकी दुआ से बना है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हँसोड़—मैं बताऊँ! अगले ज़माने में एक मुल्क था घामड़-नगर।

ख़ोजी—ज़री ठहर जाइएगा। वहाँ अफ़ीम भी बिकती थी?

हँसोड़—उस मुल्क के बाशिंदे बड़े दिलेर होते थे, मगर क़द के छोटे। बिलकुल टेनी मुर्ग़ों के बराबर।

ख़ोजी—(मूछों पर ताव देकर) हाँ, हाँ, छोटे क़द के आदमी तो दिलेर होते ही हैं।

हँसोड़—और कोई बग़ैर क़रौली बाँधे घर से न निकलता था।

ख़ोजी—(अकड़कर) क्यों मियाँ आज़ाद, अब न कहोगे!

हँसोड़—मगर उन लोगों में एक ऐब था, सब-के-सब अफ़ीम पीते थे।

ख़ोजी—(त्योरियाँ चढ़ाकर) ओ गीदी!

आज़ाद—हैं-हैं! शरीफ़ आदमियों से यह बदज़बानी!

ख़ोजी—हम तो सिर से पाँव तक फुँक गए, आप शरीफ़ लिए फिरते हैं!

हँसोड़—वहाँ की औरतें बड़ी गरांडील होती थीं। जहाँ मियाँ ज़रा बिगड़े, और बीबी ने बग़ल में दाबकर बाज़ार में घसीटा।

ख़ोजी—अहाहा, सुनते हो यार! वह बहुरूपिया वहीं का था। अब तो इस गीदी का मकान भी मिल गया। चचा बनाकर छोड़ूँ, तो सही।

हँसोड़—वे सब रिसालदारी करते थे।

ख़ोजी—और वहाँ और क्या-क्या होता था? उस मुल्क के आदमियों की तसवीरें भी आपके पास हैं?

हँसोड़—थीं तो, मगर अब नहीं रहीं। बस, बिलकुल तुम्हारे ही-से हाथ-पाँव थे! करारे जवान। पौंडे बहुत खाते थे।

ख़ोजी—ओहोहो! वे सब हमारे ही बाप-दादा थे। देखो भई आज़ाद, अब यह बात अच्छी नहीं। वहाँ से तो लंबे-चौड़े वादे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करके आए थे कि क़रौली ज़रूर ले देंगे, और यहाँ साफ़ मुकर गए। अब हमें क़रौली मँगा दो, तो ख़ैरियत है, नहीं तो हम बिगड़ जायँगे। वल्लाह, कौन गीदी दम-भर ठहरे यहाँ।

आज़ाद—और यहाँ से आप जायँगे कहाँ, जहन्नुम में?

वेनेशिया—कुछ रुपए भी हैं? जहाज़ का किराया कहाँ से दोगे!

आज़ाद—मैं इनका ख़ज़ांची हूँ। यह घर जायँ, किराया मैं दे दूँगा।

हँसोड़—इस ख़ज़ांची के लफ़्ज़ पर हमें एक लतीफ़ा याद आया। शादी के पहले नौजवान लेडियाँ अपने आशिक़ को अपना ख़ज़ाना कहती हैं। शादी होने के बाद उसे ख़ज़ांची कहने लगती हैं। ख़ज़ांची के ख़ज़ांची और मियाँ के मियाँ।

वेनेशिया—अच्छा हुआ, तुम्हारी बीबी चल बसीं; नहीं तो तुम्हारी किफ़ायत उनकी जान ही ले लेती।

हँसोड़—अजीब औरत थी, शादी के बाद ऐसी रोनी सूरत बनाए रहती थी कि मालूम होता था, आज बाप के मरने की ख़बर आई है। दो बरस के बाद हमसे छः महीने के लिये जुदाई हुई। अब जो देखता हूँ, तो और ही बात है। बात-बात पर मुसकिराना, और हँसना। बात हुई और खिल गई। मैंने पूछा—क्या तुम वही हो, जो नाक-भौं चढ़ाए रहती थीं? मुसकिराकर कहा—हाँ, हूँ तो वही। मैंने कहा—ख़ैर, कायापलट तो हुई। हँसके बोली—वाह, इसमें ताज्जुब काहे का। एक दिन मुझे ख़याल आ गया, बस, तब से अब हर वक़्त हँसती रहती हूँ। तब तो मैंने अपना मुँह पीट लिया। रोनी सूरत बनाकर बोला—हम तो ख़ुश हुए थे कि अब हमसे-तुमसे ख़ूब बनेगी, मगर मालूम हो गया कि तुम्हारी हँसी और रोने, दोनों का एतबार नहीं। अगर तुम्हें इसी तरह बैठे-बैठे किसी दिन ख़याल आ गया कि रोना अच्छा, तो फिर रोना ही शुरू कर दोगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—मुझे भी एक बात याद आ गई। हमारे महल्ले में एक ख़्वाजा साहब रहते थे। उनके एक लड़की थी, इतनी हसीन कि चाँद भी शरमा जाय। बात करते वक़्त बस यही मालूम होता था कि मुँह से फूल झड़ते हैं। उसकी शादी एक गँवार जाहिल से हुई, जो इतना बदसूरत था कि उससे बात करने को भी जी न चाहता था। आख़िर लड़की इसी ग़म में कुढ़-कुढ़कर मर गई।

पचासवाँ परिच्छेद

कई दिन तक तो जहाज़ ख़ैरियत से चला गया, लेकिन पेरिम के क़रीब पहुँचकर जहाज़ के कप्तान ने सबको इत्तिला दी कि एक घंटे में बड़ी सख़्त आँधी आनेवाली है। यह ख़बर सुनते ही सब के होश-हवास ग़ायब हो गए। अक़्ल ने हवा बतलाई; आँखों में अँधेरी छाई; मौत का नक़्शा आँखों के सामने फिरने लगा। तुर्रा यह कि आसमान फ़क़ीरों के दिल की तरह साफ़ था, चाँदनी ख़ूब निखरी हुई, किसी को सान-गुमान भी नहीं हो सकता था कि तूफ़ान आवेगा; मगर बेरोमीटर से तूफ़ान की आमद साफ़ ज़ाहिर थी। लोगों के बदन के रोंगटे खड़े हो गए, जान के लाले पड़ गए; या ख़ुदा, जायँ तो कहाँ जायँ, और इस तूफ़ान से नजात क्योंकर पावें? कप्तान के भी हाथ-पाँव फूल गए, और उसके नायब भी सिट्टी-पिट्टी भूल गए। सीढ़ियों से तख़्ते पर आते थे, और घबराकर फिर ऊपर चढ़ जाते थे। कप्तान लाख-लाख समझाता था, मगर किसी को उसकी बात का यक़ीन न आता था—

किसी तरह से समझता नहीं दिले नाशाद;
वही है रोना वही चीख़ना वही फ़रियाद।

इतने में हवा ने वह ज़ोर बाँधा कि लोग त्राहि-त्राहि करने लगे। कप्तान ने एक पाल तो रहने दिया, और जहाज़ ख़ुदा की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राह पर छोड़ दिया। लहरों की यह कैफ़ियत कि आसमान से बातें करती थीं। जहाज़ झोंके खाकर गेंद की तरह इधर-से-उधर उछलता था। सब-के-सब ज़िंदगी से हाथ धो बैठे, अपनी जानों को रो बैठे। बच्चे सहमकर अपनी माओं से चिपटे जाते थे। कोई औरत मुँह ढककर रोती थी कि उम्र-भर की कमाई इस समुद्र में गँवाई। कोई अपने प्यारे बच्चे को छाती से लगाकर कहती—बेटा, अब हम रुख़सत होते हैं। पर वह नादान मुसकिराता था, और इस भोलेपन से मा के दिल पर बिजलियाँ गिराता था। किसी को मारे ख़ौफ़ के चुप लग गई थी, किसी के हाथ-पाँवों में कँपकपी थी। कोई समुद्र में कूद पड़ने का इरादा करके रह जाता था, कोई वैग्र देवतों को मनाता था। क्या बूढ़े, क्या जवान, सबकी अक़्ल गुम थी। वेनेशिया के चेहरे का रंग काफ़ूर हो गया। हँसोड़ के दिल से हँसी का ख़याल कोसों दूर हो गया। मियाँ आज़ाद का चेहरा ज़र्द, अपिल्टन के हाथ-पाँव सर्द। मियाँ आज़ाद सोचने लगे, या ख़ुदा, यह किस मुसीबत से दो-चार किया, माशूक़ के एवज़ मौत को गले का हार किया! जी लगाने की ख़ूब सज़ा पाई, इश्क़ की धुन में जान भी गँवाई। हमारी हड्डियाँ तक गल जायँगी, पर हुस्नआरा हमारी ख़बर भी न पावेंगी। सिपहआरा बार-बार फ़ाल देखेंगी कि आज़ाद कब मैदान से सुर्ख़रू होकर आवेंगे, और हम कब मसजिद में घी के चिराग़ जलावेंगे; मगर आज़ाद की किश्ती ग़ोते खाती है, और ज़रा देर में तह की ख़बर लाती है।

जहाज़ में तो यह कुहराम मचा था, मगर ख़ोजी लंबी ताने सो रहे थे। इस नींद पर ख़ुदा की मार, इस पीनक पर शैतान की फटकार! आज़ाद ने जगाया कि ख़्वाजा साहब, उठिए, तूफ़ान आया है। हज़रत ने लेटे-ही-लेटे भुनभुनाकर फ़रमाया कि चुप गीदी, हमने ख़्वाब में बहुरूपिया पकड़ पाया है। तब तो आज़ाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झल्लाए, और कसकर एक लात लगाई। ख़ोजी कुलबुलाकर उठ बैठे, और समुद्र की भयानक सूरत देखी, तो काँप उठे।

कप्तान ख़ूब समझता था कि हालत हर घड़ी नाज़ुक होती जाती है; लेकिन पुराना आदमी था, कलेजा मज़बूत किए हुए था। इससे लोगों को तसल्ली होती थी कि शायद जान बच निकले। सामने पेरिम का जज़ीरा नज़र आता था; मगर वहाँ तक पहुँचना मुहाल था। सब-के-सब दुआ कर रहे थे कि जहाज़ किसी तरह इस टापू तक पहुँच जाय। मरने की तैयारियाँ हो रही थीं। इतने में आज़ाद ने क्या देखा कि अपिल्टन वेनेशिया का हाथ पकड़कर तख़्ते पर खड़े रो रहे हैं। आज़ाद को देखते ही वेनेशिया ने कहा—मिस्टर आज़ाद, रुख़सत! हमेशा के लिये रुख़सत!

आज़ाद—रुख़सत!

हँसोड़—है-है! लो अब भँवर में जहाज़ आ गया।

यह सुनकर औरतों ने वह फ़रियाद मचाई कि लोगों के कलेजे दहल गए।

अपिल्टन—बस, इतनी ही दुनिया थी!

आज़ाद—हाँ, इतनी ही दुनिया थी!

ख़ोजी—भई आज़ाद, ख़ुदा गवाह है, मैं इस वक़्त अफ़ीम के नशे में नहीं। अफ़सोस, तुम्हारी जान जाती है, हुस्नआरा समझेंगी कि आज़ाद ने धोखा दिया। हाय आज़ाद, तेरी जवानी मुफ़्त गई।

एकाएक जहाज़ तीन बार घूमा, और हवा के झोंके से कई गज़ के फ़ासले पर जा पहुँचा। अब लाइफ़-बोट के सिवा और कोई तदबीर न थी। जहाज़ डूबने ही को था, दस फ़ीट से ज़्यादा पानी उसमें समा गया था। लाइफ़-बोट समुद्र में उतारे गए, और आज़ाद लड़कों और औरतों को उठा-उठाकर लाइफ़-बोट में बैठाने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी अपनी जान ख़तरे में थी, मगर इसकी उन्हें परवा न थी। जब वह वेनेशिया के पास पहुँचे, तो उसने इनसे हाथ मिलाया, और अपिल्टन और वह, दोनों लाइफ़-बोट में कूद पड़े। आज़ाद की दिलेरी पर लोग हैरत से दाँतों तले उँगली दबाते थे। लोगों को यक़ीन हो गया था कि यह कोई फ़रिश्ता है, जो बेगुनाहों की जान बचाने के लिये आया है।

टापू के बाशिंदे किनारे पर खड़े रोशनी कर रहे थे कि शोले उठें, और जहाज़ के लोग समझ जायँ कि ज़मीन क़रीब है। सैकड़ों आदमी गुल मचाते थे, तालियाँ बजाते थे। कुछ लोग रो रहे थे। मगर कुछ ऐसे भी थे, जो दिल में खिले जाते थे कि अब पौ-बारह हैं।

एक—बस, अब जहाज़ डूबा। तड़के ही से लैस होकर आ डटूँगा।

दूसरा—हमें एक बार जवाहिरात का एक संदूक़ मिल गया था।

तीसरा—अजी, हमने इसी तरह बहुत-कुछ पैदा किया।

चौथा—अजी, क्या बकते हो? कुछ तो ख़ुदा से डरो! वे सब तो मुसीबत में हैं, और तुम लोगों को लूट की धुन सवार है। शर्म हो, तो चुल्लू-भर पानी में डूब मरो।

मियाँ ख़ोजी बार-बार हिम्मत बाँधकर लाइफ़-बोट की तरफ़ जाते, और डरकर लौट आते थे। आख़िर आज़ाद ने उन्हें भी घसीटकर लाइफ़-बोट में पहुँचाया। वहाँ जाते ही उन्होंने गुल मचाया कि अफ़ीम की डिबिया तो वहीं रह गई! मियाँ, ज़री कोई लपक के हमारी डिबिया ले आवे। आज़ाद ने कहा—मियाँ, तुम भी कितने पागल हो? यहाँ जानों के लाले पड़े हैं, तुम्हें अपनी डिबिया ही की फ़िक्र है।

लाइफ़-बोट कुल तीन थे। इनमें मुशकिल से पचास-साठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी बैठ सकते थे। लेकिन हर शख़्स चाहता था कि मैं भी लाइफ़-बोट में पहुँच जाऊँ। कप्तान ने यह हालत देखी, तो ज़ंजीरें खोल दीं। किश्तियाँ बह निकलीं। अब बाक़ी आदमियों की जो हालत हुई, वह बयान में नहीं आ सकती। अगर कोई फ़ोटोग्राफ़र इन बदनसीबों की तसवीर उतारता, तो बड़े-से-बड़े संगदिल भी उसे देखकर सिर धुनते। मौत चिमटी जाती है, और मौत के पंजों में फँसी हुई जान फड़फड़ा रही है। मगर जान बड़ी प्यारी चीज़ है। लोग खूब जानते थे कि जहाज़ के डूबने में देर नहीं, लाइफ़-बोट भी दूर निकल गए; मगर फिर भी यह उम्मेद है, शायद किसी तरह बच जायँ। दो बदनसीब बहनें यों बातें कर रही थीं—

बड़ी बहन—कूद पड़ो पानी में। शायद बच जायँ।

छोटी बहन—लहरें कहीं-न-कहीं पहुँचा ही देंगी।

बड़ी—अम्मा सुनेंगी, तो क्या करेंगी?

छोटी—मैं तो कूदती हूँ।

बड़ी—क्यों जान देती है?

एक औरत ने अपने प्यारे बच्चे को समुद्र में फेक दिया, और कहा—यह लड़का तेरे सिपुर्द करती हूँ।

यह कहकर खुद भी गिर पड़ी।

अब सुनिए, जिस लाइफ़-बोट पर वेनेशिया और अपिल्टन थे, वह हवा के झोंके से पेरिम से दूर हट गया। वेनेशिया ने कहा—अब कोई उम्मेद नहीं।

अपिल्टन—खुदा पर भरोसा रक्खो।

वेनेशिया—या खुदा, हमें बचा ले। हम बेगुनाह हैं।

अपिल्टन—सब्र, सब्र!

वेनेशिया—लो, आज़ाद की किश्ती भी इधर ही आने लगी। अब कोई न बचेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों किश्तियाँ थोड़े ही फ़ासले पर जा रही थीं, इतने में एक लहर ने अपिल्टन की किश्ती को ऐसा झोंका दिया कि वह नीचे-ऊपर होने लगी, और तीन आदमी समुद्र में गिर पड़े। अपिल्टन भी उनमें से एक थे। उनके गिरते ही वेनेशिया ने एक चीख़ मारी, और बेहोश हो गई। आज़ाद ने यह हाल देखा, तो फ़ौरन् बोट पर से कूद पड़े, और जान हथेली पर लिए हुए, लहरों को चीरते, अपिल्टन की मदद को चले। इधर अपिल्टन का कुत्ता भी पानी में कूदा, और उनके सिर के बाल दाँतों से पकड़के ऊपर लाया। मियाँ आज़ाद भी तैरते हुए जा पहुँचे, और अपिल्टन को पकड़ लिया। उसी वक़्त किश्ती भी आ पहुँची, और लोगों ने मदद देकर अपिल्टन को खींच लिया। मगर किश्ती इतनी तेज़ी से निकल गई कि आज़ाद उस पर न आ सके। अब उनके लिये मौत का सामना था। मगर वह कलेजा मज़बूत किए टापू की तरफ़ तैरते चले जाते थे। टापूवालों ने उन्हें आते देखा, तो और भी हौसला बढ़ाया, और हिम्मत दिलाई। सब-के-सब दुआ कर रहे थे कि या ख़ुदा, इस जवान को बचा। ज्यों ही आज़ाद टापू के क़रीब पहुँचे, रस्सियाँ फेंकी गईं, और आज़ाद ऊपर आए। सबने उनकी पीठ ठोंकी। वेनेशिया ने मियाँ आज़ाद से कहा—तुम न होते, तो मैं कहीं की न रहती। तुम्हारा एहसान कभी न भूलूँगी।

अपिल्टन—भई, देखना, भूल न जाना। टर्की से ख़त लिखते रहना।

आज़ाद—ज़रूर, ज़रूर!

वेनेशिया—आज़ाद, जैसे बहन को अपने भाई की मुहब्बत होती है, वैसे ही मुझको तुम्हारी मुहब्बत है।

आज़ाद—मैं जहाँ कहीं रहूँगा, आप लोगों से ज़रूर मिलूँगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Hari...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—यार, हमारी अफ़ीम की डिबिया जहाज़ ही में रह गई। देखें किस ख़ुश-नसीब के हाथ लगती है।

सब लोग यह जुमला सुनकर खिलखिलाकर हँस पड़े।

इक्यावनवाँ परिच्छेद

माल्टा में आर्मीनिया, अरब, यूनान, स्पेन, फ़्रांस, सभी देशों के लोग हैं। मगर दो दिन से इस जज़ीरे में एक बड़े गरांडील जवान का गुज़र हुआ है। क़द कोई आधगज़ का, हाथ-पाँव दो-दो माशे के; हवा ज़रा तेज़ चले, तो उड़ जायँ। मगर बात-बात पर तीखे हुए जाते हैं। किसी ने ज़रा तिर्छी नज़र से देखा, और आपने क़ौली सीधी की। न दीन की फ़िक्र थी, न दुनिया की; बस, अफ़ीम हो, और चाहे कुछ हो या न हो।

आज़ाद ने कहा—भई, तुम्हारा यह फ़िक़रा उम्र-भर न भूलेगा कि देखें हमारी अफ़ीम की डिबिया किस ख़ुश-नसीब के हाथ लगती है।

ख़ोजी—फिर, उसमें हँसी की क्या बात है? हमारी तो जान पर बन आई, और आपको दिल्लगी सूझती है। जहाज़ के डूबने का किस मर्दक को रंज हो। मगर अफ़ीम के डूबने का अलबत्ता रंज है। दो दिन से जम्हाइयों पर जम्हाइयाँ आती हैं। पैसे लाओ, तो देखूँ, शायद कहीं मिल जाय।

मियाँ आज़ाद ने दो पैसे दिए, और आप एक दूकान पर पहुँचकर बोले—अफ़ीम लाना जी!

दूकानदार ने हाथ से कहा कि हमने समझा नहीं।

ख़ोजी—अजब जाँगलू है! अबे, हम अफ़ीम माँगते हैं।

दूकानदार हँसने लगा।

ख़ोजी—क्या फटी जूती की तरह दाँत निकालता है! लाता है अफ़ीम कि निकालूँ क़रौली!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतने में मियाँ आज़ाद पहुँचे, और पूछा—यहाँ क्या ख़रीदारी होती है ?

ख़ोजी—अजी, यहाँ तो सभी जाँगलू-ही-जाँगलू रहते हैं। घंटे भर से अफ़ीम माँग रहा हूँ, सुनता ही नहीं।

आज़ाद—फिर कहने से तो आप बुरा मानते हैं, भला यह बारूद बेचता है या अफ़ीम ? बिलकुल गौखे ही रहे !

ख़ोजी—भई, यहाँ पर तो हम भी क़ायल हो गए।

आज़ाद—चलो, हम अफ़ीम दिलवा दें।

ख़ोजी—अगर अफ़ीम का यही हाल रहा, तो तुर्की तक पहुँचना मुहाल है।

आज़ाद—भई, हमारा कहा मानो। हमें टर्की जाने दो, और तुम घर जाओ।

ख़ोजी—वाहवा, अब मैं साथ छोड़नेवाला नहीं। और मैं चला जाऊँगा, तो तुम लड़ोगे किसके बिरते पर ?

आज़ाद—बेशक, आप ही के बिरते पर तो मैं लड़ने जाता हूँ न !

ख़ोजी—कौन ? क़सम खाके कहता हूँ, जब सुनिएगा, यही सुनिएगा कि ख़्वाजा साहब ने तोप में कील लगा दी।

आज़ाद—जी, इसमें क्या शक है।

ख़ोजी—शक-वक के भरोसे न रहिएगा ! अकेली लकड़ी चूल्हे में भी नहीं जलती। जिस वक़्त ख़्वाजा साहब अरबी घोड़े पर सवार होंगे और अकड़कर बैठेंगे, उस वक़्त अच्छे-अच्छे जंडैल-कंडैल झुक-झुककर सलाम करेंगे।

इतने में एक हब्शी सामने से आ निकला। करारा जवान, मछलियाँ भरी हुईं, सीना चौड़ा। ख़ोजी ने जो देखा कि एक आदमी अकड़ता हुआ सामने से आ रहा है, तो आप भी ऐंठने लगे। हब्शी ने क़रीब आकर कंधे से ज़रा धक्का दिया, तो मियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी ने बीस लुढ़कनियाँ खाईं। मगर बेहया तो थे ही, झाड़-पोंछकर उठ खड़े हुए, और हब्शी को ललकारकर कहा—अबे ओ गीदी, न हुई क़रौली इस वक़्त। ज़रा मेरा पैर फिसल गया, नहीं तो वह पटकनी देता कि अंजर-पंजर ढीले हो जाते!

आज़ाद—तुम क्या, तुम्हारा गाँव-भर तो इसका मुक़ाबला कर ले!

ख़ोजी—अच्छा, लड़ाकर देख लो न! छाती पर न चढ़ बैठूँ, तो ख़्वाजा नाम नहीं। कहो, तो ललकारूँ जाकर।

आज़ाद—बस, जाने दीजिए। क्यों हाथ-पाँव के दुश्मन हुए हो!

दूसरे दिन जहाज़ वहाँ से रवाना हुआ। आज़ाद को बार-बार हुस्नआरा की याद आती थी। सोचते थे, कहीं लड़ाई में मारा गया, तो उससे मुलाक़ात भी न होगी। ख़ोजी से बोले—क्यों जी, अगर हम मर गए, तो तुम हुस्नआरा को हमारे मरने की ख़बर दोगे, या नहीं?

ख़ोजी—मरना क्या हँसी-ठट्ठा है? मरते हैं हम-जैसे दुबले-पतले बूढ़े अफ़ीमची कि तुम-ऐसे हट्टे-कट्टे जवान?

आज़ाद—शायद हमीं तुमसे पहले मर जायँ?

ख़ोजी—हम तुमको अपने पहले मरने ही न देंगे। इधर तुम बीमार हुए, और हमने इधर ज़हर खाया।

आज़ाद—अच्छा, जो हम डूब गए?

ख़ोजी—सुनो मियाँ, डूबनेवाले दूसरे ही होते हैं। वह समुंदर में डूबने नहीं आया करते, उनके लिये एक चुल्लू काफ़ी होता है।

आज़ाद—ज़रा देर के लिये मान लो कि हम मर गए, तो इत्तिला दोगे न?

ख़ोजी—पहले तो हम तुमसे पहले ही डूब जायँगे, और अगर बदनसीबी से बच गए, तो जाकर कहेंगे—आज़ाद ने शादी कर ली, और गुलछर्रे उड़ा रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—तब तो आप दोस्ती का हक़ ख़ूब अदा करेंगे!

ख़ोजी—इसमें हिकमत है।

आज़ाद—क्या है, हम भी सुनें?

ख़ोजी—इतना भी नहीं समझते! अरे मियाँ, तुम्हारे मरने की ख़बर पाकर हुस्नआरा की जान पर बन आवेगी, वह सिर पटक-पटककर दम तोड़ देगी। और जो यह सुनेगी कि आज़ाद ने दूसरी शादी कर ली, तो उसे तुम्हारे नाम से नफ़रत हो जायगी, और रंज तो पास फटकने भी न पावेगा। क्यों, है न अच्छी तरकीब?

आज़ाद—हाँ, है तो अच्छी!

ख़ोजी—देखा, बूढ़े आदमी डिबिया में बंद कर रखने के क़ाबिल होते हैं। तुम लाख पढ़ जाओ, फिर लौंडे ही हो हमारे सामने। मगर तुम्हारी आजकल यह क्या हालत है? कोई किताब पढ़कर दिल क्यों नहीं बहलाते?

आज़ाद—जी उचाट हो रहा है। किसी काम में जी नहीं लगता।

ख़ोजी—तो ख़ूब सैर करो। अरे यार, पहले तो हमें उम्मेद ही नहीं कि हिंदोस्तान पहुँचें, लेकिन ज़िंदा बचे, और हिंदोस्तान की सूरत देखी, तो ज़मीन पर क़दम न रक्खेंगे। लोगों से कहेंगे, तुम लोग क्या जानो, माल्टा कहाँ है? ख़ूब गप्पें उड़ाएँगे।

यों बातें करते हुए दोनों आदमी एक कोठे में गए। वहाँ क़हवे की दूकान थी। आज़ाद ने एक आदमी के हाथ अफ़ीम मँगवाई। ख़ोजी ने अफ़ीम देखी तो खिल गए। वहीं घोली, और चुस्की लगाई। वाह आज़ाद, क्यों न हो, यह एहसान उम्र-भर न भूलूँगा। इस वक़्त हम भी अपने वक़्त के बादशाह हैं—

फ़िक्र दुनिया की नहीं रहती है मैख़्वारों में;
ग़म ग़लत हो गया जब बैठ गए यारों में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Hari...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस दूकान में बहुत-से अख़बार मेज़ पर पड़े थे। आज़ाद एक किताब देखने लगे। मालिक-दूकान ने देखा, तो पूछा—कहाँ का सफ़र है?

आज़ाद—टर्की जाने का इरादा है।

मालिक—वहाँ हमारी भी एक कोठी है। आप वहीं ठहरिएगा।

आज़ाद—आप एक ख़त लिख दें, तो अच्छा हो।

मालिक—ख़ुशी से। मगर आजकल तो वहाँ जंग छिड़ी है!

आज़ाद—अच्छा, छिड़ गई?

मालिक—हाँ, छिड़ गई। लड़ाई सख़्त होगी। लोहे-से-लोहा लड़ेगा।

जब आज़ाद यहाँ से चलने लगे, तो मालिक ने अपने लड़के के नाम ख़त लिखकर आज़ाद को दिया। दोनों आदमी वहाँ से आकर जहाज़ पर बैठे।

बावनवाँ परिच्छेद

रात के ग्यारह बजे थे, चारों बहनें चाँदनी का लुत्फ़ उठा रही थीं। एकाएक मामा ने कहा—ऐ हुज़ूर, ज़री चुप तो रहिए। यह ग़ुल कैसा हो रहा है? आग लगी है कहीं।

हुस्नआरा—अरे, वह शोले निकल रहे हैं। यह तो बिलकुल क़रीब है।

नवाब साहब—कहाँ हो सब-की-सब! ज़रूरी सामान बाँधकर अलग करो। पड़ोस में शहज़ादे के यहाँ आग लग गई। ज़ेवर और जवाहिरात अलग कर लो। असबाब और कपड़े को जहन्नुम में डालो।

बहारबेगम—हाय, अब क्या होगा!

हुस्नआरा—हाय-हाय, शोले आसमान की ख़बर लाने लगे।

नीचे उतरकर सबों ने बड़ी फुरती से सब चीज़ें बाहर निकालीं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और फिर कोठे पर गईं, तो क्या देखती हैं कि हुमायूँ फ़र की कोठी में आग लगी है, और हर तरफ़ से शोले उठ रहे हैं। ये सब इतनी दूर पर खड़ी थीं; मगर ऐसा मालूम होता था कि चारों तरफ़ भट्टी-ही-भट्टी है। धन्नियाँ जो चटकीं, तो बस, यही मालूम हुआ कि बादल गरज रहा है।

बहारबेगम—हाय, लाखों पर पानी पड़ गया!

सिपहआरा—बहन, इधर तो आओ। देखो, हज़ारों आदमी जमा हैं। ज़रा देखो, वह कौन है? है-है! वह कौन है?

बहारबेगम—कहाँ कौन है?

सिपहआरा—वह महताबी पर कौन है?

हुस्नआरा—अरे, यह तो हुमायूँ फ़र हैं। ग़ज़ब हो गया। अब यह क्योंकर बचेंगे?

सिपहआरा फूट-फूटकर रोने लगी। फिर बोली—बाजी, अब होगा क्या? चारों तरफ़ आग है। बचेगा क्योंकर बेचारा!

बहारबेगम—इसकी जवानी पर तरस आता है।

हुस्नआरा मुँह ढाँपकर खूब रोईं। सिपहआरा का यह हाल था कि आँसुओं का तार न टूटता था। हुमायूँ फ़र महताबी पर इस ताक में सोए थे कि शायद इन हसीनों में से किसी का जलवा नज़र आवे। लेकिन ठंडी हवा चली, तो आँख लग गई। जब आग लगी, और चारों तरफ़ गुल मचा, तो जागे; लेकिन कब? जब महताबी के नीचे के हिस्से में चारों तरफ़ आग लग चुकी थी। ख़िदमतगारों के हाथ-पाँव फूल गए। यही सोचते थे, किसी तरह से इस बेचारे की जान बचावें। असबाब बटोरने की फ़िक्र किसे! कोई शाहज़ादे की जवानी को याद करके रोता था, कोई सिर धुनकर कहता था—ग़रीब बूढ़ी मा के दिल पर क्या गुज़रेगी? शहर से ग़ोल-के-ग़ोल आदमी आकर जमा हो गए। सिपाही और चौकीदार,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहर के रईस और अफ़सर उमड़े चले आते थे। दरिया से हज़ारों घड़े पानी लाया जाता था। भिश्ती और मज़दूर आग बुझाने में मसरूफ़ थे। मगर हवा इस तेज़ी पर थी कि पानी तेल का काम देता था। शहज़ादे इस नाउम्मेदी की हालत में सोच रहे थे कि जिन लोगों के दीदार के लिये मैंने अपनी जान गँवाई, उन्हें मालूम हो जाय, तो मैं समझूँ कि जी उठा। इतने में इधर नज़र पड़ी, तो देखा कि सब-की-सब औरतें कोठे पर खड़ी हाय-हाय कर रही हैं। सोचे, ख़ैर, शुक्र है। जिसके लिये जान दी, उसको अपना मातम करते तो देख लिया। एकाएक उन्हें अपना छोटा भाई याद आया। उस-की तरफ़ मुख़ातिब होकर कहा—भाई, घर-बार तुम्हारे सुपुर्द है। मा को तसल्ली देना कि हुमायूँ फ़र न रहा, तो मैं तो हूँ। यह फ़िक़रा सुनकर सब लोग रोने लगे। इतने में आग के शोले और क़रीब आए, और हवा ने और ज़ोर बाँधा, तो शहज़ादा ने सिपहआरा की तरफ़ नज़र करके तीन बार सलाम किया। चारों बहनें दीवार से सिर टकराने लगीं कि हाय, यह क्या सितम हुआ! शहज़ादे ने यह कैफ़ियत देखी, तो इशारे से मना किया। लेकिन दोनों बहनों की आँखों में इतने आँसू भरे हुए थे कि उन्हें कुछ दिखाई न दिया।

सिपहआरा खिड़की के पास जाकर फिर सिर पीटने लगी। हुमायूँ फ़र उसे देखकर अपना सदमा भूल गए, और हाथ बाँध-कर दूर ही से कहा—अगर यह करोगी, तो हम अपनी जान दे देंगे! गोया जान बचने की उम्मेद हो तो थी! चारों तरफ़ आग के शोले उठ रहे थे, धुआँ बादल की तरह छाया हुआ था। भागने की कोई तदबीर नहीं। हवा कहती है कि मैं आज ही तेज़ी दिखाऊँगी, और आप कहते हैं कि मैं अपनी जान दे दूँगा।

इतने में जब आग बहुत ही क़रीब आ गई, तो हुमायूँ फ़र की हिम्मत छूट गई। बेचैनी की हालत में सारी छत पर घूमने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आख़िर यहाँ तक नौबत आई कि जो लोग क़रीब खड़े थे, वे लपटों के मारे और दूर भागने लगे। आग हुमायूँ फ़र से सिर्फ़ एक गज़ के फ़ासले पर थी। आँच से फुँके जाते थे। जब ज़िंदगी की कोई उम्मेद न रही, तो आख़िरी बार सिपहआरा की तरफ़ टोपी उतारकर सलाम किया, और बदन को तौलकर धम-से कूद पड़े।

उधर सिपहआरा ने भी एक चीख़ मारी, और खिड़की से नीचे कूदी।

शहज़ादा साहब नीचे घास पर गिरे। यहाँ ज़मीन बिलकुल नर्म और गीली थी। गिरते ही बेहोश हो गए। लोग चारों तरफ़ से दौड़ पड़े, और हाथोहाथ ज़मीन से उठा लिया। लुत्फ़ की बात यह कि सिपहआरा को भी ज़रा चोट नहीं लगी थी। उसने उठते ही कहा कि लोगो, हुमायूँ शहज़ादा बचा हो, तो हमें दिखा दो। नहीं तो उसी की क़ब्र में हमको भी ज़िंदा दफ़न कर देना।

इतने में नवाब साहब ने सिपहआरा को अलग ले जाकर कहा—तुम घबराओ नहीं, शहज़ादा साहब ख़ैरियत से हैं।

सिपहआरा—हाय! दूल्हाभाई, मैं क्योंकर मानूँ!

नवाब साहब—नहीं बहन, आओ, हम उन्हें अभी दिखाए देते हैं।

सिपहआरा—फिर दिखाओ मेरे दूल्हाभाई!

नवाब साहब—ज़रा भीड़ छट जाय, तो दिखाऊँ। तब तक घर चली चलो।

सिपहआरा—फिर दिखाओगे? हमारे सिर पर हाथ रखकर कहो।

नवाब साहब—इस सिर की क़सम, ज़रूर दिखावेंगे।

सिपहआरा को अंदर पहुँचाकर नवाब साहब हुमायूँ फ़र के यहाँ पहुँचे, तो देखा कि टाँग में कुछ चोट आई है। डॉक्टर पट्टी बाँध रहा है, और बहुत-से आदमी उन्हें घेरे खड़े हैं। लोग इस बात पर बहस कर रहे हैं कि आग लगी क्योंकर? रात-भर शह-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Hari...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़ादे की हालत बहुत ख़राब रही। दर्द के मारे तड़प-तड़प उठते। सुबह को चारपाई से उठकर बैठे ही थे कि चिट्ठीरसाँ ने आकर एक ख़त दिया। शहज़ादे साहब ने इस ख़त को नवाब साहब की तरफ़ बढ़ा दिया। उन्होंने यह मज़मून पढ़ सुनाया—

अजी हज़रत, तसलीम;

सच कहना, कैसा बदला लिया! लाख-लाख समझाया, मगर तुमने न माना। आख़िर, तुम ख़ुद ही मुसीबत में पड़े। तुमने हमारा दिल जलाया है, तो हम तुम्हारा घर भी न जलावें? जिस वक़्त यह ख़त तुम्हारे पास पहुँचेगा, मकान जल-भुनके ख़ाक हो गया होगा।

शहसवार।

शहज़ादे साहब ने यह मज़मून सुना, तो त्योरियों पर बल पड़ गए, और चेहरा मारे ग़ुस्से के सुर्ख़ पड़ गया।

तिरपनवाँ परिच्छेद

रात का वक़्त था, एक सवार हथियार सजे, रातोरात घोड़े को कड़कड़ाता हुआ, बगटुट भागा जाता था। दिल में चोर था कि कहीं पकड़ न जाऊँ! जेलख़ाना झेलूँ। सोच रहा था, शहज़ादे के घर में आग लगाई है, ख़ैरियत नहीं। पुलीस की दौड़ आती ही होगी। रात-भर भागता ही गया। आख़िर सुबह को एक छोटा-सा गाँव नज़र आया। बदन थककर चूर हो गया था। अभी घोड़े से उतरा ही था कि बस्ती की तरफ़ से ग़ुल की आवाज़ आई। वहाँ पहुँचा, तो क्या देखता है कि गाँव-भर के बाशिंदे जमा हैं, और दो गँवार आपस में लड़ रहे हैं। अभी यह वहाँ पहुँचा ही था कि एक ने दूसरे के सिर पर ऐसा लट्ठ मारा कि वह ज़मीन पर आ रहा। लोगों ने लट्ठ मारनेवाले को गिरफ़्तार कर लिया, और थाने पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाए। शहसवार ने दरियाफ़्त किया, तो मालूम हुआ कि दोनों की एक जोगिन से आशनाई थी।

सवार—यह जोगिन कौन है भई ?

एक गँवार—इतनी उमिर आई, अस जोगिन कतहूँ न दीख।

इतने में थानेदार आ गए। ज़ख़्मी को चारपाई पर डालकर अस्पताल भिजवाया, और ख़ूनी को गवाहों के साथ थाने ले गए। मियाँ सवार भी उनके साथ हो लिए। थाने में तहक़ीक़ात होने लगी।

थानेदार—यह किस बात पर झगड़ा हुआ जी ?

चौकीदार—हजूर, वह सास जौन जोगिन बनी है।

थानेदार—हम तुमसे इतना पूछता है किस बात पर लड़ाई हुआ ?

चौकीदार—जैसे इहौ वहाँ जात रहै और वहौ वहाँ जात रहै। तौन आपस में लागडाँट ह्वै गई। ए बस, एक दिन मार-धाड़ ह्वै गई। बस, लाठी चलै लाग। मूड़ से रकत बहुत बहा।

मौलवी—सूबेदार साहब, आज दोनों ने खूब कुजियाँ चढ़ाई थीं।

थानेदार—आप कौन हैं ?

मौलवी—हुजूर, गाँव का क़ाज़ी हूँ।

थानेदार—यहीं मकान है आपका ?

मौलवी—जी हाँ, पुराना रईस हूँ।

शहसवार—बेशक !

थानेदार—देहातवाले भी अजीब जाँगलू होते हैं। एक बार एक देहाती मुशायरे में जाने का इत्तफ़ाक़ हुआ। बड़े-बड़े गँवार के लट्ठ जमा थे। एक साहब ने शेर पढ़ा, तो आख़िर में फ़रमाते हैं—बीमार हौं। लोग हैरत में थे कि इस हौं के क्या माने ? फिर हज़रत ने फ़रमाया—सरशार हौं। मारे हँसी के लोट गया। हाँ, मौलवी साहब, फिर क्या हुआ ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मौलवी—बस जनाब, फिर दोनों में कुश्ती हुई। कभी यह ऊपर, वह नीचे, कभी वह नीचे, यह ऊपर। तब तो मैं भागा कि चौकीदार से कहूँ। धौड़ता गया।

थानेदार—जनाब इस मुहावरे को याद रखिएगा।

मौलवी—बस, मैं धौड़के पूरन चौकीदार के मकान पर गया। उसकी जोड़ू बोली—

सवार—कौन बोली?

थानेदार—(हँसकर) सुना नहीं आपने? जोड़ू!

मौलवी—हुज़ूर, हुक्काम हैं, आपको हँसना न चाहिए।

थानेदार—जी हाँ, मैं हुक्काम हूँ; मगर आप भी तो उमरा हैं! हाँ, फ़रमाओ जी!

मौलवी—देखिए, फ़रमाता हूँ।

सवार—अब हँसी ज़ब्त नहीं हो सकती।

मौलवी—बस जनाब, वहाँ से मैं इस चौकीदार को लाया। वहाँ आकर देखा, तो ख़ून के दरिया बह रहे थे।

इतने में ख़बर आई कि ज़ख़्मी दुनिया से रवाना हो गया। थानेदार साहब मारे ख़ुशी के फूल गए। मामूली मार-पीट 'ख़ून' हो गई। ख़ूनी का चालान किया, और जज ने उसे फाँसी की सज़ा दे दी।

जिस वक़्त ख़ूनी को फाँसी हो रही थी, मियाँ सवार भी तमाशा देखने आ पहुँचे। मगर उस वक़्त की हालत देखकर उनके दिल पर ऐसा असर हुआ कि आँखें खुल गईं। सोचने लगे—दुनिया से नाता तोड़ लें। किसी से हसद और कीना न रक्खें। अगर कहीं पकड़ गया होता, तो मुझे भी यों ही फाँसी मिलती। ख़ुदा ने बहुत बचाया। मगर ज़रा, इस जोगिन को देखना चाहिए। यह दिल में ठानकर जोगिन के मकान की तरफ़ चले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब लोगों से पूछते हुए उसके मकान पर पहुँचे, तो देखा कि एक खूबसूरत बाग़ है, और एक छोटा-सा खुशनुमा बँगला, बहुत साफ़-सुथरा। मकान क्या, परी-ख़ाना था। जोगिन के क़रीब जाकर उसको सलाम किया। जोगिन के पोर-पोर पर जोबन था। जवानी फटी पड़ती थी। सिर से पैर तक संदली कपड़े पहने हुए थी। शह-सवार हज़ार जान से लोटपोट हो गए। जोगिन इनकी चितवनों से ताड़ गई कि हज़रत का दिल आया है।

सवार—बड़ी दूर से आपका नाम सुनकर आया हूँ।

जोगिन—अक्सर लोग आया करते हैं। कोई आवे, तो खुशी नहीं, न आवे, तो रंज नहीं।

सवार—मैं चाहता हूँ कि उम्र-भर आपके क़दमों के तले पड़ा रहूँ।

जोगिन—आपका मकान कहाँ है?

सवार—

घर-बार से क्या फ़क़ीर को काम?
क्या लीजिए छोड़े गाँव का नाम।

जोगिन—यहाँ कैसे आए?

सवार—रमते-जोगी तो हैं ही, इधर भी आ निकले।

जोगिन—आख़िर इतना तो बतलाओ कि हो कौन?

सवार—एक बदनसीब आदमी।

जोगिन—क्यों?

सवार—अपने कर्मों का फल।

जोगिन—सच है!

सवार—मुझे इश्क़ ही ने तो ग़ारत कर दिया। एक बेगम की दो लड़कियाँ हैं। उनसे आँख लड़ गई। जीते-जी मर मिटा।

जोगिन—शादी नहीं हुई?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Hari...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवार—एक दुश्मन पैदा हो गया। आज़ाद नाम था। बहुत ही ख़ूबसूरत सजीला जवान।

मियाँ आज़ाद का नाम सुनते ही जोगिन के चेहरे का रंग उड़ गया। आँखों से आँसू गिरने लगे। शहसवार दंग थे कि बैठे-बिठाए इसे क्या हो गया।

सवार—ज़रा दिल को ढारस दो। आख़िर, तुम्हें किस बात का रंज है।

जोगिन—

ख़ौफ़ से लेते नहीं नाम कि सुन ले न कोई;
दिल-ही-दिल में तुम्हें हम याद किया करते हैं।

हमारी दास्तान ग़म से भरी हुई है। सुनकर क्या करोगे। हाँ, तुम्हें एक सलाह देती हूँ। अगर चाहते हो कि दिल की मुराद पूरी हो, तो दिल साफ़ रक्खो।

सवार—तुम्हारे सिवा अगर किसी और पर नज़र पड़े, तो आँखें फूट जायँ!

जोगिन—यही दिल की सफ़ाई है?

सवार—शीशी से गुलाब निकाल लो। मगर गुलाब की बू बाक़ी रहेगी। दुनिया को छोड़ तो बैठे, पर इश्क़ दिल से न जायगा। अब हम चाहते हैं कि तुम्हारे ही साथ ज़िंदगी बसर करें। आज़ाद उसके साथ रहें, हम तुम्हारे साथ।

जोगिन—भला तुम आज़ाद को पाओ, तो क्या करो?

सवार—कच्चा ही चबा जाऊँ?

जोगिन—तो फिर हमसे न बनेगी? अगर तुम्हारा दिल साफ़ नहीं है, तो अपनी राह लगो।

सवार—अच्छा, अब आज से आज़ाद का नाम ही न लेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौवनवाँ परिच्छेद

आज़ाद का जहाज़ जब इस्कंदरिया पहुँचा, तो वह ख़ोजी के साथ एक होटल में ठहरे। जब खाना खाने का वक़्त आया, तो ख़ोजी बोले—लाहौल, यहाँ खानेवाले की ऐसी-तैसी! चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, मगर हम ज़रा-सी तकलीफ़ के लिये अपना मज़हब न छोड़ेंगे। आप शौक़ से जायँ और मज़े से खायँ; हमें माफ़ ही रखिए।

आज़ाद—और, अफ़ीम खाना मज़हब के ख़िलाफ़ नहीं है?

ख़ोजी—कभी नहीं! और, अगर हो भी, तो क्या यह ज़रूरी है कि एक काम मज़हब के ख़िलाफ़ किया, तो और भी सब काम मज़हब के ख़िलाफ़ ही करें?

आज़ाद—अजी, तो किस गधे ने तुमसे कहा कि यहाँ खाना मज़हब के ख़िलाफ़ है? मेज़-कुर्सी देखी, और चीख़ उठे कि मज़हब के ख़िलाफ़ है? इस ख़ब्त की भी कोई दवा है!

ख़ोजी—अजी, वह ख़ब्त ही सही। आप रहने दीजिए।

आज़ाद—खाओ, या जहन्नुम में जाओ।

ख़ोजी—जहन्नुम में वे जायँगे, जो यहाँ खायँगे। यहाँ तो सीधे जन्नत में पहुँचेंगे।

आज़ाद—वहाँ अफ़ीम कहाँ से आवेगी?

इतने में दो तुर्की आए, और अपनी कुर्सियों पर बैठकर मज़े से खाने लगे। आज़ाद की चढ़ बनी। पूछा ख़्वाजा साहब, बोल गीदी, अब शरमाया या नहीं? ख़ोजी ने पहले तो कहा, ये मुसलमान नहीं हैं। फिर कहा, शायद हों ऐसे-वैसे! मगर जब मालूम हुआ कि दोनों ख़ास तुर्की के रहनेवाले हैं, तो बोले—आप लोग यहाँ होटल में खाना खाते हैं? क्या यह मज़हब के ख़िलाफ़ नहीं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुर्की—मज़हब के ख़िलाफ़ क्यों होने लगा ?

आख़िर, ख़ोजी झेंपे। फिर होटल में खाना खाया। थोड़ी देर के बाद आज़ाद तो एक साहब से मिलने चले, और ख़ोजी ने पीनक लेना शुरू किया। जब नींद खुली, तो सोचे कि हम बैठे-बैठे कब तक यहाँ मक्खियाँ मारेंगे। आओ देखें, अगर कोई हिंदोस्तानी भाई मिल जाय, तो गप्पें उड़ें। इधर-उधर टहलने लगे। आख़िर-कार एक हिंदोस्तानी से मुलाक़ात हुई। सलाम-बंदगी के बाद बातें होने लगीं। ख़्वाजा साहब ने पूछा—क्यों साहब, यहाँ कोई अफ़ीम की दूकान है ? उस आदमी ने इसका कुछ जवाब ही न दिया। ख़ोजी तीखे आदमी। उनको भला यह ताब कहाँ कि किसी से सवाल करें और वह जवाब न दे ? बिगड़ खड़े हुए—न हुई क़रौली, ख़ुदा की क़सम ! वरना तमाशा दिखा देता।

हिंदोस्तानी ने समझा, यह पागल है। अगर बोलूँगा, तो ख़ुदा जाने, काट खाय, या चोट करे। इससे यही अच्छा है कि चुप हो रहो। मियाँ ख़ोजी समझे कि दब गया। और भी अकड़ गए। उसने समझा, अब चोट किया ही चाहता है। ज़रा पीछे हट गया। उसका पीछे हटना था कि मियाँ ख़ोजी और भी शेर हुए। मगर कुंदे तौल-तौलकर रह जाते थे। फिर रोब से पूछा—क्यों बे, यहाँ ठंडा पानी भी मिल सकता है ? वह ग़रीब झट-पट ठंडा पानी लाया। ख़ोजी ने दो-चार घूँट पानी पिया, और अकड़कर बोले—माँग, क्या माँगता है ? उस आदमी ने समझा, यह ज़रूर दीवाना है ! आपकी हालत तो इतनी ख़राब है, पल्ले टका तो है नहीं, और कहते हैं—माँग, क्या माँगता है ? ख़ोजी ने फिर तनकर कहा—माँग कुछ। उस आदमी ने डरते-डरते कहा—यह जो हाथ में है, दे दीजिए।

ख़ोजी का रंग उड़ गया। जान तक माँगता, तो देने में दरेग़ न करते; मगर चिनिया बेगम तो नहीं दी जाती। उससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछा—तुम यहाँ कब से हो, क्या नाम है ? उसने जवाब दिया—मुझे तहौवरख़ाँ कहते हैं।

ख़ोजी—भला, इस होटल में मुसलमान लोग खाते हैं ?

तहौवरख़ाँ—बराबर ! क्यों न खायँ ?

होटलवालों ने मिसकोट की कि ख़ोजी को छेड़ना चाहिए। इस होटल में क़ाहिरा का रहनेवाला एक बौना था। लोग सोचे, इस बौने और ख़ोजी से पकड़ हो, तो अच्छा। बौना बड़ा शरीर था। लोगों ने उससे कहा—चलो, तुम्हारी कुश्ती बदी गई है। वह देखो, एक आदमी हिंदोस्तान से आया है। कितना अच्छा जोड़ है। यह सुनकर बौना मियाँ ख़ोजी के क़रीब गया, और झुककर सलाम किया। ख़ोजी ने जो देखा कि एक आदमी हमसे भी ऊँचा मिला, तो अकड़कर आँखों से सलाम का जवाब दिया। बौने ने इधर-उधर देखकर एक दफ़ा मौक़ा जो पाया, तो मियाँ ख़ोजी की टोपी उतारकर पड़ाक-से एक धौल जमाई, और टोपी फेंककर भागा। मगर ज़रा-ज़रा-से पाँव, भागकर जाता कहाँ ? ख़ोजी भी झपटे। आगे-आगे बौना और पीछे-पीछे मियाँ ख़ोजी। कहते जाते थे—औ गीदी, न हुई क़रौली, नहीं तो इसी दम भोंक देता। आख़िर बौना हाँपकर खड़ा हो गया। तब तो ख़ोजी ने लपककर हाथ पकड़ा, और पूछा—क्यों बे ! इस पर बौने ने मुँह चिढ़ाया। ख़ोजी ग़ुस्से में भरे तो थे ही, आपने भी एक धप जड़ी।

ख़ोजी—और लेगा ?

बौना—(अपनी ज़बान में) छोड़, नहीं मार ही डालूँगा।

ख़ोजी— दे मारूँ उठाकर।

बौना—रात आने दो।

ख़ोजी ने झल्लाकर बौने को उठाकर दे मारा, चारों शाने चित, और अकड़कर बोले—वो मारा ! और लेगा ! ख़ोजी से ये बातें ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतने में आज़ाद आ गए। ख़ोजी तने बैठे थे, उम्र-भर में उन्होंने आज पहली ही मर्तबा एक आदमी को नीचा दिखाया था। आज़ाद को देखते ही बोले—इस वक़्त एक कुश्ती और निकाली!

आज़ाद—कुश्ती कैसी?

ख़ोजी—कैसी होती है कुश्ती? कुश्ती और क्या?

आज़ाद—मालूम होता है, पिटे हो।

ख़ोजी—पिटनेवाले की ऐसी-तैसी! और कहनेवाले को क्या कहूँ?

आज़ाद—कुश्ती निकाली!

तहौवरख़ाँ—हाँ हुज़ूर, यह सच कहते हैं।

ख़ोजी—लीजिए, अब तो आया यक़ीन।

आज़ाद—क्या हुआ, क्या?

तहौवरख़ाँ—जी, यहाँ एक बौना है। उसने इनके एक धौल लगाई।

आज़ाद—देखा न! मैं तो समझा ही था कि पिटे होंगे।

ख़ोजी—पूरी बात तो सुन लो।

तहौवरख़ाँ—बस, धौल खाकर यह लपके। उसके कई चपतें लगाईं, और उठाकर दे पटका।

ख़ोजी—वह पटख़नी बताई कि याद ही तो करता होगा। दो महीने तक खटिया से न उठ सकेगा।

तहौवरख़ाँ—वह देखिए, सामने खड़ा कौन अकड़ रहा है? तुम तो कहते थे कि दो महीने तक उठ ही न सकेगा।

रात को कोई नौ बजे आज़ाद ने पानी माँगा। अभी पानी पी ही रहे थे कि कमरे का लैंप गुल हो गया, और कमरे में चटाख़-चटाख़ की आवाज़ गूँजने लगी।

ख़ोजी—अरे, यह तो वही बौना मालूम होता है। पानी इसी ने पिलाया था, और चपत भी इसी ने जड़ी। दिल में कहा—क्या तड़का न होगा? ज़िंदा खोदकर गाड़ दूँ, तो सही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी पानी पीकर लेटे कि दस्त की हाजत हुई। बौने ने पानी में जमालगोटा मिला दिया था। तिल-तिल पर दस्त आने लगे। मशहूर हो गया कि ख़ोजी को हैज़ा हुआ। डॉक्टर बुलाया गया। उसने दवा दी, और ख़ोजी दस्तों के मारे निढाल होकर चारपाई पर गिर पड़े। आज़ाद एक रईस से मिलने गए थे। होटल के एक आदमी ने उनको जाकर इत्तला दी। घबराए हुए आए। ख़ोजी ने आज़ाद को देखकर सलाम किया, और आहिस्ता से बोले—रुख़सत! ख़ुदा करे, तुम जल्द यहाँ से लौटो। यह कहकर तीन बार कलमा पढ़ा।

आज़ाद—कैसी तबीयत है?

ख़ोजी—मर रहा हूँ, एक हाफ़िज़ बुलवाओ, और उससे कहो, कुरान शरीफ़ पढ़े।

आज़ाद—अजी, तुम दो दिन में अच्छे हो जाओगे।

ख़ोजी—ज़िंदगी और मौत ख़ुदा के हाथ है। मगर भई, ख़ुदा के वास्ते ज़रा अपनी जान का ख़याल रखना। हम तो अब चलते हैं। अब तक हँसी-ख़ुशी तुम्हारा साथ दिया; मगर अब मजबूरी है। आब-दाने की बात है, हमको यहाँ की मिट्टी घसीट लाई।

आज़ाद—अजी नहीं, आज के चौथे रोज़ दनदनाओगे। देख लेना। डंड पेलते होगे।

ख़ोजी—ख़ुदा के हाथ है।

आज़ाद—देखिए, कब मुलाक़ात होती है।

ख़ोजी—इस बूढ़े को कभी-कभी याद करते रहना। एक बात याद रखना, परदेस का वास्ता है, सबसे मिल-जुलकर रहना। जूती-पैज़ार, लड़ाई-झगड़ा किसी से न करना। समझदार हो तो क्या, आख़िर बच्चे ही हो। यार, जुदाई ऐसी अखर रही है कि बस, क्या बयान करूँ।

आज़ाद—अच्छे हो जाओ, तो हिंदोस्तान चले जाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—अरे मियाँ, यहाँ दम-भर का भरोसा नहीं है।

दूसरे दिन आज़ाद ख़ोजी से रुख़सत होकर जहाज़ पर सवार हुए। इतने दिनों के बाद ख़ोजी की जुदाई से उन्हें बहुत रंज हो रहा था। थोड़ी देर के बाद नींद आ गई, तो ख़्वाब देखा कि वह हुस्नआरा बेगम के दरवाज़े पर पहुँचे हैं, और वह उन्हें फूलों का एक गुलदस्ता दे रही है। एकाएक तोप दगी और आज़ाद की आँख खुल गई। जहाज़ कुस्तुनतुनिया पहुँच गया था।

पंचावनवाँ परिच्छेद

आज़ाद तो उधर क़ाहिरे की हवा खा रहे थे, इधर हुस्नआरा बीमार पड़ी। कुछ दिन तक तो हकीमों और डॉक्टरों की दवा हुई, फिर गंडे-तावीज़ की बारी आई। आख़िर आबोहवा तब्दील करने की ठहरी। बहारबेगम के पास गोमती के किनारे एक बहुत अच्छी कोठी थी। चारों बहनें, बड़ी बेगम और घर के नौकर-चाकर सब इस नई कोठी में आ पहुँचे।

बेगम—मकान तो बड़ा कुशादा है! देखूँ, चंद्रबेधी है या सूर्यबेधी।

हुस्नआरा—हाँ अम्माजान, यह ज़रूर देखना चाहिए।

रूहअफ़ज़ा—ऐ लो, ज़रूर। हज़ार काम छोड़कर।

दोनों बहनें हँसती-बोलती मकान के दालान और कमरे देखने लगीं। छत पर एक कमरे के दरवाज़े जो खोले, तो देखा, दरिया लहरें मार रहा है। हुस्नआरा ने कहा—बाजी, इस वक़्त जी ख़ुश हो गया। हमारी पलँगड़ी यहीं बिछे। बरसों का बीमार यहाँ रहे, तो दो दिन में अच्छा भला-चंगा हो जाय।

सिपहआरा—बहार बहन, भला कभी अँधेरे-उजाले दूल्हाभाई नहाने देते हैं दरिया में?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहारबेगम—ऐ है, इसका नाम भी न लेना। इनको बहुत चिढ़ है इस बात की।

सुबह का वक़्त था, चारों बहनें ऊँची छत पर हवा खाने लगीं कि इतने में एक तरफ़ से धुआँ उठा। हुस्नआरा ने पूछा—यह धुआँ कैसा है?

रूहअफ़ज़ा—इस घाट पर मुर्दे जलाए जाते हैं।

हुस्नआरा—मुर्दे यहीं जलते हैं?

बहारबेगम—हाँ, मगर यहाँ से दूर है।

सिपहआरा—हाय, क्या जाने कौन बेचारा जल रहा होगा?

रूहअफ़ज़ा—ज़िंदगी का भरोसा नहीं।

बड़ी बेगम ने जो सुना कि यहाँ मुर्दे जलाए जाते हैं, तो होश उड़ गए। बोलीं—ऐ बहार, तुम यहाँ कैसे रहती हो? ख़ुरशेद दूल्हा आवें, तो उनसे कहूँ।

हुस्नआरा—फ़ायदा? बरसों से तो वह यहाँ रहते हैं; भला तुम्हारे कहने से मकान छोड़ देंगे!

सिपहआरा—यह हमेशा यहाँ रहते हैं, कुछ भी नहीं होता। हम जो दो दिन रहेंगे, तो मुर्दे आकर चिमट जायँगे भला?

बड़ी बेगम का बस चलता, तो खड़े-खड़े चली जातीं; मगर अब मजबूर थीं। यहाँ से चारों बहनें दूसरी छत पर गईं, तो बहार-बेगम ने कहा—यह जो उस तरफ़ दूर तक ऊँचे-ऊँचे टीले नज़र आते हैं, यहाँ आबादी थी। जहाँ तुम बैठी हो, यहाँ वज़ीर का मकान था। मजाल क्या थी कि कोई इस तरफ़ आ जाता! मगर अब यहाँ ख़ाक उड़ती है, कुत्ते लोट रहे हैं।

इतने में एक किश्ती इसी घाट पर आकर रुकी। उस पर से दो आदमी उतरे, एक बूढ़े थे, दूसरा नौजवान। दोनों एक क़ालीन पर बैठे, और बातें करने लगे। बूढ़े मियाँ ने कहा—मियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद-सा दिलेर जवान भी कम देखने में आवेगा। यह उन्हीं का शेर है —

सीने को चमन बनायँगे हम,
गुल खायँगे गुल खिलायँगे हम।

जवान (गुलबाज़)—मियाँ आज़ाद कौन थे जनाब?

इस पर बूढ़े मियाँ ने आज़ाद की सारी दास्तान बयान कर दी। दोनों बहनें कान लगाकर दोनों आदमियों की बातें सुनती थीं, और रोती थीं। हैरत हो रही थी कि ये दोनों कौन हैं, और आज़ाद को कैसे जानते हैं? महरी से पूछा—जाके पता लगा कि वह दोनों आदमी, जो दरख़्त के साए में बैठे हुक़्क़ा पी रहे हैं, कौन हैं? महरी ने एक भिश्ती के लड़के को इस काम पर तैनात किया। लड़के ने ज़रा देर में आकर कहा—दोनों आदमी सराय में ठहरेंगे, और दो दिन यहाँ रहेंगे। मगर हैं कौन, यह पता न चला। महरी ने जाकर यही बात हुस्नआरा से कह दी। हुस्नआरा ने कहा—उस लड़के को यह चवन्नी दो और कहो, जहाँ ये टिकें, इनके साथ जाय, और देख आवे। महरी ने ज़ोर से पुकारा—अबे ओ शुबराती! सुन, इन दोनों आदमियों के साथ जा। देख, कहाँ टिकते हैं।

शुबराती—अजी, अभी पहुँचा।

शुबराती चले। रास्ते में आपको शौक़ चर्राया कि छल्लामीरी खेलें। एक घंटे में शुबराती ने कोई डेढ़ पैसे की कौड़ियाँ जीतीं। मगर लालच का बुरा हो, जमे, तो दम-के-दम में डेढ़ पैसा वह हारे, और बारह कौड़ियाँ गिरह से गईं। वहाँ से उदास होकर चले। राह में बंदर का तमाशा हो रहा था। अब मियाँ शुबराती जा चुके। कभी बँदरिया को छेड़ा, कभी बकरे पर ढेला फेंका। मदारी ने देखा कि लौंडा तेज़ है, तो बोला—इधर आओ जवान, आदमी हो कि जानवर?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुबराती—आदमी।

मदारी—सुअर कि शेर?

शुबराती—हम शेर, तुम सुअर।

मदारी—गधा कि गधी?

शुबराती—गधा।

मदारी—उल्लू कि बैल?

शुबराती—तुम उल्लू, तुम्हारे बाप बैल, और तुम्हारे दादा बछिया के ताऊ।

थोड़ी देर के बाद मियाँ शुबराती यहाँ से रवाना हुए, तो एक रईस के यहाँ एक सँपेरा साँप का तमाशा दिखा रहा था। मियाँ शुबराती भी डट गए। सँपेरा तोंबी में भैरवी का रंग दिखाता था।

रईस ने कहा—तब जानें, जब किसी के सिर से साँप निकालो।

सँपेरे ने कहा—हजूर, मंतर में सब कुदरत है। मुल कोई आध सेर आँटा तो पेट-भर खाने को दो। जिसके बदन से कहिए, साँप निकालूँ।

लौंडे यह सुनकर हुर्र हो गए कि धरे न जायँ। मियाँ शुबराती डटे खड़े रहे।

सँपेरा—वाह जवान, तुम्हीं एक बहादुर हो।

शुबराती—और हमारे बाप हमसे बढ़कर।

सँपेरा—यहाँ बैठ तो जाओ।

मियाँ शुबराती बेधड़क जा बैठे। सँपेरे ने झूठमूठ कोई मंत्र पढ़ा, और ज़ोर से मियाँ शुबराती की खोपड़ी पर धप जमाकर कहा—यह लीजिए साँप। वाह-वाह का दौंगड़ा बज गया। रईस ने सँपेरे को पाँच रुपए इनाम दिए, और कहा—इस लौंडे को भी चार आने पैसे दे दो। मियाँ शुबराती ने चवन्नी पाई, तो फूले न समाए। जाते ही गोल-गप्पेवाले से पैसे के कचालू, धेले के दही-बड़े, धेले की सोंठ की टिकिया लीं, और चखते हुए चले। फिर तकिए पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाकर कौड़ियाँ खेलने लगे। दो पैसे की कौड़ियाँ हारे। वहाँ से उठे, तो हलवाई की दूकान पर एक आने की पूरियाँ खाईं, और कुएँ पर पानी पिया। वहाँ से आकर महरी को पुकारा।

महरी—कहो, वह हैं?

शुबराती—वह तो चले गए।

महरी—कुछ मालूम है, कहाँ गए?

शुबराती—रेल पर सवार होकर कहीं चल दिए।

महरी ने जाकर हुस्नआरा से यह ख़बर कही, तो उन्होंने कहा—लौंडे से पूछो, शहर ही में हैं या बाहर चले गए? महरी ने जाकर फिर शुबराती से पूछा—शहर में हैं या बाहर चले गए? शुबराती को इसकी याद न रही कि मैंने पहले क्या कहा था, बोला—किसी और सराय में उठ गए।

महरी—क्यों रे झूठे, तू तो कहता था, रेल पर चले गए?

शुबराती—मैंने!

महरी—चल झूठे, तू गया कि नहीं?

शुबराती—अब्बा की क़सम, गया था।

महरी—चल दूर हो, मुआ झूठा।

इतने में बड़ी बेगम का पुराना नौकर हुसेनबख़्श आ गया। हुस्नआरा ने उसे बुलाकर कहा—बड़े मियाँ, एक साहब आज़ाद के जाननेवालों में यहाँ आए हैं, और किसी सराय में ठहरे हैं। तुम ज़रा इस लौंडे शुबराती के साथ उस सराय तक जाओ, और पता लगाओ कि वह कौन साहब हैं। अब मियाँ शुबराती चकराए कि ख़ुदा ही ख़ैर करे। दिल में चोर था, कहीं ऐसा न हो कि वह अभी सराय में टिके ही हों, तो मुझ पर बेभाव की पड़ने लगें। दबे-दाँतों कहा, चलिए। आगे-आगे हुसेनबख़्श और पीछे-पीछे मियाँ शुबराती चले। राह में शुबराती ने एक लौंडे की खोपड़ी पर धप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमाई, और आगे बढ़े, तो एक दीवाने पर कई ढेले फेंके। और दो क़दम गए, तो एक बूढ़ी मामा से कहा—नानी, सलाम। वह गालियाँ देने लगी, मगर आप बहुत खिलखिलाए। और आगे चले, तो एक अंधा मिला। आपने उससे कहा—आगे गड्ढा है, और उसकी लाठी छीन ली। हुसेनबख़्श कभी मुसकिराते थे, कभी समझाते थे। चलते-चलते एक तेली मिला। मियाँ शुबराती ने पूछा—क्यों भई तेली, मरना, तो अपनी खोपड़ी मुझे दे देना। मंतर जगाऊँगा। तेली ने कहा—चुप। लौंडा बड़ा शरीर है। और आगे बढ़े, तो एक रँगरेज़ से पूछा—क्यों बड़े भाई, अपनी दाढ़ी नहीं रँगते? उसने कहा—कहो, तुम्हारे बाप की दाढ़ी रँग दें नील से। अब सुनिए, दो हिंदू बोरिया-बक़चा सँभाले कहीं बाहर जाने के लिये घर से निकले। मियाँ शुबराती एक आँख दबाकर सामने आ खड़े हुए। वे समझे, सचमुच काना है। एक ने कहा—अबे हट सामने से ओ वे काने! आपने वह आँख खोल दी। दूसरी दबा ली। दोनों आदमी इसे असगुन समझकर अंदर चले गए। इतने में एक कानी औरत सामने से आई। मियाँ शुबराती ने देखते ही हाँक लगाई—'एक लकड़िया बाँसे की कानी आँख तमासे को।'

ज्यों ही दोनों सराय में पहुँचे, हुसेनबख़्श ने बढ़कर बूढ़े मियाँ को सलाम किया। हुसेनबख़्श ने अपने आने का मतलब बयान किया। बड़े मियाँ बोले—जनाब, मियाँ आज़ाद से मेरी पुरानी मुलाक़ात है। मेरी लड़कियों के साथ वह मुद्दत तक खेला किए हैं। मेरी छोटी लड़की से उनके निकाह की भी तजवीज़ हुई थी; मगर अब तो वह एक बेगम से क़ौल हार चुके हैं। इसके बाद कुछ और बातें हुईं। शाम को हुसेनबख़्श रुख़सत हुए, और घर आकर हुस्नआरा से कहा—वह तो आज़ाद के पुराने मुलाक़ाती हैं। शायद आज़ाद ने उनकी एक लड़की से निकाह करने का वादा भी किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। यह सुनते ही हुस्नआरा का रंग फ़क़ हो गया। रात को हुस्नआरा ने सिपहआरा से कहा—कुछ सुना? उस बुड्ढे की एक लड़की के साथ आज़ाद का निकाह होनेवाला है।

सिपहआरा—ग़लत बात है।

हुस्नआरा—क्यों?

सिपहआरा—क्यों क्या, आज़ाद ऐसे आदमी ही नहीं।

हुस्नआरा—दिल्लगी हो, जो कहीं आज़ाद उससे भी इक़रार कर गए हों। चलो ख़ैर, चार निकाह तो जायज़ भी हैं। लेकिन अल्लाह जानता है, यक़ीन नहीं आता। आज़ाद अगर ऐसे हरजाई होते, तो जान हथेली पर लेकर रूम न जाते।

हुस्नआरा ने ज़बान से तो यह इतमीनान ज़ाहिर किया, पर दिल से यह ख़याल दूर न कर सकीं कि मुमकिन है, आज़ाद ने वहाँ भी क़ौल हारा हो। एक तो उनकी तबीयत पहले ही से ख़राब थी, उस पर यह नई फ़िक्र पैदा हुई, तो फिर बुख़ार आने लगा। दिल को लाख-लाख समझातीं कि आज़ाद बात के धनी हैं, लेकिन वह ख़याल दूर न होता। इधर एक नई मुसीबत यह आई कि उनके एक आशिक़ और पैदा हो गए। यह हज़रत बहारबेगम के रिश्ते में भाई होते थे। नाम था मिर्ज़ा असकरी। असकरी ने हुस्नआरा को लड़कपन में देखा था। एक दिन बहारबेगम से मिलने आए, और सुना कि हुस्नआरा बेगम आजकल यहीं हैं, तो उन पर डोरे डालने लगे। बहारबेगम से बोले—अब तो हुस्नआरा सयानी हुई होंगी?

बहारबेगम—हाँ, खुदा के फ़ज़ल से अब सयानी हैं।

असकरी—दोनों बहनों में हुस्नआरा गोरी हैं न?

बहारबेगम—ऐ, दोनों ख़ासी गोरी-चिट्टी हैं; मगर हुस्नआरा-जैसी हसीन हमने तो नहीं देखी। गुलाब के फूल-जैसा मुखड़ा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्करी—तुम हमारी बहन कैसी हो ?

बहारबेगम—इसके क्या माने ?

अस्करी—अब साफ़-साफ़ क्या कहूँ, समझ जाओ। बहन हो, बड़ी हो, इतने ही काम आओ। फिर और नहीं तो क्या, आक़बत में बख़्शाओगी ?

बहारबेगम—अस्करी, ख़ुदा जानता है, हमें दिल से तुम्हारी मुहब्बत है।

अस्करी—बरसों साथ-साथ खेले हैं।

बहारबेगम—अरे यों क्यों नहीं कहते कि मैंने गोदियों में खिलाया है।

अस्करी—यह हम न मानेंगे। ऐसी आप कितनी बड़ी हैं मुझसे। बरस नहीं, हद दो बरस।

बहारबेगम—ऐ लो, इस झूठ को देखो, छुतें पुरानी हैं।

अस्करी—अच्छा, फिर कोई पंद्रह-बीस बरस की छुटाई-बड़ाई है!

बहारबेगम—हुई है ?

अस्करी—अच्छा, अब फिर किस दिन काम आओगी ?

बहारबेगम—भई, अगर हुस्नआरा मंजूर कर लें, तो है। मैं आज अम्माजान से ज़िक्र करूँगी।

इतने में हुस्नआरा बेगम ने ऊपर से आवाज़ दी—ऐ बाजी, ज़री हमको हरे-हरे मुलायम सिंवाड़े नहीं मँगा देतीं ? मुहम्मद अस्करी ने रसूख़ियत जताने के लिये मामा से कहा—मेरे आदमी से जाकर कहो कि चार सेर ताज़े सिंघाड़े तुड़वाकर ले आवे। हुस्नआरा ने जो उनकी आवाज़ सुनी, तो सिपहआरा से पूछा—यह कौन आया है ? सिपहआरा ने कहा—ऐ, वही तो हैं अस्करी। थोड़ी देर में मिर्ज़ा अस्करी तो चले गए, और चलते वक़्त बहारबेगम से कह गए कि हमने जो कहा है, उसका ख़याल रहे। बहार-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेगम ने कहा—देखो, अल्लाह चाहे, तो आज के दूसरे ही महीने हुस्नआरा बेगम के साथ मँगनी हो। हुस्नआरा उसी वक़्त नीचे आ रही थीं। यह बात उनके कान में पड़ गई। पाँव-तले से मिट्टी निकल गई। उलटे-पाँव लौट गईं, और सिपहआरा से यह क़िस्सा कहा। उसके भी होश उड़ गए। कुछ देर तक दोनों बहनें सन्नाटे में पड़ी रहीं। फिर सिपहआरा ने दीवाने-हाफ़िज़ उठा लिया। और फ़ाल देखी, तो सिरे पर ही यह शेर निकला—

बेरौ ईं दाम बर मुर्गे दिगर नेह ;
कि उनका रा बुलंद अस्त आशियाना।

(यह जाल दूसरी चिड़िया पर डाल। उनक़ा का घोंसला बहुत ऊँचा है।)

सिपहआरा यह शेर पढ़ते ही उछल पड़ी। बोली—लो, फ़तह है। बेड़ा पार हो गया।

इतने में बहारबेगम आ पहुँचीं, और हुस्नआरा से बोलीं—तुम लोगों ने मिर्ज़ा अस्करी को तो देखा होगा? कितना ख़ूबसूरत जवान है!

सिपहआरा—देखा क्यों नहीं; वही शौक़ीन-से आदमी हैं न?

बहारबेगम—अब की आवेगा तो ओट में से दिखा दूँगी। बड़ा हँसमुख, मिलनसार आदमी है। जिस वक़्त आता है, मकान-भर महकने लगता है। मेरी बीमारी में बेचारा दिन-भर में तीन-तीन फेरे करता था।

हुस्नआरा ये बातें सुनकर दिल-ही-दिल में सोचने लगीं कि यह कह क्या रही हैं! कैसे अस्करी? यहाँ तो आज़ाद को दिल दे चुके। वह टर्की सिधारे, हम क़ौल हारे। इनको अस्करी की पड़ी है। बहारबेगम ने बड़ी देर तक अस्करी की तारीफ़ की; मगर हुस्नआरा कब पसीजनेवाली थीं। आख़िर, बहारबेगम ख़फ़ा होकर चली गईं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे दिन जब अस्करी फिर आए, तो बहारबेगम ने उनसे कहा—मैंने हुस्नआरा से तुम्हारा ज़िक्र तो किया, मगर वह बोलीं तक नहीं। उस मुए आज़ाद पर लट्टू हो रही हैं।

अस्करी—मैं एक तरकीब बताऊँ, एक काम करो। जब हुस्नआरा बेगम और तुम पास बैठी हो, तो आज़ाद का ज़िक्र ज़रूर छेड़ो। कहना, अस्करी अभी-अभी अख़बार पढ़ता था, उसका एक दोस्त है आज़ाद, वह नानबाई का लड़का है। उसकी बड़ी तारीफ़ छपी है। कहता था, इस नानबाई के लौंडे की खुशक़िस्मती को तो देखो, कहाँ जाकर शिप्पा लड़ाया। जब वह कहें कि आज़ाद शरीफ़ आदमी हैं, तो कहना, अस्करी के पास आज़ाद के न-जाने कितने ख़त पड़े हैं। वह क़सम खाता है कि आज़ाद नानबाई का लड़का है, बहुत दिनों तक मेरे यहाँ हुक़्के भरता रहा।

यह कहकर मिर्ज़ा अस्करी तो बिदा हुए, और बहारबेगम हुस्नआरा के पास पहुँचीं।

हुस्नआरा—कहाँ थीं बहन? आओ, दरिया की सैर करें।

बहारबेगम—ज़रा अस्करी से बातें करने लगी थी। किसी अख़बार में उसके एक दोस्त की बड़ी तारीफ़ छपी है। क्या जाने, क्या नाम बताता था? भला ही-सा नाम है। हाँ, खूब याद आया, आज़ाद। मगर कहता था कि नानबाई का लड़का है।

हुस्नआरा—किसका?

बहारबेगम—नानबाई का लड़का बताता था। तुम्हारे आशिक़ साहब का भी तो यही नाम है! कहीं वही अस्करी के दोस्त न हों।

सिपहआरा—वाह, अच्छे आपके अस्करी हैं, जो नानबाइयों के छोकरों से दोस्ती करते फिरते हैं।

बहार तो यह आग लगाकर चलती हुईं, इधर हुस्नआरा के दिल में खलबली मची। सोचीं, आज़ाद के हाल से किसी को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्तला तो है नहीं, शायद नानबाई ही हों। मगर यह शक्ल-सूरत, यह इल्म और कमाल, यह लियाक़त और हिम्मत नानबाई में क्योंकर आ सकती है? नानबाई फिर नानबाई है। आज़ाद तो शहज़ादे मालूम होते हैं। सिपहआरा ने कहा—बाजी, बहार बहन तो उधार खाए बैठी हैं कि अस्करी के साथ तुम्हारा निकाह हो। सारी कारस्तानी उसी की है। अस्करी के हथकंडों से अब बचे रहना। वह बड़ा नटखट मालूम होता है।

शाम को मामा ने एक ख़त लाकर हुस्नआरा को दिया। उन्होंने पूछा—किसका ख़त है?

मामा—पढ़ लीजिए।

सिपहआरा—क्या डाक पर आया है?

मामा—जी नहीं, कोई बाहर से दे गया है।

हुस्नआरा ने ख़त खोलकर पढ़ा। ख़त का मज़मून यह था—

क़दम रख देखकर उल्फ़त के दरिया में ज़रा ऐ दिल;
ख़तर है डूब जाने का भी दरिया के नहाने में।

हुस्नआरा बेगम की ख़िदमत में आदाब। मैं जताए देता हूँ कि आज़ाद के फेर में न पड़िए। वह नीच क़ौम आपके क़ाबिल नहीं। नानबाई का लड़का तंदूर जलाने में ताक़, आटा गूँधने में मश्शाक़। वह और आपके लायक़ हो! अव्वल तो पाजी, दूसरे दिल का हरजाई, और फिर तुर्रा यह कि अनपढ़! बहार बहन मुझे खूब जानती है। मैं अच्छा हूँ या बुरा, इसका फ़ैसला वही कर सकती हैं। आज़ाद मेरे दुश्मन नहीं; मैं उन्हें खूब जानता हूँ। इसी सबब से आपको सलाह देता हूँ कि आप उसका ख़याल दिल से दूर कर दें। ख़ुदा वह दिन न दिखावे कि आज़ाद से तुम्हारा निकाह हो।

तुम्हारा
अस्करी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुस्नआरा ने इस ख़त के जवाब में यह शेर लिखा—

न छेड़ ऐ निकहते बादे-बहारी, राह लग अपनी;
तुझे अठखेलियाँ सूझी हैं, हम बेज़ार बैठे हैं।

सिपह्आरा ने कहा—क्यों बाजी, हम क्या कहते थे? देखा, वही बात हुई न? और झूठ तो इसी से साबित है कि मियाँ आज़ाद को अनपढ़ बताते हैं। ख़ुदा की शान, यह और आज़ाद को अनपढ़ कहें! हम तो कहते ही थे कि यह बड़ा नटखट मालूम होता है।

हुस्नआरा ने यह पुर्ज़ा मामा को दिया कि जा, बाहर दे आ। अस्करी ने यह ख़त पाया, तो जल उठे। दिल में कहा—अगर आज़ाद को नीचा न दिखाया, तो कुछ न किया। जाकर बड़ी बेगम से मिले, और उनसे ख़ूब नमक-मिर्च मिला-मिलाकर बातें कीं। बहारबेगम ने भी हाँ-में-हाँ मिलाई, और अस्करी की ख़ूब तारीफ़ें कीं। आज़ाद को जहाँ तक बदनाम करते बना, किया। यहाँ तक कि आख़िर बड़ी बेगम भी अस्करी पर लट्टू हो गईं। मगर हुस्नआरा और सिपह्आरा अस्करी का नाम सुनते ही जल उठती थीं। दोनों आज़ाद को याद कर-करके रोया करतीं, और बहारबेगम बार-बार अस्करी का ज़िक्र करके उन्हें दिक़ किया करतीं। यहाँ तक कि एक दिन बड़ी बेगम के सामने सिपह्आरा और बहारबेगम में एक झौड़ हो गई। बहार कहती थीं कि हुस्नआरा की शादी मिर्ज़ा अस्करी से होगी, और ज़रूर होगी। सिपह्आरा कहती थी—यह मुमकिन नहीं।

एक दिन बड़ी बेगम ने हुस्नआरा को बुला भेजा, लेकिन जब हुस्नआरा गईं, तो मुँह फेर लिया। बहारबेगम भी वहीं बैठी थीं। बोलीं—अम्माजान तुमसे बहुत नाराज़ हैं हुस्नआरा।

बेगम—मेरा नाम न लो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहारबेगम—जी नहीं, आप ख़फ़ा न हों। मजाल है, आपका हुक्म न मानें।

बेगम—सुना हुआ है सब।

बहारबेगम—हुस्नआरा, अम्माजान के पास आओ।

हुस्नआरा परेशान कि अब क्या करूँ। डरते-डरते बड़ी बेगम के पास जा बैठीं। बड़ी बेगम ने उनकी तरफ़ देखा तक नहीं।

बहारबेगम—अम्माजान, यह आपके पास आई हुई हैं, इनका क़सूर माफ़ कीजिए।

बेगम—जब यह मेरे कहने में नहीं हैं, तो मुझसे क्या वास्ता? अस्करी-सा लड़का कोई मशाल लेकर भी ढूँढ़े, तो न पावे। मगर इन्हें अपनी ही ज़िद है।

बहारबेगम—हुस्नआरा खूब सोचकर इसका जवाब दो।

बेगम—मैं जवाब-सवाब कुछ नहीं माँगती।

बहारबेगम—आप देख लीजिएगा, हुस्नआरा आपका कहना मान लेंगी।

बेगम—बस, देख लिया!

बहारबेगम—अम्माजान, ऐसी बातें न कहिए।

बेगम—दिल जलता है बहार, दिल जलता है! अपने दिल में क्या-क्या सोचते थे, मगर अब उठ ही जायँ यहाँ से, तो अच्छा।

यह कहकर बड़ी बेगम उठकर चली गईं। हुस्नआरा भी ऊपर चली गईं, और लेटकर रोने लगीं। थोड़ी देर में बहार ने आकर कहा—हुस्नआरा, ज़री पर्दे ही में रहना, अस्करी आते हैं। हुस्नआरा ने अस्करी का नाम सुना, तो काँप उठीं। इतने में अस्करी आकर बरामदे में खड़े हो गए।

बहारबेगम—बैठो अस्करी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्करी—जी हाँ, बैठा हूँ। खूब हवादार मकान है। इस कमरे में तुम रहती हो न?

बहारबेगम—नहीं, इसमें हमारी बहनें रहती हैं।

अस्करी—अब हुस्नआरा की तबीयत कैसी है?

बहारबेगम—पूछ लो, बैठी तो हैं।

अस्करी—नहीं, बताओ तो आख़िर?

बहारबेगम—तुम भी तो हकीम हो? भला पर्दे के पास से नब्ज़ तो देखो।

हुस्नआरा मुसकिराईं। सिपहआरा ने कहा—ऐ, हटो भी! वो आए वहाँ से हकीम!

बहारबेगम—तुम तो हवा से लड़ती हो?

सिपहआरा—लड़ती ही हैं।

अस्करी—इस वक़्त खाना खा चुकी होंगी। शाम को नब्ज़ देख लूँगा।

बहारबेगम—ऐ, अभी खाना कहाँ खाया?

सिपहआरा—हाँ-हाँ, खा चुकी हैं।

मिर्ज़ा अस्करी तो रुख़सत हुए, मगर बहारबेगम को सब्र कहाँ! पूछा—हुस्नआरा, अब बोलो, क्या कहती हो? सिपहआरा तिनक कर बोलीं—अब कोई और बात भी है, या रात-दिन यही ज़िक्र है? कह दिया एक दफ़ा कि जिस बात से यह चिढ़ती हैं, वह क्यों करो।

बहारबेगम—होना वही है, जो हम चाहती हैं।

हुस्नआरा—ख़ैर, बहन, जो होना है, हो रहेगा। उसका ज़िक्र ही क्या?

सिपहआरा—बहार बहन, नाहक़ बैठे-बिठाए रंज बढ़ाती हो।

बहारबेगम—याद रखना, अम्माजान अभी-अभी क़सम खा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुकी हैं कि वह तुम दोनों की सूरत न देखेंगी। बस, तुम्हें अब अख़्तियार है, चाहे मानो, चाहे न मानो।

कई दिन इसी तरह गुज़र गए। हुस्नआरा जब बड़ी बेगम के सामने जातीं, तो वह मुँह फेर लेतीं। दोनों बहनें रात-दिन रोया करतीं। सोचीं कि यहाँ तो सब-के-सब हमारे ख़िलाफ़ हैं, आओ, रूहअफ़ज़ा को बुलावें, शायद वह हमारा साथ दें। मामा ने कहा—मैं अभी-अभी जाती हूँ। जहाँ तक बन पड़ेगा, बहुत कहूँगी। और, कहना क्या है, ले ही आऊँगी।

इतने में बहारबेगम ने आकर कहा—ऐ हुस्नआरा, ज़रा पर्दा करके असकरी को नब्ज़ दिखा दो। ज़ीने पर खड़े हैं। हुस्नआरा मजबूर हो गई। सिपहआरा को इशारे से बुलाया, और कहा—बहार बहन तो बाहर ही बैठेंगी। मेरे बदले तुम नब्ज़ दिखा दो। सिपहआरा ने मुसकिराकर कहा—अच्छा, और पर्दे के पास बैठकर नब्ज़ दिखाई।

असकरी—दूसरा हाथ लाइए।

बहारबेगम—बुख़ार तो नहीं है?

असकरी—थोड़ा-सा बुख़ार तो ज़रूर है। कमज़ोरी बहुत है।

जब असकरी चले गए, तो हुस्नआरा ने बहारबेगम से कहा—आपके असकरी तो बड़े होशियार हैं!

बहारबेगम—क्या शक भी है?

हुस्नआरा—उफ़, मारे हँसी के बुरा हाल है। वाह रे हकीम!

सिपहआरा—"नीम हकीम, ख़तरे जान।"

बहारबेगम—यह काहेसे?

हुस्नआरा—नब्ज़ किसकी देखी थी?

बहारबेगम—तुम्हारी।

हुस्नआरा—अरे वाह, कहीं देखी हो न? बस, देख ली हिकमत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहारबेगम—फिर किसकी नब्ज़ देखी ? क्या सिपहआरा बैठ गई थीं ?

सिपहआरा—और नहीं तो क्या ? कमज़ोरी बताते थे ! कमज़ोरी हमारे दुश्मनों को हो ।

बहारबेगम—भला, इलाज में क्या हँसी करनी थी ?

बाहर जाकर बहार ने अस्करी को खूब आड़े-हाथों लिया—ऐ बस, जाओ भी, मुफ़्त में हमको बद बनाया ! हुस्नआरा ने हँसी-हँसी में सिपहआरा को अपनी जगह बिठा दिया, और तुम ज़रा न पहचान सके । खुदा जानता है, मुझे बहुत शरम आई ।

शाम को रूहअफ़ज़ा बेगम आ पहुँचीं, और बड़ी बेगम के पास जाकर सलाम किया ।

बड़ी बेगम—तुम कब आईं ?

रूहअफ़ज़ा—अभी-अभी चली आती हूँ । हुस्नआरा कहाँ हैं ?

बहारबेगम—हमें उनका हाल मालूम नहीं । कोठे पर हैं ।

रूहअफ़ज़ा—ज़रा, बुलवाइए ।

बहारबेगम—दोनों बहनें हमसे ख़फ़ा हैं ।

रूहअफ़ज़ा कोठे पर गईं, तो दोनों बहनें उनसे गले मिलकर खूब रोईं ।

रूहअफ़ज़ा—यह तुमको क्या हो गया हुस्नआरा ? वह सूरत ही नहीं । माजरा क्या है ?

सिपहआरा—अब तो आप आई हैं, सब कुछ मालूम हो जायगा । सारा घर हमसे फ़िरंट हो रहा है । हमें तो खाना-पीना, उठना-बैठना सब हराम है ।

बहारबेगम को यह सब्र कैसे होता कि रूहअफ़ज़ा आवें, और दोनों बहनें उनसे अपना दुखड़ा रोवें । आकर धीरे से बैठ गईं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूहअफ़ज़ा—बहन, यह क्या बात है ? आख़िर, किस बात पर यह रंजारंजी हो रही है ?

बहारबेगम—मैं तुमसे पूछती हूँ, अस्करी में क्या बुराई है ? शरीफ़ नहीं है वह, या पढ़ा-लिखा नहीं है, या अच्छे ख़ानदान का नहीं है ? आख़िर इनके इनकार का सबब क्या है ?

सिपहआरा—हमने एक दफ़े कह दिया कि हम अस्करी का नाम नहीं सुनना चाहते ।

रूहअफ़ज़ा—तो यह कहो, बात बहुत बढ़ गई है । मुझे ज़रा भी कुछ हाल मालूम होता, तो फ़ौरन् ही आ जाती ।

बहारबेगम—अब आई हो, तो क्या बना लोगी ? यह एक न मानेंगी ।

रूहअफ़ज़ा—वह तो शायद मान भी जायँ, मगर आपका मान जाना अलबत्ता मुशकिल है ।

बहारबेगम—यह कहिए, आप इनकी तरफ़ से लड़ने आई हैं ?

रूहअफ़ज़ा—हाँ, हमसे तो यह नहीं देखा जाता कि ख़ाहम-ख़्वाह झगड़ा हो ।

ये बातें हो ही रही थीं कि बड़ी बेगम साहब भी लठिया टेकती हुई आईं ।

रूहअफ़ज़ा—आइए अम्माजान, बैठिए ।

बेगम—मैं बैठने नहीं आई, यह कहने आई हूँ कि अस्करी के साथ हुस्नआरा का निकाह ज़रूर होगा । इसमें चाहे सारी दुनिया एक तरफ़ हो, मैं किसी की न सुनूँगी । मैं जान दे दूँगी । यह न मानेंगी, तो ज़हर खा लूँगी ; मगर करूँगी वही, जो कह रही हूँ ।

बड़ी बेगम यह कहकर चली गईं । हुस्नआरा इतना रोईं कि आँखें लाल हो गईं । रूहअफ़ज़ा ने समझाया, तो बोलीं—बहन,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्माजान मानेंगी नहीं, और हम सिवा आज़ाद के और किसी के साथ शादी न करेंगे। नतीजा यह होना है कि हमीं न होंगे।

छप्पनवाँ परिच्छेद

हुस्नआरा बेगम की जान अज़ाब में थी। बड़ी बेगम से बोल-चाल बंद, बहारबेगम से मिलना-जुलना तर्क। अस्करी रोज़ एक नया गुल खिलाते। वह एक ही काइयाँ था, रूहअफ़ज़ा को भी बातों में लगाकर अपना तरफ़दार बना लिया। मामा को पाँच रुपए दिए। वह उसका दम भरने लगी। महरी को जोड़ा बनवा दिया, वह भी उसका कलमा पढ़ने लगी। नवाब साहब उसके दोस्त थे ही। हुसेनबख़्श को भी गाँठ लिया। बस, अब सिपहआरा के सिवा हुस्नआरा का कोई हमदर्द न था। एक दिन रूहअफ़ज़ा चुपके-चुपके ऊपर आईं, तो देखा, कमरे के सब दरवाज़े बंद हैं। शीशे से झाँककर देखा, हुस्नआरा रो रही हैं और सिपहआरा उदास बैठी है। रूहअफ़ज़ा का दिल भर आया। धीरे से दरवाज़ा खोला, और दोनों बहनों को गले लगाकर कहा—आओ, हवा में बैठो। ज़री, मुँह धो डालो। यह क्या बात है। जब देखो, दोनों बहनें रोती रहती हो?

सिपहआरा—बहन, जान-बूझकर क्यों अनजान बनती हो! भला, आपसे भी कोई बात छिपी है? मगर आप भी हमारे ख़िलाफ़ हो गईं! ख़ैर, अल्लाह मालिक है।

रूहअफ़ज़ा—तुम्हारी तो नई बातें हैं? जहाँ तुम्हारा पसीना गिरे, वहाँ हम लहू गिरावें, और तुम समझती हो कि हम तुम्हें जलाते हैं। हम तो मुहब्बत से पूछते हैं, और तुम हमीं पर बिगड़ती हो।

हुस्नआरा—सुनो बाजी, तुम कौन-सी बात नहीं जानती हो, जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूछती हो ? हम साफ़-साफ़ कह चुके कि या तो उम्र-भर कुँआरी ही रहेंगे या आज़ाद के साथ निकाह होगा।

सिपहआरा—ऐसे-ऐसे ३६० अस्करी हों, तो क्या ! हलवा खाने को मुँह चाहिए।

रूहअफ़ज़ा—अब इस वक्त बात बढ़ जायगी। और कोई बात करो।

हुस्नआरा—हम इतना ही चाहते हैं कि आप ज़रा इंसाफ़ करें।

रूहअफ़ज़ा—मगर यह गुत्थी क्योंकर सुलझेगी ?

इतने में मामा ने एक अख़बार लाकर रख दिया। हुस्नआरा ने उसे पढ़ना शुरू किया। एकाएक एक मज़मून देखकर चौंक उठी। मज़मून यह था कि मियाँ आज़ाद ने टर्की में एक साईस की बीबी से शादी कर ली। साईस को ज़हर दिलवा दिया, और अब साईसिन के साथ गुलछर्रे उड़ा रहे हैं। हुस्नआरा ने अख़बार फेंक दिया, और उठकर कमरे में चली गई। सिपहआरा ने भाँप लिया कि ज़रूर आज़ाद की कुछ ख़बर है। अख़बार उठाकर देखने लगी, तो यह मज़मून नज़र पड़ा। सन्नाटे में आ गई। जिस आज़ाद के लिये यहाँ सारी दुनिया से लड़ाई हो रही थी, जिसका दोनों आसरा लगाए बैठी थीं, उसका यह हाल ! हुस्नआरा को जाकर तसकीन देने लगी—बाजी, यह सब ग़लत है।

हुस्नआरा—क़िस्मत की ख़ूबी है।

सिपहआरा—हम तो फ़ाल देखेंगे।

हुस्नआरा—हमारा तो दिल टूट गया। हाय, हम क्या जानते थे कि मुहब्बत यह बुरा दिन दिखावेगी।

हाल अव्वल से यह न था ज़ाहिर,
कि इसी ग़म में होंगे हम आख़िर।

अपना किया अपने आगे आया। मियाँ आज़ाद के हथकंडे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या मालूम थे। इनको हमारा ज़रा ख़याल न आया। एक नीच क़ौम की औरत को ब्याहा। हुस्नआरा को भूल गए। यहाँ महीनों इसी रंज में गुज़र गए कि टर्की क्यों भेजा। बैठे-बिठाए उनकी जान के दर पे क्यों हुई। रात-दिन दुआ माँगी कि वह ख़ैरियत से घर आवें। मगर यह क्या मालूम था कि एकाएक यह ग़म की बिजली गिर पड़ेगी। क़िस्मत फूट गई। अब तो यही आरज़ू है कि एक दफ़ा चार आँखें हों, फिर झुककर सलाम करूँ।

सिपहआरा—अगर यही करना था, तो इतनी दूर गए क्या करने थे?

रूहअफ़ज़ा कमरे में आई, तो देखा, हुस्नआरा दुलाई ओढ़े पड़ी हैं। बदन पर हाथ रक्खा, तो तेज़ बुख़ार। हुस्नआरा उन्हें देखकर रोने लगीं। रूहअफ़ज़ा बोलीं—बहन, तबीयत को क़ाबू में रक्खो। ऐसा भी नौज कोई बीमारी में घबराए। बहारबेगम ने सुना, तो वह भी घबराई हुई आईं। बदन पर हाथ रक्खा, तो मालूम हुआ, जैसे किसी ने झुलसा दिया। हुस्नआरा ने रोकर कहा—बाजी, हर तरह की बीमारी मैंने उठाई है; मगर दिल कभी इतना कमज़ोर न हुआ था। मालूम होता है कि जान निकल रही है। बहारबेगम ने बड़ी बेगम को बुलवाया। वह भी बदहवास आईं और हुस्नआरा के माथे पर हाथ रखकर बोलीं—अल्लाह, यह हुआ क्या!

बहारबेगम—बुख़ार-सा बुख़ार है!

नवाब साहब दौड़े हुए आए। देखा, तो कुहराम मचा हुआ है। इतने में अस्करी आए। बहारबेगम ने कहा—भैया ज़रा नब्ज़ तो देखो। यह दम-के-दम में क्या हो गया?

अस्करी—(नब्ज़ देखकर) बहन, क्या बताऊँ, नब्ज़ ही नहीं मिलती!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Harid

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस फ़िक़रे पर बहारबेगम सिर पीटने लगीं। नवाब साहब ने समझाया, यह वक़्त दवा और इलाज का है, रोना तो उम्र-भर है। अस्करी फ़ौरन् बड़े हकीम साहब को बुलाने गए। शहज़ादा हुमायूँ फ़र भी आए थे। बोले—मैं जाकर सिविलसर्जन को साथ लाता हूँ। सर्जन साहब आए, और नब्ज़ देखकर कहा—दिल पर कोई सदमा पहुँचा है। किसी अज़ीज़ के मरने की ख़बर सुनी हो, या ऐसी ही कोई और बात हो। नुस्ख़ा लिखा, और फ़ीस लेकर चल दिए। इतने में बड़े हकीम साहब आए, और नब्ज़ देखकर अस्करी के कान में कहा—काम तमाम हो गया। नुस्ख़ा लिखकर आप भी बाहर गए। बहारबेगम सबसे ज़्यादा बेक़रार थीं।

शाम का वक़्त था, बड़ी बेगम नमाज़ पढ़ रही थीं, बहारबेगम उदास बैठी हुई थीं, नवाब साहब हुमायूँ फ़र के साथ इसी बीमारी का ज़िक्र कर रहे थे कि एकाएक अंदर से रोने की आवाज़ आई।

नवाब साहब—क्या हुआ, क्या! हुआ क्या!!

बहारबेगम—जो कुछ होना था, वह हो गया।

नवाब साहब ने जाकर देखा, तो हुस्नआरा की आँखें फिर गई थीं, और बदन ठंडा हो गया था। नवाब साहब को देखते ही बड़ी बेगम ने एक ईंट उठाई, और सिर पर पटक ली। सिपहआरा ने तीन बार दीवार से सिर टकराया। नवाब साहब डॉक्टर को बुलाने दौड़े।

सत्तावनवाँ परिच्छेद

रूम पहुँचकर आज़ाद एक पारसी होटल में ठहरे। उसी होटल में जार्जिया की एक लड़की भी ठहरी हुई थी। उसका नाम था मीडा। आज़ाद खाना खाकर अख़बार पढ़ रहे थे कि मीडा को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाग़ में टहलते देखा। दोनों की आँखें चार हुईं। आज़ाद के कलेजे में तीर-सा लगा। मीडा भी कनखियों से देख रही थी कि यह कौन आदमी है। आदमी तो निहायत हसीन है, मगर तुर्क नहीं मालूम होता।

आज़ाद को भी बाग़ की सैर करने की धुन सवार हुई, तो एक फूल तोड़कर मीडा के सामने पेश किया। मीडा ने फूल तो ले लिया, मगर बिना कुछ कहे-सुने घोड़े पर सवार होकर चली गई। आज़ाद सोच रहे थे कि यहाँ किसी से जान न पहचान, अब इस हसीना को क्योंकर देखेंगे? इसी फ़िक्र में बैठे थे कि होटल का मालिक आ पहुँचा। आज़ाद ने उससे बातों-बातों में पता लगा लिया कि यह एक कुँआरी लेडी है। इसकी खूबसूरती का दूर-दूर चर्चा है। जिसे देखिए, इसका आशिक़ है। पियानो बजाने का दिली शौक़ है। घोड़े पर ऐसा सवार होती है कि अच्छे-अच्छे शहसवार दंग रह जाते हैं।

शाम के वक़्त आज़ाद एक किताब देख रहे थे कि एक औरत ने आकर कहा—एक साहब बाहर आपकी तलाश में खड़े हैं। आज़ाद को हैरत हुई कि यह कौन है? बाहर आए, तो देखा, एक औरत मुँह पर नक़ाब डाले खड़ी है। इन्हें देखते ही उसने नक़ाब उलट दी। यह मीडा थी।

मीडा—मैं वही हूँ, जिसे आपने फूल दिया था।

आज़ाद—और मैंने आपकी सूरत को अपने दिल पर खींच लिया था।

मीडा—यहाँ कब तक ठहरिएगा?

आज़ाद—लड़ाई में शरीक होना चाहता हूँ।

मीडा—इस लड़ाई का बुरा हो, जिसने हज़ारों घरों को बरबाद कर दिया! भला, अगर आप न जायँ, तो कोई हर्ज है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—मजबूरी है !

मीडा ने आज़ाद का हाथ पकड़ लिया, और बाग़ में टहलते-टहलते बोली—जब तक आप यहाँ रहेंगे, मैं रोज़ आऊँगी।

आज़ाद—मेरे लिये यह बड़ी खुशनसीबी की बात है। मैं अच्छी सायत देखकर घर से चला था।

मीडा—आपने वज़ीर-जंग से अपने लिये क्या तय किया ?

आज़ाद—अभी तो उनसे मिलने की नौबत ही नहीं आई।

मीडा—मुझे उम्मेद है कि मैं आपको कोई अच्छा ओहदा दिला सकूँगी।

आज़ाद—आपका वतन कहाँ है ?

मीडा—जार्जिया।

आज़ाद—तो यह कहिए, आप कोहक़ाफ़ की परी हैं।

इस तरह की बातें करके मीडा चली गई। आज़ाद कुछ देर तक सन्नाटे में खड़े रहे। इतने में एक फ्रांसीसी अफ़सर आकर बोला—तुम अभी किससे बातें कर रहे थे ?

आज़ाद—मिस मीडा से।

अफ़सर—तुम्हें मालूम है, उससे मेरी शादी होनेवाली है ?

आज़ाद—बिलकुल नहीं।

यह सुनते ही उस अफ़सर ने, जिसका नाम ज़दाद था, तलवार खींचकर आज़ाद पर हमला किया। आज़ाद ने ख़ाली दी। एकाएक किसी ने पीछे से आज़ाद पर तलवार चलाई। तलवार छिछलती हुई बाएँ कंधे पर लगी। पलटकर आज़ाद ने जो एक तुला हुआ हाथ लगाया, तो वह ज़ख़्मी होकर गिर पड़ा। आज़ाद सँभलने ही को थे कि ज़दाब फिर उन पर झपटा। आज़ाद ने फिर ख़ाली दी, और कहा—मैं चाहूँ, तो तुम्हें मार सकता हूँ। मगर मुझे तुम्हारी जवानी पर रहम आता है। यह कहकर आज़ाद ने पैतरा बदला,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और तलवार उसके हाथ से छीन ली। इतने में होटल से कई आदमी निकल आए, और आज़ाद की तारीफ़ करने लगे। ज़ादा ने शरमिंदा होकर कहा—मुझे इसका अफ़सोस है कि मेरे एक दोस्त ने मुझसे बग़ैर पूछे आप पर पीछे से हमला किया। इसके लिये मैं आपसे माफ़ी माँगता हूँ। दोनों आदमी गले तो मिले, मगर फ़्रांसीसी के दिल से कुदूरत न गई।

दूसरे दिन मियाँ आज़ाद हमीदपाशा के पास गए, जो जंग के वज़ीर थे। हमीद ने आज़ाद का डील-डौल देखा, और उनकी बात-चीत सुनी, तो फ़ौजी ओहदा देने का वादा कर लिया। आज़ाद खुश-खुश लौटे आते थे कि मीडा घोड़े पर सवार आ पहुँची।

मीडा—आप कहाँ गए थे ?

आज़ाद—वज़ीर-जंग के पास। कल तो आपकी बदौलत मेरी जान ही गई थी।

मीडा—सुन चुकी हूँ।

आज़ाद—अब आपसे बोलते डर मालूम होता है।

मीडा—जीत तो तुम्हारी ही हुई। तुम मुझे दिल में बुरा समझ रहे होगे; मगर मेरा दिल क़ाबू से बाहर है। मेरा दिल तुम पर आया है। मैं चाहती हूँ, मेरी तुम्हारे साथ शादी हो।

आज़ाद—मुझे अफ़सोस है कि मेरी शादी तय हो चुकी है। खुदा को गवाह करके कहता हूँ, आपकी एक-एक अदा मेरे दिल में चुभ गई है। मगर मैं मजबूर हूँ।

मीडा ने उदास होकर कहा—पछताओगे, और घोड़ा बढ़ा दिया। उसी रात को मीडा ने हमीदपाशा से जाकर कहा कि आज़ाद नाम का जो हिंदोस्तानी आज आपके पास आया था, वह रूस का मुख़बिर है। उससे होशियार रहिएगा।

हमीद—तुम्हें इसका पूरा यक़ीन है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीडा—मुझे आज़ाद के एक दोस्त ही से यह बात मालूम हुई।

हमीद—तुम्हारा ज़िम्मा।

मीडा—बेशक।

यह आग लगाकर मीडा घर आई; मगर बार-बार सोचती थी कि मैंने बहुत बुरा किया। एक बेगुनाह को मुफ़्त में फँसाया। ख़याल आया कि जाकर वज़ीर-जंग से कह दे कि आज़ाद बेगुनाह है; मगर बदनामी के ख़ौफ़ से जाने की हिम्मत न पड़ती थी। मियाँ आज़ाद होटल में बैठे हुक़्क़ा पी रहे थे कि एक तुर्की अफ़सर ने आकर कहा—आपको टर्की की सरकार ने क़ैद कर लिया।

आज़ाद—मुझको ?

अफ़सर—जी हाँ।

आज़ाद—आप ग़लती कर रहे हैं।

अफ़सर—नहीं, मुझे आप ही का पता दिया गया है।

आज़ाद—आख़िर मेरा क़सूर ?

अफ़सर—मुझे बताने का हुक्म नहीं।

तीन दिन तक आज़ाद क़ैदख़ाने में रहे, चौथे दिन हमीदपाशा के सामने लाए गए।

हमीद—मुझे मालूम हुआ है कि तुम रूसी जासूस हो।

आज़ाद—बिलकुल ग़लत। मैं कशमीर का रहनेवाला हूँ। आप बतला सकते हैं कि किसने मुझ पर इलज़ाम लगाया ?

हमीद—एक शरीफ़ लेडी ने, जिसका नाम मीडा है।

आज़ाद मीडा का नाम सुनते ही सन्नाटे में आ गए। दिल के टुकड़े-टुकड़े हो गए। मुँह से एक बात भी न निकली। जब आज़ाद फिर क़ैदख़ाने में आए, तो मुँह से बेअख़्तियार निकल गया—मीडा! मीडा!! तूने मुझ पर बड़ा ज़ुल्म किया!!!

आज़ाद को इसका इतना रंज हुआ कि उसी दिन से बुख़ार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आने लगा। दो-तीन दिन में उनकी हालत इतनी ख़राब हो गई कि जेल के दारोग़ा ने उन्हें सुबह-शाम सैर करने का हुक्म दे दिया। एक दिन वह शाम को बाहर सैर कर रहे थे कि एक खूबसूरत नौजवान घोड़ा दौड़ाता हुआ उनके क़रीब आकर खड़ा हो गया।

जवान—माफ़ कीजिएगा, आपकी सूरत मेरे एक दोस्त से बहुत मिलती है। मैंने समझा, शायद वही हों। आप कुछ बीमार मालूम पड़ते हैं।

आज़ाद—जी हाँ, कुछ बीमार हूँ। मुझे ख़याल आता है कि मैंने कहीं आपको देखा है।

जवान—शायद देखा हो।

यह कहकर वह मुसकिराया। आज़ाद ने फ़ौरन् पहचान लिया। यह मुसकिराहट मीडा की थी। आज़ाद ने कहा—मीडा, तुमने मुझ पर बड़ा ज़ुल्म किया। मुझे तुमसे ऐसी उम्मेद न थी।

मीडा—मैं अपने किए पर ख़ुद शरमिंदा हूँ। मुझे माफ़ करो।

अट्ठावनवाँ परिच्छेद

मियाँ ख़ोजी पंद्रह रोज़ में ख़ासे टाँठे हो गए, तो काँसल से जाकर कहा—मुझे आज़ाद के पास भेज दिया जाय। काँसल ने उनकी दरख़्वास्त मंजूर कर ली। दूसरे दिन ख़ोजी जहाज़ पर बैठकर कुस्तुंतुनियाँ चले। उधर मियाँ आज़ाद अभी तक क़ैदख़ाने ही में थे। हमीदपाशा ने उनके बारे में खूब तहक़ीक़ात की थी, और गो उन्हें इतमीनान हो गया था कि आज़ाद रूसी जासूस नहीं हैं, फिर भी अब तक आज़ाद रिहा न हुए थे।

एक दिन मियाँ आज़ाद क़ैदख़ाने में बैठे हुए थे कि एक फ़्रांसीसी क़ैदी आया। उस पर भी जासूसी का इलज़ाम था। आज़ाद ने पूछा—आपने अपनी सफ़ाई नहीं पेश की?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ्रांसीसी—अंधेर है, अंधेर ! मैं तो इन तुर्कों का जानी दुश्मन हूँ ।

आज़ाद—मुझे यह सुनकर अफ़सोस हुआ । मैं तो तुर्कों का आशिक़ हूँ । ऐसी दिलेर क़ौम दुनिया में नहीं है ।

फ्रांसीसी—अभी आप इन लोगों को अच्छी तरह नहीं जानते । आप ही को बेवजह क़ैद कर लिया ।

आज़ाद—लड़ाई के दिनों में सभी जगह ऐसी ग़लतियाँ हो जाती हैं ।

फ्रांसीसी—आप रूसी ज़बान नहीं जानते ?

आज़ाद—बिलकुल नहीं ।

फ्रांसीसी—रूस की सरकार ने बहुत मजबूर होकर लड़ाई की है ।

आज़ाद—मैं तो समझता हूँ, रूसवालों की ज़्यादती है, सारा योरप टर्की का दुश्मन है ।

इस तरह को बातें करके फ्रांसीसी चला गया, और दूसरे ही दिन मियाँ आज़ाद आज़ाद कर दिए गए । यह क़ैदी फ्रांसीसी न था, हमीदपाशा ने एक तुर्की अफ़सर को आज़ाद के दिल का भेद लेने के लिये भेजा था ।

शाम का वक़्त था, आज़ाद बैठे हुए मीडा से बातें कर रहे थे कि एक आदमी ने आकर कहा—हुज़ूर, एक नाटा-सा आदमी बाहर खड़ा है, और कहता है कि हमें कोठी के अंदर जाने दो । आज़ाद ने कहा—आने दो । एक मिनट में मियाँ ख़ोजी आकर खड़े हो गए । आज़ाद ने दौड़कर उन्हें गले लगा लिया, और ख़ैर-आफ़ियत पूछने के बाद अपनी राम-कहानी सुनाई । मियाँ ख़ोजी ने जब आज़ाद के क़ैद होने का हाल सुना, तो बिगड़कर बोले—ख़ुदा ने चाहा, तो हम तुम्हारा बदला लेंगे । खड़े-खड़े बदला न ले लें, तो नाम नहीं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—ख़ैर, अब इसका अफ़सोस न कीजिए। मिस मीडा अभी आती होंगी, ज़रा उनके सामने बेहूदगी न कीजिएगा।

ख़ोजी—भई, अभी उन्हें मत आने दो। ज़रा हम बन-ठन लें। अफ़सोस यही है कि हमारे पास क़रौली नहीं। बेक़रौली के हमसे कुछ न हो सकेगा।

आज़ाद—क्या उनसे लड़िएगा ?

ख़ोजी—नहीं साहब, लड़ना कैसा ! बेक़रौली के जोबन नहीं आता। आप ये बातें क्या जानें।

इतने में मिस मीडा दूसरे कमरे से निकल आईं। ख़ोजी ने अपना ठाट बनाने के लिये मेज़ पर का कपड़ा ओढ़ लिया, तौलिया सिर में बाँधा, और एक छुरी हाथ में लेकर मीडा की तरफ़ घूरने लगे। मीडा ने जो उनकी सूरत देखी, तो मुसकिरा दी। ख़ोजी खिल गए। आज़ाद से बोले—क्यों आज़ाद, सच कहना, मुझे देखते ही कैसा खिल गईं ! मीडा ने आज़ाद से पूछा—यह कौन आदमी है ?

आज़ाद—एक पागल है। इसको यह ख़ब्त है कि जो औरत इसे देखती है, रीझ जाती है। तुम ज़रा इसको बनाओ।

मीडा ने ख़ोजी को इशारे से अपने क़रीब बुलाया। आप जाकर एक कुर्सी पर डट गए।

मीडा—(हाथ में हाथ देकर) आपका नाम क्या है ?

ख़ोजी—(आज़ाद से) मुझे समझाते जाओ जी !

आज़ाद ने दुभाखिए का काम करना शुरू किया। मीडा जो कहती थी, उनको समझाते थे, और वह जो कुछ कहते थे, इसे समझाते थे।

मीडा—कल आपकी दावत है। आप शराब पीते हैं ?

ख़ोजी—हाँ—नहीं। मगर अच्छा; नहीं-नहीं। कह दो अफ़ीम पीता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीडा—यह आपका गुलाब-सा चेहरा कुम्हला जायगा।

ख़ोजी ने अकड़कर आज़ाद की तरफ़ देखा।

मीडा—आप कुछ गाना भी जानते हैं?

ख़ोजी—हाँ, और नाचना भी जानता हूँ।

मीडा—ओहोहो, तो फिर नाचो।

ख़ोजी ने नाचना शुरू किया। जब मीडा हँसने लगी, तो आप और भी फूल गए। थोड़ी देर में मीडा होटल से चली गई। तब आज़ाद ने कहा—भई ख़ोजी, यह बात अच्छी नहीं। मैं तुमको ऐसा नहीं जानता था।

ख़ोजी—तो मैं क्या करूँ? जब वह ख़ुद ही मेरे पीछे पड़ी हुई हैं, तो रुखाई करना भी तो अच्छा नहीं मालूम होता।

थोड़ी देर में मीडा का ख़त आया। आज़ाद ने कहा—जनाब ख़्वाजा साहब, हमको तो ज़रा ख़त दिखाना।

ख़ोजी—बस, बस, चलिए, अलग हटिए।

आज़ाद—लाओ हम पढ़ दें। तुमसे भला क्या पढ़ा जायगा!

ख़ोजी—अजब आदमी हैं आप! आप कहाँ के ऐसे बड़े आलिम हैं!

ख़ोजी ने ख़त को तीन बार चूमा, और आज़ाद को अलग बुलाकर पढ़ने को दिया। लिखा था—

"मेरे प्यारे जवान, तुम्हारी एक-एक अदा ने मेरे दिल में जगह कर ली है। तुम्हारी सारस की-सी गर्दन और बंदर की-सी हरकतें जब याद आती हैं, तो मैं उछल-उछल पड़ती हूँ। अब यह बताओ कि आज किस वक़्त आओगे? यह ख़त अपने दोस्त आज़ाद को न दिखाना, और वादे पर ज़रूर आना।"

ख़ोजी—यार, तुम्हें तो सब हाल मालूम हो गया, मगर उससे कह न देना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज़ाद—मैं तो जाकर शिकायत करूँगा कि हमसे छिपाया क्यों ? अभी-अभी ख़त भेजता हूँ।

ख़ोजी—ख़ैर, जाइए, कह दीजिए। वह हम पर आशिक़ हैं। तुम-ऐसे हज़ार लगी-लिपटी बातें करें, होता क्या है। आपकी हक़ीक़त ही क्या है !

आज़ाद—यार, अब तुम्हारे साथ न रहेंगे।

ख़ोजी—आख़िर, सबब बताइए।

आज़ाद—ग़ज़ब ख़ुदा का ! मीडा-सी माहरू और हमारे सामने तुम्हें यह ख़त लिखे।

ख़ोजी खिलखिलाकर हँस पड़े। बोले—यह बात है! हम जवान ही ऐसे हैं, इसको कोई क्या करे। लेकिन अगर तुम ख़िलाफ़ हो गए, तो वल्लाह, मैं मीडा से बात तक न करूँगा। तुम मुझे जान से भी ज़्यादा प्यारे हो। क़सम ख़ुदा की, अब दुनिया में तुम्हारे सिवा मेरा और कोई नहीं। बस, फ़क़त तुम ! और हम तो अब बूढ़े हुए। यह भी मिस मीडा की मेहरबानी है। अजी, मिसर में तो तुम न थे। वहाँ पर भी एक औरत मुझ पर आशिक़ हो गई थी। मगर ख़राबी यह थी कि न हम उसकी बात समझें, न वह हमारी ! हाँ, इशारों में ख़ूब बातें हुईं। अच्छा, फिर एक हज्जाम तो बुलवाओ। आज जाना है न !

आज़ाद ने एक हज्जाम बुलवाया। हजामत बनने लगी।

ख़ोजी—घोटो, घोटो। घोटे जा। अभी खूँटी बाक़ी है। ख़ूब घोटो।

हज्जाम ने फिर छुरा फेरा। ख़ोजी ने फिर टटोलकर कहा—अभी खूँटी बाक़ी हैं, घोटो।

हज्जाम—तो हुज़ूर, कब तक घोटा करूँ !

ख़ोजी—दूने पैसे देंगे हम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हज्जाम—माना, मगर कोई हद भी है ?

ख़ोजी—तुमको इससे क्या मतलब !

हज्जाम—ख़ून निकलने लगेगा।

आज़ाद—और अच्छा है ; लोग कहेंगे, नौशा के चेहरे से ख़ून बरसता है।

ख़ोजी—हाँ, ख़ूब सोचे।

हज्जाम—(किसबत सँभालकर) अब किसी और नाई से घुटवाइए।

आज़ाद—अच्छा, पट्टे तो कतरते जाओ।

हज्जाम ने झल्लाकर आधे बाल कतर डाले। एक तरफ़ की आधी मूछ उड़ा दी। ख़ोजी एक तो यों ही बड़े हसीन थे, अब हज्जाम ने बाल कतरकर और भी ठीक बना दिया। ख़ोजी ने जो आईने में अपनी सूरत देखी, तो मूछें नदारद। झल्लाकर कहा—ओ गीदी, यह क्या किया ? हज्जाम डरा कि कहीं यह साहब मार न बैठें।

आज़ाद—क्यों, क्यों, ख़फ़ा हो गए भई !

ख़ोजी—इसने पट्टे ऊल-जलूल कतरे, और आप बोले तक नहीं ?

आज़ाद—मैं सच कहता हूँ, आप इतने हसीन कभी न थे।

ख़ोजी—और चेहरे की तो फ़िक्र करो !

आज़ाद—हाँ, हाँ, घबराते क्यों हो ?

ख़ोजी—हमको याद आता है कि नौशा के सामने छोटे-छोटे लड़के ग़ज़लें पढ़ते हैं। दो-एक लौंडे बुलवा लीजिए, तो उनको ग़ज़लें रटा दें।

आज़ाद ने दो लड़के बुलवाए, और मियाँ ख़ोजी उनको ग़ज़लें याद कराने लगे। एक ग़ज़ल मियाँ आज़ाद ने यह बतलाई—

भला यह तो बताओ कि यह कौन बशर है;
सब सूरते-लँगूर, फ़क़त दुम की कसर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—चलिए बस, अब दिल्लगी रहने दीजिए। वाह, अच्छे मिले!

आज़ाद—अच्छा, और ग़ज़ल लिखवाए देता हूँ—

फ़ुग़ाँ है, आह है, नाला है, बेक़रारी है;
फ़िराक़े-यार में हालत अजब हमारी है।

ख़ोजी—वाह, शादी को इस शेर से क्या वास्ता!

आज़ाद—अच्छा साहब, यह ग़ज़ल याद करवा दीजिए—

कहा था बुलबुल से हाल मैंने तेरे सितम का बहुत छिपाकर;
यह किसने उनको ख़बर सुनाई कि हँस पड़े फूल खिलखिलाकर।
मेरे जनाज़े को उनके कूचे में नाहक़ अहबाब लेके आए;
निगाहे-हसरत से देखते हैं वह रुख़ से परदा उठा-उठाकर।

ख़ोजी—वाह, जनाज़े को शादी से क्या मतलब है भला!

आज़ाद—ऊपरवाला शेर पसंद है?

ख़ोजी—हाँ, हँसना और खिलखिलाना, ऐसे लफ़्ज़ हों, तो क्या पूछना।

आज़ाद—अच्छा, और सुनिए।

ख़ोजी—नहीं, इतना ही काफ़ी है। ज़रा बाजेवालों की तो फ़िक्र कीजिए। हाथी, घोड़े, पालकी, सभी चाहिए। मगर हमारे लिये जो घोड़ा मँगवाइगा, वह ज़रा सीधा हो।

आज़ाद—भला, घोड़ा न मिले, तो ख़च्चर हो तो कैसा?

ख़ोजी—वाह, आपने मुझे कोई गधा समझा है?

इतने में होटल का मैनेजर आ गया, और यह तैयारियाँ देखकर हँसने लगा।

ख़ोजी—क्यों साहब, यह आप हँसे क्यों?

मैनेजर—जनाब, यहाँ शरीफ़ लोग शादियों में बाजे-गाजे नहीं ले जाते, और पैदल ही जाते हैं। हाँ, एक बात हो सकती है, दस-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाँच आदमियों को थालियाँ दे दीजिए, बाँस की खपाचों से उन्हें बजाते जायँ। आवाज़-की-आवाज़ और बाजे-का-बाजा।

ख़ोजी—भई आज़ाद, सोच लो।

आज़ाद—वह जब यहाँ दस्तूर ही नहीं, तो फिर क्या किया जायगा? हाँ, नौशे का पैदल जाना ज़रा बदनामी की बात है।

मैनेजर—तो पैदल न जाइए। जिस तरह यहाँ के रईस लोग जाते हैं, उस तरह जाइए—आदमी की गोद में।

ख़ोजी—मंज़ूर। मगर हमको उठा सकेगा कोई?

मैनेजर—हम इसका बंदोबस्त कर देंगे। आप घबरायँ नहीं।

दो घड़ी दिन रहे ख़ोजी की बरात चली। तीन मज़दूर आगे-आगे थालियाँ बजाते जाते हैं, दो लौंडे आगे-पीछे साथ। ख़ोजी एक मज़दूर की गोद में, गेरुए कपड़े पहने, अकड़े बैठे हैं। एकाएक आप बोले—अरे रे रे! रोक लो बरात। रोक लो। पंशाखेवाले कहाँ हैं? कोई बोलता ही नहीं। परदेस में भी इंसान पर क्या मुसीबत पड़ती है? अब मैं दूल्हा बनकर रहूँ, या इंतज़ाम करूँ। ये दोनों गीदी तो निरे जाँगलू ही निकले। फिर याद आया कि निशान का हाथी तो है ही नहीं। अरे! क़रौली भी नहीं। हुक्म दिया कि लौटा दो बरात। चलो होटल में।

आज़ाद—यह क्यों भई? क्या बात है? लौटे क्यों जाते हो?

ख़ोजी—निशान का हाथी तो है ही नहीं।

आज़ाद—अजब आदमी हो भई, आप लड़ने जाते हैं, या शादी करने? और फिर यहाँ हाथी कहाँ? कहिए, तो ख़च्चर पर एक झंडी रखवा दें।

इतने में मिस मीडा आती हुई दिखाई दीं। ख़ोजी उन्हें देखते ही और भी अकड़ गए। बोले—क्या कहूँ, मेरे साथ के आदमी सब गोली मार देने लायक़ हैं। कोई इंतज़ाम ही न किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीडा—ख़ैर, कल आ जाइएगा। मगर आपसे एक बात कहनी है, यहाँ एक रूसी बहुत दिनों से मेरा आशिक़ है। पहले उससे लड़ें, फिर हमारे साथ शादी हो।

ख़ोजी—मजाल है उसकी कि मेरे सामने खड़ा हो जाय? हम पचास आदमियों से अकेले लड़ सकते हैं।

जब बरात होटल पहुँची, तो मीडा ने कहा—तो उनसे क्या लड़िएगा?

ख़ोजी—जब कहिए। खून पी जाऊँगा।

मीडा—अच्छा, कल तैयार रहिएगा।

दूसरे दिन मीडा ने एक तुर्की पहलवान को लाकर होटल में बिठा दिया, और ख़ोजी से बोली—लीजिए, आपका दुश्मन आ गया। ख़ोजी ने जब उसे देखा, तो होश उड़ गए। दुनिया-भर के आदमियों से दो मुट्ठी ऊँचा। दिल में सोचने लगे, यह तो कच्चा ही खा जायगा। एक चपत दे, तो हम ज़मीन में धँस जायँ। इससे लड़ेगा कौन भला! मारे डर के ज़रा पीछे हट गए। मीडा ने कहा—आप तो अभी से डरने लगे। ख़ोजी एकाएक धड़ाम-से गिर पड़े, और चिल्लाने लगे—इस तरह का दर्द हो रहा है कि कुछ न पूछो। अफ़सोस, दिल की दिल ही में रह गई! वल्लाह, वह पटकनी देता कि कमर टूट जाती। मगर ख़ुदा को मंज़ूर न था। तुर्की पहलवान ने इनका हाथ पकड़कर एक झटका दिया, तो दस क़दम पर जा गिरे। बोले—ओ गीदी, ज़रा बीमार हो गया हूँ, नहीं तो कच्चा ही खा जाता, नमक भी न माँगता।

आख़िर इस बात पर फ़ैसला हुआ कि जब ख़ोजी अच्छे हो जायँ, तो फिर किसी दिन कुश्ती हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उंसठवाँ परिच्छेद

मियाँ शहसवार का दिल दुनिया से तो फिर गया था, मगर जोगिन की उठती जवानी देखकर धुन समाई कि इसको निकाह में लावें। उधर जोगिन ने ठान ली थी कि उम्र-भर शादी न करूँगी। जिसके लिये जोगिन हुई, उसी की मुहब्बत का दम भरूँगी। एक दिन शहसवार ने जो सुना कि सिपहआरा कोठे पर से कूद पड़ी, तो दिल बेअख़्तियार हो गया। चल खड़े हुए कि देखें, माजरा क्या है? रास्ते में एक मुंशी से मुलाक़ात हो गई। दोनों आदमी साथ-साथ बैठे, और साथ-ही-साथ उतरे। इत्तफ़ाक़ से रेल से उतरते ही मुंशीजी को हैज़ा हो गया। देखते-ही-देखते चल बसे। शहसवार ने जो देखा कि मुंशी के पास दौलत काफ़ी है, तो फ़ौरन् उनके बेटे बन गए, और सारा माल-असबाब लेकर चंपत हो गए। सात हज़ार की अशर्फ़ियाँ, दस हज़ार के नोट और कई सौ रुपए हाथ आए। रईस बन बैठे। फ़ौरन् जोगिन के पास लौट गए।

जोगिन—क्या गए नहीं?

शहसवार—आधी ही राह से लौट आए। मगर हम अमीर होकर आए हैं।

जोगिन—अमीर कैसे! बोलो? हमको बनाते हो?

शहसवार—क़सम खुदा की, हज़ारों लेकर आया हूँ। आँखें खुल जायँगी।

दुनिया के भी अजब कारख़ाने हैं। शहसवार को बाईस हज़ार तो नक़द मिले, और जब कपड़ों की गठरी खोली, तो एक टोपी निकल आई, जिसमें हीरे और मोती टँके हुए थे। जोगिन के आशिक़ों में एक जौहरी भी था। उसने यह टोपी बीस हज़ार में ख़रीद ली। जब जौहरी चला गया, तो शहसवार ने जोगिन से कहा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लो, अब तो अल्लाह मियाँ ने छप्पर फाड़के दौलत दी। कहो, अब निकाह की ठहरती है ? क्यों मुफ़्त में जवानी खोती हो !

जोगिन—अब रँग जाइ गिलहरी । ओछे के घर तीतर, बाहर रक्खूँ कि भीतर । रुपए क्या मिल गए, अपनेआप को भूल गए।

शहसवार सचमुच ओछा था। अब तक तो आप जोगिन की खुशामद करते थे, ढई दिए बैठे थे कि कभी-न-कभी तो दिल पसीजेगा; मगर अब ज़मीन पर पाँव ही नहीं रखते। बात-बात पर तिनकते हैं। जोगिन तो दुनिया से मुँह मोड़े बैठी थी, इनके चोंचले क्यों बर्दाश्त करती ? शहसवार से नफ़रत करने लगी।

एक दिन शहसवार हवा के घोड़े पर सवार डींग मारने लगे—इस वक़्त हम भी लाख के पेटे में हैं। और लाख रुपए जिसके पास होते हैं, उसको लोग तीन-चार लाख का आदमी आँकते हैं। अब दो घोड़े और लेंगे। मगर हम यह महाजनी कारख़ाना न रक्खेंगे कि चारजामा और ज़ीनपोश। बस, अँगरेज़ी काठी। और एक जोड़ी फ़िटन के लिये। जो देखे, कहे, रईस जाता है। और रईस के क्या दो सींग होते हैं सिर पर ? एक कोठी भी बनवावेंगे। कोई ताल्लुक़ेदार अपना इलाक़ा बेचे, तो खड़े-खड़े ख़रीद लें।

जोगिन—अच्छा, खाना तो खा लो !

शहसवार—आज खाना क्या पका है ?

जोगिन—बेसन की रोटी।

शहसवार—यह तो रईसों का खाना नहीं।

जोगिन—रईस कौन है ?

शहसवार—हम-तुम, दोनों। क्या अब भी रईस होने में शक है ? हाँ, खूब याद आया, एक हाथी भी ख़रीदेंगे।

जोगिन—हाँ, बस इसी की कसर थी। दो-तीन गधे भी ख़रीदना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहसवार—गधे तो रईसों के यहाँ नहीं देखे।

जोगिन—नई बात सही।

शहसवार—हाँ, ख़ूब सूझी।

जोगिन—फिर, यह सब कब ख़रीदोगे ?

शहसवार—जब चाहें। रुपए का तो सारा खेल है। तीस-चालीस हज़ार रुपए बहुत होते हैं। इंसान गिने, तो बरसों में गिनती ख़तम हो।

जोगिन—अजी, दो-तीन आदमी तो इतने अर्से में मर जायँ, दस-पाँच की आँखें फूट जायँ।

उस दिन से शहसवार की हालत ही कुछ और हो गई। कभी रोते, कभी बहकी-बहकी बातें करते। आख़िर जोगिन ने वहाँ से कहीं भाग जाने का इरादा किया। पड़ोस में एक आदमी रहता था, जो मोम के खिलौने ख़ूब बनाता था। मोम के आदमी ऐसे बनाता कि असल का धोखा होता था। उसे बुलाकर जोगिन ने उसके कान में कुछ कहा, और कारीगर दस दिन की मुहलत लेकर रुख़सत हुआ।

नौ दिन तक तो जोगिन ने किसी तरह काटे, दसवें दिन एकाएक शहसवार ने उसे देखा, तो चुपचाप पड़ी है। बुलाया; जवाब नदारत। क़रीब जाकर देखा, तो पछाड़ खाकर गिर पड़े। लगे दीवार से सिर टकराने। जी में आया कि ज़हर खा लें, और इसी के साथ चले चलें। क्या लुत्फ़ से दिन कटते थे, अब ये रुपए किस काम आवेंगे ? जान जाने का रंज नहीं, मगर यह रुपया कहाँ जायगा ? आख़िर वसीयत लिखी कि मेरे बाद मेरी सारी जायदाद सिपहआरा को दी जाय। यह वसीयत लिखकर शहसवार ने सिर पीटना शुरू किया। खिलौना बनानेवाला कारीगर उसे समझाने लगा—सब्र कीजिए। हाय, क्या मिज़ाज था ! यह कहकर वह अपने भाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को बुला लाया। दोनों ने लाश को खूब लपेटकर कंधे पर उठाया। मियाँ शहसवार पीछे-पीछे चले।

कारीगर—तुम क्यों आते हो? क़ब्रस्तान बहुत दूर है।

शहसवार—क़ब्र तक तो चलने दो।

कारीगर—क्या ग़ज़ब करते हो। थानेवालों को ख़बर हो गई तो मुफ़्त में धरे जाओगे।

शहसवार—मिट्टी तो दे दूँ।

कारीगर—बस, अब साथ न आइए।

साठवाँ परिच्छेद

क़ैदख़ाने से छूटने के बाद मियाँ आज़ाद को रिसाले में एक ओहदा मिल गया। मगर अब मुशकिल यह पड़ी कि आज़ाद के पास रुपए न थे। दस हज़ार रुपए के बग़ैर तैयारी मुशकिल। अजनबी आदमी, पराया मुल्क, इतने रुपए का इंतज़ाम करना आसान न था। इस फ़िक्र में मियाँ आज़ाद कई दिन तक ग़ोते खाते रहे। आख़िर यही सोचा कि यहाँ कोई नौकरी कर लें, और रुपए जमा हो जाने के बाद फ़ौज में जायँ। मनमारे बैठे हुए थे कि मीडा आकर एक कुर्सी पर बैठ गई। जिस तपाक के साथ आज़ाद रोज़ पेश आया करते थे, उसका आज पता न था। चकरा-कर बोली—उदास क्यों हो? मैं तो तुम्हें मुबारकबाद देने आई थी। यह उलटी बात कैसी?

आज़ाद—कुछ नहीं। उदास तो नहीं हूँ।

मीडा—ज़रा आईने में सूरत तो देखिए।

आज़ाद—हाँ मीडा, शायद कुछ उदास हूँ। मैंने तुमसे अपने दिल की कोई बात कभी नहीं छिपाई। मुझे ओहदा तो मिल गया, मगर यहाँ टका पास नहीं। कुछ समझ में नहीं आता, क्या करूँ!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीडा—बस, इसीलिये आप इतने उदास हैं ! यह तो कोई बड़ी बात नहीं । तुम इसकी कोई फ़िक्र न करो ।

यह कहकर मीडा चली गई, और थोड़ी देर बाद उसके आदमी ने आकर एक लिफ़ाफ़ा आज़ाद के हाथ में रख दिया । आज़ाद ने लिफ़ाफ़ा खोला, तो उछल पड़े । इस्तंबोल-बैंक के नाम बीस हज़ार का चेक था । आज़ाद रुपए पाकर ख़ुश तो हुए, मगर यह अफ़सोस ज़रूर हुआ कि मीडा ने अपने दिल में न-जाने क्या समझा हो । उसी वक़्त बैंक गए, रुपए लिए, और सब सामान ठीक करके दूसरे दिन फ़ौज में दाख़िल हो गए ।

दोपहर के वक़्त घड़घड़ाहट की आवाज़ आई । ख़ोजी ने सुना, तो बोले—यह आवाज़ कैसी है भई ? हम समझ गए । भूचाल आने-वाला है । इतने में किसी ने कहा—फ़ौज जा रही है । ख़ोजी कोठे पर चढ़ गए । देखा, फ़ौज सामने आ रही है । यह घड़घड़ाहट तोप-ख़ाने की थी । ज़रा देर में आज़ाद पर नज़र पड़ी । घोड़े की बाग उठाए, रान जमाए चले जाते थे । ख़ोजी ने पुकारा—मियाँ आज़ाद ! अरे मियाँ इधर, इधर ! वाह, सुनते ही नहीं । फ़ौज में क्या हो गए, मिज़ाज ही नहीं मिलते । हम भी पलटन में रह चुके हैं, रिसालदार थे, पर यह न था कि किसी की बात न सुनें ।

सारे शहर में एक मेला-सा लगा हुआ था, कोठे फटे पड़ते थे। औरतें अपने शौहरों को लड़ाई पर जाते देखती थीं और उन पर फूलों की बौछार करती थीं । माएँ अपने बेटों के लिये ख़ुदा से दुआ कर रही थीं ।

फ़ौज तो मैदान को गई, और मियाँ ख़ोजी मिस मीडा से मिलने चले । मीडा की एक सहेली का नाम था मिस रोज़ । मीडा ख़ोजी को देखते ही बोली—लीजिए, मैंने आपकी शादी मिस रोज़ से ठीक कर दी । अब कल बरात लेकर आइए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—ख़ुदा आपको इस नेकी का बदला दे। मैं तो वज़ीर-जंग को भी नवेद दूँगा।

मीडा—अजी, सुलतान को भी बुलाइए।

ख़ोजी—तो फिर बंदोबस्त कीजिए। शादी के लिये नाच सबसे ज़्यादा ज़रूरी है। अगर तबले पर थाप न पड़ी, महफ़िल न जमी, तो शादी ही क्या?

मीडा—मगर यहाँ तो आदमी का नाच मना है। कहीं कोई औरत नाचे, तो ग़ज़ब ही हो जाय।

ख़ोजी—अच्छा, फिर किसी सबील से नाच का नाम तो हो जाय।

मीडा—इसकी तदबीर यों कीजिए कि किसी बंदर नचानेवाले को बुला लीजिए। ख़र्च भी कम, और लुत्फ़ भी ज़्यादा। तीन बंदरवाले काफ़ी होंगे।

ख़ोजी—तीन तो मनहूस हैं। पाँच हो जायँ, तो अच्छा!

ख़ैर, दूसरे दिन ख़ोजी बरात सजाकर मीडा के मकान की ओर चले। आगे निशान का ख़च्चर था, पीछे रीछ और बंदर। दस-पाँच लड़के मशालें लिए ख़ोजी के चारों तरफ़ चले जाते थे; और ख़ोजी, टट्टू पर सवार, गेरुए रंग की पोशाक पहने, सियाह पगड़ी बाँधे, अकड़े बैठे थे। टट्टू इतना मरियल था कि ख़ोजी बार-बार उछलते थे, एँड़-पर-एँड़ लगाते थे, मगर वह दो क़दम आगे जाता था तो चार क़दम पीछे। एकाएक टट्टू बैठ गया। इस पर लड़कों ने उसे डंडे मारना शुरू किया। ख़ोजी जा[illegible] बिगड़कर बोले—ओ मसख़रो, तुम सब हँसते क्या हो! कोई तदबीर बताओ, वर्ना मारे क़रौलियों के बौला दूँगा।

साईस—हुज़ूर, मैं इस घोड़े की आदत ख़ूब जानता हूँ। यह बग़ैर चाबुक खाए उठनेवाला नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridw

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—तू मसलहत करता है कि किसी तदबीर से टट्टू को मनाता है ?

साईस—आप उतर पड़िए।

ख़ोजी उतर पड़े, और साईस ने टट्टू को मार-मारकर उठाया। ख़ोजी फिर सवार होने चले। एक पैर रकाब पर रखकर दूसरा उठाया ही था कि टट्टू चलने लगा। ख़ोजी अरा रा-रा करके धम-से ज़मीन पर आ रहे। पगड़ी यह गिरी, क़रौली वह गिरी। डिबिया एक तरफ़, टट्टू एक तरफ़। साईस ने कहा—उठिए, उठिए। घोड़े से गिरना शहसवारों ही का काम है। जिसे घोड़ा नसीब नहीं, वह क्या गिरेगा ?

ख़ोजी—ख़ैरियत यह हुई कि मैं घोड़े पर न गिरा, वर्ना मेरे बोझ से उसका काम ही तमाम हो जाता।

ख़ोजी ने फिर सिर पर पगड़ी रक्खी, क़रौली कमर से लगाई, और एक लड़के से पूछा—यहाँ आईना तो कहीं नहीं मिलेगा? फिर से पोशाक सजी है, ज़रा मुँह तो देख लेते।

लड़का—आईना तो नहीं है, कहिए, पानी ले आऊँ। उसी में मुँह देख लीजिए।

यह कहकर वह एक हाँडी में पानी लाया। ख़ोजी पीनक में तो थे ही, हाँडी जो उठाई, तो सारा पानी ऊपर आ रहा। बिगड़कर हाँडी पटक दी। फिर आगे बढ़े। मगर दो-चार क़दम चलकर याद आया कि मिस रोज़ का मकान तो मालूम ही नहीं; बरात जायगी कहाँ ? बोले—यारो, ग़ज़ब हो गया! जलूस रोक लो। कोई मकान जानता है ?

साईस—कौन मकान ?

ख़ोजी—वही जी, जहाँ चलना है।

साईस—मुझे क्या मालूम ? जिधर कहिए, चलूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—तुम लोग अजीब घामड़ हो। बरात चली और दुलहिन के घर का पता तक न पूछा।

साईस—नाम तो बताइए? किसी से पूछ लिया जाय।

ख़ोजी—अरे भई, मुझे उनका नाम न लेना चाहिए। अटकल से चलो उसी तरफ़।

साईस—अरे कुछ नाम तो बताइए।

ख़ोजी—कोहक़ाफ़ की परी कह दो। पूरा नाम हम न लेंगे। एक तरफ़ कई आदमी बैठे हुए थे। साईस ने पूछा—यहाँ कोई परी रहती है?

एक आदमी ने कहा—मुझे और तो नहीं मालूम, मगर शहर-बाहर पूरब की तरफ़ जो एक तालाब है, वहाँ पारसाल जो एक फ़क़ीर टिके थे, उनके पास एक परी थी।

ख़ोजी—लो, चल न गया पता! उसी तालाब की तरफ़ चले चलो।

अब सुनिए। उस तालाब पर एक रईस की कोठी थी। उसकी बीबी मर गई थी। घर में मातम हो रहा था। दरवाज़े पर जो यह शोर-गुल मचा, तो उसने अपने नौकरों से पूछा—यह कैसा गुल है? बाहर निकलकर ख़ूब पीटो बदमाशों को! दो-तीन आदमी डंडे ले-लेकर फाटक से निकले।

ख़ोजी—वाह रे आपके यहाँ का इंतज़ाम! कब से बरात खड़ी है, और दरवाज़े पर रोशनी तक नदारत!

एक आदमी—तू कौन है बे? क्या रात को बंदर नचाने आया है?

ख़ोजी—ज़बान सँभाल। जाकर अपने मालिक से कह, बरात आई है।

आदमियों ने बरात को पीटना शुरू किया। ख़ोजी पर एक चपत पड़ी, तो पगड़ी गिर पड़ी। दूसरे ने टट्टू पर डंडे जमाए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ोजी—भई, ऐसी दिल्लगी न करो। कुछ कंबख़्ती तो नहीं आई तुम सबकी ?

बंदरवालों पर जब मार पड़ी, तो वे सब भागे। लड़के भी चिराग़ फेंक-फाँककर भागे। टट्टू ने भी एक तरफ़ की राह ली। बेचारे ख़ोजी अकेले पिट-पिटाकर होटल की तरफ़ चले।

इकसठवाँ परिच्छेद

जोगिन शहसवार से जान बचाकर भागी, तो रास्ते में एक वकील साहब मिले। उसे अकेले देखा, तो छेड़ने की सूझी। बोले—हुज़ूर को आदाब। आप इस अँधेरी रात में अकेले कहाँ जाती हैं ?

जोगिन—हमें न छेड़िए।

वकील—शहज़ादी हो ? नवाबज़ादी हो ? आख़िर हो कौन ?

जोगिन—ग़रीबज़ादी हूँ।

वकील—लेकिन आवारा।

जोगिन—जैसा आप समझिए।

वकील—मुझे डर लगता है कि तुम्हें अकेला पाकर कोई दिक़ न करे। मेरा मकान क़रीब है, वहीं चलकर आराम से रहो।

जोगिन—मुझे आपके साथ जाने में कोई उज्र नहीं; मगर शर्त यही है कि मेरी इज़्ज़त के ख़िलाफ़ कोई बात न हो।

वकील—यह आप क्या फ़र्माती हैं ? मैं शरीफ़ आदमी हूँ।

वकील साहब देखने में तो शरीफ़ मालूम होते थे, मगर दिल के बड़े खोटे थे। जोगिन ने समझा कि इस वक़्त और कहीं जाना तो मुनासिब नहीं। रात को यहीं रह जाऊँ, तो क्या हरज ? वकील साहब के घर गई, तो देखा, एक कमरे में टाट पर दरी बिछी है, और एक टूटी मेज़ पर क़लम-दावात रक्खी है। समझ गई, यह कोई टुटपूँजिए वकील हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात ज़्यादा आ गई थी। जब जोगिन सोई, तो वकील साहब ने अपने नौकर सलारबख़्श को यों पट्टी पढ़ाई—तुम सुबह इनसे कहना कि वकील साहब बहुत बड़े रईस हैं। इनके बाप चकलेदार थे। इनके यहाँ दो बग्घियाँ हैं, और आदमियों की तनख़्वाह महीने में तीन सौ रुपए देते हैं।

सलारबख़्श—भला वह यह न कहेंगी कि रईस हैं, तो फटे हालों क्यों रहते हैं? एक तो खटिया आपके पास, और उस पर ये बातें कि हम ऐसे और हम वैसे। हाँ, मैं इतना कह दूँगा कि हमारे हुज़ूर, दिल के बड़े वह हैं।

वकील—वह क्या माने?

सलारबख़्श—अजी, चालाक हैं।

वकील—आज खाना तो दिल लगाकर पकाना।

सलारबख़्श—तो किसी बावरची को बुला लीजिए न! दो रुपए ख़रचिए, तो अच्छे-से-अच्छे खाने पकवा दूँ। और, इनके लिये कोई मामा रखिए। बे इसके बात न बनेगी। हाँ, चाहे मार डालिए हमें, हम झूठ न बोलेंगे कभी।

वकील—देखो, सब फ़िक्र हो जायगी।

सलारबख़्श—फ़िक्र क्या ख़ाक होगी! मुक़दमेवाले तो आते ही नहीं।

वकील—अजी, एक मुक़दमे में उम्र-भर की कसर निकल जायगी।

सलारबख़्श—तो क्या मिलेगा एक मुक़दमे में?

वकील—अजी, मिलने को न कहो। मिलें, तो दो लाख मिल जायँ।

सलारबख़्श—ऐं, इतना झूठ! मियाँ, मैं नौकरी नहीं करने का। देखिए, छत न गिर पड़े कहीं! लोग कहते हैं, काल पड़ता है, हैज़ा आता है, मेह नहीं बरसता। बरसे क्या ख़ाक, इस झूठ को तो देखिए, कुछ ठिकाना है, दो लाख एक मुक़दमे में आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पावेंगे ! कभी बाबा-राज भी दो लाख की सूरत देखी थी ? हमने तो आपके बाबा को भी जूतियाँ चटकाते ही देखा। वह तो कहिए, फ़क़ीर की दुआ से रोटियाँ चली जाती हैं। यही ग़नीमत समझो।

वकील—तुम बड़े गुस्ताख़ हो।

सलारबख़्श—मैं तो खरी-खरी कहता हूँ।

वकील—ख़ैर, कल एक काम तो करना। ज़रा दो-एक आदमियों को लगा लाना।

सलारबख़्श—क्या करना ?

वकील—दो चार आदमियों को मुवक्किल बनाकर ले आना, जिसमें यह समझें कि इनके पास मुक़दमे बहुत आते हैं। हम तो रंग जमाते हैं न अपना ! यह बात ! समझे !

सलारबख़्श—अगर दो-एक को फाँस-फूँसकर लाए भी, तो फ़ायदा क्या ? टका तो वसूल न होगा।

वकील—वह समझेंगी तो कि यह बहुत बड़े वकील हैं।

सलारबख़्श—अच्छा, इस वक़्त तो सोइए। सुबह देखी जायगी।

दोनों आदमी सोए। सबसे पहले जोगिन की आँख खुली। सलारबख़्श से बोली—क्यों जी, इनका नाम क्या है ?

सलारबख़्श—इनका नाम है हींगन।

जोगिन—क्या, हींगन ! तब तो शरीफ़ ज़रूर होंगे। और इनके बाप का नाम क्या है ? बैंगन।

सलारबख़्श—बाप का नाम मदारी।

जोगिन—वाह, बस, मालूम हो गया। और पेशा क्या है ?

सलारबख़्श—दलाली करते हैं।

जोगिन—ऐं, यह दल्लाल हैं ?

सलारबख़्श—जी, और क्या ! बाप-दादे के वक़्त से दलाली होती आती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वकील साहब लेटे-लेटे सुन रहे थे, और दिल-ही-दिल में सलारबख़्श को गालियाँ दे रहे थे कि पाजी ने जमा-जमाया रंग फीका कर दिया। इतने में बारह की तोप दगी, और वकील साहब उठ बैठे।

वकील—पानी लाओ। आज वह दूसरा ख़िदमतगार कहाँ है?

सलारबख़्श—हुज़ूर, चिट्ठी ले गया है।

वकील—और मामा नहीं आई?

सलारबख़्श—रात उसके लड़का हुआ है।

वकील—और कालेख़ाँ कहाँ मर गया आज!

सलारबख़्श—लालख़ाँ के पास गया है हुज़ूर!

वकील—और हमारा मुहर्रिर?

सलारबख़्श—उन्हें नवाब साहब ने बुलवा भेजा है।

वकील—सब मुवक्किल कहाँ हैं?

सलारबख़्श—हुज़ूर, सब वापस चले गए।

वकील—कुछ परवा नहीं। हमको मुक़दमों की क्या परवा!

सलारबख़्श—हुज़ूर के घर की रियासत क्या कम है!

वकील—(जोगिन से) आज तो आप ख़ूब सोईं।

जोगिन—मारे सर्दी के रात-भर काँपती रही। क़सम ले लो, जो आँख भी झपकी हो। यह तो बताइए, आपका नाम क्या है?

वकील—हमारा नाम मौलवी मिर्ज़ा मुहम्मद सादिक़अली बेग, वकील अदालत।

जोगिन—'घर की पुटकी बासी साग।'

वकील—ऐ, और सुनिए।

जोगिन—तुम्हारा नाम हींगन है? और बैंगन के लड़के हो? दलाली करते हो?

वकील—हींगन किस पाजी का नाम है!

सलारबख़्श—इनसे किसी ने हींगन कह दिया होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वकील—तेरे सिवा और कौन कहने बैठा होगा ?

सलारबख़्श—तो क्या मैं ही अकेला आपका नौकर हूँ कुछ ? पंद्रह-बीस आदमी हैं। किसी ने कह दिया होगा। इसको हम क्या करें ले भला ?

वकील—ऊपर से और हँसता है बेग़ैरत। (जोगिन से) हमसे एक फ़क़ीर ने कहा है कि तुम जल्द बादशाह होनेवाले हो।

जोगिन—हाँ, फिर उल्लू तुम्हारे सिर पर बैठा ही चाहता है। दो ही तरह से ग़रीब आदमी बादशाह हो सकता है—या तो टाँग टूट जाय, या उल्लू सिर पर बैठे। अच्छा, आपकी आमदनी क्या होगी ?

वकील—यह न पूछो। कुछ रुपया गाँव से आता है, कुछ वसीक़ा है, कुछ वकालत से पैदा करते हैं।

जोगिन—और सवारी क्या है आपके पास ?

वकील—आजकल तो बस, एक पालकी है और दो घोड़े।

जोगिन—बँधते कहाँ हैं ?

सलारबख़्श—इधर एक अस्तबल है, और उसके पास ही फ़ील-ख़ाना।

जोगिन—एँ, क्या आपके पास हाथी भी है ?

वकील—नहीं जी, कहने दो इसे। यह यों ही कहा करता है।

जोगिन—अच्छा, वकालत में क्या मिलता होगा ?

वकील—अब तो आजकल मुक़दमे ही कम हैं।

जोगिन—तो भी भला ?

सलारबख़्श—इसकी न पूछिए, किसी महीने में दो-चार हाथी आ गए, किसी महीने में दस-पाँच ऊँट मिल गए।

वकील—तू उठ जा यहाँ से ! हज़ार बार कह दिया कि मस-ख़रेपन से हमको नफ़रत है ; मगर मानता ही नहीं शैतान ! तुझसे कुछ कहा था हमने ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सलारबख़्श—हाँ, हाँ, याद आ गया। लीजिए, अभी जाता हूँ।

वकील साहब सलारबख़्श के साथ बरामदे में आए कि कुछ और समझा दें, तो सलारबख़्श ने कहा—अभी सबोंको फाँसे लाता हूँ। आप इतमीनान से बैठें। मगर यह भी बैठी रहें, जिसमें लोग समझें कि वकील की बड़ी आमदनी है। मैं कह दूँगा कि गाना सुनने के लिये नौकर रक्खा है। सौ रुपए महीना देते हैं।

वकील—सौ नहीं, दो सौ कहना।

सलारबख़्श—वही बात कहिएगा, जो बेतुकी हो। भला किसी को भी दुनिया में यक़ीन आवेगा कि यह वकील दो सौ रुपए ख़र्च कर सकता है?

वकील—क्यों, क्यों?

सलारबख़्श—अब आप तो हिंदी की चिंदी निकालते हैं। धेले-धेले पर तो आप मुक़दमे लेते हैं; दो सौ की रक़म भला आप क्या ख़र्च करेंगे?

वकील—अच्छा, बक न बहुत। जा, फाँस ला दो-चार को।

सलारबख़्श बाहर जाकर दो-चार अड़ोसियों-पड़ोसियों को सिखा-पढ़ाकर मूछों पर ताव देते हुए आए, और हुक़ा भरकर जोगिन के सामने पेश किया।

जोगिन—क्या कक्कड़वाले की दूकान से लाए हो? हटा ले जाओ इसे! तुम्हें मदरिया भी नहीं जुरता?

वकील—अरे, तू यह हुक़ा कहाँ से उठा लाया? वह हुक़ा कहाँ है, जो नसीरुद्दीन हैदर के पीने का था? वह गंगा-जमनी गुड़गुड़ी कहाँ है, जो हमारे साले ने भेजी थी?

सलारबख़्श—वह तो हुज़ूर के बहनोई ले गए।

वकील—तो आख़िर, पेचवान और चाँदी का हुक़ा क्यों नहीं निकालते? यह भद्देसल हुक़ा उठा लाए वहाँ से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सलारबख़्श—ख़ुदावंद, वह सब तो बंद है।

जोगिन—आख़िर यह सब सामान बंद कहाँ है ? ज़री-सा तो मकान आपका, मुर्ग़ी के टापे के बराबर। वह किन कोठों में बंद है सब-का-सब ?

इतने में एक मुक़दमेवाला आया। एक हाथ में झाड़ू, दूसरे में पंजा। आते ही झाड़ू कोने में खड़ी कर दी, और पंजा टेककर बैठ गया। वकील साहब सिर से पैर तक फुक गए। पूछा—तुम कौन? उसने कहा—हम भंगी हैं साहब ! जोगिन मुसकिराई। वकील ने सलारबख़्श की तरफ़ देखा। सलारबख़्श सिर खुजलाने लगा।

वकील—क्या चाहता है ?

भंगी—हजूर, मेरी टट्टी का एक बाँस कोई निकाल ले गया। हजूर को वकील करने आया हूँ। गुलाम हूँ खुदावंद।

वकील—कोई है, निकाल दो इस पाजी को।

सलारबख़्श—ख़ुदावंद, अमीरों का मुक़दमा तो आप लें, और ग़रीबों का कौन ले ? वकील तो दर्ज़ी की सुई है। कभी रेशम में, कभी लट्ठे में।

वकील—ग़रीबों का मुक़दमा ग़रीब वकील ले।

सलारबख़्श—अब तो हुजूर, इसकी फ़रियाद सुन ही लें। अच्छा मेहतर, बताओ, क्या दोगे ?

मेहतर—हमारे पास तो दो मदूसाहा हैं।

वकील—(झल्लाकर) निकालो, निकालो इस कंबख़्त को !

वकील साहब ने गुस्से में मेहतर की झाड़ू उठा ली, और उस पर ख़ूब हाथ साफ़ किया। वह झाड़ू-पंजा छोड़कर भागा।

जोगिन—अच्छा, आप अब अलग ही रहिएगा। जाकर ग़ुस्ल कीजिए।

वकील—आज तो बड़ी सर्दी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोगिन—अल्लाह जानता है गुस्ल करो, नहीं तो छुएँगे नहीं।

सलारबख़्श—हाँ, सच तो कहती हैं।

वकील—तू चुप रह।

जोगिन ने सलारबख़्श को हुक्म दिया कि तुम पानी भरो। सलारबख़्श पानी भर लाए। वकील साहब ने रोते-रोते कपड़े उतारे, लुंगी बाँधी, और बैठे। जैसे बदन पर पानी पड़ा, आप गुल मचाकर भागे। सलारबख़्श चमड़े का डोल लिए हुए पीछे दौड़ा। फिर पानी पड़ा, फिर रोए। जोगिन मारे हँसी के लोट-लोट गई। बारे किसी तरह आपका गुस्ल पूरा हुआ। थर-थर काँप रहे थे। मुँह से बात न निकलती थी। उस पर सलारबख़्श ने पंखा झलना शुरू किया, तब तो और भी झल्लाए, और कसकर उसे दो-तीन लातें लगाईं। सलारू भाग खड़े हुए।

जोगिन—अब यह चाँदनी तो उठवाओ।

वकील—क्यों, चाँदनी ने क्या क़सूर किया?

सलारबख़्श—हुज़ूर, भंगी तो इसी पर बैठा था!

वकील—अरे, तू फिर बोला! क़सम ख़ुदा की, मारते-मारते उधेड़कर रख दूँगा।

जोगिन—सलारबख़्श, यह चाँदनी उठा ले जाओ।

चाँदनी उठी, तो क़लई खुल गई। नीचे एक फटा-पुराना टाट पड़ा था, बाबा आदम के वक़्त का। वकील कट गए। जोगिन ने कहा—ले, अब इस पर कोई फ़र्श बिछवाओ।

वकील—वह बड़ी दरी लाओ, जो छकड़े पर लदकर आई थी।

सलारबख़्श—वह! उसको तो एक लौंडा चुरा ले गया।

जोगिन—ख़ुदा की पनाह, छकड़े पर लदकर तो मुई दरी आई, और ज़रा-सा लौंडा निगोड़ा चुरा ले गया!

वकील—अच्छा, वह न सही, जाओ, और जो कुछ मिले, उठा लाओ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कहकर वकील साहब तो बरामदे में चले गए और सलार-बख़्श जाकर अपना कंबल और एक दस्तरख़्वान उठा लाया। वकील कमरे में आए, तो देखा कि दस्तरख़्वान बिछा हुआ है, और जोगिन खिलखिलाकर हँस रही है। सलारबख़्श एक कोठरी में छिप रहा था। वकील ने झल्लाकर डंडा निकाला, और कोठरी में घुसकर उसे दो-तीन डंडे लगाए। फिर डाँटकर कहा—आख़िर जो तू मेरा नमक खाता है, तो मेरा रंग क्यों फीका करता है? मैं एक कहूँ, तो दो कहा कर। ख़ैरख़्वाही के माने यह हैं। सिखला दिया, समझा दिया; मगर तू हिंदी की चिंदी निकालता है।

सलारबख़्श—अच्छा, हुज़ूर जैसा कहते हैं, वही करूँगा। और भी जो कुछ समझाना हो, समझा दीजिए। फिर मैं नहीं जानता।

वकील—अच्छा, हम जाते हैं, तू आकर कहना कि क़सूर माफ़ कीजिए। और रोना ख़ूब।

वकील साहब यह हिदायत करके चले गए, और जोगिन से बातें करने लगे। इतने में सलारबख़्श रोता हुआ आया। जोगिन बक्-से रह गई। सलारू थोड़ी देर तक ख़ूब रोए, फिर वकील के क़दमों पर गिरकर कहा—हुज़ूर मेरा क़सूर माफ़ करें।

वकील—अबे, तो कोई इस तरह रोता है?

जोगिन—मैं तो समझी कि आपके अज़ीज़ों में से कोई चल बसा।

इतने में वकील साहब के नाम एक ख़त आया। जोगिन ने पूछा—किसका ख़त है?

वकील—साहब के पास से आया है।

जोगिन—कौन साहब? कोई अँगरेज़ हैं?

वकील—हाँ, ज़िले के हाकिम हैं। हमसे याराना है।

सलारबख़्श—आपसे न! और उनसे भी तो याराना है, जिन्होंने जुर्माना ठोंक दिया था?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वकील—साहब ने हमें बुलाया है।

जोगिन—तो शायद आज तुम्हारी दावत वहीं है? तभी आज खाना-वाना नहीं पक रहा है। दोपहर होने को आई, और अभी तक चूल्हा नहीं जला।

वकील—अरे सलारू, खाना क्यों नहीं पकाता?

सलारबख़्श—बाज़ार बंद है।

जोगिन—आग लगे तेरे इस मसख़रेपन को! यहाँ आँतें कूँ-काँ कर रही हैं, और तुझे दिल्लगी सूझती है!

वकील ने बाहर जाकर सलारू से कहा—बनिए से आटा क्यों नहीं लाता?

सलारबख़्श—हुज़ूर, कोई दे भी! कोई दस बरस से तो हिसाब नहीं हुआ। बाज़ार में निकलता हूँ, तो चारों तरफ़ से तक़ाज़े होने लगते हैं।

वकील—अबे, इस वक़्त तो किसी बहाने से माँग ला। आख़िर कभी-न-कभी मुक़दमे आवेंगे ही। हमेशा यों ही सन्नाटा थोड़े ही रहेगा।

ख़ैर, सलारबख़्श ने खाना पकाया, और कोई चार बजे आठ मोटी-मोटी रोटियाँ, एक प्याली में माश की दाल और दूसरी में आधपाव गोश्त रखकर लाया।

वकील—अबे, आज पुलाव नहीं पका?

सलारबख़्श—हुज़ूर, बिल्ली खा गई।

वकील—और गोश्त भी एक ही तरह का पकाया?

सलारबख़्श—हुज़ूर, मैं पानी भरने चला गया, तो कुत्ता चख गया।

जोगिन—यहाँ की बिल्ली और कुत्ते बड़े लागू हैं!

सलारबख़्श—कुछ न पूछिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतने में किसी ने दरवाज़े पर हाथ मारा।

सलारबख़्श—कौन साहब हैं ?

वकील—देखो, मामू साहब न हों। कह देना, घर में नहीं हैं।

सलारबख़्श—हुज़ूर, वह है मम्मन तेली।

वकील—कह दो, हम तेल-वेल न लेंगे। रात को हमारे यहाँ मोमबत्तियाँ जलती हैं, और खाने में तेल आता नहीं। फिर तेली का यहाँ क्या काम ?

सलारबख़्श—मुक़दमा लाया है हुज़ूर!

तेली मैले-कुचैले कपड़े पहने, हाथ में एक कुप्पी लिए आकर बैठ गया।

वकील—क्या माँगता है ?

तेली—एक आदमी ने हम पर नालिश कर दी है हुज़ूर! अब आप ही बचावें, तो बच सकता हूँ।

वकील—मेहनताना क्या दोगे ?

सलारबख़्श—हाय-हाय, पहले इसकी फ़रियाद तो सुनो कि वह कहता क्या है। बस, मुर्दा दोज़ख़ में जाय चाहे बिहिश्त में, आपको अपने हलवे-माँडे से काम। बताओ भई, क्या दोगे ?

तेली—एक पली तेल।

वकील—निकाल दो इसे, निकाल दो!

तेली—अच्छा साहब, तीन पली ले लो।

सलारबख़्श—अच्छा, आधी कुप्पी तेल दे दो। बस, इतना कहना मानो।

वकील—हैं-हैं, क्यों शरह बिगाड़ते हो ? तुम जाओ जी!

सलारबख़्श—पहले देखिए तो! राज़ी भी होता है ?

तेली आधी कुप्पी तेल देने पर राज़ी न हुआ, और चला गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोड़ी देर के बाद सलारबख़्श ने दबी-ज़बान कहा—हुज़ूर, शाम को क्या पकेगा ?

वकील—अबे, शाम तो हो गई। अब क्या पकेगा ?

सलारबख़्श—ख़ुदावंद, इस तरह तो मैं टें हो जाऊँगा। आप न खायँ, हमारे वास्ते तो बतला दीजिए।

वकील—अपने वास्ते छिछड़े ले आ जाकर।

सलारबख़्श—(आहिस्ता से) वे भी बचने पावें जो आपसे।

जोगिन को हँसी आ गई। वकील ने कहा—मेरी बात पर हँसती होगी ? मैं ऐसी ही कहता हूँ। इस पर जोगिन को और भी हँसी आई।

वकील—अल्लाह री शोख़ी—

> ख़ूब रू जितने हैं दिल लेती है सबकी शोख़ी ;
> है मगर आपकी शोख़ी तो ग़ज़ब की शोख़ी !

रात को जोगिन ने अपने पास से पैसे देकर बाज़ार से खाना मँगवाया, और खाकर सोई। सुबह को वकील साहब की नींद खुली, तो देखा, जोगिन का कहीं पता नहीं। घर-भर में छान मारा। हाथ-पाँव फूल गए। बोले—सलारू, ग़ज़ब हो गया ! हमारी क़िस्मत फूट गई !

सलारबख़्श—फूट गई ख़ुदावंद, आपकी क़िस्मत फूट गई।

वकील—फिर अब ?

सलारबख़्श—क्या अर्ज़ करूँ हुज़ूर !

वकील—घर-भर में तो देख चुके न तुम ?

सलारबख़्श—हाँ, और तो सब देख चुका, अब एक परनाला बाक़ी है, वहाँ आप झाँक लें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-विनोद-वाटिका की बढ़िया पुस्तकें

[संपादक, श्रीप्रेमचंद]

इतिहास की कहानियाँ

लेखक, मुं० ज़हूरबख़्श । इस पुस्तक में संसार के प्रसिद्ध पुरुषों के जीवन से संबंध रखनेवाली, अलौकिक साहस, वीरता, दया आदि की कथाएँ लिखी गई हैं । भाषा अत्यंत रोचक । ४ चित्र भी हैं । मूल्य ॥≈)

कीड़े-मकोड़े

लेखक, पं० भूपनारायण दीक्षित बी० ए०, एल्० टी० । चींटी, बर्र, टिड्डी आदि कीड़े-मकोड़ों का ऐसा सुंदर और रोचक वर्णन किया गया है कि पढ़ने में क़िस्से-कहानी से कहीं अधिक आनंद आता है । बालकों के योग्य इस विषय की अब तक कोई पुस्तक न थी । यह पुस्तक भी ६ हाफ़टोन और एक रंगीन चित्रों से अलंकृत है । मूल्य ॥=), सजिल्द १=)

खिलवाड़

लेखक, श्रीमती तुलसीदेवी दीक्षित । बालकों के पढ़ने-योग्य सरल कहानियों और कविताओं का अनूठा संग्रह । २० चित्र भी दिए गए हैं । मूल्य लगभग ।)

खेल-पचीसी

लेखक, श्रीप्रतिपालसिंहजी । इस पुस्तक में उन २५ खेलों का संग्रह किया गया है, जो लड़के साधारणतः खेलते हैं, या यों कहिए कि खेलते थे । अँगरेज़ी शिक्षा के फैलने से हमारे पुराने खेल दिन-दिन मिटते चले जा रहे हैं । शायद कुछ दिनों के बाद उन खेलों के जानकार भी न रहेंगे । हमने यहाँ ऐसे खेलों के खेलने की विधि बताई है, जिन्हें लड़के शौक़ से खेल सकें और खेल के साथ उनकी कुछ कसरत भी हो जाय । सचित्र । मूल्य ।≈)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गधे की कहानी

पं० भूपनारायणजी दीक्षित ने यह 'गधे की कहानी' लिखकर बाल-साहित्य के एक मुख्य अंग की पूर्ति की है। गधे ने अपनी कथा बड़े रोचक ढंग से कही है। भाषा खूब सरल और मुहाविरेदार है। गधे ने अपनी भाषा में मानव-समाज पर कैसी हास्य-जनक आलोचनाएँ की हैं, यह देखने ही योग्य है। पुस्तक सचित्र है। मूल्य ।।।), सजिल्द १।)

नटखट पाँड़े

एक नटखट लड़के की आत्मकथा। आदि से अंत ... एक भी पृष्ठ ऐसा नहीं, जो नीरस और रूखा हो। एक-एक शब्द में हास्यरस भरा हुआ है। नटखट पाँड़े का विद्यारंभ, डॉक्टर महोदय की दुर्दशा, बोर्डिंग-हाउस के अध्यक्ष महोदय की दुर्गति, नटखट पाँड़े का रात को भाग जाना, गाने की मजलिस, सारी कहानी इतनी अनूठी और दिलचस्प है कि जिस लड़के ने किताब खोलने की क़सम खा ली हो, वह भी इसे समाप्त किए बिना नहीं रह सकता। कितने ही प्रसंग तो ऐसे हैं, जहाँ मारे हँसी के पेट में बल पड़ जायँगे। इसके लेखक भी वही पं० भूपनारायणजी दीक्षित हैं। पुस्तक में १४ तिरंगे और हाफ़टोन चित्र हैं, जिनसे उसकी सुंदरता और भी बढ़ गई है। मूल्य १।।), सजिल्द २)

परोपकारी हातिम

भारत में जैसे कर्ण और हरिश्चंद्र दान-वीर और वचन के सच्चे महात्मा हुए हैं, वैसे ही दानी और सत्यवादी पुरुष ईरान में हातिम हुआ है। उसकी कथा इतनी मनोरंजक है कि संसार की ऐसी कोई भाषा नहीं, जिसमें उसका अनुवाद न हो चुका हो। उसी हातिम का यह चरित्र बालकों के लिये बहुत ही सरल और सुबोध भाषा में लिखा गया है। कथा इतनी रोचक है कि अलिफ़-लैला भी इसके सामने मात है! इसके साथ ही चरित्र पर इसका बहुत अच्छा असर पड़ता है। मूल्य लगभग ।।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-नीति-कथा

(दो भाग)

यह पुस्तक हिंदू-विश्वविद्यालय काशी के प्रिंसिपल और प्रो-वाइस चांसलर श्री ए० बी० ध्रुव एम्० ए०, एल्-एल्० बी० की लिखी हुई है। आपने महाराजा साहब बड़ोदा के आज्ञानुसार बड़ोदा-राज्य की पाठशालाओं के लिये इस ग्रंथ की, गुजराती में, रचना की थी। पं० बदरीनाथ भट्ट बी० ए०, अध्यापक लखनऊ-युनिवर्सिटी ने इसका हिंदी-अनुवाद किया है। पुस्तक कितनी उच्च कोटि की है और बालकों के चरित्र पर इसका कितना अच्छा असर पड़ेगा, इसका अनुमान इसी से किया जा सकता है कि विद्वान् लेखक इस विषय के प्रकांड पंडित हैं, और चरित्रगठन-संबंधी पुस्तकें लिखने के लिये आपसे बड़ा अधिकारी इस देश में मुश्किल से मिलेगा। आपने इस पुस्तक में सभी प्रधान मतों और देशों से उत्तम कथाएँ चुनकर संग्रह की हैं और हरएक कथा से निकलनेवाले उपदेश भी नोट-रूप में दे दिए हैं, जिससे यह पुस्तक पाठ्य-क्रम में रक्खे जाने के लिये बहुत ही उपयुक्त हो गई है। भाषा सरल और मुहाविरेदार है। 'चरित्र' मानव-जीवन का रत्न और हरएक प्रकार की उन्नति का मूल-मंत्र है। इस दृष्टि से यह पुस्तक अमूल्य है। पुस्तक दो भाग में है। प्रत्येक भाग का मूल्य १) है। दोनों का मूल्य २॥), सजिल्द ३॥)

बाल-विलास

छोटे-छोटे बालकों के लिये सरल, मनोरंजक, विनोद-पूर्ण कविताओं की अच्छी पुस्तक है। इसमें ४० चित्रों से अधिक हैं। मूल्य लगभग ॥)

भगिनी-भूषण

बा० गोपालनारायण सेन-सिंह बी० ए०-लिखित। यह पुस्तक बच्चों को पढ़ाने-लायक़ है। इसमें छोटी-छोटी कहानियों के बहाने बच्चों को अच्छी-अच्छी शिक्षाएँ दी गई हैं। मूल्य =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत के सपूत

लेखक, मुं० ज़हूरबख़्श । इस पुस्तक में भारत के महान् पुरुषों के जीवन से संबंध रखनेवाली ऐतिहासिक कहानियों का संग्रह किया गया है । भाषा अत्यंत सरल है, और कहानियाँ बहुत ही रोचक । लड़के बड़े शौक़ से पढ़ते हैं । पुस्तक में ६ चित्र भी दिए गए हैं । मूल्य ॥=)

भू-कवच

लेखक, श्रीशंकरराव जोशी । इसमें भूगोल के वैज्ञानिक भाग की सरल और सुंदर आलोचना की गई है । मूल्य लगभग ॥)

लड़कियों का खेल

लेखक, श्रीगिरिजाकुमार घोष । पुस्तक का विषय नाम से ही स्पष्ट है । इस पुस्तक की रचना विशेषकर लड़कियों के लिये ही हुई है । वे इसे बड़े चाव से पढ़ेंगी, और इससे बहुत कुछ सीखेंगी । हिंदी में ऐसी बहुत कम पुस्तकें निकली हैं । मूल्य लगभग ॥)

साहसी बालक

एक दिलेर लड़के के कारनामे । सचित्र पुस्तक है । मूल्य लगभग ...

सुघड़ चमेली

लेखक, पंडित रामजीदास भार्गव । हिंदी एवं उर्दू-संसार भली भाँति जानता है कि आप बालोपयोगी पुस्तकें लिखने में कैसे प... आप इस पुस्तक को अपनी लड़कियों को पढ़ाइए और फिर दे... वे चमेली की तरह कैसी सुघड़ हो जाती हैं ! सचित्र मूल्य =)

संचालक गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय,
२९-३०, अमीनाबाद-पार्क, लख...

पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति स्मृति संग्रह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ARCHIVES DATA BASE
2011 - 12

8,3,15
37534

STOCK VERIFY
2020

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar